फायर एरिया

*अंतर्भारतीय पुस्तकमाला*

# फायर एरिया

इलियास अहमद गद्दी

*अनुवाद*

राशिद अली

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

# भूमिका

उर्दू के आरंभिक युग से ही रचनात्मक गद्य का रिवाज रहा है। उसके विकासक्रम के साथ ही उसके विभिन्न रूप स्पष्ट होते गए। कहानियों के गद्य से लेकर उर्दू उपन्यास तक का लंबा सफर तय करने वाली उर्दू आज विश्व साहित्य की बुलंदियों को छू रही है। इसके इस विकासक्रम और यात्रा के पड़ाव में अनगिनत लेखक पूरी गंभीरता और शक्ति के साथ सम्मिलित होते रहे हैं।

उर्दू गद्य के विकासक्रम और यात्रा को कई युगों में बांटा जा सकता है। इन युगों की स्वाभाविक परिस्थिति और राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा धार्मिक स्थितियों को बड़ी हद तक संतुलित और उचित रूपों में ढालती हुई ये रचनात्मक गद्य आज भी तीव्र गति के साथ अपना सफर जारी रखे हुए है। अब इसके दामन में जो साहित्यिक धरोहर है उसे निस्संदेह एक महत्वपूर्ण स्थान दिया जा सकता है। आज यह विश्व के समस्त विषयों को समस्त गतिविधियों की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत करने की क्षमता रखती है।

सर्जनात्मक गद्य के वर्तमान रूपों में उपन्यास लेखन की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। उर्दू गद्य पर दास्तानों के प्रभाव के कमज़ोर हो जाने के बाद उर्दू में उपन्यास लिखने के महत्व में दिन-प्रति-दिन वृद्धि होती गई। डिप्टी नज़ीर अहमद से लेकर वर्तमान युग तक साहित्य की इस विधा ने बड़ा शानदार सफ़र तय किया है। विभिन्न दिशाओं के सफर ने इसे विश्व के लक्ष्य तक पहुंचा दिया है। विशेषतः सन् 1936 तक प्रेमचंद और उनके समकालीन लेखकों ने जिस तरह इस विधा को देश और विश्व के विषयों से मालामाल किया उसके कारण आज उर्दू उपन्यास का फलक बहुत व्यापक दिखाई देता है। विशेष रूप से सन् 1936 के बाद उर्दू जगत जिस तरह विश्व की साहित्यिक गतिवधियों से परिचित हुआ। उसने खास तौर से उपन्यास के फलक पर विभिन्न रंग बिखेर दिए। उनमें सबसे ज्यादा मनमोहक और टिकाऊ रंग उस समय उभरा जब उर्दू का रचनाकार 'प्रगतिशील आंदोलन' के सामाजिक, आर्थिक और साहित्यिक रूपों से परिचित हुआ। और इस विधा को ऊंचाइयों तक ले जाने में कृष्ण चन्दर, सआदत हसन मण्टो, राजेन्द्र सिंह बेदी, इस्मत चुगताई, ख्वाजा अहमद अब्बास और अज़ीज़ अहमद आदि और फिर कुरर्तुल-एन-हैदर, शौकत सिद्दीकी, अब्दुल्लाह हुसैन, काजी अबदुस्सतार, मुमताज़ मुफ़्ती, इन्तज़ार हुसैन, कुदरुतुल्लाह शहाब, गयास अहमद गद्दी, इलियास अहमद गद्दी ने विशेष प्रयत्न किए इन

प्रयत्नों से 'आग का दरिया', 'कारे जहां दराज है', 'चांदनी बेगम' से लेकर 'खुदा की बस्ती', 'उदास नस्लें', 'अलीपुर का एली', 'बस्ती', 'आइडेंटीटी कार्ड' और 'फायर एरिया' जैसे बड़े उपन्यासों की रचना संभव हो सकी।

'फायर एरिया' के लेखक इलियास अहमद गद्दी 14 अप्रैल 1932 को गद्दी मोहल्ला, झरिया (बिहार) में पैदा हुए और 27 जुलाई 1997 को झरिया में ही उनका देहांत हो गया। इनके पूर्वज गद्दी थे, अर्थात उनका पेशा मवेशी पालना और दूध का कारोबार करना था। कहा जाता है कि इनके कुछ बुजुर्गों ने कश्मीर और हिमाचल प्रदेश से तराई इलाकों में पहुंचकर इस्लाम धर्म स्वीकार किया था। इसीलिए आज भी इनके परिवार में पहाड़ी रहन-सहन प्रचलित है।

इलियास अहमद गद्दी ने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त करके अपने बड़े भाई प्रसिद्ध कहानीकार गयास अहमद गद्दी और आलोचक नजीर सिद्दीकी के संपर्क से कहानी लिखना आरंभ किया। इनकी पहली कहानी 'सुर्ख नोट' (1948) भोपाल से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका अफ़कार में छपी। तत्पश्चात इन्होंने कई महत्वपूर्ण कहानियों की रचना की जिसमें 'सत्यन', 'आग का व्यापार' और 'दाश्ता' बहुत मशहूर हुई। इनकी कहानियों के दो संग्रह 'आदमी' (1983) और 'थका हुआ दिन' (1987) प्रकाशित हो चुके है। इनकी कहानियां हिन्दी, अंग्रेजी और मलयालम में अनूदित हो चुकी हैं। इनके तीन उपन्यास 'जख्म' (1950), 'मरहम' (1951) और 'फायर एरिया' (1994) प्रकाशित हो चुके हैं। उनका एक और उपन्यास 'बगैर आसमान के जमीन' अपूर्ण है। इन्होंने बांग्ला देश की यात्रा भी की और 'लक्ष्मण रेखा के उस पार' शीर्षक से यात्रा वृत्तांत भी लिखा। इसके साथ अपनी आत्मकथा भी लिखी। टेलीविजन के लिए कुछ टेली फिल्में भी लिखीं और नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली के लिए कई महत्वपूर्ण अनुवाद भी किए। उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए बिहार उर्दू अकादमी, बंगाल उर्दू अकादमी, साहित्य अकादमी और प्रगतिशील लेखक संघ की ओर से विभिन्न पुरस्कार भी दिए जा चुके हैं।

इलियास अहमद गद्दी निश्चित रूप से प्रगतिशील विचारधारा के समर्थक थे। लेकिन उन्होंने कभी अपनी रचनाओं में रचना प्रक्रिया से हटकर किसी विशेष विचारधारा के प्रचार और प्रसार का सहारा नहीं लिया। बल्कि उन्होंने अपने उपन्यासों के लिए ऐसे विषयों का चयन किया जिनमें समसामयिक समस्याओं को उजागर किया गया हो। यही कारण है कि उन्होंने ठहर-ठहरकर ज्वलंत और तथ्यपरक विषयों का साथ देना पसंद किया। इसीलिए उनकी लगभग सभी रचनाओं में प्राकृतिक चित्रण के नवीनतम और सशक्त उदाहरण मिल जाते हैं और ऐसे प्रतीत होता है कि वे अपनी रचनाओं के लिए समस्त सामग्री अपने आस-पास के परिवेश से ही उपलब्ध कराते हैं। यहां तक कि प्राकृतिक दृश्यों को प्रस्तुत करते समय वे अपने आसपास के परिवेश को भी अपने सामने रखते हैं। इस वातावरण को प्रस्तुत

करते समय वे बहुत सरल, सरस और स्पष्ट शैली का प्रयोग करते हैं।

इन समस्त रूपों को हम उनके नवीनतम और अंतिम उपन्यास 'फायर एरिया' में बहुत स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। 'फायर एरिया' एक ऐसा उपन्यास है जिसमें भारत के पिछड़े वर्ग के विकास को उभारा गया है। इन वर्गों की समस्याओं की पेचीदगियों को इस उपन्यास के आरंभिक भाग में बड़े प्रभावपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया गया है। विशेषतः उस वर्ग से संबंध रखने वाले बहुसंख्यक किस तरह बेबसी का शिकार हो जाते हैं। समाज के तेज़ तर्रार और चालाक व्यक्तियों की मक्कारी में ये बहुसंख्यक किस तरह फंस जाते हैं और किस तरह उनकी जिन्दगी की दिनचर्या एक खामोश दर्शक बन जाती है। उसे किस तरह अपना पेट पालने के लिए पूंजीपतियों के जाल में फंसकर आजीवन बेबसी को अपनी नियति बनाने पर विवश होना पड़ता है।

इस उपन्यास के अगले भाग में उन पक्षों पर प्रकाश डाला गया है जिनके अंतर्गत देहात की बेबसी और लाचारी से मुक्ति पाने के लिए लोगों को आंख मूंदकर देहात के सुंदर और प्राकृतिक दृश्यों को छोड़कर शहर और कस्बों के बदबूदार जीवन को अपनाने पर मजबूर होना पड़ता है। ऐसे में बेजबानी और बेहिसी उसका नसीब बन जाती है। कड़ी मेहनत के बावजूद उसे समाज के पूंजीपतियों के इशारों पर नाचना पड़ता है। अपनी मुक्ति के लिए ऐसे साधनों को स्वीकार करना पड़ता है जो मानवीय जीवन को नरक की ओर धकेल देते हैं। नन्कू, रहमत, कालाचंद जैसे अनगिनत पात्र खामोशी का शिकार होकर जीवन की दूसरी समस्त अनुभूतियों को भुलाने के लिए मजबूर हो जाते हैं।

इन पात्रों की भावनाओं और मानसिक उथलपुथल को इलियास अहमद गद्दी ने इस उपन्यास के आरंभिक हिस्से में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से पेश किया है। खास कर जब इस उपन्यास का केंद्रीय चरित्र सहदेव पहली बार सामने आता है तो उसके कानों में ये आवाजें गूंजती हैं कि गांव से खान में काम करवाने के लिए कितने ही हृष्ट-पुष्ट नौजवानों को तलाश करके लाओ, खानों के मालिक संतुष्ट नहीं होते।

"हमलोग आदमी बेचते हैं, अपने ही गांव घर के लड़कों को बेचते हैं, बोलो बेचते हैं कि नहीं? हमने यह सब बहुत किया, मगर क्या फायदा... साला मालिक लोग किसी का नहीं होता, उसको हजार आदमी लाकर दो। अगर उसके लिए जान भी लड़ा दो तो भी आंख पलट लेगा। उसको कुछ नहीं चाहिए, सिर्फ रुपया चाहिए, एक करोड़ रुपए, सौ करोड़ रुपए..."

फायर एरिया के माध्यम से इलियास अहमद गद्दी ने समाज के उस वर्ग का भी पर्दाफाश किया है जो अपने आड़े आने वाले हर व्यक्ति को रास्ते से हटाने के लिए दारू और पैसे का सहारा लेता है। इन चीजों के बल पर वह बड़े लोगों से ऐसी सांठ गांठ बना लेता है जो उसे समाज में हैसियत और इज़्ज़त दोनों देती है। यही बड़े लोग काला चंद

जैसे ज़रूरतमंदों की मदद से कुमार बाबू सरीखे क्रांतिकारी व्यक्ति को उठावा लेते हैं, उनकी पिटाई कराते हैं और अधिकारों की प्राप्ति के लिए उठाए गए हरेक कदम को कुचलवा देते हैं जो इस उपन्यास के एक महत्वपूर्ण पक्ष की ओर इशारा करता है। इस काम में कोलियरी के मालिक से लेकर ऐसे सारे तत्व शामिल नज़र आते हैं जो दौलत कमाने के लिए इंसानों की बेबसी से पूरा फायदा उठाते हैं।

कोलियरी के वातावरण में सांस लेने वाला हर व्यक्ति अपने अपने रंग में रंगा दिखाई देता है। भोग विलास और व्यभिचार के बहुत सारे खुले हुए दृश्य सामने आते हैं। कामुकता के भयानक रूप इस तरह दिखाई देते हैं। मानो वे इस समाज का अटूट हिस्सा हों। स्त्री से नाजायज़ संबंध रखना इस संसार में गर्व की बात मानी जाती है। इस संबंध को ऊंचाई प्रदान करने के लिए औरतें स्वयं भी स्पष्ट भूमिका निभाती हैं। मगर इसके पीछे पेट पालने के साथ-साथ अपने किसी सगे संबंधी को सुनहरा अवसर दिलाने की भावना भी काम करती है। उनके इस 'काम' की पूर्ति हमेशा ऊंचे स्तर पर होती है और इसमें देवी भक्तों से लेकर निचली हैसियत रखने वाले तमाम व्यक्ति शामिल रहते हैं।

कोयले की इस काली बस्ती में काले कारनामे करने वाली ताकतें भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं जिनसे मैनेजमेंट भी सहमकर रहता है। इसलिए वह इनसे मिलजुलकर रहने में ही अपनी भलाई समझता है। इस तरह की ताकतों को प्रायः यूनियन का नाम दिया जाता है।

ऐसी यूनियनें विभिन्न नामों से पहचानी जाती हैं। कभी-कभार मजदूरों के कल्याण की बात भी करती हैं मगर हमेशा सेठ-साहूकारों और मालिकों से सांठगांठ बनाए रखती हैं। हर यूनियन अपनी ताकत बढ़ाने के लिए गुंडों तक का सहारा लेने में संकोच नहीं करती।

इस उपन्यास में कुछ चरित्र ऐसे भी हैं जो न तो अपनी अंतरात्मा का सौदा कर सकते हैं और न ही मजदूरों के विरुद्ध उठाए गए किसी कदम की तरफदारी करने पर तैयार होते हैं। उन्हें खरीदने की हर कोशिश नाकाम हो जाती है। वे विचारों के धरातल पर मजदूरों के श्रम और पूंजीपतियों के शोषण के दरम्यान उभरने वाले संघर्ष की एक कड़ी बनकर सामने आते हैं। कठोर शारीरिक यातना और मानिसक तनाव से भी उन्हें जूझना पड़ता है। वह चाहे मजूमदार जैसा कामरेड लीडर हो, सहदेव जैसे विवेकी मनुष्य हो और प्रतीबाला जैसी हिम्मतवाली औरतें हों, इन सारे चरित्रों का चित्रण इस उपन्यास के मजबूत गठन की ओर भी इशारा करता है।

यूनियन और कोलियरी के मालिकों की सांठगाठ को भी उपन्यासकार ने बड़ी खूबसूरती से बेनकाब किया है और बताया है कि ये दो पहलू देखने में तो एक दूसरे के विरोधी जान पड़ती हैं लेकिन वास्तव में दोनों एक दूसरे से हाथ मिलाकर चलने में ही अपनी भलाई समझते हैं। इस सिलसिले में इनामुल खान, पी. एन. वर्मा, जुगेश्वर दुसाध, भरत

सिंह, भारद्वाज जैसे लोग कहने के लिए तो मजदूर यूनियन से संबंधित हैं लेकिन हर व्यक्ति अपना लोहा मनवाने के लिए सभी प्रकार की अवैध कोशिशों को अपनी सुरक्षा का एक मुख्य हिस्सा मानता है। इसलिए कभी-कभी परस्पर टकराव की नौबत आ जाती है। इस तरह की लड़ाइयों को यहां गर्वपूर्ण निगाहों से देखा जाता है। इन झगड़ों को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न मानकर भी वह समाज में आतंक और डर का माहौल पैदा कर देता है लेकिन खुद पर कभी आंच नहीं आने देता।

सहदेव और मजूमदार इस उपन्यास के दो सबसे प्रमुख पात्र हैं। दोनों पात्रों के माध्यम से दो भिन्न विचारों और सोचने के ढंग को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि मजूमदार वामपंथी विचारधारा से काफी प्रेरित है मगर वह उग्रवाद को बिल्कुल पसंद नहीं करता बल्कि अधिकार प्राप्ति के लिए लंबे संघर्ष में विश्वास रखता है।

मजूमदार हर समय अपने विवेक से काम लेता है। वह संपूर्ण पृथ्वी पर किसी मानव के खून की एक बूंद भी नहीं देखना चाहता। वह डरपोक नहीं है मगर किसी भी तरह की हिंसात्मक कार्यवाही के लिए तैयार नहीं होता। वह किसी नाजायज ताकत से हाथ मिलाने पर तैयार नहीं होता और न मजदूरों के नाम पर हासिल होने वाली व्यक्तिगत सुख-सुविधा के लिए अपनी आत्मा बेचता है। उसे इस बात का भी अहसास है कि यूनियन द्वारा मजदूरों की समस्याएं उस समय तक हल नहीं हो सकतीं जब तक बेइमानी और छल-कपट की मनोवृत्ति को ठंडा कर देने वाले ईमानदार लोग यूनियन में प्रभुत्व स्थापित नहीं करते, जब तक निःस्वार्थ लोग मजदूर संघ में शामिल नहीं होते। वह जानता है कि समाज में परिवर्तन अचानक नहीं होता। इसके लिए अक्सर सदियों इंतजार करना पड़ता है। इसलिए वह इरफान को सामाजिक बदलाव के लिए संयम बरतने का उपदेश देते हुए कहता है, ''क्या तुम समझते हो कि फ्रांस की क्रांति या ज़ार के तख्ता पलटने की कार्रवाई एक दिन की थी? नहीं, पचासों वर्ष तक यह आग अंदर ही अंदर सुलगती रही। तब कहीं जाकर विस्फोट हुआ। सच तो यह है कि यह एक लंबी लड़ाई है। जीत कब होगी, कहना मुश्किल है। शायद उस समय तक मैं न रहूं, तुम भी न रहो मगर लड़ाई जारी रहेगी। पीढ़ी दर पीढ़ी इंसान अपने अपमान, गरीबी और भूख के खिलाफ झंडा ऊंचा किए रहेगा। यह मत सोचो कि अचानक जब तुम सोकर उठोगे तो देखोगे कि दुनिया बदल गई।''

मजूमदार समाज बदलने के लिए उपद्रव मचाने में विश्वास नहीं रखता। वह समाज में केवल भौतिक सुख-सुविधा हासिल करने के लिए नाजायज़ या हत्या और लूटपाट करने वाली ताकतों से हाथ मिलाने पर तैयार नहीं होता बल्कि वह अपने किसी साथी को इस लंबी लड़ाई में थका-थका सा देखकर उदास हो जाता है। यह थकावट समाज की पीड़ा बढ़ाने का कारण बन सकती है। वह परोक्ष रूप से भोग विलास के मुकाबले अंदरूनी तड़प को प्राथमिकता देता है और महसूस करता है कि यही तड़प समाज परिवर्तन का सबसे

अचूक हथियार है। इसलिए जब वह अपने पुराने साथी सहदेव को भारद्वाज जैसे हत्यारों का साथ देने पर तत्पर देखता है तो उसे बहुत दुख होता है। वह महसूस करता है कि सहदेव ने डर और आतंक के द्वारा अपना हक हासिल करने के लिए जो रास्ता चुना है वह समाज के निर्माण के बजाय समाज को विनाश की ओर ही ले जाएगा। इसलिए वह उसे समझाता है, "तुम जिस जगह खड़े हो वह खूनियों का गढ़ है। हत्यारों का अड्डा है। तुम्हारे चारों तरफ खून के छींटे उड़ रहे हैं और तुम कहते हो..."

और अपने इसी सपने को साकार करने की कोशिश में अंततः वह एक दिन भारद्वाज की खूनी साजिश का शिकार होकर मौत की आगोश में पहुंच जाता है।

सहदेव इस उपन्यास का वह पात्र है जो अपने ज्ञान और समझ की कीमत पर आने वाले हर तूफान का मुकाबला करता है। वह वर्मा के अत्याचार के सामने सीना तानकर खड़ा हो जाता है। व्हाइट साहब से आंखें मिलाकर बात करता है। उनकी पेशकश को ठुकरा देता है जिसका परिणाम यह होता है कि उसे न केवल अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है बल्कि वर्मा के गुंडों के हाथों सख्त मार भी खानी पड़ती है। इसके बावजूद वह सच बोलने से नहीं डरता बल्कि उसकी जुबान पहले से भी ज्यादा तेज हो जाती है। उसे अपने हाथों की गई मेहनत पर पूरा भरोसा है लेकिन इसके बावजूद वह हालात की बेरहमी का शिकार होता चला जाता है।

वह अनुभव करता है कि समाज मीठे बोल से नहीं बदल सकता, जब तक कि उसे एक खास ताकत के द्वारा भयभीत न किया जाए। सहदेव देखता है कि जुगेश्वर ने किस तरह गरीबी से निकलकर ऐश्वर्य के सारे साधन इकट्ठा कर लिए हैं। उसे पता चला जाता है कि वह मजदूरों के जिस वर्ग का प्रतिनिधित्व करना चाहता है वह अपने स्वभाव से ही बेबस और नर्म है। इसके विपरीत जुगेश्वर ने परिस्थितियों से समझौता कर लिया। इसलिए उसके आसपास न केवल मजदूरों की भीड़ लगी रहती है बल्कि उसकी जिंदगी में सकून ही सकून है। ऐश ही ऐश है।

वह जब अपने अधिकारों को पाने में चारों तरफ से मायूस हो जाता है तो फिर भारद्वाज जैसे हिंसक गिरोह के माध्यम से अपना रास्ता ढूंढ लेता है। फिर संबंध इतने गहरे हो जाते हैं कि उसे महसूस होता है कि उसकी जिंदगी में जबरदस्त बदलाव आ चुका है। समाज का हर वर्ग उससे भयभीत है और इसी आतंक की वजह से वह सत्ता के गलियारों में घूमने लगता है अर्थात वह अपनी विचारधारा में जबरदस्त परिवर्तन ले आता है। इसका कारण बताते हुए वह मजूमदार से कहता है, "यह गलत है कि मैंने अपने आपको बेचा है। मैंने सिर्फ इस सच को पहचान लिया है कि अगर कोलफील्ड में रहना है तो ताकत हासिल करना होगा। एक ऐसी ताकत जिससे टकराने का, जिसके नजदीक आने का कोई साहस न कर सके।"

और अंत में जब मजूमदार की हत्या हो जाती है तो सहदेव का दिल रोने लगता है। उसे महसूस हो जाता है कि वह जिस राह पर चल चुका है उसका अंत सिर्फ विनाश है सिर्फ विनाश।

इस प्रकार इलियास अहमद गद्दी 'फायर एरिया' में सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियों को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत ही नहीं करते बल्कि उससे प्रभावित पिछड़े वर्ग की समस्याओं पर विचार करने के बाद उसका समाधान तलाश करने की कोशिश भी करते हैं!

**—डा. अजीज इंदौरी**

*177, आशयाना*
*शीट नं. 1*
*इंदौर-452 006*

# प्रारंभ

अगर आप कभी कोयले की इस काली दुनिया में आएं, जिसे 'कोलफील्ड' कहा जाता है तो आप देखेंगे कि कहीं-कहीं किसी-किसी सड़क के किनारे एक बहुत छोटा-सा बोर्ड लगा होगा—''फायर एरिया''।

आग?

आप हैरत से चारों ओर दृष्टि दौड़ाएंगे लेकिन आग आपको कहीं दिखाई नहीं देगी। न आग, न धुआं, न शोला, न चिनगारी—कुछ भी नहीं। आपके दोनों तरफ ऊबड़-खाबड़ मैदान होगा जो वनतुलसी या कंटीली झाड़ियों से भरा होगा। अगर बरसात या ठंड का मौसम है तो ये झाड़ियां हरी-भरी होंगी वरना पीली, मुर्झाई हुई। दूर तक मजदूरों के क्वार्टर, कोलियरी की चिमनियां और कोयले के बड़े-बड़े ढेर—सब दिखलाई देंगे, मगर आग नहीं। आप कुछ ही क्षणों के बाद इस बोर्ड को अनदेखा कर देंगे।

मगर क्या सचमुच यहां आग नहीं है?

आग है ' ऊपर नहीं, अंदर है। जमीन के अंदर। कभी-कभी पानी घुस जाने से या जमीन की परत कमजोर पड़ जाने से या अंदर कोलाहल और हलचल की वजह से जमीन का एक छोटा-सा टुकड़ा अंदर धंस जाता है। तब गैस, धुएं और भाप के रूप में आग फूट पड़ती है और फिर माइनिंग डिपार्टमेंट ऐक्शन में आता है। उस बड़े सुराख में जिससे भाप निकल रही हाती है उसमें पानी और रेत भरा जाता है। इस प्रक्रिया को 'स्टोइंग' कहते हैं। कोयले की खानों में स्टोइंग एक विशेष प्रक्रिया है। जहां से कोयला निकाला जाता है, वहां खाली स्थानों को बालू से भरना पड़ता है। इसलिए आसपास की नदियों से बालू लाने के लिए एक अलग विभाग कार्यरत है। इसके अलावा हजारों ट्रक बालू प्राइवेट ठेकेदारों से लिया जाता है। बालू की ठेकेदारी में बहुत फायदा है। इसलिए ऐसे ठेकों के लिए बड़े-बड़े माफिया सरदार मैदान में उतरते हैं। अब तक सैकड़ों लोगों की जानें इस ठेकेदारी के लिए जा चुकी हैं। कहते हैं, रेत की ठेकेदारी का 'कोटेशन फार्म' कलम से नहीं, राइफल की नाल से भरा जाता है।

खैर, इस बात को यहीं छोड़िए। यह मेरे उपन्यास का विषय भी नहीं है और साथ ही यह डर भी है कि कोई माफिया सरदार नाराज हो जाए तो मेरी खैर नहीं। किसी दिन कोई लंबा-तगड़ा आदमी धोती-कुर्ता पहने, कंधे या सर पर सफेद और सुनहरे कोर का

गमछा लपेटे आएगा और कहेगा, "का बे, हमारे मालिक के खिलाफ लिखता है।" फिर कमर से फाइव राऊंडर निकालकर मेरे कमजोर शरीर में दो-चार गोलियां उतार देगा और किसी को पता भी नहीं चलेगा। अखबार में बस इतनी-सी खबर छपेगी कि "किसी अज्ञात आदमी ने..."

हां, तो मैं आपको आग के बारे में बता रहा था कि माइनिंग डिपार्टमेंट शीघ्र ही इस आग पर काबू पा लेता है और बात आई-गई हो जाती है। ऐसी घटनाओं पर कोई ध्यान भी नहीं देता है क्योंकि ऐसी कोई संभावना नहीं होती कि एक ही साथ सारे कोलफील्ड की जमीन धंस जाए और अंदर की सुलगती हुई आग बाहर निकल पड़े। इस बात को माइनिंग डिपार्टमेंट भी अच्छी तरह से जानता है और मैनेजमेंट भी। इसलिए सभी बेफिक्र हैं।

देखने में यह सारा इलाका एक बंजर और चटियल मैदान की तरह दिखता है। न खेत, न खलिहान, न हरियाली, न बाग, न पेड़, कुछ भी नहीं। कहीं-कहीं इक्का-दुक्का पेड़ दूर-दूर तक दिखाई भी दे जाता है तो वह है पीपल या बरगद का पेड़ जिसके तने में कच्चा धागा लपेट कर औरतें जल चढ़ाती हैं। इन पेड़ों की पत्तियों पर स्याह धूल जमी होती है। इसके अलावा वन-तुलसी की झाड़ियां भी इधर-उधर दिखाई देतीं हैं और कभी-कभी चाव से लगाए गए अमरूद के पेड़ों पर भी नजर पड़ जाती है। बस आंखें हरियाली की तरावट देखने के लिए तरस जाती हैं। चारों तरफ सूखा, रसहीन, बंजर और उदास दृश्य आंखों को चुभने लगता है।

कहते हैं, कभी यहां हरा-भरा जंगल था। बेहद घना। यह लाखों वर्ष पहले की बात है। उस समय यहां बहुत-से ज्वालामुखी पहाड़ थे। जमीन के अंदर आग धधक रही थी। खौल रही थी। फिर ऐसा हुआ कि आग बाहर आने के लिए मचली। जमीन कांपी और फट गई। ज्वालामुखी पहाड़ों के ढलानों से यह आग लावा बनकर उबल पड़ी। सारा जंगल जमीन के अंदर समा गया। ऊपर से लावे ने सारी जमीन को ढक लिया।

फिर हजारों साल गुजर गए। लावा ठंडा होकर चट्टान बन गया और 'प्लेटो' कहलाया। "छोटा नागपुर का प्लेटो"।

वे लोग जो हमेशा अपनी भूख मिटाने और जमीन की तलाश में इधर-उधर भटकते रहते थे वे इधर भी आए। और जहां उन्हें नरम मिट्टी मिली उसे खेतों में बदल कर बसने लगे।

जो जंगल जमीन के अंदर समा गया था वह अंदर की गर्मी और ऊपर के दबाव के कारण एक ठोस वस्तु में परिवर्तित हो गया। यही ठोस और स्याह पत्थर कोयला था।

"काला सोना या ब्लैक डायमंड।"

छोटा नागपुर के गर्भ में यह काला सोना कितने समय से संरक्षित था, यह कोई नहीं

जानता। इसका पता लगाया उन लोगों ने जिन्होंने दोनों हाथों से हिंदुस्तान को लूटा था। यहां तक कि जमीन के अंदर की यह अथाह दौलत भी उनके हाथ लग गई।

अंग्रेजों को इस बेशुमार दौलत की तलाश तब हुई जब उन्होंने हिंदुस्तान के सोने-चांदी के जखीरों को जहाजों में भरकर यूरोप पहुंचा दिया, फिर कच्चे माल की खेप की खेप भेजनी शुरू कीं जैसे रोटी, अनाज, कीमती लकड़ियां और अन्य चीजें जिनसे यूरोप की औद्योगिक क्रांति हुई।

फिर जगह-जगह की खुदाई के बाद पता चला कि छोटा नागपुर के गर्भ में ऐसे नायाब खनिज पदार्थों का खजाना दबा हुआ है। जमीन के कुछ ही अंदर पत्थरों के एक-दो परत के बाद कोयले की मोटी परतें मौजूद हैं। यह परतें जिसे सेम कहा जाता है, कहीं-कहीं सैकड़ों फुट मोटी थीं। यह असीमित दौलत थी। एक दूसरा बड़ा खजाना था। अतः अंग्रेजों ने इस कोयले को निकालने का प्रबंध किया। छोटी-छोटी कंपनियां बनाईं। ईस्ट इंडिया कोल कंपनी, टर्नर मौरिसन एंड कंपनी, ब्रायंड कंपनी और धीरे-धीरे यह कोयला जमीन से बाहर निकाला जाने लगा।

बंजर जमीन कौड़ियों के भाव बिकी और सोना उगलने लगी। मगर वे लोग जो जमीन के मालिक थे या उन जमीनों पर आबाद थे, उन्हें कुछ न मिला। उन्हें मिली तो सिर्फ उनकी मेहनत जो उनकी रोटी का एक मात्र सहारा बनी।

जिस जमीन को बारिश के पानी से सींचा जाता है, उसे आदमियों ने अपने पसीने और खून से सींचना शुरू किया। फावड़े, गैंते, शावल और इन सब में भूखे बदहाल लोगों के कमजोर हाथों की मेहनत शामिल हुई। उन्होंने जमीन का सीना फाड़ डाला। चीर डाला पत्थरों के सिलों को। ऊपर का ओवर बर्डन हटा और कोयले की स्याह चमकीली सेम दिखाई दी। उन कंपनियों का भाग्य जगमगा उठा। नोटों की बारिश शुरू हुई मगर सिर्फ कोलियरी मालिकों के घर। मजदूरों को वही मिला चार रुपया आठ आना रोजाना, पैंतीस रुपया हफ्ता और फिर वही एक हफ्ते की निरंतर मेहनत के बाद भूख का एक लंबा सिलसिला।

ये सब कौन लोग थे? ये भूखे, नंगे और जानवरों-सी जिंदगी जीने वाले लोग? ये स्थानीय लोग भी थे और ऐसे भी जो दूर-दूर के इलाकों से आए थे। अपना खेत, अपना घर और इलाका छोड़कर। इनमें भूमिहीन लोग भी थे। चोर-उचक्के भी थे और ऐसे मासूम और निष्कपट लोग भी थे जिनकी मासूमियत पर फरिश्ते भी ईर्ष्या से भर जाएं। ये सब उस वीरान चटियल मैदान की तपती धूप में चट्टानों से जूझते लोग। कौन-सी चीज उन्हें यहां खींच लाई है? इन सारे लोगों की बस एक ही चीज समान है—"भूख"।

भूख जो हजारों साल से या शायद अनादि काल से इंसानों की सबसे बड़ी मजबूरी रही है। यह भूख जो इंसानों को जानवरों जैसा मेहनत करने पर तैयार करती है और अमानवीय

अत्याचार सहन करने पर मजबूर करती है।

'टर्नर मौरिसन कंपनी' का एजेंट व्हाइट साहब कहता है, "साला ये रूल देखता है तुम्हारी पोंद में डालेगा।"

लोग हंसते हैं। व्हाइट साहब की बात पर उन्हें गुस्सा नहीं आता। उन्हें मालूम है कि व्हाइट साहब दिल से गाली नहीं देते। यह तो उनकी आदत है। उनके बराबर शायद ही किसी कोलियरी एजेंट या मालिक के दिल में दया हो। वे चाहें तो किसी के मुंह में उंगली डालकर उसके गले से निवाला निकाल लें, मगर वे ऐसा नहीं करते। सिर्फ गाली बकते हैं। वैसे व्हाइट साहब बहुत नरम दिल आदमी हैं। किसी को लेकर उनके पास जाओ कि साहब यह हमारा आदमी है तो वे सिर्फ एक सवाल पूछते हैं–

"तुम ए.बी.सी. का रहने वाला तो नहीं है?"

ए.बी.सी. अर्थात् आरा, बलिया, छपरा। ये तीनों बिहार के जिले हैं। यहां के लोग तीखे, लड़ाकू और गुस्सावर होते हैं। बस यही बात व्हाइट साहब को पसंद नहीं है। वे ऐसा आदमी चाहते हैं जो सर उठाकर उनको जवाब न दे। जो गाली सुनकर लाल न हो, बल्कि हंस पड़े। वे अनुशासन के पक्के पाबंद हैं, इसलिए माइनिंग के नियमों का पालन सख्ती से करते हैं। अगर कोई लेबर इसका उल्लंघन करता है तो उसे कभी माफ नहीं करते। ऐसे मजदूरों को या तो पूरे सप्ताह के लिए बैठा दिया जाता है या डिस्चार्ज कर दिया जाता है। इस मामले में वे एस.एन. वर्मा की भी बात नहीं मानते जबकि हर शनिवार को वे एस.एन. वर्मा को चाय पर बुलाते हैं। चाय नहीं चलती, चाय का तो बस नाम है। देर रात तक अंग्रेजी और फ्रांसीसी शराब चलती है। वर्मा एक ट्रेड यूनियन लीडर है। पचासों छोटी बड़ी कोलियारियों में उसकी यूनियन चलती है। लाखों रुपए का चंदा आता है। कोलियरी से बंधी हुई रकम अलग मिलती है। ठेकों पर कमीशन बंधा है। छोटे-छोटे सैकड़ों लीडर आगे-पीछे लगे रहते हैं। उसने गुंडों की एक पूरी फौज पाल रखी है जो यहां की भाषा में पहलवान कहलाते हैं। ऐसे आदमियों को व्हाइट साहब हमेशा हाथ में रखते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि वे वर्मा से डरते हैं। कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि वे वर्मा को एक बड़ी रकम कोलियरी के मामले में अपनी जुबान बंद रखने के लिए देते हैं। हालांकि कुछ लोगों का यह भी मानना है कि यह केवल व्हाइट साहब का बड़प्पन है। जहां तक बड़प्पन का सवाल है तो वह वर्मा के पहलवानों के मुखिया असगर खान की भी खूब इज्जत करते हैं। लोकस साहब को हुक्म है कि वह असगर खान का खास ख्याल रखे। यही कारण है कि असगर खान जब भी आफिस के पास पहुंचता है तो खुद लोकस साहब अपने आफिस से निकलकर उसकी जेब में पचास रुपया डाल देते हैं।

कैश डिपार्टमेंट में काम करने वाला घोषाल बाबू रोज यह लेन-देन देखता है और एक गाली देता है–

"साला।"

यह गाली वह किसे देता है यह बात लगभग सभी लोगों को मालूम है क्योंकि तकरीबन हर रोज वह यही दुहराता है।

"ये साले सफेद चमड़ी वाले लोग असगर खान को रोज पचास रुपया देते हैं दारू पीने को। ये असल में उसे थोड़ा-थोड़ा मार रहे हैं। तुम लोग देखना एक दिन..."

और सचमुच बहुत दिनों बाद एक दिन कोलियरी आफिस के पास से एक लड़का चिल्लाता हुआ निकल गया—

"असगर खान मर गया।"

व्हाइट साहब ने लोकस को फोन करके बात की सचाई का पता किया और फिर उसने कुर्सी पर पीठ टिकाकर इत्मीनान की एक लंबी सांस ली।

"थैंक्स गौड।"

उस रात व्हाइट साहब ने जमकर शराब पी। उनकी मेम साहब ने उन्हें रोकना चाहा तो उसका हाथ झटक दिया।

"आज कुछ मत बोलो। आज फतह का दिन है। खुशी का दिन है। जिस दिन वर्मा मरेगा उस दिन मैं सारी कोलियरी को शराब में नहला दूंगा।"

व्हाइट साहब तो खैर बड़े आदमी हैं। बड़ी कोलियरी के एजेंट हैं। छोटी-छोटी कोलियरी के मालिक भी चाहें तो पूरे कोलफील्ड को शराब में नहला सकते हैं। पैसा यहां इस तरह बहता है कि खुद इन मालिकों को भी मालूम नहीं होता कि कितना पैसा आ रहा है। एक-एक कोलियरी मालिक चार-चार गाड़ियां रखते हैं और कई तो बंगले, मकान, शराब और अय्याशी पर रुपया पानी की तरह बहाते हैं लेकिन इस सारी दौलत में मजदूर का हिस्सा सिर्फ चार रुपया आठ आना प्रतिदिन है। दिन भर पत्थरों से जूझने वाले जमीन के सैकड़ों बल्कि हजारों फुट नीचे अंधेरी सुरंगों से काला सोना निकालने वाले अधनंगे मजदूर जब बाहर आते हैं तो पसीने में भीगे हुए। शरीर पर कोयले के कण ऐसे चिपके होते हैं कि अगर कोई नया आदमी देख लो तो उन्हें आदमी मानने से इंकार कर दे...स्याह भूत। सिर्फ आंखें और दांत सफेद दिखाई देते हैं। थके, हारे, टूटे हुए ये लोग अपने 'धोड़ों' के आगे हांड़ियों में उबले हुए चावल को कभी प्याज और कभी दाल के साथ अपने अंदर के जहन्नुम में उंड़ेल लेते हैं। अमानवीय श्रम को सहनीय बनाने के लिए शराब पीते हैं। महुए की कच्ची शराब या स्पिरिट की शराब उन्हें अंदर ही अंदर नोचती है, भंभोड़ती है और बीमार कर देती है। ये खांसते हैं, खून थूकते हैं और कर्ज के लिए सूदखोरों के उस जाल में फंस जाते हैं जो उनके चारों तरफ तना रहता है। हर हफ्ते उस खिड़की के सामने ये सूदखोर यमदूतों की तरह खड़े हो जाते हैं जहां से उन्हें तनख्वाह मिलती है। और जैसे ही वे अपनी तनख्वाह उठाते हैं, ये सूदखोर उनके हाथों से तनख्वाह ऐसे झपट लेते हैं जैसे चील बच्चों के हाथों से दोना उचक लेती है।

अजीब दुनिया है यह । मालिक दौलत से अंधा हो रहा है। लीडर अपना हिस्सा लेकर ऐश कर रहा है। ठेकेदार मनमानी कीमत वसूलकर लाखों में खेल रहे हैं। माइनिंग कर्मचारी रिश्वत से उल्लास प्रकट कर रहे हैं। सिर्फ मजदूर...बस सिर्फ मजदूर है जिसे न अपने पसीने की कीमत मिलती है, न ही अपने थूके हुए खून का मुआवजा।

जमीन के हजारों फुट नीचे अंधेरी सुरंगों में प्रचंड गर्मी और घुटन होती है। पसीना पोर-पोर से बूंद बनकर बदन पर केंचुए की तरह रेंगता है और कोयले के काले कण पसीने पर जमते जाते हैं। सारे लोग स्याह पत्थरों से बनी प्रतिमा की तरह नजर आते हैं—यह अलग ही दुनिया है। अंधेरे में मौत नाचती रहती है। कभी कहीं चाल गिर पड़ती है, कभी कोलटब की रस्सी टूट जाती है और कभी जहरीली गैस मौत का सायरन बजा देती है। मौत के बाद भी यही कोशिश की जाती है कि लाश हजारों टन रेत में या किसी बंद गुफा में दफन कर दी जाए ताकि मुआवजे से बचा जा सके।

मगर जब ऐसा नहीं हो पाता तो बड़ा हंगामा हो जाता है। माइनिंग डिपार्टमेंट इंक्वायरी कमीशन बैठाता है। स्थानीय पुलिस भी हस्तक्षेप करती है। यूनियन के सारे बड़े लीडर मजदूरों में आग भड़काने लगते हैं। वे घटना की जिम्मेदारी मैनेजमेंट पर थोपते हैं। दस-बीस दिन तो खूब गर्मागर्मी रहती है। फिर अचानक सब ठंडा पड़ जाता है। इंक्वायरी कमीशन की रिपोर्ट बताती है कि मजदूर खुद अपनी गलती से मौत के मुंह में चला गया। लीडर चुप्पी साध लेते हैं। मजदूर गालियां बककर जी को ठंडा कर लेते हैं। फिर सब कुछ ठीक-ठाक हो जाता है।

लेकिन कोलियरी मालिक हादसों से बहुत घबराते हैं। इसमें उनकी भरपूर खिंचाई होती है। जो बात होती है नोट की गड्डियों की जुबान में होती है। इंक्वायरी इंस्पेक्टर, पुलिस, लीडर और कुछ मजदूर के रिश्तेदार मामलों के सुलझने तक लाखों के वारे-न्यारे कर देते हैं। फिर रात-दिन की परेशानी, दौड़-धूप, खुशामद आदि भारी मुसीबत बन जाती है। इसलिए अगर मालिक किसी चीज से घबराता है तो वह है हादसा। दूसरी चीजों से निबटने की ताकत वह हमेशा रखता है। जैसे लीडर के पालतू पहलवान होते हैं। वैसे ही मालिक भी लठैत रखते हैं। मजदूरों और लठैतों में झड़पें भी होती हैं। सर फूटते हैं, हाथ-पैर टूटते हैं। कभी-कभी कोई मारा भी जाता है। मुकदमे चलते हैं। जाहिर है, पुलिस उसका साथ देती है, जो उसका साथ देता है।

जिंदा रहने का कर्ज चुकाते ये मजदूर चारों ओर जूझते हैं। मालिक, यूनियन, ठेकेदार और सूदखोर। चारों तरफ से घिरे हुए हैं—लोग। ये सौ-दो सौ नहीं हैं। हजार-दस हजार भी नहीं। लाखों की संख्या में हैं, लेकिन विभिन्न कोलियरियों, जातियों, ट्रेड यूनियनों में बंटे हुए हैं। मैनेजमेंट जानता है कि ये कभी एक नहीं हो पाएंगे, जैसे वह जानता है कि अंदर की आग कभी एक साथ कोलफील्ड में नहीं फूट सकती और इसे छोटी-मोटी आग पर स्टोइंग करके काबू पाने की कला खूब आती है।

# प्रथम भाग

जिस सुबह उसने अपना गांव छोड़ा, वह सुबह उसे काफी दिनों तक याद रही।

गांव तब सो रहा था। पौ फट रही थी। उजाला फुहार की तरह अंधेरे पर गिर रहा था। धीरे-धीरे रात का अंधेरा छंटता जा रहा था। मानो आसमान से पूर्णिमा के चांद ने विदाई न ली हो। छोटे-बड़े अनगिनत तारों की चमक अभी मलीन नहीं हुई थी। पेड़ों पर चिड़ियों ने शोर मचाना शुरू नहीं किया था। शायद अभी रात बाकी थी। मगर सुबह की ठंड का अहसास होने लगा था। वह ननकू के साथ घर से बाहर आया। सीमेंट के बोरे में चावल और टीन के बक्से में उसके कपड़े थे। घर के लोग भाई, भौजाई और उसका खिलौना लड्डू...हां लड्डू, पता नहीं इतना सवेरे कैसे जाग गया था—सब के सब उसके साथ बाहर निकल आए। उसने भाई और भाभी के पैर छुए, फिर उस धरती के पैर जिसकी भीनी महक उसके मन में बसी हुई थी।

उसका भाई भर्राए गले से ननकू से बोला, "ननकू भाई, जरा ध्यान रखना, इसे नौकरी दिला देना।"

"तुम फिक्र मत करो, लड़का पढ़ा-लिखा है इसके काम का क्या सोचना?"

"पर ननकू भाई" – उसके भाई ने ननकू की बांह धर ली, "परदेस का मामला है, अल्हड़ लड़का है, ऊंच-नीच तो अब तुम ही संभालोगे।"

आगे जैसे उसकी आवाज बैठ गई। उसने भी आंसुओं से उमड़ते सैलाव को रोकने के लिए मुंह दूसरी ओर घुमा लिया।

अपने दरवाजे से दो मील पैदल चलना था तब पक्की सड़क मिलती और तब वह पेट्रोल से चलने वाली खटारा बस जिस पर पहले से आदमी ऐसे लटके होते थे जैसे गुड़ की भेली के साथ चिपकी हुई मक्खियां। दो मील की यह पहली यात्रा भी उसे काफी दिनों तक याद रही। गांव के बीचोंबीच विशाल बरगद के पेड़ के पास वह ठिठककर खड़ा हो गया। उस पेड़ के नीचे गांव वालों का बचपन गुजरता रहा है। सैकड़ों सालों से, पता नहीं किस जमाने से, लड़कों का झुंड उसके नीचे जमा होता आया है। गिल्ली-डंडा के गड्ढे जमीन पर हमेशा दिखाई देते हैं। उस पर रखकर गिल्ली उछाली जाती है, फिर उसी उछाल पर डंडे की जोरदार चोट पड़ती है। गिल्ली हवा में तैर जाती है और उसी के साथ लड़कों की प्रसन्नता भरी चीख गूंज उठती है—अड्डी...ताड़ी।

गिल्ली-डंडा का मौसम नहीं होता तो लट्टू का खेल होता और जब उसका भी समय निकल जाता तो कोई और खेल। बच्चों के पैरों से कुचलकर दूर-दूर तक हरी-भरी घास गायब हो गई है और जितनी दूर तक लड़कों का हड़कंप मचता उतनी दूर तक सफाचट मैदान है।

रात को आम तौर पर बड़े लड़के या नौजवान जमा होते हैं। छोड़ खेलते हैं, कबड्डी होती है, मगर ज्यादातर गप्पें हांकी जाती हैं। दुनिया भर की बातें—शहरों के किस्से, हसीन लड़कियों की चर्चा, चुटीले प्रेम प्रसंग। काफी रात तक यह उजाड़, अकेला पेड़, आबाद रहता है। जमीन के उस छोटे-से टुकड़े ने मानो आज उसके पांव जकड़ लिए।

मत जाओ...।

वह क्षण भर रुका, जमीन से अपने पैर छुड़ाए और ननकू के साथ कदम मिलाकर चलने लगा।

आज कितनी ही चीजें उसे रोक रही थीं। खेत, खेत की क्यारियों पर हरी-भरी घास, घास पर जगमगाते हीरे जैसे ओस के नन्हें कण और हवा में रची-पची हरियाली की खुशबू ...हां हरियाली की अपनी एक अलग खुशबू होती है। घास की, झाड़ियों की, पेड़ों की पत्तियों की एक ऐसी खुशबू, जो अगर छंट जाए तो जमाने तक, सालों साल तक दिमाग में बसी रहती है, खास तौर पर उस समय, जब उसमें किसी लड़की की खुशबू भी शामिल हो।

ऐसी ही खुशबू जुलिया के घर की बाहरी दीवार से भी आती है। मिट्टी की कच्ची दीवार पर घास उग आई है। दीवार की दूसरी तरफ छोटा-सा मचान बनाकर सेम की बेल चढ़ाई गई है और उस हरियाली की खुशबू चारों तरफ फैली रहती है... उस खुशबू से उसकी पहचान इतनी गहरी है कि वह अभी भी चाहे तो जुलिया से मिल सकता है, बस एक छोटा-सा कंकड़ उसके छप्पर पर फेंकने की देर है। चंद मिनटों में वह दरवाजा खोलकर बाहर निकल आएगी, उनींदी आंखों से चारों तरफ देखेगी और उस पर बरस पड़ेगी।

"तुमको रात को नींद नहीं आती?"

"नहीं, कई महीनों से नहीं आती।"

"तब अपनी भौजी से कहो कि तुम्हारा ब्याह कर दे।"

"तुम से?"

"नहीं तो क्या अपने से करेगी?"

दोनों हंसते हैं। एक मूक, सचेत हंसी जिसमें आवाज नहीं होती मगर दोनों उसको सुन सकते हैं।

वह जुलिया के घर के पास रुका। उसका सारा घर पिछली रात के सर्द धुंधलके में बेखबर सो रहा था। कहीं कोई आवाज नहीं, कोई हरकत नहीं, कोई जाग नहीं, हालांकि

कल मिली थी। खूब रोई थी। मां लिलौरी की कसम खाई थी कि कभी शादी नहीं करेगी। घर वाले जबरदस्ती करेंगे तो गिरधारी के कुएं में डूबकर जान दे देगी। उसे भी कसम दी थी, कसम खिलवाई थी कि उसको भूलेगा नहीं। उसे हर छह महीने में आना है और खास तौर पर फागुन में तो वह जरूर आए, वरना वह होली नहीं मनाएगी। उसकी बातों से उसका जी भर आया। वह रोया तो नहीं, मगर आंसू आंखों में आ-आकर लौट गए। वह मर्द था, इसलिए उसे परदेस कमाने के लिए निकलना भी जरूरी था। यह बात दोनों जानते थे। एक खामोश समझौता होता है। गांव के मर्द और औरत के बीच की दूरी का यह अहसास अक्सर उन्हें बहुत सताता है। दिल में कहीं कुछ खो देने का डर भी होता है और हमेशा के लिए बिछड़ जाने की आशंका भी।

उसने रुककर चारों तरफ देखा सारा गांव एक असमाप्त निस्तब्धता में लिपटा पड़ा था। उसी असीम चुप्पी और सन्नाटे में कहीं एक प्रार्थना छुपी थी।

मत जाओ...

ननकू ने उसे आश्चर्य से देखा, "तुम बार-बार रुक क्यों जाते हो?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया, केवल पांव के बंधन तोड़े और उसके साथ चलने लगा।

पक्की सड़क पर जहां बस मिलती थी, उनसे दो और आदमी आ मिले। एक रसूलपुर का रहमत मियां और दूसरा सतगांव का जुगेश्वर, जुगेश्वर दुसाध। उनको भी ननकू काम दिलाने ले जा रहा था।

कोयले की काली, स्याह, उदास दुनिया...

अजीब दुनिया थी। यह। न पेड़ थे, न खेत थे, न हरियाली थी और जो था भी वह काली, स्याह धूलों में सना पड़ा था। काली, महीन धूल जो हर कदम के साथ उड़ती थी, आती-जाती ट्रकें उस धूल को दूर-दूर तक फैला देतीं। पेड़ों की पत्तियों पर, वनतुलसी की झाड़ियों पर, आस-पास के मकानों के छप्परों और दीवारों पर यह धूल छाई रहती। एक घटाटोप अंधेरा उदास नजारे, बेगानेपन और कठोरता का परिचय देते मिलता। कोयले की भट्टियों से उठने वाला धुआं शाम को समय से पहले रात होने का अहसास दिलाता था। यहां तक कि कोलियरी में जलने वाले बल्ब भी इस घटाटोप अंधेरे में धुंधले और कमजोर दिखलाई पड़ते। मगर उनके लिए इन सबका कुछ भी मतलब नहीं था। उन्हें काम चाहिए था जो आसानी से उन्हें मिल गया था। अब वह भी इन हजारों लोगों की भीड़ में था, जो अपनी मेहनत बेचकर दौड़ती- ..गती जिंदगी जीने के लिए विवश थे। वह भी उसी धोड़े में रहता था, जिसमें ननकू चार अन्य लोगों के साथ रह रहा था। वही फर्श जिस पर मैली दरी बिछी थी, धुआं उगलती वही 'ढिबरी' की मद्धिम रोशनी और वही सपने ...पैसा कमाने के, जमीन खरीदने के और वापस गांव लौट जाने के।

रात भर के उन रंगीन सपनों के बाद जब नींद टूटती तो सारे लोगों में काम पर जाने

की आपा-धापी शुरू हो जाती। नित्य-क्रियाओं से निवृत्त होकर जल्दी-जल्दी अलग-अलग चूल्हा जलाया जाता, मिट्टी की हंड़ियों में या अल्मुनियम के काले पड़ गए बर्तनों में भात बनता, कभी आलू का चोखा, कभी टमाटर का झोरा और कभी सिर्फ प्याज; यहां आदमी मुंह के स्वाद के लिए नहीं खाता, केवल पेट भरने के लिए खाता है। बस इसलिए खाता है कि खाना जरूरी है, जिंदा रहने के लिए, काम करने के लिए और रात के झूठे सपनों को सच बनाने के लिए।

खाना खाकर लोग गैंते, बेलचे और बेंत की झूड़ियां लेकर निकल पड़ते हैं। अलग-अलग क्वार्टरों से, जिसे धोड़ा कहा जाता है और पास-पड़ोस की बस्तियों में रहने वाले अपने घरों से। दो-दो, चार-चार की टोलियों में लोगों का आना शुरू हो जाता है, चारों तरफ से भीड़ आहिस्ता-आहिस्ता खान के पास जमा होने लगती है। रात की पारी के लोग धीरे-धीरे बाहर आना शुरू कर देते हैं। हाजरी लगती है और वे सब लाइन में लगकर या छोटी-छोटी टुकड़ियों में लगकर जमीन के अंदर उतर जाते हैं। एक अंधेरी सुरंग उन्हें हड़प लेती है, ढलवां फर्श पर वे उतरते जाते हैं, नीचे...नीचे और नीचे, अंधेरा गहराता चला जाता है, कुछ दिखलाई नहीं पड़ता, हाथ को हाथ नहीं सूझता। गर्मी, घुटन, एक अपरिचित तीखी गंध और शरीर के रोम-रोम से नन्हीं-नन्हीं बूंदों में पसीना फूट पड़ता है। फावड़े चलते हैं। बेत की टोकरियों से ढोकर कोयला कोलटबों में लोड होता है। ट्रामड्राइवर गाड़ियों को ढकेल कर 'हालिज' तक पहुंचाते हैं, जहां से उन्हें बाहर खींच लिया जाता है। इस तरह हर दिन का वह काम शुरू होता है जो उन्हें पेट का ईंधन भी देता है और रंगीन सुनहरे सपने भी।

शाम को जब लोग बाहर आते हैं तो उनका सब कुछ बदल चुका होता है। उनके पूरे अस्तित्व को काली, स्याह धूल अपने अंदर छुपा लेती है। सिर्फ आंखों के अंकुर और दांत इस मनहूस दृश्य में कुछ अधिक सफेद, कुछ अधिक बेढंगे और हास्यास्पद लगते हैं।

कोयले की कालिमा में डूबे उन भूतों के लिए नहाना जरूरी हो जाता है। चाहे मौसम जो भी हो, छोटे-से पोखर में, जो वास्तव में पोखर नहीं होता, बल्कि पम्प के द्वारा खान से निकाला हुआ पानी होता है, एक साथ बीस-बीस आदमी नहाते हैं। थके, हारे, टूटे हुए शरीर को स्नान एक नई शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करता है। उन्हें आदमी होने का अहसास दिलाता है। वे कपड़े पहनकर चाय-पान की दुकानों, माड़ी, गोदामों और अवैध शराब की झोंपड़ियों में फैल जाते हैं। ये माड़ी और शराब की भट्टियां अक्सर सुनसान जगहों पर होती हैं और रात भर आबाद रहती हैं। बाहर एक ढिबरी जलती रहती है जो इस बात का पता देती है कि दुकान खुली है और कारोबार चालू है। लोग आते रहते हैं और दो-दो, चार-चार की टोलियों में बैठकर पीते हैं, फिर लड़खड़ा कर चलते, झूमते-झामते, अक्सर

गाना गाते रात गए वापस लौटते हैं, यहां तक कि चारों तरफ रात का वीरान सन्नाटा हावी हो जाता है, सिर्फ खान के पास जिंदगी की कुछ कतरनें बची रह जाती हैं, रात की पारी के इक्का-दुक्का लोग ट्राम गाड़ियों को इधर से उधर धकेलते हुए दिखाई देते हैं। थोड़ी-थोड़ी देर में 'हालिज' की गड़गड़ाहट की एक खास आवाज सुनाई देती है और कोलियरी के धुंधले बल्ब मानों शराबियों की तरह, किसी नशीली तंद्रा में ऊंघते रहते हैं।

मगर उनमें ऐसे लोग भी हैं जो कहीं नहीं जाते, ज्यादा से ज्यादा चाय पीकर या पान खाकर अपने धोड़ों में वापस लौट आते हैं। ये अक्सर दो-दो, चार-चार की टोलियों में बैठकर गप्पें हांकते हैं, हंसी-मजाक और फिर चर्चाओं का सिलसिला चलता है। दर्द-ए-दिल का बयान, खान के किस्से, गांव की अजीब-अजीब घटनाओं पर चर्चा, कामिनों की इठलाती अदाओं का वर्णन, लौंडों की नाच पर बहस, बस चलता ही रहता है।

ननकू के 'धोड़े' के सामने एक बड़ा-सा पत्थर रखा था जिस पर कपड़ा धोया जाता है और उस पर बैठकर ननकू नहाता भी था। पानी के लगातार गिरते रहने से दूर तक हरी घास उग आई थी। चारों तरफ काली सड़कों और स्याह धूल से भरी हुई जगह में घास का यह छोटा-सा हरा-भरा टुकड़ा उसे बहुत अच्छा लगता था। शायद और लोगों को भी लगता हो क्योंकि रात का खाना खाकर लोग उसी घास के इर्द-गिर्द आकर बैठ जाते और देर रात तक बातचीत चलती रहती।

उस दिन भी सारे लोग वहीं बैठे बातचीत में लीन थे कि तभी दो आदमी आकर उनके साथ बैठ गए। उनमें से एक आदमी नाटे कद का, गठे हुए बदन और कम उम्र का, दूसरा आदमी लंबा, दुबला और अधेड़ था। अधेड़ उम्र का आदमी कभी भारी-भरकम रहा होगा जिसका अनुमान उसकी चौड़ी हड्डियों को देखकर लगाया जा सकता था। मगर अभी यूं लग रहा था जैसे उसका शरीर सिर्फ हड्डियों का ढांचा हो। चेहरे की हड्डियां उभर आई थीं, मानो उनकी जान निचोड़ ली गई हो। रंग काला था जो मुमकिन है कभी सांवला रहा हो। आंखें विश्वास और क्रोध छलका रही थीं। उसने सहदेव को गौर से देखा, फिर बोला, "क्या ननकू भाई, इस बार तो बहुत अच्छा पाठा लाए हो।"

"बस दो बोतल," उसने एक बार फिर सहदेव को गौर से देखा, "मगर अभी तो दुर्गा पूजा में देर है।" ननकू के दोनों साथी हंस पड़े। ननकू खामोश रहा, उसे यह बात शायद बुरी लगी। उस आदमी ने ननकू के क्रोध को भांप लिया, इसलिए उसे मनाने लगा।

"क्या ननकू भाई, बुरा मान गए? मैंने तो इसलिए कहा कि हम लोग अपने गांव-घर से अच्छे-अच्छे लड़कों को लाकर यहां फंसा देते हैं। मगर हमें मिलता क्या है?" सौ-दो सौ रुपया, जो दस-बीस दिन में उड़न छू हो जाता है। फिर हाथ खाली, फिर जाओ, आदमी लाओ। साला यह आदमी का दलाली हुआ कि नहीं? हम लोग आदमी बेचते हैं, अपने ही गांव घर के लड़कों को बेचते हैं। बोलो, बेचते हैं कि नहीं? हमने यह सब बहुत किया,

मगर क्या फायदा... साला मालिक लोग किसी का नहीं होता, उसे हजार आदमी लाकर दो। अगर उसके लिए जान भी लड़ा दो तो भी आंख पलट लेगा। उसे कुछ नहीं चाहिए, सिर्फ रुपया चाहिए, एक करोड़ रुपए, सौ करोड़ रुपए... ।"

उसने दो बोतल पीने की बात की थी मगर लगता था, जैसे उसने कुछ अधिक ही चढ़ा रखी थी क्योंकि जैसे-जैसे हवा लग रही थी उसका नशा खिलता जा रहा था। वह फसकड़ा मारकर बैठ गया। बंडी की जेब से बोतल निकाली और चार घूंट अंदर उतारने के बाद फिर शुरू हो गया, "जब मैं 1940 में कोलफील्ड में आया था, मेरी छाती इतनी ... थी।" उसने अपनी छाती के बित्ता भर आगे अपने दोनों हाथ फैलाए, "और इतना बाजू था, साला जो देखता था उसके नीचे से हवा निकल जाती थी। एक बार लड़ाई में छह आदमी को अकेले मार गिराया था। यह धरमपुर कोलियरी की बात है, उसका मालिक प्रफुल्ल जोशी, साला गुजराती बच्चा एक नंबर का हरामी था। हमको बराबर अपने साथ रखता था, हमको बोतल की आदत उसी ने लगाई। उसके लिए हमने क्या नहीं किया, रोज मार, रोज झगड़ा, आज यह जमीन हथियाना है, कल वह घर खाली कराना है। परसों यूनियन के पहलवानों से निबटना है, लेबर में जो सर उठा रहा है, उसको पीटना है। सब हमको कालाचंद बाबू बोलता था। मगर फायदा क्या हुआ? बोलो क्या फायदा हुआ?? वही लेबर का लेबर रह गया, साला सरदार भी नहीं बना, वही बत्तीस रुपए हफ्ता, साला हिंदुस्तानी मालिक के यहां जिंदगी बरबाद किया, अंग्रेज कंपनी में होता तो जरूर तरक्की करता।"

"तरक्की तो हुआ था कालाचंद, मालिक के साथ कार में घूमता था," किसी ने व्यंग्य कसा।

"बांटरा, तुम लोग नहीं जानता, जब काम निकालना होता है तो ये मालिक लोग पांव पकड़ लेता है, जब काम निकल जाता है तो गर्दन धर लेता है, मौके का यार होता है।"

कोई धीरे से फुसफुसाया, "जिसकी बहन अंदर, उसका भाई सिकंदर!"

कालाचंद एकदम से बिफर गया, "कौन बोला? कौन साला बोला यह बात?"

लोगों ने मुस्कराते हुए एक-दूसरे की आंखों में झांका, फिर उसे समझाने लगे, "कहां कोई बोला? कोई तो कुछ नहीं बोला।"

"नहीं बोला, अभी बोला, साला समझता है कालाचंद नशे में है, कालाचंद को दो-चार बोतल में साला नशा हो जाएगा? साला दारू तो कालाचंद के लिए पानी है पानी।"

"अरे यार, तुम झूठ-मूठ गरम हो रहे हो, कोई तो कुछ नहीं बोला।"

कालाचंद ने गुस्से में लोगों को घूर कर देखा और थोड़ी देर बैठा रहा।

कालाचंद बंडी की जेब से बोतल निकालकर दो घूंट और पीता है। आग गले से नीचे

उतरकर छाती को नोचती है, मगर दिमाग रोशन हो जाता है, मन खिल उठता है, नशे के हर झोंके के साथ कोई न कोई दृश्य उसके सामने से गुजर जाता है। वह देखता है, एकदम साफ देखता है, उसका मालिक प्रफुल्ल जोशी उसके गिलास में दारू उंड़ेल रहा है और बड़े प्यार से कहता है, "तुम पैसे की चिंता मत करो, पैसा मैं पानी की तरह बहा दूंगा, थाना भी हाथ में है, इसलिए डरने की कोई बात नहीं, बस तुम कुमार बाबू को उठा लो।"

अंग्रेजी शराब का नशा कड़ा होता है, पीने से बदन में आग भर जाती है। छाती की चौड़ाई बित्ताभर बढ़ जाती है, इतनी ताकत आ जाती है बदन में कि किसी आदमी को मार दो तो पसलियां चटक जाएं। कुमार बाबू तो बस एक थप्पड़ का आदमी है, अगर एक जोरदार हाथ लग जाए तो वहीं टें बोल जाए। बस उसकी आंखें...उन आंखों से बड़ा डर लगता है। सचमुच, अजीब हैं उसकी आंखें, जिंदा और ज्वलंत, इतना तेज है कि उनकी तरफ देखते रहना मुश्किल लगता है मानो उनमें आग भरी हो।

मालिक उसके कंधे पर प्यार से हाथ रखता है, "तुमको आदमी कितना चाहिए, दस-बीस...?"

"पांच आदमी।"

"बस पांच आदमी?"

"हां साहब, इतना काफी होगा।"

"अच्छा ठीक है, यह लो पांच सौ तुम्हारा और पांच सौ दारू पीने का, काम हो जाएगा तो मालामाल कर दूंगा।"

"पांच सौ का दारू? बाप रे! पांच सौ का दारू तो पांच महीना पिऊंगा।"

हजार रुपए के नोट उसने अपनी बंडी की जेब में डाल लिए। अब वह हवा में उड़ रहा था। दो नशा था, एक विलायती बोतल का और दूसरा मालिक के वचन का, मालामाल कर देने का, मालामाल...

मालिक ने उसे फिर हवा दी, "हरामजादे को इतना पीटना कि छह-सात दिन चारपाई न छोड़े।"

वह ही-ही करने लगा, "देखिएगा, वह हमारे कोलियरी में घुसने का नाम तक नहीं लेगा।"

उसी दिन से वह कुमार बाबू के पीछे लग गया। वह भी और उसके साथी भी, सभी टोह में थे कि कभी तो अकेला हाथ आएगा क्योंकि खुलेआम उस पर हाथ डालना मुश्किल था। साला दो टके का आदमी लीडरी झाड़ने लगा है। लेबर लोगों में कैसा जोशीला भाषण देता है। मालिक ने कितनी बार कहा कि पैसा तय कर लो, पांच सौ रुपए, हजार रुपए महीना, साला कहता है कि हम बिकने वाला नहीं। साला इस दुनिया में क्या नहीं बिकता,

भगवान भी बिकता है कि नहीं बोलो? ये जो बड़ा-बड़ा लोग मंदिर, मस्जिद और धर्मशाला बनवाया है, यह क्या है? ये सब भगवान को खरीदता है कि नहीं? साला जिद्दी आदमी, उसे मालूम नहीं कि आदमी जिस चीज को घोंट नहीं सकता, निगल नहीं सकता, उसको थूक देता है–आक्...थू...

उसने फिर बंडी की जेब से बोतल निकालकर पी। आपस में बात करते ननकू और उसके साथियों को एक नजर देखा। ये साले सब बेजान केंचुए हैं, नालियों में रेंगने वाले। इनको मालिक जब चाहे जूते के नीचे मसल सकता है। साला सच बोलता हूं तो ननकू को बुरा लगता है, लगने दो बुरा, मेरा क्या बिगाड़ लेगा साला दलाल...?

कई रातों के बाद कुमार बाबू अचानक एक रात उन्हें मिल गए। अकेले। झरिया गए थे। वापसी में देर हो गई, सो जल्दी पहुंचने की नीयत से आम रास्ता छोड़कर 'गोफ एरिया' से पगडंडी पकड़कर आ रहे थे। शिकार को बिलकुल हत्थे चढ़ता देख सारे फौरन जमा हो गए, चील की तरह झपट्टा मारा और कुमार बाबू को दबोचकर ले भागे।

वे चिल्लाते रहे, "तुम लोग कौन हो? मजदूर हो, चोर हो, किस पार्टी के आदमी हो? मालिक के पहलवान हो, कौन हो तुम...? कहां ले जा रहे हो मुझे? मैं तुम्हीं लोगों के लिए तो लड़ता हूं, तुम्हीं लोगों के लिए..."

"चुप हरामजादे," किसी ने गठरी पर एक जोरदार घूंसा जमाया।

कुमार बाबू की आवाज वहीं रुक गई, कई मिनट तक रुकी रही, फिर अचानक उन्होंने चीखना शुरू कर दिया, "मुझे बचाओ–ये लोग मुझे ले जा रहे हैं। दे आर किडनैपिंग मी।"

उन लोगों ने फिर घूंसे बरसाए, "साला अंग्रेजी बोलता है, अंग्रेजी का चोदा...!"

मगर वे बराबर चीखते रहे। रात के अंधेरे में जो कोलियरी में कुछ और गहरा होता है, उनकी आवाज जैसे दूर-दूर तक बिखरती फैलती चली गई, गरजती और गूंजती रही। कुछ लोगों ने सुना भी, मगर बेमतलब यहां कौन किसी के फटे में टांग अड़ाता है, इसलिए वे लोग कुमार बाबू को उठाकर हल्के से निकल भागे और एक वीरान जगह, एक खाली झोंपड़ी में, जहां कभी शराब बिकती थी ले जाकर पटक दिया।

कुमार बाबू दर्द से कराहने लगे, धीरे-धीरे उठकर बैठ गए, अब वे सचमुच डर गए, "तुम लोग कौन हो?"

"तुम्हारे बाप।"

"देखो मुझे छोड़ दो, इन पूंजीपतियों के हाथ का हथियार मत बनो, मैं भी तुम्हारी तरह गरीब आदमी हूं। मैं यह लड़ाई अपने लिए नहीं लड़ रहा हूं, यह लड़ाई तो..."

"चुप कर हरामजादे, यहां भी भाषण देने लगा।"

"मैं चुप नहीं रहूंगा, यह अंग्रेज का राज नहीं, पंडित नेहरू..."

एक जोरदार लात पड़ी थी उन पर और वे लुढ़क गए, कमजोर आदमी थे, करारी

चोट से गठरी की तरह सिमट गए।

कालाचंद आज सुबह से पी रहा था। हां, अंग्रेजी पी रहा था। उसके सारे बदन में आग भर चुकी थी, कुमार बाबू के चीखने से एकदम कुपित हो गया और फौरन मांस की गठरी पर छलांग लगा दी, चमड़े के बूटों समेत उनके पेट पर चढ़कर घूम गया।

आवाज रुक गई।

उम्मीद थी वह रोएगा, चिल्लाएगा, माफी मांगेगा, कभी मजदूरों को न भड़काने की कसम खाएगा। मगर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ, बस मांस की गठरी धीरे-धीरे खुल गई।

माचिस जलाकर उन लोगों ने देखा, "अरे बाप रे, ये तो मर गया।"

शक दूर करने के लिए दूसरी तीली जलाकर देखा, उस पर भी जी नहीं भरा तो मोमबत्ती मंगाई गई, मोमबत्ती की मद्धिम रोशनी में देखा। कुमार बाबू बिना किसी हरकत के मोम के पुतले-से पड़े हुए थे। अब मोमबत्ती को चेहरे के और पास लाया गया। आंखें खुली थीं, आंखों में दर्द के अहसास से ज्यादा हैरत थी और एक खास बात यह कि उन आंखों का तेज मिट चुका था।

मालिक को खबर दी गई तो वह हत्थे से उखड़ गया, "हरामजादों, जान से मारने को थोड़े ही कहा था, उसकी तो बस पिटाई करनी थी, भुगतो..."

वह गांव भाग गया। उसे कुछ भी पता नहीं चला कि इस बीच कोलियरी में क्या-क्या हुआ। एक दिन कोलियरी का बाजार बंद रहा। दो दिन कोलियरी में हड़ताल हुई, बड़े-बड़े लीडर आए, सभाएं हुईं, भाषण हुआ, पुलिस भी आई, माइनिंग डिपार्टमेंट ने अलग हंगामा मचाया। कुमार बाबू कोई साधारण आदमी तो थे नहीं।

दो महीने तेरह दिन बाद पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया, मगर तब तक मामला पूरा ठंडा पड़ चुका था। नोटों की बरसात हो चुकी थी। सबने अपना हिस्सा पा लिया था। मालिक ने अपने दामन के सारे दाग धो लिए, सारा किया-धरा उसी के सर पर आ पड़ा। मालिक ने भी हाथ खींच लिया। वह तो चौदह साल के लिए चला ही जाता, मगर भला हो किश्वरी बाबू वकील का, उसने मुकदमा लड़ा। मुकदमा लड़ा कि उसे निष्कलंक निकाल लिया। मगर इस जंजाल से निकलते-निकलते उसका सब कुछ बिक चुका था।

उसे फिर प्रफुल्ल जोशी ने अपनी कोलियरी में घुसने नहीं दिया, यद्यपि उसकी बहन को दो साल तक रखैल बनाकर रखा।

उसने महसूस किया मानो उसके शरीर की सारी ताकत छीन ली गई हो। फिर बंडी की जेब से बोतल निकाली, थोड़ी-सी चढ़ा ली और चारों तरफ अधखुली आंखों से देखा। सब लोग बातचीत में मगन थे। ननकू का लाया आदमी चित्त लेटा था, उसने झुककर उसके बाजू को थपथपाया, "इसको बचाकर रखना, साला लोग चूस लेता है, बदन की सारी ताकत खींचकर गंडेरी की तरह थूक देता है।"

वह उठा, दो-चार कदम लड़खड़ाकर चला, गिरने को हुआ तो बैठे आदमियों में से एक ने उठकर थाम लिया, दूसरी बांह पहले ही किसी दूसरे साथी ने पकड़ ली थी। बैठे लोगों में से किसी ने यूं मजाक किया, "ले जाकर कहीं ढ़केल दो।"

वह रुक गया, पलट कर बोझिल आंखों से धुंधले चेहरों को देखा, "कौन ढकेलेगा? हमको कौन ढकेलेगा? साला, सारा कोलफील्ड में है कोई माई का लाल जो कालाचंद को हाथ लगा दे? बोल, है कोई माई का लाल? बाघ का बच्चा??"

वह फिर पलट गया। बाईं ओर खुले में देखा। दूर-दूर तक ऊबड़-खाबड़ जमीन, दूर कोयले का ढेर, वनतुलसी की झाड़ियां, साइट पर खामोश खड़े कोलटब, पत्थर-सी निर्मम बेरहम दुनिया, ये परछाइयां। ये सब परछाईं हैं, खामोश तमाशा देखने वाले, कोई कुछ नहीं बोलता, जरा-सी आवाज नहीं उठाता और स्याह अंधेरा सब ढके रहता है, छिपाए रहता है, रोशनी की एक किरण को भी सर उठाने नहीं देता, यहां तक कि कोलियरी और मुहानी के बल्ब भी धुंधलाए रहते हैं।

सारा दृश्य देर तक उसकी आंखों में डोलता रहा।

कालाचंद बावरी जब चला गया तो ननकू ने कहा, "साला दारू पी लेता है तो अपनी औकात भूल जाता है, अपने समय में प्रफुल्ल जोशी की दलाली में लेबर को कम सताया है? कुमार बाबू जैसे धाकड़ आदमी को पी गया, गुजराती बच्चे ने मुंह से खिलाया और नाक से निकाल लिया। उसे तो चूतड़ पर लात मारकर भगाया ही, साथ ही जवान बहन को भी ताप गया।"

मौला बोला, "किसकी बात कर रहे हो, रानी की? अगले हफ्ते मिली थी, उसने फिर किसी से ब्याह कर लिया है।"

कल्याण बोला, "बेचारी ब्याह क्या करेगी, फुटबाल की तरह है, इसको कभी यह पास देता है, कभी वह पास देता है।" सब लोग हंसते हैं।

उनकी बातों से अलग वह यह सोच रहा था कि कालाचंद बावरी ने उसे 'पाठा' कहा है, दुर्गापूजा का पाठा अर्थात बलि का बकरा, उसने ऐसा क्यों कहा? क्या कोलियरी की नौकरी इतनी ही खतरनाक है? अगर इतनी खतरनाक है तो लोग करते क्यों हैं? क्या ये सैकड़ों-हजारों लोग, ये सब बलि के बकरे हैं और वह खुद भी?

उसने अपना बाजू उठा कर देखा, इसकी ताकत कौन छीन सकता है?

कौन छीन सकता है?

ज्वाला बाबा फूलमुनिया के साथ पकड़े गए हैं। ज्वाला बाबा बूढ़े आदमी नहीं हैं। चालीस साल उम्र होगी। सर में अभी सफेद बालों की मात्रा कम है। बाबा तो उन्हें इसलिए कहा

जाता है कि वे ब्राह्मण हैं। ब्राह्मणों की कोलफील्ड में काफी इज्जत की जाती है। उनसे ज्यादा बूढ़े लोग भी उन्हें प्रणाम नहीं करते, सीधे कहते हैं, "पांय लागी बाबा।"

और जवाब में बाबा सिर्फ एक शब्द बोलते हैं, "जिओ"। अगर बहुत खुश हों तो एक शब्द और जोड़ देते हैं, "आनंद करो।"

उनको यह श्रेष्ठता शास्त्रों में दी गई है या नहीं, इसका तो पता नहीं, मगर महागुरु चाण्क्य ने जो प्रतिष्ठा उन्हें प्रदान की है, वह कम से कम आज भी इस काली नगरी में इस तरह विद्यमान है कि कोई उन पर हाथ नहीं उठाता। हाथ उठाने की सोच भी नहीं सकता। उनके आशीर्वाद के बिना कोई काम नहीं होता, यहां तक कि लौंडों का नाच भी नहीं। ब्राह्मण चाहे शराब पिए, औरतों के साथ सोए, उसकी इज्जत पर कोई आंच नहीं आती, वह ब्राह्मण ही रहता है अर्थात् बाबा।

उस दिन भी जब बाबा पकड़े गए तो किसी दुसाध, भूइयां या बावरी की हिम्मत नहीं हुई कि बाबा को टोक देता। कोलियरी का कोई दूसरा आदमी भी होता तो उन्हें आंख पर बैठाता, मगर न जाने कहां से श्रीवास्तव तब निकल आया जो कायस्थ था और अपनी कूटनीति से जोड़-तोड़ और साजिशें करने में पूरा गुरुघंटाल था। वह आज यहां भी अपना काम कर गया। उसने कोई हो-हल्ला किए बिना कुछ लोगों का ध्यान फूलमुनिया के घर की तरफ मोड़ दिया।

हालांकि ज्वाला बाबा को फूलमुनिया के घर में घुसते हुए सिर्फ मंगल पान वाले ने देखा था। उसने यह बात श्रीवास्तव को बताई और उसने इस मौके का पूरा लाभ उठाया।

श्रीवास्तव बहुत दिनों से मौके की तलाश में था। ज्वाला बाबा यूनियन लीडर थे। उन्होंने आहिस्ता-आहिस्ता कोलियरी में ऐसे पांव जमा लिए कि बेचारे श्रीवास्तव का पत्ता ही साफ कर दिया। एक मीटिंग में खुलेआम उसे चोर, बेईमान और मालिक का चमचा कहा। आज अवसर मिल गया था कि सूद समेत कर्ज वसूल कर लिया जाए। अब वह उन पर बीच-बाजार में चरित्रहीन होने का आरोप लगा सके, इसलिए इस बात की सचाई जानने के लिए मंगल की दुकान पर जमकर बैठ गया।

बावरी थोड़ा परली तरफ काफी दूर है। अगर कोई चित्रकार कोलियरी का लैंडस्केप बनाना चाहे तो वह यूं बनेगा। सबसे पहले चार-पांच कमरों की एक इमारत जो कोलियरी आफिस है। उससे सटे दो-तीन कमरों में चंद क्वार्टर हैं जो बाबू क्वार्टर कहलाते हैं। वहां से कोई दो सौ गज के फासले पर कोलियरी की खान है जिसके एक सिरे पर गाड़ियां अर्थात् कोलटब खड़ी रहती हैं और उसी के साथ एक शेड में 'हालिज' की रस्सी खींचने वाले चक्के और मोटरें हैं। एक तरफ कोयले के ढेर हैं जिसे लोडिंग साइट कहते हैं। उसके बाद जमीन का एक बड़ा टुकड़ा जो नीचे धंस कर जमीन की आम सतह से नीचा हो गया है। ये बैठी हुई जमीन वनतुलसी की झाड़ियों से भरी रहती है और चारों दिशाओं से जिसमें

पगडंडियों का जाल बिछा हुआ है उसी बेकार और परती जमीन के इर्द-गिर्द धोड़े हैं—भूइयां धोड़ा, मुंगेरिया धोड़ा, गेवाली धोड़ा और उनसे थोड़ा अलग बावरी धोड़ा।

बावरी बंगालियों की एक गरीब जाति है लेकिन जोश और खुशी से लबालब भरी होती है। यहां मर्द और औरतें दोनों शराब पीते हैं, गाते हैं। यही कारण है कि बावरी धोड़े से अकसर झूमर गाने की आवाज आती रहती है।

"बड़ो घर इज बहु बेटी बड़ो बड़ो चूल गो

घमाए घमाए खोपा बांधे माथे गेंदा फूल गो।"

ये बेचारी गरीब औरतें नहीं जानतीं कि बड़े घर की बहू-बेटियां न जूड़ा बांधती हैं, न गेंदे का फूल लगाती हैं। वे तो बस सोने के जेवर से सजी रहती हैं। जूड़ा बांधे और फूल लगाए तो यही बावरी औरतें हाटों और बाजारों में घूमती हैं। दबंग, नंगा, तीखा हुस्न जो अकसर ऊंचे लोगों को अपनी बस्तियों में खींच ले जाता है, ज्वाला बाबा जैसे लोगों को भी।

तो उसी बावरी धोड़े के किनारे पान की यह एक गुमटी है जहां दिन में पान-बीड़ी और रात में शराब बिकती है। उस गुमटी के सामने दो कोठरी के बाद तीसरी कोठरी फूलमुनिया की है। अगर कोई आदमी पान की दुकान में बैठकर देखना चाहे तो फूलमुनिया के दरवाजे साफ दिखाई देंगे।

श्रीवास्तव जमकर वहीं बैठ गया। उसने दुकान में आए दो-चार आदमियों के भी कान भर दिए। वे लोग भी तमाशा देखने के लिए रुक गए। वे लोग समझते थे कि यह बात सिर्फ उनको मालूम है लेकिन उनसे ज्यादा अनुभवी औरतों को पहले ही गंध लग गई थी।

उधर बाबा इन बातों से अनजान फूलमुनिया की काया को पवित्र करने में लगे थे। काफी देर बाद निकले, लेकिन जैसे ही श्रीवास्तव पर नजर पड़ी तो लंगड़ाकर चलने लगे। फिर बिना पूछे ही बोल पड़े, "पांव में मोच आ गई थी, सो बैठाने चले आए।"

श्रीवास्तव हंसा, फिर जरा ऊंची आवाज में पूछा, "पीड़ा खत्म हो गइल, बाबा?"

बाबा इस कटाक्ष का अर्थ समझ रहे थे। वे यह भी जानते थे कि इतनी ऊंची आवाज केवल लोगों को सुनाने के लिए है, मगर ऐसी स्थिति नहीं थी कि इस सवाल का जवाब देते। मौके की नजाकत को भांपते हुए यहां से खिसक चलने में ही भलाई समझी, इसलिए बिना श्रीवास्तव को जवाब दिए लंबे डग भरकर गेवाली धोड़े के पास से नीचे ढलान में पगडंडी पकड़कर उतर गए। मगर वहां भी पीछा नहीं छूटा। जाते-जाते दो औरतों की आवाज साफ सुनाई दी। कोई औरत किसी दूसरी औरत को सुनाकर कह रही थी, "सुनल' हो दुलरी की माई, अब तो इमली के पेड़ में आम लागी।"

दूसरी बोली, "हां बहिन, नाली में गंगा बहेला ई कलजुग मा।"

उनका हंसी-मजाक कब तक चलता रहा पता नहीं, लेकिन तब तक ज्वाला बाबा

इन आवाजों के दायरे से काफी दूर निकल चुके थे।

श्रीवास्तव का ज्वाला बाबा के बारे में यह कहना है कि सांपों में काला सांप और ब्राह्मण में काला ब्राह्मण बहुत खतरनाक होता है। वह गलत नहीं कहता। मगर अपनी जगह यह भी सच है कि अगर कायस्थ गोरा हो तो वह भी कम नहीं पड़ता श्रीवास्तव ने घंटे भर में यह बात सारी कोलियरी में फैला दी। हालांकि इस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई और होनी भी नहीं चाहिए थी। यह तो रोज की बात है। यहां इन हांड़ियों और बावरियों की इज्जत का मोल आम मिडल क्लास वालों की तरह नहीं है। सच तो यह है कि इनकी इज्जत का मोल है ही नहीं। उनका सब साफ और पवित्र है।

ऐसी घटनाओं से न कोलियरी में कोई हलचल होती है, न ही आफिस में कोई हंगामा मचता है, बस यार-दोस्त जरा-सा मजा लेते हैं। कुछ फब्तियां और व्यंग्य कसी जाती हैं। इसलिए ज्वाला मिश्र को रास्ते में रोक कर जमालुद्दीन अंसारी ने मजाक किया, "क्या मिश्रा जी, दिन दहाड़े डाका डालना शुरू कर दिया, अमा रात तो हो लेने देते।"

मिश्र जी नाराज नहीं हुए। ऐसी बातों पर यहां कोई नाराज नहीं होता बल्कि ऐसे मुस्कराता है जैसे घटना के प्रति अपनी स्वीकृति जाहिर कर रहा हो। मिश्र जी खुशी से बोले, "अंसारी साहब, पांव में मोच आ गई थी, वहां बैठाने चला गया था, आप लोग तो झूठ-मूठ राई का पहाड़ बना देते हैं।

फूलमुनिया मोटी-ताजी, बहुत कसी हुई औरत थी। इस बात को ध्यान में रखते हुए जमालुद्दीन ने हमदर्दी से पूछा, "कहीं चोट तो नहीं आई, बाबा?"

"आप भी क्या मजाक करते हैं, अंसारी साहब!"

"अरे भाई मजाक नहीं, आपने जो पहाड़ की बात की तो आम तौर पर पहाड़ पर चढ़ने वालों की कुहनियां टूट जाती हैं, देखूं जरा।"

लोगों ने ठहाका लगाया तो मिश्र जी जरा-सा झेंप कर हंसने लगे।

इस काली नगरी में यह झेंपने या शर्माने की बात नहीं है। इसे तो मर्दानगी का ही एक नमूना समझा जाता है। लोग तो अंडरग्राउंड में भी कोई अंधेरी गुफा ढूंढ लेते हैं और किसी कामिन को खींच ले जाते हैं। ये कामिनें जो मर्दों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करती हैं। बाहर भी, अंडर ग्राउंड में भी। वे जानती हैं कि मर्द एक ऐसा ताकतवर जानवर है जिससे बचने का कोई उपाय नहीं। खासतौर से इस कोलफील्ड में। इसलिए एक हद तक ऐसी बातों की आदी हो जाती हैं। धीरे-धीरे उनमें एक तरह की हिम्मत और निडरता आ जाती है और मुंह इतना खुल जाता है कि अगर इस सिलसिले में कोई सवाल किया जाए तो फौरन जवाब देती हैं और अकसर लाजवाब कर देती हैं।

उसी तीसरे पहर में कैशियर बाबू ने चाय मंगवाई थी। वहां ज्ञान सिंह इंजीनियर और अधेड़ उम्र के लोडिंग बाबू जायसवाल भी मौजूद थे। चाय के पैसे दिए थे एक मजदूर को

लेकिन उसने चाय भिजवा दी फूलमुनिया के हाथ। वह चाय की प्याली रखकर जाने लगी तो कैशियर बाबू ने चुटकी ली।

"ऐ फूलमुनिया, आज क्या हुआ था रे?"

"कुछ तो नहीं हुआ।"

"बताओगी नहीं, ज्वाला मिश्र से क्या गड़बड़ हुई थी?"

"हट," वह बड़ी अदा से शर्माई।

"अब देखो, छिपाने से क्या फायदा।"

"बाबू, तुमको जरा भी शरम नहीं लगती?"

"शरम-वरम की बात छोड़ो, सारी कोलियरी में तुमको बस एक ज्वाला बाबा ही मिला था?"

उसने शरारत भरे अंदाज में कहा, "क्या करें कैशियर बाबू, एक हफ्ते से घिघिया रहा था, सो हमको दया आ गई।"

सब लोग हंसने लगे। जब हंसी रुकी तो जायसवाल ने कहा, "कभी हम पर भी तो यह दया करो।"

"छी," वह तुनक कर बोली, "आप बाल-बच्चेदार हैं, ऐसी बात करते हैं?"

उन बावरियों की भी एक दिलचस्प बात है कि जब तक ये कुंवारी हैं चाहे जो कर लें। मगर शादी के बाद ये उसे बड़ा पाप मानती हैं।

यहां इस काली दुनिया में पाप क्या है, पुण्य क्या है कुछ पता नहीं चलता। बड़े-बड़े जनेऊ धारियों के जनेऊ यहां उतर गए हैं। बड़े-बड़े ब्रह्मचारियों का ब्रह्मचर्य यहां के झोंपड़ों, झाड़ियों और कोनोखतरों में पड़ा सिसक रहा है। ज्वाला मिश्र तो बेचारे साधारण आदमी हैं। अकसर कहते रहते हैं—

—"आइल लछमी टाल्ती न लगावल जात हो।"

मतलब यह कि अगर लक्ष्मी आ रही हो तो उसके आगे रोक नहीं लगाना चाहिए। लोग समझते हैं कि यह बात वे सिर्फ पैसे के मामले में कहते हैं हालांकि इसका अभिप्राय दोनों लक्ष्मियों से है।

तो इस शाम हर जगह यही चर्चा थी। चाय और पान की दुकान पर लोग चटखारे ले-लेकर बात कर रहे थे। नमक-मिर्च का लेप भी लगाया जा रहा था और पूरा वृत्तांत बताया जा रहा था। उनकी तोंद का खूब मजाक उड़ाया जा रहा था और उनके लंगड़ाकर चलने का अभिनय भी उतारा जा रहा था। चारों ओर हंसी मजाक का वातावरण था। लेकिन कोई नहीं जानता था कि सारी बातों को हवा किसने दी। यह सारा चमत्कार तो बस एक ही आदमी ने किया था, श्रीवास्तव ने।

सहदेव ने भी सारा माजरा सुन रखा था, इसलिए रात में ननकू से पूछा, "यह ज्वाला

मिश्र कौन है?"

ननकू ने हैरानी से उसे देखा, "ज्वाला मिश्र को नहीं जानते?"

जिस शनिवार को उसने पहला हफ्ता उठाया उसी दिन उसकी मुलाकात ज्वाला मिश्र से हो गई। अगर उन्हें कोई नहीं जानता तो यह हैरत की बात ही है। वे कोलियरी लीडर हैं। बड़े नहीं, छोटे लीडर हैं, इसलिए अकसर जो-सो मजाक भी कर लेता है और चंदे के दिन टरकाने की भी कोशिश करता है। हालांकि यह आसान काम नहीं है। कबूतर की आंख और कुत्ते की पहचान रखते हैं मिश्र जी।

खद्दर का कुर्ता पहनते हैं। वैसा नहीं जैसे बड़े नेता पहनते हैं। इतना साफ-सुथरा और कलफ से खड़खड़ाता हुआ कि अगर एक मक्खी भी बैठ जाए तो साफ नजर आ जाए। जी नहीं, वैसा नहीं, कोलियरी की स्याह धूल चंद घंटों में कुर्ते और पाजामे की सारी सफेदी खा जाती है। नीचे पाजामे की मोहरी और ऊपर कुर्ते के आस्तीन काले हो जाते हैं। ज्वाला बाबा बेचारे मोटे आदमी हैं। तोंद निकली हुई है। तोंद पर कुर्ता हरदम तना रहता है जो कुर्ते की सारी खूबसूरती को फीका कर देता है। मोटे बदन से बहने वाला पसीना कलफ की सारी खड़खड़ाहट को खत्म कर देता है, इसलिए मिश्र जी जो कुर्ता पहनते हैं, उसमें न कलफ डलवाते हैं और न इस्तरी करवाते हैं। नतीजा यह होता है कि सारा लिबास उनके मोटे शरीर से चिपका रहता है।

मोटे लोग अकसर आदत से विनोद-रसिक होते हैं। मिश्र जी भी हंसने वाले आदमी हैं। फिर उनका काम भी ऐसा ही है कि सबसे मेलमिलाप रखना जरूरी है। इसलिए मजदूरों से भी उनकी गाढ़ी छनती है और आफिस वाले भी छेड़छाड़ करते रहते हैं। मिश्र जी किसी बात का बुरा नहीं मानते बल्कि खुद भी चुटकुले छोड़ते रहते हैं। मगर कमबख्त पैसे के मामले में बिलकुल ब्राह्मण हैं। मजाल है जो कोई उनका पैसा मार ले। छाती पर चढ़कर वसूल लेते हैं। बार-बार यही दुहराते हैं कि अरे भाई नेता जी को देना है, मेरे बाप की सम्पत्ति थोड़े ही है और जब पैसा जेब में चला जाता है तो ऐसा मीठा बोलते हैं कि देने वाले के दिल की सारी मैल धुल जाती है।

यह नेता जी जिनकी चर्चा ज्वाला बाबा बार-बार करते हैं, बड़े लीडर हैं। प्रत्येक बड़े लीडर की देख-रेख में दर्जनों बल्कि बीसियों कोलियरियां होती हैं। छोटे लीडर उनके कारिंदों की तरह चंदा उगाहते हैं और कोलियरी के मामले निपटाते हैं। कभी-कभी जब मामला ज्यादा उलझ जाता है तो बड़े लीडरों की मदद लेनी पड़ती है। जिस तरह बड़े-बड़े जागीरदार अपनी जागीरों का दौरा करते थे, वैसे ही बड़े लीडर भी कभी-कभी कोलियरी के मजदूरों को दर्शन दे देते हैं, वर्ना उनको मतलब सिर्फ अपने चंदे से होता है। बड़े लीडर साल में

छह रुपया प्रति मजदूर लेते हैं जबकि छोटे लीडर एक रुपया महीना हर मजदूर से वसूल करते हैं।

यह एक रुपया साल में लाखों रुपया बन जाता है, इसमें कंपनी की तरफ से बंधी हुई रकम भी शामिल होती है और ठेकेदारों से मिलने वाली नजराने की रकम भी। मजदूरों की छोटी-मोटी समस्याओं की फीस और गलतियों की रिश्वत आदि तो छोटे लीडर वसूला करते हैं ही। इसी लाखों रुपए सालाना की जमा रकम की वजह से ही बड़े लीडर बंगलों में रहते हैं, कारों में घूमते हैं और शराब पीते हैं। बड़े-बड़े पुश्तैनी जमींदारों की तरह हुक्म चलाते हैं। हुक्म बजा लाने के लिए पहलवान रखते हैं। यह पहलवान नेता जी के इशारे पर जब-तब कोलियरी में हंगामा मचाते हैं और उनसे बचने के लिए मालिक एक बंधी रकम लीडर को कर के रूप में देता है।

दूसरी तरफ, छोटे लीडर ज्यादा तकलीफों का सामना करते हैं। उनकी कमाई भी कम होती है और मजदूरों, मालिकों के धक्के भी खाने पड़ते हैं। लेकिन ये लोग भी बड़े काइयां और धूर्त होते हैं। दो-चार रुपए से भी हाथ गंदा कर लेते हैं।

उस दिन सहदेव जैसे ही हफ्ता लेकर बाहर आया, ज्वाला बाबा ने उसे दो-तीन आदमियों के साथ घेर लिया, "का हो, टिकट कटा लेल'?"

"टिकट!" वह चौंककर पलटा, "कैसा टिकट?"

"यूनियन का टिकट और काहे का।"

उसके साथ लालू दुसाध था। उसने मुश्किल कुछ आसान कर दी, "आज तो इसका पहला हफ्ता है बाबा, अगले हफ्ते ले लीजिएगा।"

"और अगर आजकल में इसका हाथ-पांव टूट जाए या इसकी जान चली जाए तो कौन लड़ेगा कंपनी से? क्या वे साले लाल झंडा वाले आएंगे या वह चमचा श्रीवास्तव खड़ा होगा?"

लालू ने कहा, "क्या अशुभ बोलते हैं, बाबा, सुबह-सुबह।"

"लो सच्ची बात कहो तो अशुभ हो जाती है। अरे यह बेचारा तो नया आदमी है, इसे क्या मालूम कि खान में क्या-क्या होता है, मगर तुम तो नए नहीं हो।"

लालू थोड़ा हिचकिचाया, "नए की बात नहीं है, अभी तो बेचारे को बीसियों सामान इकट्ठे करने हैं।"

बाबा के साथ आया हुआ आदमी समझाने लगा, "अरे वह तो ठीक है, मगर कौन-सा दस-बीस देना है, बस एक ही रुपए की तो बात है।"

बाबा ने उसकी बात में जोर पैदा किया, "एक रुपया तो आदमी पान खाके थूक देता है, बीड़ी पीके फूंक देता है।"

"सो तो ठीक है मिश्र जी, अगले हफ्ते लेते तो अच्छा था।"

"देखो, तुम जो रुपया दोगे, मेरी जेब में तो जाएगा नहीं, नेता जी के पास जाएगा। उनके लिए एक रुपए का कोई महत्व नहीं है और न ही इस एक रुपया का कोई मोह है। उनको तो बस एक ही चिंता है कि किसी तरह तुम लोगों का भला हो। कल ही नेता जी के यहां से खबर आई है कि कुछ नए आदमी काम पर लगे हैं, उनको मेंबर बना लो। ऐसा न हो कि कोई बात हो जाए। उन्होंने तो नाम भी भिजवाए हैं। तुम्हारा नाम सहदेव है न?"

सहदेव अपना नाम सुनकर दंग रह गया। नेता जी कितनी खबर रखते हैं! कितने जागरूक हैं! अब टालमटोल की कोई गुंजाइश नहीं थी। उसने एक रुपया निकालकर उन्हें थमा दिया। मिश्र जी ने रसीद बुक निकाली और पूछा, "तुम्हारा नाम सहदेव है न, सहदेव क्या?"

"सहदेव रमानी।"

"पिता का नाम?"

"कैलाश रमानी।"

"पता?"

"ग्राम सतगांव, जिला गया।"

मिश्र जी ने रसीद फाड़कर उसे दे दी, "लो अब तुम हमारी यूनियन के मेंबर बन गए। अब जब कोई परेशानी हो, मैनेजमेंट सताए या किसी परेशानी में पड़ जाओ तब देखना हम तुम्हारी कैसी मदद करते हैं। अगर जरूरत पड़ी तो इस एक रुपया के बदले हजारों रुपए खर्च कर देंगे।" और फिर अचानक उन्होंने पूछा, "अरे, वह तुम्हारा मियां साथी कहां गया?"

रहमत भी उसी भीड़ में खड़ा था। उसने बिना कोई बहस किए एक रुपया निकाल कर पकड़ा दिया। ज्वाला बाबा ने फिर कलम निकाला, "तुम्हारा नाम?"

घर पहुंचते-पहुंचते तीन रुपए और निकल गए। दो रुपए माइनिंग सरदार के और एक रुपया मुंशी का। सरदार और मुंशी को खुश रखना जरूरी था क्योंकि ड्यूटी बांधने का काम उन्हीं के हाथ में था और खान के अंदर ऐसी जगहें भी थीं जहां या तो गर्मी में या सारा दिन पानी में भीगकर काम करना पड़ता। जो लोग सरदार और मुंशी को हफ्ता देते थे उन्हें थोड़ी सूखी और हवादार जगहों में ड्यूटी मिलती थी। अपना मामला तय हो जाने के बाद उसने रहमत मियां के लिए भी कोशिश की। वह असल में रहमत मियां को अपने साथ ही रखना चाहता था और यह काम सरदार ही कर सकता था। इसलिए उसने माइनिंग सरदार का दामन पकड़ा।

माइनिंग सरदार रामावतार नाटे कद का अधेड़ बल्कि एक हद तक बूढ़ा आदमी था। यद्यपि शरीर से कमजोर था, लेकिन खान का बहुत अनुभव रखता था। वह खान की एक-एक

इंच जमीन से परिचित था, कहां कौन-सी खराबी है, कहां कितना जायज माल निकाला गया है, कौन-सी गुफा में काम बंद किया गया है, किस-किस कारण से कौन-सी सेम कितनी मोटी है, उससे कितना माल कट चुका और कितना बाकी है मानो वह एक समुंदर था। कभी-कभी तो ओवरमैन और इंचार्ज भी उससे सलाह लिया करते।

माइनिंग सरदार से जब उसने रहमत मियां के लिए बात की तो उसने उसे तेज और चुभती नजरों से देखा, "तुम्हारा कौन लगता है वह?"

"वह मेरा लगता तो कोई नहीं, बस गांव-घर का आदमी है।"

"यह तो मैं भी जानता हूं कि वह तुम्हारा कोई नहीं लगता। लग भी कैसे सकता है। तुम हिंदू हो और वह मुसलमान है, मगर तुम लोगों में इतना गहरा संबंध कैसे है? क्या वह तुम्हारा दोस्त है?"

दोस्त! दोस्त वह कह सकता था। मगर क्या वास्तव में वह दोस्त था? दस दिन पहले तक तो वह उसे जानता तक नहीं था। उसकी शक्ल भी नहीं देखी थी। उसने बड़ी सफाई से कहा, "नहीं, वह मेरा दोस्त भी नहीं।"

"फिर इतनी दया दिखाने की क्या जरूरत आ पड़ी?"

"बात दरअसल यह है कि वह बहुत कमजोर है।"

"कमजोर है तो क्या है? क्या तुम्हारे साथ रहने से उसकी कमजोरी दूर हो जाएगी?"

"नहीं, यह बात नहीं, सच्ची बात यह है कि वह अभी खान में काम करने के लायक नहीं है। उसे पूरा काम दे दिया जाए तो वह मर जाएगा। मेरे साथ रहेगा तो मैं एक नजर देख लूंगा।"

"देखने का क्या मतलब है? क्या तुम उसका काम भी कर दोगे?"

"मेरे साथ रहेगा तो मैं उसको हल्का काम दूंगा और उसका भारी काम खुद कर दिया करूंगा।"

नई बात थी। सरदार को अजीब लगी क्योंकि यहां कोई आदमी अपने हिस्से का भी काम सही से नहीं करना चाहता। उसने नीचे से ऊपर तक सहदेव को गौर से निहारा। आत्मविश्वास की जो चमक उसके चेहरे पर थी वह रामावतार की भीगी मगर अनुभवी आंखों से छुपी न रह सकी। उसने अप्रसन्नता दिखाते हुए उसकी बात मान ली, "ठीक है, यह ननकू पता नहीं कहां-कहां से मरे मुर्दे उखाड़ लाता है?"

रहमत मियां मरा मुर्दा नहीं था। वह बहुत जिंदा आदमी था। कम ही लोग इस बात को जानते हैं कि जिंदा रहने के लिए कौन-सी चीज जरूरी है। एक चीज होती है, पारिश्रमिक अर्थात् आदमी जो श्रम करे, जिसके लिए धूप में जले, पानी में भीगे, उसे इसका मूल्य भी मिलना चाहिए। जब यही मूल्य नहीं मिलता है तो आदमी अंदर से मरने लगता है। रहमत गांव के बड़े-बड़े काश्तकारों और खान साहबों के यहां बेगारी करते-करते इतना

टूट चुका था कि उसे विश्वास तक नहीं होता था कि वह यहां काम कर सकेगा। इसलिए वह बार-बार सहदेव से पूछता, "मुझसे हो जाएगा इतनी मेहनत का काम?"

सहदेव को उस पर बहुत दया आती थी। वह इतना कमजोर, दुबला और मासूम था मानो एक छोटा-सा कमसिन बच्चा हो और यह दानवों का जंगल था। पथरीली चट्टानों से संघर्ष करने के लिए हाथों में ताकत और कलेजे में दम होना चाहिए था। ये दोनों चीजें रहमत मियां के पास कम बल्कि बहुत कम थीं, इसलिए दिन भर की हाड़-तोड़ मेहनत से वह इतना थक जाता कि कभी-कभी तो वह कोयला लोड करते-करते हांफने लगता, पसीने में डूब जाता।

सहदेव उसे गैंता चलाने या कोयला काटने नहीं देता था। उसका काम था कि वह कटे हुए कोयले को गाड़ी में लोड करे। यह आसान काम भी उसके लिए भारी था। ऐसे समय सहदेव जल्दी-जल्दी उसका हाथ बंटाने लगता।

दूसरे अन्य मजदूर उस पर हंसते, मजाक उड़ाते। फिर दंगल के दूसरे लोगों को भी उस पर दया आने लगी और वे भी उसे आसान काम देने लगे।

रहमत को जिस दिन पहला हफ्ता मिला उसे लगा कि वह खुशी से पागल हो जाएगा। पहले तो वह नोट हाथ में थामे खड़ा रह गया जैसे उसे यकीन नहीं हो रहा हो। फिर धीरे-धीरे खून की लकीरें उसके चेहरे पर उभर आईं। चेहरा और आंखें दोनों रोशन होती गईं, एक अविश्वसनीय प्रसन्नता से मानो वह मदमस्त हो गया। फिर भी उसने सहदेव से पुष्टि चाही, "यह रुपया मेरा है!"

सहदेव हंस पड़ा, 'हां, तुम्हारा..."

एक महीने बाद रहमत मियां ने पचास रुपए का मनीआर्डर घर भेज दिया। यह बहुत बड़ी रकम थी। मनीआर्डर जब गांव पहुंचेगा तो सारे गांव में हल्ला हो जाएगा। उसकी बीवी खातून, जिसे गांव में कोई भी खातून नहीं कहता, खतुनिया कहते हैं, फूली नहीं समाएगी। उसके तो पांव भी जमीन पर नहीं पड़ते होंगे। पचास रुपए के अलावा उसने दो खुशबूदार साबुन और एक बोतल खुशबूदार तेल भी किसी जाने वाले के हाथ भेजा है। जब शादी हुई तब खुशबूदार तेल की शीशी मिली थी। उसको वह कई साल तक बचाकर रखे रही। गांव-घर में कहीं शादी होती या कोई त्यौहार आता तो जरा-सा लगा लिया करती। मगर पिछले दो सालों से शीशी खाली पड़ी थीं। खतुनिया ने उसे फेंका नहीं था। संभाल कर रखे हुए थी। कभी-कभी सूंघ लिया करती और उसे भी सुंघाती, "देखो तो, अभी तक कैसे दमदम महक रही है।"

लेकिन इस तरह के खुशी के क्षण बहुत कम आते थे। सारा दिन खान साहब की गुलामी करने के बाद जब घर वापस लौटता तो इतना थक चुका होता कि किसी चीज की तरफ देखने का मन नहीं होता था। उधर खतुनिया भी दिन भर के काम के साथ गोबर

जमा करती और महुए चुनती भूल चुकी होती थी कि जिंदगी में कुछ और भी है। बस कभी-कभी बिजली की कौंध की तरह...।

मगर रहमत मियां अब बहुत खुश रहता है। कुछ मोटा भी हो गया है। चेहरे पर चिकनाहट और चर्बी दोनों चढ़ गई हैं। एक दिन माइनिंग सरदार रामावतार ने टोक भी दिया, "कोलफील्ड का भात तो बस रहमत मियां को लगा है।"

किसी दूसरे ने कहा, "एकदम दिलीप कुमार की तरह दिखने लगा है।"

एक और आदमी ने हांक लगाई, "अब इसका ब्याह अजरी संग कर दो।"

अजरी एक बहुत मोटी लोडिंग कामिन थी। सब लोग हंसने लगे।

कोई तीन महीने बाद की बात है। वह तनख्वाह लेने के लिए खिड़की पर खड़ा था। उसके एक आदमी के आगे कालाचंद बावरी था। कालाचंद खिड़की के पास पहुंचा, नोट लेकर तेजी से पलटा और सारे रुपए उसके हाथ में थमा दिए, "इसको रख लो, मैं बाद में ले लूंगा।"

सहदेव ने महसूस किया कि वह बहुत घबराया हुआ था। पता नहीं, उसे किस बात का डर था। उसकी यह हरकत उसे बहुत अजीब लगी। इससे पहले कि वह कुछ बोले, समझे या उससे कुछ पूछे, कालाचंद बाहर निकल गया।

जब वह अपने पैसे लेकर आफिस से बाहर आया तो उसने देखा कि कालाचंद तीन आदमियों के बीच घिरा हुआ था। ये तीनों कपिल सिंह के आदमी थे। कपिल सिंह यूं तो चपरासी था मगर असल में मालिक का लठैत था। उसने मजदूरों में बड़े पैमाने पर सूद का कारोबार फैला रखा था और सूद वसूल करने के लिए दर्जनों गुंडे पाल रखे थे।

कपिल सिंह के एक आदमी ने कालाचंद की गिरेबान पकड़ ली, "साले पैसे निकालो।"

"पैसा?"

"अभी हफ्ता उठाया कि नहीं?"

"न, कहां उठाया है, इस हफ्ते काम ही नहीं किया है।"

"तब क्या यहां अपनी बहन को देखने आए थे?"

वह गरम होने लगा, "देखो, बढ़कर बात मत करो।"

"वह सब कुछ नहीं चलेगा, साले पैसे निकालो।"

"नहीं हैं मेरे पास, कह दिया न।"

"साला सिखाता है।" उनमें से एक ने उसके पेट में घूंसा जमाया, "चल निकाल, नहीं तो..."

"कह दिया न, नहीं मिला है हफ्ता," अब वह जोर-जोर से बोलने लगा ताकि लोग

जमा हो जाएं और बीच-बचाव करें।

"यह हरामजादा बराबर नाटक करता है, चल निकाल..."

दूसरे आदमी ने उसके गाल पर घूंसा लगाया। धीरे-धीरे दोनों आदमी उसे लप्पड़-थप्पड़ करने लगे। अब कालाचंद जोर-जोर से चिल्लाने लगा, "मारते क्यों हो? अरे मारते क्यों हो? मैं मर तो नहीं गया हूं, अबकी हफ्ता ले लेना।"

उनमें से एक आदमी ने दोनों को रोका, "जरा ठहरो, साले की तलाशी लो।"

दोनों आदमियों ने जल्दी-जल्दी उसकी जेबों में हाथ डाला। कमर टटोली, फिर धोती खोल दी। अंडरवियर नहीं पहने था, इसलिए बिल्कुल नंगा हो गया। उसने जल्दी से झपट कर धोती कमर में लपेट ली, "क्या नंगा कर दोगे? मैं झूठ नहीं बोलता, पैसा नहीं मिला है। उससे पूछ लो।" उसने पास खड़े सहदेव की ओर इशारा किया।

उनमें से एक साले ने कहा, "हम किसी साले से नहीं पूछेंगे।"

सहदेव का सारा खून सिमट कर कनपटी पर आ गया। एक तेज और तीखा गुस्सा उसके अंदर बहुत देर से फट पड़ने को तिलमिला रहा था। उसका दिल हुआ कि तीनों पर घूंसे की बौछार कर दे या फिर पास पड़े लट्ठ से सबकी धुनाई कर दे। गुस्से से लाल होकर उसने तीनों को घूरा, "क्यों मारते हो उसे?"

"उसने पैसा लिया है, साला बराबर धोखा देता है।"

"तुम्हारा पैसा लिया है तो इसका यह मतलब तो नहीं कि तुम उसके कपड़े उतार दोगे।"

"कपड़ा?" उसमें से एक ने गुस्से से कहा, "हम चाहें तो इसकी खाल उतार लें।"

अब मामला सहदेव की सहन-सीमा से बाहर हो गया था, "छूकर तो देखो उसे!"

अब उनके चेहरे पर आश्चर्य और करुणा का मिलाजुला भाव छा गया था। आश्चर्य इसलिए कि कौन है जिसने उनकी आवाज पर आवाज उठाने की जुर्रत की और करुणा इसलिए कि इसका अंजाम इसके लिए कितना खतरनाक होगा। कपिल सिंह के आदमी अब कालाचंद को छोड़ उससे उलझ गए, "तू क्यों दलाली कर रहा है? तुम्हारा तो साले बाल कबाड़ लेंगे।"

दूसरा तमक कर बोला, "ऐसी दया आती है बाप पर तो तुम खुद ही चुका दो।"

सहदेव अपना ताव कम किए बिना ही बोला, "सुनो, यह खून-पसीने का पैसा है, सूदखोरी का नहीं।"

अब मजदूरों की काफी भीड़ जमा हो गई थी। आफिस के लोग भी बाहर निकल आए थे, मगर इस मामले में कोई उलझना नहीं चाहता था इसलिए किसी ने बीच-बचाव की कोशिश भी नहीं की। कपिल सिंह के आदमियों का भी दिमाग चढ़ गया, "साले,

हड्डी-पसली एक कर देंगे अभी।" अचानक वह सहदेव की ओर लपका। सहदेव ने झट से पड़े हुए लट्ठ को उठा लिया, "हाथ लगाया तो खोपड़ी उड़ा दूंगा।"

तीनों रुक गए। तनाव अपनी आखरी सीमा तक पहुंच गया। ठीक उसी पल ननकू पता नहीं कहां से आ गया। वह तेजी से बढ़ा और दोनों के बीच जा धमका, "सरकार जाने दें, लड़का है।"

"कौन है, हो? खून में बहुत गर्मी हो गई है इसके।"

"मेरा ही आदमी है, बाबू साहब!" वह पलटा और सहदेव को डांटने लगा, "साले जानते नहीं हो, मालिक लोग हैं, इनके बिना एक दिन भी कोलियरी में रह सकोगे, इनसे कोई झगड़ा करता है?"

वह एक बार फिर पलटा और उन लोगों से प्रार्थना करने लगा, "अभी नया-नया आया है बाबू साहब, एकदम नया, महीना भर भी नहीं हुआ।" वह एक बार और पलटा और सहदेव को भीड़ से बाहर खींच लिया, "पानी में रहकर मगर से बैर पैदा मत करो।"

वह कुछ नहीं बोला। ननकू उसे थोड़ा आगे पहुंचाकर शायद उन लोगों को समझाने के लिए लौट आया।

आफिस से थोड़ा दूर निकल आने पर देखा कि कालाचंद उसके इंतजार में खड़ा है। जब कपिल सिंह के आदमियों से झगड़ा हो रहा था उसी समय वह चुपके से निकल भागा था। उसे कालाचंद पर पहली बार क्रोध आया, फिर भी उसने संयम बरतते हुए पूछा, "तुमने ऐसा क्यों किया?"

"क्या करता? साले पैसा छीन लेते।"

"मगर तुमने खास तौर पर मेरे हाथ में ही पैसा क्यों थमा दिया? और लोग भी तो थे।"

"और कोई पैसा नहीं लेता मेरे हाथ से। यहां जितना आदमी है, सब साला डरपोक है, किसी में हिम्मत नहीं।"

"तुममें है हिम्मत?" उसने तीखेपन से पूछा। पलभर के लिए कालाचंद चुप रह गया। शायद वह इस अप्रत्याशित हमले के लिए तैयार नहीं था लेकिन फिर दुख से बोला, "सहदेव, तुम हिम्मत की बात करता है। हम कपिल सिंह जैसे आदमी को घोल कर पी जाता था। मगर दुख, दुख तोड़ देता है। बदन के सारे नस को तोड़ देता है, नहीं तो मैं इन सालों को अपने इसके बराबर भी नहीं समझता।" उसने नीचे हाथ घुमाया।

अब तक सहदेव का क्रोध लगभग ठंडा पड़ चुका था। फिर भी तीखेपन से पूछा, "क्यों लिया था पैसा, दारू पीने को?"

"नहीं, गऊ कसम नहीं।"

"फिर?"

वह गंभीर हो गया, "यह बात मत पूछो।"

"तुम रोज दारू पीते हो, वही पैसा थोड़ा-थोड़ा करके दे क्यों नहीं देते?"

वह बोला, "मैं जीवन भर भी अगर थोड़ा-थोड़ा देता रहूंगा तो भी उनका कर्जा चुकता नहीं होगा। साला सूद का कर्जा, कर्जा नहीं गोरखधंधा होता है। मैंने सौ रुपया लिया था, दस रुपया हफ्ता सूद पर। वह बढ़कर दो सौ हो गया। अब बीस रुपया हफ्ता सूद लगता है। बोलो, बीस रुपया हफ्ता उसी को दे दूंगा तो खाऊंगा क्या?"

"मगर इसका कुछ न कुछ फैसला तो करना होगा।"

"कोई फैसला नहीं करना, मैं उन लोगों का पैसा नहीं दूंगा। क्या करेंगे ये लोग? मारेंगे बस। कोई जान से तो नहीं मारेंगे। अब तक मैं तीन सौ रुपया दे चुका हूं। अब कुछ नहीं दूंगा, एक पैसा नहीं।"

सहदेव ने एक वार और किया, "तुमने उस दिन कहा था न कि कोलफील्ड में कोई तुमको हाथ नहीं लगा सकता। आज तो देखा तुमको हाथ लगाते।"

वह चुप रह गया। कुछ नहीं कहा। कोई जवाब नहीं दिया। सर झुकाकर चुपचाप उसके साथ चलता रहा। थोड़ी देर बाद उसने सर उठाया तो सहदेव ने देखा कि उसकी आंखें भीगी हुई थीं। वह रो रहा था। एक पल के लिए ही सही, बिना आवाज ही सही, मगर वह रोया जरूर था। सहदेव को अफसोस हुआ। वह अचानक रुक गया, "मेरी बात का बुरा लगा तुमको?"

"नहीं, उस समय मैं पिए हुए था।"

उसने कालाचंद के कंधे पर हाथ रख दिया और ऐसे ही चलने लगा, "सिर्फ एक चीज तुमको धीरे-धीरे खा रही है।"

उसने नजर उठाकर देखा मानो पूछ रहा हो कौन-सी चीज?

"दारू।"

उसने जवाब नहीं दिया। सर उठाकर उलटे एक सवाल कर दिया, "क्या मैं अकेले पीता हूं? कोलियरी में सभी पीते हैं।"

"मैं सबको जानता हूं।"

वह बोला, "सहदेव, आदमी मजबूरी से पीता है।"

"ऐसी कौन-सी मजबूरी है भला?"

"यह मैं नहीं जानता, मगर पीना पड़ता है। कुछ न कुछ ऐसा होता है। जब आदमी चारों तरफ से घिर जाता है तो बस एक रास्ता रह जाता है। हमको तो प्रफुल्ल जोशी ने पीने की आदत डाली, मगर और सबको?"

बीच का वीरान रास्ता तय करके वे बाजार में चले आए। बाजार क्या, सिर्फ चार

दुकानें थीं। दो चाय की, एक पान की और एक दुकान में स्टेशनरी का छोटा-मोटा सामान मिलता था। यही बाजार था जहां रात की पारी वाले सुबह को और दिन की पारी वाले रात को जमा रहते। बड़े-बड़े सामान खरीदने के लिए यहां से पांच मील पर शहर आबाद था।

सहदेव ने उसे रोक लिया, "आओ, चाय पिओ।"

चाय की दुकान पर खड़े एक मजदूर ने यूं ही मजाक किया, "चाय से इसका क्या होगा? आज तनख्वाह का दिन है इसको जमुनिया की झोंपड़ी में ले जाओ।"

दोनों ने उसे घूर कर देखा, दोनों उस समय मजाक के मूड में नहीं थे। मजदूर उनके तेवर देखकर चुप हो गया।

चाय पीकर दोनों फिर चल पड़े। सहदेव ने उसका पैसा लौटा दिया। पहले कालाचंद का धोड़ा पड़ता था और उसके फर्लांग भर आगे सहदेव का, इसलिए फिर दोनों साथ चलने लगे। चलते-चलते सहदेव ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "मेरी एक बात मानो, पीना छोड़ दो।"

उसने बड़े इत्मीनान से कहा, "सच्चा आदमी हूं इसलिए झूठ नहीं बोलूंगा, यह अब हमसे नहीं छूटेगी।"

"क्यों नहीं छूटेगी?"

"देखो सहदेव, तुम उम्र में अभी मुझसे बहुत छोटे हो। अभी तुमको चार दिन ही कोलियरी में आए हुआ है। दुनिया भर के झूठ के बीच में मैं यही एक सच्चा काम करता हूं। यह सच बोलने पर मजबूर करती है, सच बोलने की हिम्मत देती है। इसे छोड़ दूंगा तो मैं भी कोयला हो जाऊंगा। काला कोयला, ऐसा।" उसने राह में पड़े एक कोयले के टुकड़े को ठोकर मारी।

सहदेव हंसा, "अगर थोड़े दिन तुम्हारे साथ रहूं, तो मैं भी शुरू कर दूंगा।"

तब तक कालाचंद का घर आ गया, मगर घर के सामने पहुंच कर दोनों ठिठक गए। वहां एक मोटी ताजी औरत खड़ी थी। औरत की उम्र ढल रही थी लेकिन उसने इतना बनाव-शृंगार कर रखा था, इतने चुस्त और महीन कपड़े पहन रखे थे कि अपनी उम्र से काफी कम दिख रही थी, इसलिए मोटापे में भी आकर्षक लग रही थी। उसे देखते ही कालाचंद क्रुद्ध हो गया, "तुम यहां क्यों आई हो?"

औरत ने जवाब देने के बजाए उल्टा सवाल किया, "तुमने आज फिर झगड़ा किया?"

"मैं पूछता हूं तुम यहां क्यों आई हो? मैंने तो तुमको मना किया था यहां आने से।"

औरत आहिस्ते से बोली, "मैंने सुना है कि उन्होंने तुम्हें मारा भी है।"

"उससे तुमको क्या?"

"तुम आखिर उन लोगों से बैर बसाके कैसे रह सकते हो?"

"उसकी चिंता तुम मत करो।"

"तुम एक काम करो, उन लोगों का चुकता कर दो।"

वह क्रोध से भर गया, "यह हमारा मामला है, हम समझेंगे। तुम यहां से जाओ। मैं तुम्हारी सूरत भी नहीं देखना चाहता।"

औरत को भी गुस्सा आ गया, "मत देखो मेरी सूरत, पर इसे रख लो।" उसमें सौ-सौ के चार नोट थे। कालाचंद ने आपे से बाहर होकर उसके हाथ से रुपया लेकर फर्श पर फेंक दिया, "नहीं चाहिए हमको, कुतिया!"

सहदेव जो इतनी देर से चुप खड़ा था, उसने आगे बढ़कर हवा में भागते नोटों को चुन लिया, "कालाचंद, इसे रख क्यों नहीं लेते?"

औरत ने चौंक कर उसे देखा, मगर बोली कुछ नहीं। तभी अचानक अप्रत्याशित ढंग से कालाचंद अपने 'धोड़े' में घुस गया और टीन का दरवाजा बंद कर लिया।

वे दोनों बाहर खड़े रह गए। वहां कोई नहीं था। स्याह धूल से भरा रास्ता एकदम खाली था, बिल्कुल नंगा।

"कालाचंद तुम्हारा कौन लगता है?"

औरत ने आंसू पोंछ कर कहा, "मेरा भाई है, कसाई है।"

सहदेव ने थोड़ा चकित होकर औरत को देखा, "तुम्हारा भाई है?"

औरत ने सर हिलाकर हामी भरी, कुछ देर बाद फिर बोली, "मैंने अभी-अभी सुना कि कपिल सिंह के आदमियों ने उसे बेइज्जत किया। मारा भी और धोती खोलकर नंगा भी कर दिया, सो मैं पैसे लेकर चली आई कि उसे इस जंजाल से छुटकारा दिला दूं। मगर काई बात इसकी समझ में नहीं आती।"

"जरा अक्खड़ आदमी है।"

"अक्खड़ होने से तो काम नहीं चलता, दुनिया में रहना है तो दुनियादारी भी करनी पड़ती है।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। हाथ में पकड़े नोट उसकी तरफ बढ़ा दिए, "लो, इनको रख लो।"

"नहीं, तुम ही रखे रहो, जैसे भी हो कपिल सिंह से उसकी जान छुड़ा दो।"

"मेरे लिए यह मुश्किल है, असली झगड़ा तो मुझी से हुआ है।"

"वह भी मैंने सुना है मगर तुम दो-चार आदमी लेकर कोशिश करो तो बात बन सकती है।"

"मुझे तो उम्मीद नहीं लगती कि वह मेरी सुनेगा, मगर फिर भी कोशिश करूंगा। वैसे ये रुपए तुम रख लो, मैं बाद में ले लूंगा।"

"नहीं, इनको तुम अपने पास रखे रहो, पर उससे कागज जरूर ले लेना। ये सब बड़े

बेईमान लोग हैं।"

"कैसा कागज?"

"कर्ज का कागज।"

अचानक उसके दिमाग में एक नाम कौंधा, उसने बड़ी नरमी से पूछा, "तुम्हारा नाम रानी है न?"

वह चौंकी, उसे गौर से देखा, "तुम्हें किसने बताया?"

"बताया किसी ने नहीं, सिर्फ तुम्हारी चर्चा हो रही थी।" उसके दिमाग में कल्याण की बात कौंध गई।

"किससे सुना था, कालाचंद कुछ बोला था मेरे बारे में?" उसने उत्सुकता से पूछा।

"नहीं, उसने तो कभी कुछ बताया नहीं, मैंने दूसरे लोगों से सुना था।"

वह मायूस हो गई, "हां, वह मेरे बारे में कुछ नहीं कहता, मेरी सूरत तक देखना नहीं चाहता। तुम्हीं बताओ, इसमें मेरा क्या दोष है? मैंने शादी कर ली, नहीं करती तो क्या करती? वह तो और खराब बात थी, बस इसी बात पर वह नाराज है।"

उसने गौर से उसकी ओर देखते हुए पूछा, "वह शराबी आदमी, रोज शराब के लिए यहां-वहां कर्ज लेता रहेगा, तुम कहां तक चुकाओगी?

"नहीं, वह दारू पीने के लिए कर्ज नहीं लेता, यह कर्ज तो..." वह थोड़ा रुकी और पूछा, "उसने तुम्हें नहीं बताया कि यह कर्ज उसने क्यों लिया है?"

"नहीं, मैंने पूछा भी था, मगर वह टाल गया।"

"यह कर्ज उसने मेरे ही लिए लिया था। कोई साल भर पहले जब मेरे पहले आदमी ने मुझे घर से निकाल दिया तो साथ ही थाने में लिखा दिया कि मैं उसके यहां से पांच सौ रुपए ले आई हूं। थाने से बात हुई तो वह सौ रुपए पर मामला रफा-दफा करने को तैयार हो गया। मेरे पास बिल्कुल पैसा नहीं था। यह बात किसी तरह कालाचंद को मालूम हुई। उसने कपिल सिंह से पैसे लेकर थाना भिजवाया और मुझे छुड़ाया।"

अचानक वह बोली, "अच्छा तो मैं चलती हूं, तुम कागज लेकर मुझे खबर करना, हाजरी बाबू के क्वार्टर में।"

"हाजरी बाबू?" वह एक बार फिर चौंका, शायद इसीलिए कालाचंद कभी हाजरी नहीं लगवाता। उसकी हाजरी वैसे ही बन जाती है, वह अनुपस्थित हो तब भी।

शाम को ननकू उस पर बहुत गरम था।

"कालाचंद तुम्हारा कौन लगता है? क्यों गए थे उसके लिए लड़ने? जानते हो, कपिल सिंह कौन है?"

वह चुप रहा। ननकू बोलता ही रहा, "वह डेढ़ सौ रुपए महीने का चपरासी नहीं है। यह तो एक आड़ है। दो हजार रुपए महीना कमाता है वह। बीसों हजार रुपए उसका सूद में लगा है। दो जुए के अड्डे चलाता है। तीन शराब की झोंपड़ियां चलती हैं। उसने इस सारे कारोबार को चलाने के लिए और सूद का रुपया वसूलने के लिए दर्जनों बदमाश आदमी को तनख्वाह पर लगा रखा है। पूरी सिरसा कोलियरी बल्कि आसपास की दो चार कोलियरियों में भी कोई उसके सामने खड़े होने की जुर्रत नहीं कर सकता। कंपनी का खास आदमी है। उसकी इतनी चलती है कि जिसे चाहे रखे और जिसे चाहे निकलवा दे, और तुम गए थे उससे उलझने! अरे वह चाहे तो तुम्हें चींटियों की तरह मसल दे।"

बहुत देर बक-बक करने के बाद जब वह धीमा हुआ तो बोला, "मुझसे पूछ रहा था तुम्हारे बारे में, बहुत समझाया कि लड़का है, नासमझ है, गलती हो गई है।"

वह फिर भी चुप रहा। असल में वह ननकू की घबराहट देख रहा था। डर के मारे उसकी हालत खराब थी। चेहरे पर पसीना आ गया था। आंखें डर से फैल गई थीं। जरा-सा रुक कर फिर शुरू हो गया, "तुम ऐसा करो, मेरे साथ चलो और उससे माफी मांग लो।"

"माफी?"

"क्यों, क्या माफी मांगने से तुम्हारी इज्जत चली जाएगी?"

"माफी तो मैं नहीं मांग सकता," उसने बड़े इत्मीनान से कहा। ननकू झल्ला गया।

"आखिर तुम समझते क्या हो अपने आपको? उन लोगों से बैर बसाना चाहिए?"

"शेर नहीं है वह जो मुझे खा जाएगा।"

"शेर ही है वह, कितनों को खा चुका है। तुम कल आए हो, तुम्हें क्या पता? अच्छे अच्छों का पित्त पानी होता है उससे।"

"फिर भी मैं माफी मांगने नहीं जाऊंगा।"

ननकू उसके दो टूक जवाब से चिंतित हो गया, कुछ देर सोचने के बाद बोला, "अच्छा देखो, ऐसा करो, तुम सिर्फ मेरे साथ चलो। वहां बोलना कुछ नहीं। मैं खुद बात कर लूंगा।"

"ठीक है चलूंगा, मगर आज नहीं।"

दूसरे दिन शाम को वह ननकू के साथ चला। कपिल सिंह बड़ी सड़क के किनारे रहता था। वहां उसने अपना निजी मकान बना रखा था। पक्का मकान। जमीन डिस्ट्रक्ट बोर्ड की थी या कोलियरी की, कुछ पता नहीं। उसने जबरन यह जमीन हथियाई थी और बेजोड़ मकान बनवाया था। सामने दुकानें बनवाकर किराए पर उठा दी थीं। बाकी के दो कमरे अपने लिए रख छोड़े थे। अंदर के चार कमरों में उसके पिट्ठू या चमचे रहते थे। सामने के दो कमरे जो उसने अपने लिए रख छोड़े थे असल में उसकी बैठकें थीं। उसके सारे प्लान यहीं बनते, सारे कारोबार की देख-रेख यहीं से होती है, इसलिए आम तौर पर शाम को दो-चार आदमी जरूर जमा रहते हैं। जब ननकू उसे लेकर वहां पहुंचा तो उस समय

भी चार आदमी वहां बैठे थे। सहदेव ने उसे देखा। वह लंबा, तगड़ा और दबंग आदमी था। बड़ी-बड़ी मूंछें थीं और चेहरे पर एक घाव का गहरा निशान बाएं कान से होठों तक खिंचा हुआ था। इस निशान की वजह से उसका चेहरा कुछ अधिक भयानक लगता था। उसने नजर उठाकर उनकी तरफ देखा। ननकू को साथ देखकर समझते देर नहीं लगी कि वह कौन है।

"का हो, कोलियरी में काम करने का मन है कि नहीं?"

उसके बोलने से पहले ननकू ने कहा, "अभी नया-नया आया है मालिक, पहचानता नहीं है।"

"कोलियरी का गैंता-झूड़ी तक हमको पहचानता है, कितना दिन हो गया है?"

जवाब ननकू ने ही दिया, "चार महीना हो गया।"

"हमको तो लोग चार दिन में ही पहचान लेते हैं।"

ननकू ने कहा, "सीधा लड़का है। कहीं आता-जाता नहीं है, बस धोड़ा से खान और खान से धोड़ा। इसको क्या मालूम कि कोलियरी में कौन क्या है?"

कपिल सिंह क्रुद्ध होकर बोला, "जब कुछ नहीं जानते हो तो छिनाल के भाई संग दोस्ती कैसे हो गई?"

इस पर सहदेव ने कहा, "मेरी उससे कोई दोस्ती नहीं है।"

ननकू तड़ से बोला, "तब तुम बीच में क्यों आए?"

"वे लोग उसे मार रहे थे।"

ननकू ने ही कहा, "यह कौन-सी नई बात है, यहां तो सब साले पिटते रहते हैं।"

"यह इसलिए कि उनमें एकता नहीं है।"

इस बार कपिल सिंह ने उसे नीचे से ऊपर तक निहारा और मुस्कान बिखेरते हुए कहा, "लीडर बनने का विचार है क्या? ज्वाला बाबा का हाथ थाम लो, कल्याण हो जाएगा तुम्हारा या फिर उसी श्रीवास्तव को धर लो।"

"मैं लीडर बनना नहीं चाहता, मगर इस तरह खुलेआम किसी को नंगा कर देना..."

ननकू बात काटकर झट से बोला, "कर्जा काहे को लेते हैं फिर?"

"कर्ज लेने का यह मतलब तो नहीं कि उसे बीच बाजार में बेइज्जत किया जाए।"

"इज्जत किस साले की है यहां?" कपिल सिंह कुपित हो उठा, "उस साले बावरी बच्चे की इज्जत है? चार आदमी के बाद उसकी बहन अबकी हाजरी बाबू के पास गई है। बहन छिनार भैया बांके, यही इज्जत है न उसकी?"

वह चुप रह गया। बस इंसी एक पल की युक्ति उसके काम आ गई। ऊपर से ननकू ने मामले को संभाला "अब जाने दीजिए, मालिक!"

"ठीक है ननकू, अब तुम आ गए तो कोई बात नहीं। तुम्हारा आदमी है तो हमारा आदमी है। लेकिन उस कालाचंद को कह देना कि अगले हफ्ता पैसा नहीं मिला तो टांग चीर देंगे।"

"उसका पैसा मैं लेकर आया हूं," सहदेव ने जब यह कहा तो सारे लोग उसे हैरानी से देखने लगे। ननकू भी हैरान रह गया।

"तुम लेकर आए हो?"

"हां।"

"तुमको मालूम है, कितना पैसा है?"

"हां, उसने सौ रुपए लिए थे।"

कपिल सिंह इत्मीनान से बोला, "वह सौ रुपया बढ़कर दो सौ हो गया है और सूद बीस रुपया हफ्ता। पांच हफ्ते से सूद नहीं दिया है।"

सहदेव ने तीन सौ रुपए निकालकर उसके सामने रख दिया। "देखिए," सहदेव कपिल सिंह को समझाने लगा, "देखिए, वह एक पैसा देने लायक नहीं है, आप उसका क्या करेंगे? मारेंगे, टांग तोड़ देंगे, मगर उससे पैसा तो वसूल नहीं होगा?"

कपिल सिंह का मूड अच्छा था इसलिए वह हंसा, "का हो ननकू, कल का पैदा हमको समझाने लगा है!"

ननकू भी खुशामद में हंसा, "बड़ा अच्छा लड़का है मालिक, बहुत पढ़ा-लिखा है, दस क्लास पास है।"

"क्या रे, तब झूठ में कोलियरी में कोयला काहे काटता है? हमारे यहां मुंशी रह जा।"

ननकू गिड़गिड़ाया, "अरे आप ही का तो आदमी है सरकार, बारह बजे रात को भी जरूरत पड़ जाए तो हाजिर हो जाएगा आपके हुक्म पर।"

अब कपिल सिंह एकदम राम हो गया। उसने सामने पड़े हुए रुपए उठा लिए और दूसरी चारपाई पर बैठे आदमियों में से एक को इशारा करके कहा, "कालाचंद का कागज ला दो।"

एक आदमी अंदर गया और थोड़ी देर में एक कागज लाकर कपिल सिंह को दे दिया। कपिल सिंह ने वह कागज लेकर सहदेव की ओर बढ़ा दिया, "ले जा, बोल देना कि इस बार कहीं उसकी बहन फंसे तो मेरे पास मत आए।"

वहां से निकला तो ननकू शुरू हो गया, "यह पैसा कहां से आया? क्या तुमको कालाचंद ने दिया था? कहीं तुमने अपना पैसा तो नहीं दे दिया?"

वह चुप रहा। ननकू ने उसकी बांह पकड़ ली, "सच-सच बताओ, यह पैसा तुम्हारा तो नहीं था?"

"नहीं, मेरा नहीं था, कालाचंद का ही पैसा था।"

"हूं", ननकू ने इत्मीनान की सांस ली, फिर कहा, "जानते हो, कोलफील्ड की सबसे बड़ी चीज क्या है? पैसा! इसे दांत से पकड़कर रखो तो कालाचंद जैसे हजारों हैं जो तुम्हारी खुली आखों के सामने तुम्हारी जेब काट लेंगे। सच बात तो यह है सहदेव, कि कोलियरी बहुत बुरी जगह है। यहां भले और ईमानदार आदमी का गुजारा नहीं। यह चारों, बेईमानों, सूदखोरों और दलालों की दुनिया है। यहां आदमखोर शेरों की मांद है। यह खून चूसने वाले जोंकों का इलाका है। यहां हर कदम सोचकर रखना चाहिए। यहां आदमी, आदमी को खाता है कच्चा..."

वे दोनों पक्की सड़क छोड़कर कच्चे रास्ते पर आ गए। ठंड का मौसम था और शाम धुएं से भर गई थी। क्वार्टरों और धोड़ों में जलने वाले चूल्हों और कोयले की भट्टियों से जो धुआं उठ रहा था वह बजाए ऊपर जाने के आहिस्ता-आहिस्ता नीचे ही जमा होता जा रहा था। ननकू मोटी सूती चादर से बदन के अलावा सर और कान भी ढके हुए था। यह चादर ओढ़ने का अलग ढंग था। आजकल ठंड का जोर बढ़ गया था। खान के अंदर की गर्मी और घुटन तो एक हद तक कम हो गई थी मगर बाहर जान निकल रही थी। वैसे भी जो लोग खान के अंदर काम करते हैं, उन्हें ठंडक कुछ ज्यादा ही महसूस होती है। कहते हैं, अंडरग्राउंड में, शरीर में स्थायी रूप से रहने वाली गर्मी धीरे-धीरे खत्म हो जाती है।

ननकू ने संदेहास्पद ढंग से सवाल किया, "सुना, तुम रानी से भी बात कर रहे थे।"

उसने चौंककर ननकू की ओर देखा। जवाब न पाकर ननकू ने दूसरा सवाल कर दिया, "कब से जान-पहचान है उससे?"

"उससे मेरी कोई जान-पहचान नहीं। जिस दिन कालाचंद और कपिल सिंह के आदमियों में झगड़ा हुआ था, उसी दिन मिली थी।"

ननकू ने उसे सावधान करते हुए कहा, "उससे होशियार रहना, बड़ी खतरनाक औरत है।"

सहदेव हंस पड़ा "खतरनाक आपके लिए होगी, मेरे लिए नहीं।"

"देखो, लोग कहते हैं, उसके पास कोई जड़ी है। वह जिस आदमी को चाय या पान में घोलकर पिला देती है वही उसका दीवाना हो जाता है। अब उस हाजरी बाबू को देखो। चिता तैयार है उसकी और उसने उसे घर में रख लिया है। न उम्र का ख्याल, न जात-पात का ख्याल, न समाज का डर और न कुल की मर्यादा की परवाह, सब खत्म...."

सहदेव की आंखों के सामने उस मोटी मगर लुभावनी औरत का रूप आ गया। उसमें हजार खूबी सही, हजार नाजनखरे सही, मगर ऐसी तो कोई खास बात उसमें नहीं थी कि आदमी पागल हो जाए। रह गई जड़ी की बात तो यह केवल कोरी कल्पना है।

ननकू अभी भी उसे गौर से देखे जा रहा था मानो उसके चेहरे से कुछ पढ़ना चाहता

हो, सहदेव को हंसी आ गई।

"ननकू भाई, ऐसा मत समझिएगा कि मैं उस पर रीझ गया हूं। औरतों में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है।"

ननकू बोला, "औरत को यहां कौन पूछता है, टके में मिलती हैं जितनी चाहो। मगर कायदा यह है कि आदमी ढोल जरूर बजाए मगर उसे गले में न टांगे।"

सहदेव ने अचानक पूछा, "अच्छा यह तो बताइए, यह बात आपको किसने बताई?"

"कौन-सी बात?"

"यही मेरे और रानी के बातचीत करने की।"

"जुगेश्वर ने।"

जुगेश्वर! सहदेव को आश्चर्य हुआ। जुगेश्वर उसके गांव-घर का आदमी था। उसी के साथ आया था। उसी के साथ काम पर भी लगा था। वह एक ही धोड़े में रहता था, लेकिन थोड़ा अलग-थलग। वह कभी घुल-मिल नहीं सका। हालांकि कोलफील्ड में चाहे और कोई बात न हो लेकिन अपने गांव घर, अपने इलाके का ख्याल जरूर रखा जाता है। अपने इलाके के लोग सिमट-सिमटकर इकट्ठा रहते हैं। अलग-अलग कोलियरियों में काम करने वाले एक ही इलाके के लोग भी संबंध बनाए रखते हैं। जुगेश्वर थोड़ा चप्पू किस्म का आदमी था। किसी से ज्यादा बोलता-चालता भी नहीं था। ज्यादातर बाहर रहता। देर रात को लौटकर धोड़े वापस आता और कभी-कभी पीकर आता ननकू उसकी ओर मुड़कर बोला, "जुगेश्वर को देखो, बस अपने काम से काम रखता है। किसी के फटे में टांग नहीं अड़ाता। उसने आफिस के बाबू लोगों को भी खुश कर रखा है। कपिल सिंह से भी राम-प्रणाम बनाए रखता है। कल कपिल सिंह उसकी तारीफ भी कर रहा था।"

सहदेव ने कहा, "मैं किसी की खुशामद नहीं करता। यह मेरी आदत में है। फिर मुझे बाबू लोगों या कपिल सिंह से क्या लेना देना है? मुझे तो बस कोयला काटना है और अपनी मजदूरी लेनी है।"

ननकू ने कहा, "देखो, जैसा देश वैसा भेष तो रखना पड़ता है। यहां इतने आदमियों में रहना है, मिलजुल कर नहीं रहोगे तो कैसे गुजर होगी?"

"मिलजुल कर रहने के लिए क्या कपिल सिंह ही रह गया है?"

"नहीं तो क्या कालाचंद दोस्ती करने योग्य है या उसकी बहन?"

ननकू का वार तीखा था। सहदेव ने धीरे से कहा, "मेरी उससे कोई दोस्ती नहीं है, बस संयोग से ऐसा हो गया।"

"संयोग की क्या बात हुई? कालाचंद को मार खाते क्या तुमने अकेले ही देखा था? वहां तो पचासों आदमी मौजूद थे। खुद जुगेश्वर भी था। उसने तो कोई रोक-टोक नहीं की।"

जुगेश्वर—? पता नहीं क्यों, शुरू से ही यह आदमी उसे पसंद नहीं आया था। वह आयु में लगभग उसी के बराबर था और देह-काठी में भी। सिर्फ उसकी आंखें छोटी और चमकदार थीं। ये आंखें हर समय अपने दाहिने-बाएं, ऊपर-नीचे नाचती रहती थीं। एक सैकेंड के लिए भी स्थिर नहीं रहतीं। ऐसा लगता मानो वह किसी चीज की तलाश में हो। ऐसी आंखों वाले साधारण नहीं होते। यह बात सहदेव जानता था, शायद इसलिए खुद भी उसकी तरफ ज्यादा नहीं झुका। उसकी जगह रहमत मियां जो एक अलग धर्म, अलग जाति का था उसके नजदीक आ गया। कभी-कभी तो उसे यूं लगता जैसे बचपन से साथ रहे हों।

दूसरी पगडंडी पर उतरते-उतरते उन्हें रहमत मियां मिल गया। वह उन्हीं की तलाश में आ रहा था। बेहद घबराया हुआ। उन लोगों को आते देखा तो उसकी जान में जान आई, "क्या हुआ? तुम लोगों को देरी हुई तो मैं समझा कि कहीं कोई गड़बड़ न हो गई हो। लालू कहता था, उन लोगों का कोई ठीक है, ये साले अपने बाप के भी नहीं।"

सहदेव ने सहजता से कहा, "लोग उनसे झूठमूठ में डरते हैं, वे भी हमारी तरह आदमी ही हैं।"

ननकू बोला, "आदमी आदमी में फर्क होता है। अभी तुम्हें आए ही कितने दिन हुए हैं! साल दो साल रह जाओ तो तुम्हें पता चल जाएगा।"

रहमत मियां उसे डांटने लगा, "तुम झूठमूठ किसी के मामले में मत पड़ा करो। उसी साले कालाचंद ने हम लोगों को दुर्गा पूजा का पाठा कहा था कि नहीं?"

वे लोग धोड़ा पहुंचे तो लोग उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें सही-सलामत आता देखकर सभी ने चैन की सांस ली।

हाजरी बाबू बहुत ठंडे दिमाग के, बहुत ठंडे दिल के, बहुत ठंडे जिस्म के और बहुत ठंडे स्वभाव के आदमी हैं। ऐसी गरम औरत से कैसे जा टकराए, यह कोई नहीं जानता। शायद इस सारी ठंडक को दूर करने के लिए उन्हें किसी गरम चीज की जरूरत थी। उधर रानी को गरम या ठंडे से कोई मतलब नहीं था। उसे तो कोई अक्ल का अंधा और गांठ का पूरा चाहिए था, ये दोनों ही गुण हाजरी बाबू में मौजूद थे।

तनख्वाह तो वही दो सौ रुपए महीने थी लेकिन सैकड़ों मजदूरों में दस-पंद्रह हाजरियां रोज बचा लेना कोई मुश्किल काम नहीं था। किसी की अचानक तबीयत खराब.हो गई, कोई रात को लौंडे का नाच देखने चला गया या किसी के घर से खबर आ गई और छुट्टी नहीं मिली। हाजरी बाबू बड़े दयालु हैं, सबका काम कर देते हैं, शर्त बस इतनी है कि हाजरी का पैसा ले लेते हैं। अगर पंद्रह हाजरी भी मिल गईं तो ओवरमैन और माइनिंग सरदार का हिस्सा निकाल कर भी बीस-पचीस रुपए बच ही जाते हैं। विधुर हैं। कोई औलाद भी नहीं। दूर-नजदीक का कोई रिश्तेदार भी नहीं दिखलाई देता कभी। बूंद-बूंद करके तालाब

अब इतना भर गया है कि कोई भी बाल्टी डालकर पानी निकालने की सोच सकता है। यूं भी रानी अब हर तरह की लुक्काचोरी से ऊब चुकी थी। इस ढलती उम्र में उसे एक मजबूत सहारे की जरूरत थी ताकि अगर हाजरी बाबू छोड़ भी दे तो उसको छोड़ते-छोड़ते इतना बटोर ले कि घर-घर दाना चुनने की जरूरत न रहे।

बावरियों के यहां अगर किसी की बहन या बेटी जरा-सा खेल-खा ले तो यह बहुत खास बात नहीं होती, मगर उनमें भी कालाचंद जैसे लोग होते हैं जो अपने दामन को जरा भी मैला देखना पसंद नहीं करते और न ही यह बर्दाश्त करते हैं कि कोई उंगली उठाकर या आंख के इशारे से बताए कि अमुक का भाई या अमुक का बाप है। रानी के बेहद चाहने के बावजूद उसने सालों पहले उसकी तरफ से मुंह मोड़ लिया था, उस समय से जब वह पहली बार प्रफुल्ल जोशी की रखैल बनी। पिछले पंद्रह सालों से उसे मालूम है कि वह कहां-कहां भटकती रही है लेकिन उसने कभी उसकी खोज नहीं ली। कभी रास्ते में मिल गई तो मुंह दूसरी ओर फेर लिया। किसी ने चर्चा की तो फर्श पर थूककर पैरों से मसल दिया। कई बार उसके घर भी आई कि पुराने रिश्ते फिर से सुधर जाएं, लेकिन उसने खड़े-खड़े दुत्कार दिया। आखिरी बार जब वह हाजरी बाबू से लगी तो उसने खान में हाजरी लगवानी ही छोड़ दी। यह बात लगभग सभी लोग जानते हैं। हाजरी बाबू से मजाक में बहुत कुछ कह देते हैं लेकिन कालाचंद से इस सिलसिले में मजाक करना तो दूर रहा, कोई बात करने की भी जुर्रत नहीं कर पाता, यहां तक कि हाजरी बाबू की भी हिम्मत नहीं होती कि उसे कुछ कह दें। वे बेचारे तो मोटे शीशे के चश्मे से उसे आता जाता देखते रहते हैं। वे ऐसे आदमी हैं जो अपने काम में कहीं से कोई खोंच नहीं छोड़ते। वे चाहते हैं कि कालाचंद अगर उन्हें स्वीकार न करे तो उनके लिए मन में कोई मैल न रखे। उस दिन जब कालाचंद और कपिल सिंह के आदमियों में झगड़ा हुआ था, उन्होंने ही यह बात रानी को बताई थी और रानी के हाथ रुपए भिजवाए थे। उनका यह ख्याल गलत नहीं है कि रुपए में बड़ी ताकत होती है। मगर कालाचंद के सिलसिले में यह वार भी खाली गया। रानी ने उन्हें सारा माजरा रो-रोकर सुनाया था।

वह दिन छुट्टी का था। हाजरी बाबू अपने क्वार्टर के बरामदे में एक कुर्सी डाले बैठे थे। हाजरी बाबू ने बहुत ठंडी आंखों से उसे देखा और बहुत ठंडे स्वर में पूछा, "कौन हो तुम और किस से काम है?"

"जी, मेरा नाम सहदेव है, मुझे कालाचंद की बहन रानी से मिलना है।"

"अच्छा तो वह पैसे तुम्हें दे आई थी?"

"जी।"

"काम हो गया है?"

"जी हां, हो गया है।"

"कितना लगा, पूरा चार सौ?"

"नहीं, सौ रुपए किसी तरह लड़-झगड़ कर छुड़ाया।"

"यह भी कमाल है, वरना वे लोग एक पाई भी छोड़ने वाले नहीं, खून चूस लेते हैं आदमी का।"

"मैंने उन्हें बहुत समझाया, थोड़ी खुशामद भी की।"

हाजरी बाबू बोले, "खुशामद तो उसकी अच्छे-अच्छे करते हैं। वह तो बस कहने का चपरासी है। सच पूछो तो आधी कोलियरी उसकी कर्जदार है। ताकत इतनी रखता है जिस पर चाहे हाथ डाल दे। उससे कौन उलझ सकता है?"

"इसीलिए तो मैंने भी उलझने की कोशिश नहीं की, किसी तरह अपना काम निकाल लिया।"

"चलो, अच्छा किया। रानी तो तुमको पैसा दे आई। पूछा, किसको दिया है तो तुम्हारा नाम भी न ले सकी। हुलिया पूछा तो वह भी न बता सकी। मैंने सोचा कि लो चार सौ रुपए भी गए। उसे डांटा कि तुम किसको रुपए दे आईं तो वह बोली कि आदमी जरूर ईमानदार होगा। बताओ, वह इस कलयुग में ईमान की बात करती है।"

सहदेव हंसा, "उसने कुछ गलत तो नहीं कहा।"

"तुम्हारा नाम सहदेव है न, तुम तो जेनरल शिफ्ट में हो।"

"हां, दिन की पारी में।"

"चारपाई खड़ी है, इसे गिराकर बैठो, खड़े क्यों हो? कागज ले आए हो?"

"जी हां," सहदेव ने कागज हाजरी बाबू को दे दिया। हाजरी बाबू ने उस पर एक सरसरी नजर डाली और सहदेव से कहा, "तुमने देखा इसको?"

उन्होंने पैसे का हिसाब दिखलाया। वहां सौ रुपए की रकम की जगह हजार रुपया लिखा हुआ था।

"यही करते हैं वे लोग, अपने जाल से निकलने ही नहीं देते।"

उसी समय अंदर से रानी निकली। उसे देखा तो खुश होकर हाजरी बाबू से बोली, "देखो, मैंने कहा था न कि वह जरूर आएगा।"

हाजरी बाबू प्रसन्नता से हंसे, "एक तो तुम बेवकूफ थीं कि एक अनजान आदमी को यह रुपया दे आई और तुमसे ज्यादा बेवकूफ यह है कि उस रुपए को हजम नहीं कर सका। काम भी कर दिया और सौ रुपए बचाकर वापस भी करने आ गया। कम से कम इस सौ रुपए पर तो इसका अधिकार था।"

रानी बोली, "सब तुम्हारी तरह थोड़े ही हैं कि इधर आंख चूकी और उधर माल अंदर।"

इस बार हाजरी बाबू जरा खुलकर हंसे, "देखो, यह आरोप गलत है। मैं आंख फेरने पर कोई काम नहीं करता। जो होता है सबकी खुली आंखों के सामने होता है। असल

किस्सा यह है कि पिछले जन्म में मैं ब्राह्मण रहा होऊंगा, इसलिए इस जन्म में खुद ही लोग मेरी झोली भर जाते हैं।"

रानी ने बड़ी अदा से मुंह बिचकाया और सहदेव से कहा, "काम तो हो गया, अब तो काला से कोई मामला नहीं रह गया, कागज ले लिया था?"

"हां, ले लिया था। इतना बेवकूफ नहीं हूं जितना हाजरी बाबू समझते हैं।"

रानी हंसने लगी, फिर कहा, "अच्छा तुम बैठो, जाना मत, मैं चाय बनाकर लाती हूं।"

वह अंदर चली गई तो हाजरी बाबू ने उससे पूछा, "कुछ पढ़े-लिखे हो या वही अंगूठा छाप?"

"दस क्लास तक पढ़ाई की है।"

"दस क्लास!" हाजरी बाबू घोर आश्चर्य में डूब गए क्योंकि वह खुद मिडिल पास थे।

"तुम्हें तो ऊपर भी काम मिल जाता।"

"ऊपर का काम मैंने खुद पसंद नहीं किया, सौ-डेढ़ सौ की क्लर्की में जिंदगी बीत जाती।"

"अरे तो अंडरग्राउंड में ही कौन-सा सोना बरस रहा है?"

"कम से कम आगे बढ़ने के तो मौके हैं, और नहीं कुछ तो माइनिंग सरदार।"

"माइनिंग सरदारी क्या आसान काम है? हर सेक्शन में छह महीने रहकर काम करना पड़ेगा। मलकट्टा, लोडर, ट्रमड्राइवर, खुनटा मिस्त्री आदि, कम से कम तीन साल निकल जाएंगे। ये सब इतना आसान नहीं है जितना तुम समझ रहे हो।"

"एक आइडिया यह भी है कि धीरे-धीरे कुछ रकम जमा कर लूंगा और उसी रकम से गांव में जमीन खरीदकर लौट आऊंगा।"

हाजरी बाबू ने उसे बड़ी दया से देखा, "तुम सचमुच बड़े भोले हो, तुम्हें शायद पता नहीं कि यह ख्वाब सभी देखते हैं। मुझे ही देखो, औरंगाबाद का रहने वाला हूं। मैंने भी यही सपना देखा था, मगर क्या हुआ? गांव में पहले जो जमीन थी उसे भी बेच दिया।"

उसी समय रानी अंदर से चाय लेती आई। हाजरी बाबू ने उसे बताया, "यह अपना सहदेव है न, यह बहुत पढ़ा-लिखा है। दस क्लास पास है।"

"ऊ मां," वह बंगालियों की खास हृदयंगम शैली में बोल पड़ी, "तब यहां धूल फांकने क्यों आ गए? कलकत्ता चले जाते।"

इस इलाके में जितने बंगाली हैं सबका तीर्थस्थान कलकत्ता है।

"की शहर आछे मां गो," उसने बड़े मीठे स्वर में कहा, "कितना बड़ा शहर है, कितना बड़ा-बड़ा बिल्डिंग है, कितना गाड़ी चलता है। हमारा तो वहां से आने का मन ही नहीं

कर रहा था।"

वह सुन नहीं रहा था, सिर्फ उसे देख रहा था। एक अकेली औरत, चारों तरफ जूझती लड़ती, परिस्थितियों से टकराती, ...लोग कहते हैं कि उसने कितने खेल खेले हैं, मगर वास्तव में उसने सिर्फ एक खेल खेला है। जिंदा रहने का खेल। वह हर बार परिस्थितियों का मुंह तोड़ती रही है। अकेली। उसके पास सिर्फ एक हथियार है। उसका शरीर। सांवला सलोना, बंगाल की कैवाल मिट्टी से बना। उसने इस हथियार को आज तक कुंद होने नहीं दिया। इस ढलती उम्र में भी कहीं कुछ है जो चुंबक की तरह आदमी को अपनी तरफ खींच लेता है। वह शायद अपने फन में माहिर है।

उसने चाय खत्म की और उठ खड़ा हुआ। फिर हाजरी बाबू को संबोधित किया, "अच्छा, मैं चलता हूं।"

हाजरी बाबू ने उसे बेहद ठंडी आंखों से देखा। और कहा, "कभी कोई काम पड़ जाए तो बोलना, इंचार्ज बाबू से मेरी अच्छी जान-पहचान है।"

रहमत घर से वापस आया है। आठ महीने के बाद छह दिन की छुट्टी लेकर गया था। पंद्रह दिन बाद वापस आया है। जितना नागा हुआ है उसकी हाजरी, हाजरी बाबू ने बना दी है और उसके देर से आने पर एक कटाक्ष भी कर दिया।

"क्या जी, कंबल तुमको नहीं छोड़ रहा था या तुम कंबल को?"

लालू बोला, "हाजरी बाबू, रहमत मियां एकदम बुद्धू आदमी है?"

"वह कैसे? हाजरी बाबू ने उससे पूछा।

"उसको चाहिए था कि कंबल भी साथ लेता आता।"

किसी और ने कहा, "अच्छा किया जो कंबल साथ नहीं लाया, वरना कोई दूसरा ही ओढ़ कर घूमता।"

एक दुबले पतले मजदूर ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "मैं तो रहमत भाई से मांग लेता।"

ठहाकों के बीच में किसी ने मजाक में पूछ लिया, "कंबल नया है या पुराना?"

"चलो, जाड़ा कट जाता होगा, है न....?"

उस कंबल पर बहुत देर तक हंसी-मजाक चलता रहा। फिकरे, व्यंग्य और फव्वारों की तरह फूटते कहकहे। इस दौरान सहदेव अपने ही कंबल के बारे में सोचता रहा। जुलिया की शादी धर्मपुर के किसी आदमी के साथ हो गई है। यह खबर रहमत मियां ने दी है। यह कोई दो महीने पहले की बात है। भाई की चिट्ठियां इस बीच आई हैं। किसी में उसके बारे में कोई चर्चा नहीं है। शायद उसे मालूम भी न होगा कि जुलिया उसके लिए क्या थी। हां, भाभी को पता था। इस बारे में एक बार भाभी से पूछा था, "जुलिया का जात

गोत्र हम लोगों के साथ बैठता है?"

उसकी भाभी चौंक गई, फिर पूछा, "क्या बात है, कहीं कुछ...."

"हट!" वह भाग निकला। कानों में भाभी की आवाज दूर तक सुनाई दी, "कहो तो तुम्हारे भाई से कहूं?"

उस दिन के बाद उसने फिर कभी जुलिया की कोई चर्चा नहीं की, यद्यपि उसकी भाभी ने कई बार छेड़ा भी।

होली में वह घर नहीं जा सका। पता नहीं जुलिया ने त्यौहार मनाया या नहीं, लेकिन उसने गिरधारी के कुएं में डूबकर जान नहीं दी और ब्याहकर धर्मपुर चली गई। कोई चीज थी जो खो गई थी। अफसोस हुआ। देर रात तक आंखें जागती रहीं। सलोना चेहरा, चमकीली आंखें, बात करने का वह तीखा और मुखर अंदाज। यादों का एक भंवर था जिसमें उसकी नींद चक्कर खाती रही। सारी रात। सुबह को सब कुछ उदास गमगीन और नीरस था। होठों पर कड़वाहट और मन में पराजय का अहसास। शायद कोई बच्चा ऐसे ही ठगा-सा रह जाता होगा जिसके हाथ से चील दोना झटककर ले उड़ती होगी।

रहमत मियां ने एक और बात बताई और वह भी कम चिंताजनक नहीं है। उसने बताया कि खरसवां स्कूल का हेड पंडित दीनानाथ जिसे सारे लोगा पागल पंडित कहते थे, मर गया। आंखों के सामने एक बेहद गोरा, बिलकुल सफेद चेहरा उभर आता है। उसकी आंखें हमेशा अधखुली रहती थीं, मानो नशे में हों। दुबला-पतला शरीर, इतना दुबला कि जोर की हवा चले तो वह उड़ जाए। लेकिन आवाज गजब की है। बोलता है तो लगता है कि कोई दूसरा आदमी ही बोल रहा हो। उसके सामने माईक बेकार है। जब किसी बात पर गरजता है तो लगता है मानो शेर दहाड़ रहा हो। हर समय कोई न कोई पुस्तक हाथ में होती है। कितना पढ़ते हैं पंडित जी।

दूसरे दिन भी बेचैनी-सी रही। काम में भी उसका मन नहीं लगा। दो गाड़ी लोड करते-करते वह उकता गया। रात को जब सब सो गए तो वह चुपके से रहमत के बिस्तर पर जा बैठा। उसने जुलिया के बारे में कुछ नहीं पूछा। जुलिया के बारे में रहमत मियां कुछ जानता भी नहीं होगा। उसने तो बस सुना होगा कि गांव की अमुक लड़की की शादी हो गई है या मुमकिन है कि उसकी भाभी ने जान-बूझ कर उसे यह बात बताई हो। खैर, बंधन टूट गए थे। पक्षी उड़ चुका था। दूसरे देश, पराए देश। जो कुछ होना है उसके अंदर ही हो...बाहर क्यों आए? नहीं, वह बाहर कुछ भी नहीं आने देगा। एक चिनगारी भी नहीं ...धुएं की एक लकीर भी नहीं। जो आग है उसको अंदर ही रखेगा। इसलिए उसने इस संबंध में कुछ नहीं पूछा। बस पागल पंडित के बारे में मालूम किया।

"पगला पंडित बीमार था क्या? कैसे मर गया?"

"नहीं, बीमार नहीं था। पागल हो गया था।"

"पागल!" उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, फिर भी सहजता से कहा, "पागत तो था ही।"

नहीं, इधर बहुत पगला गया था। लड़कों को पढ़ाता-लिखाता कुछ नहीं था। रात-रात भर सड़कों पर बेमतलब फिरता रहता। अंधेरी अकेली जगहों में भाषण देता। लोग समझा-बुझाकर लाते तो कहता, "मैं कहां जाऊं, सब लोग मर गए हैं, सारा कुरुक्षेत्र लाशों से अटा पड़ा है। एक भी आदमी जीवित नहीं, मैं किसे संबोधित करूं?" एक दिन वह हेडमास्टर के कमरे में घुस गया। हेडमास्टर से बड़े उत्साह से पूछा, "अच्छा, यह बताइए सर कि शिवजी ने मंथन किया, वहां से अमृत निकाला और सारा विष खुद पी गए। अगर ऐसा था तो वह अमृत कहां है और फिर जमीन पर जहर कहां से आ गया?" हेडमास्टर बेचारे काम में उलझे हुए थे। बुरी तरह क्रोधित हो गए।

"यहां आपको किसने भेज दिया मेरा दिमाग चाटने को? जाइए बाहर जाइए।"

"नहीं सर, यह सोचने की बात है कि नहीं? आखिर जहर जब शिव जी पी चुके तो फिर...!"

हेडमास्टर एकदम से गरज पड़े, "मैं कहता हूं, आप बाहर जाइए।"

वह कुर्सी से उठा और बाहर जाने लगा, लेकिन फिर लौटकर आ गया, "वह तो ठीक है सर, मैं चला जाता हूं...लेकिन आखिर धरती को भी एक मंथन की जरूरत है कि नहीं?"

हेडमास्टर आपे से बाहर हो गया। चपरासी को बुलाया। चपरासी ने उसकी बांह पकड़कर उसे बाहर किया।

"अब तुम ही बताओ, यह पागलपन नहीं है तो और क्या है। हेडमास्टर ने ऊपर उसकी रिपोर्ट की। सारे मास्टरों की राय में वह एकदम पागल हो गया था। अभी उसे रांची के पागलखाने में ले जाने की बात हो रही थी कि उसने स्कूल की छत से कूदकर खुदकुशी कर ली।'"

"खुदकुशी?" सहदेव ने एक बार फिर अंधेरे में उसे हैरत से देखा।

"हां खुदकशी, और वह करता भी क्या? सरबा सचमुच पगला गया था हो।" रहमत हंसा।

सहदेव हंसा नहीं। सिर्फ एक बार अंधेरे में उसकी आंखें चमकीं और बुझ गईं। उसने एक अजीब-सी बेनाम पीड़ा और बेचैनी-सी महसूस की, ठीक वैसी जैसे वह स्कूल के जमाने में महसूस करता था, जब कोई कठिन प्रश्न समझ न पाता था, जब वह सवाल समझ में आते-आते रह जाता।

रहमत ने कहा, "कुछ लोग तो यह भी कहते हैं कि वह पहुंचा हुआ आदमी था। मुवक्किल उसके कब्जे में थे।"

"मुवक्किल क्या है?"

"मुवक्किल मतलब जिन्नात, रूह आदि। अगर वह चाहता तो हेडमास्टर की गर्दन मरोड़ देता, मगर उसने ऐसा नहीं किया। पता नहीं क्यों? इसमें भी कोई राज होगा।"

सहदेव ने उसे कुछ नहीं कहा। बस चुप रह गया। उसे बहुत ज्यादा दुख नहीं हुआ। आदमी की मौत का कोई मतलब नहीं क्योंकि हर किसी को एक न एक दिन मरना है, परंतु कभी-कभी किसी की मृत्यु से एक खटक रह जाती है। बस एक खटक...लगता है जैसे कोई जिंदा आदमी मर गया हो। एकदम जिंदा और ज्वलंत...।

रहमत ने उससे पूछा, "तुम तो उससे पढ़े हो?"

"हां।"

"एकदम पगला था कि नहीं?" वह ही-ही करके हंसा। सहदेव ने उसकी हंसी में साथ नहीं दिया। सिर्फ विश्वास से इतना कहा, "नहीं, वह पागल नहीं था। वह इस पागल दुनिया का एक समझदार और सचेत इंसान था।"

रहमत हंसने लगा, "अब तुम भी पगलाओगे, लगता है।"

दोनों चुप हो गए। बहुत देर तक चुप रहे, फिर सहदेव ने ही पूछा, "मेरे घर गए थे, सब लोग ठीक हैं?"

"सब आनंद में हैं, मेरी बहुत आवभगत की, एक रोज रोक रहे थे, मगर मेरा कंबल..."

रहमत मियां उस दिन की बात याद करके हंसा।

"तुम्हारे अपने यहां सब ठीक है?"

"मेरे यहां है ही कौन? एक बूढ़ा बाप है। एक बीवी है और एक बच्चा," फिर उसने खुश होकर बताया, "मेरा बेटा पढ़ने लगा है स्कूल में। अभी नया-नया खुला है गांव में, सरकारी है।"

अगर दिन होता या ढिबरी जल रही होती तो वह रहमत मियां के खुश और तरोताजा चेहरे को देख पाता। ऐसे चेहरे को जिसके रोम-रोम से खुशी फूट पड़ने को बेचैन थी। शायद आंखों में उतर आने वाले अभिमान के नशे को भी देख पाता जिसमें कहीं एक छोटी-सी खतुनिया की तस्वीर बसी होती, कुएं से पानी लाती, उसका बिस्तर लगाती, अपने बेटे को गोद में लेती, किसी अनकही, अनसुनी बात पर खिलखिला कर हंस पड़ती। एक संपूर्ण और भरपूर औरत। शांत, निश्चिंत, तृप्त, संतुष्ट और लबालब भरी हुई।

रहमत बोला, "तुम सोओगे नहीं आज?"

सोना रहमत मियां भी नहीं चाहता, पर एकांत चाहता है। वह आंखें बंद करके खुली आंखों से देखे गए दृश्यों को बार-बार देखना चाहता है... लगातार...

सहदेव उसके बिस्तर से उठकर अपने बिस्तर पर चला आया और खैनी थूककर लेट गया।

भाई ने उसे बुलाया है। बहुत दिन हो गए हैं। होने दो...आखिर क्या फायदा है... क्या फायदा है? वीरान, अकेला गांव। आखिर क्या रखा है गांव में? छुट्टी आती है, खैर खबर मिल ही जाती है, फिर गांव जाने का फायदा क्या है? नहीं, वह नहीं जाएगा। अगले फागुन में भी नहीं जाएगा। खेती, गृहस्थी से उसे क्या लेना है? वह एक फैसला करता है और अपनी आंखें बंदकर लेता है।

पगला पंडित की अधखुली आंखें याद आती हैं। दो चमकीली और रोशन आंखें।

मजूमदार ने उसके लिए कमरे की इकलौती कुर्सी खिसकाई और खुद चारपाई पर बैठ गया।

"मैंने तुम्हें कपिल सिंह के आदमियों के साथ झगड़ा करते देखा था। आफिस के सभी लोग बाहर निकल आए थे। सबको यकीन था कि आज कुछ होगा। ऐसे दृश्य लोग बड़े चाव से देखते हैं, इंसानों के अपमानित होने का दृश्य। तुम उनके सामने डट गए तो लगा जैसे आज कोई असाधारण बात हो गई। आम तौर पर ऐसा नहीं होता। उनके सामने खड़े होने की भी जुर्रत कोई नहीं करता। तुम्हारे अंदर बहुत आग है, बहुत तेज, लेकिन सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि कोलफील्ड में सब आग बुझ जाती है। एकदम राख हो जाती है। बिलकुल पानी...।"

वह मजूमदार का कमरा था। मजूमदार कोलियरी का जूनियर क्लर्क है। बहुत कम लोगों से मिलता है। बहुत कम लोगों से बात करता है। आज रास्ते में मिल गया और उसे अपने घर चलने की दावत दी। बाबू और लेबर के बीच जो एक सीढ़ी ऊपर और एक सीढ़ी नीचे का रिश्ता होता है, वह उन्हें कभी एक-दूसरे के नजदीक होने नहीं देता। लेबर किसी बाबू को सलाम कर सकता है, बुला सकता है, मगर कोई बाबू बिना जरूरत किसी लेबर को मुंह नहीं लगाता है। इसलिए आज उसे मजूमदार की दावत पर खुशी कम और उत्सुकता अधिक थी।

मुख्य सड़क पर कोई फर्लांग भर चलने पर एक बस्ती मिलती है। सोनापुर। उसी बस्ती में मजूमदार ने एक कमरा किराए पर ले रखा है। जब शुरू-शुरू में बहाल हुआ था तब कोलियरी का कोई क्वार्टर खाली नहीं था। इसलिए मजबूरी वश उसे बस्ती में एक कमरा लेना पड़ा।

उसकी शादी नहीं हुई थी। उसने शादी खुद ही नहीं की थी। दो सौ रुपए महीने में तो बीवी का ख्वाब भी नहीं देखा जा सकता। वह यह भी जानता था कि जब तक दो सौ रुपए बढ़कर तीन सौ होंगे तब तक कई बच्चे आ चुके होंगे और दुनिया के रस्मो-रिवाज में फंसकर जो थोड़े-से बाल बच गए हैं वह भी गायब हो जाएंगे। उसकी विधवा मां भी समझाते-समझाते मर गई लेकिन उसने शादी नहीं की। जब आफिस में कोई शादी की

बात पूछता है तो वह अंग्रेजी का मुहावरा दुहरा देता है। "वेन दियर मिल्क इज अवेलेबुल इन दी मारकेट, देयर इज नो नीड टू परचेज ए काऊ"।

(When their milk is available in the market, there is no need to purchase a cow.)

और यहां कोलफील्ड के बाजार में दूध न सिर्फ बहुतायत में मिलता है बल्कि बहुत सस्ता मिलता है और अक्सर मुफ्त। वैसे उसे औरतों में कोई खास दिलचस्पी नहीं है। हां, किताबों का बहुत शौक है, इसलिए सहदेव उसके कमरे में देखता है कि चारों तरफ किताबों और अखबारों का अंबार लगा है। दीवार में बनी अलमारी में किताबें सजी हैं। ताक में ठूंसी हुई हैं। बिस्तर पर बिखरी हुई हैं, बल्कि फर्श पर भी कुछेक पड़ी हैं। दूसरा पगला पंडित?

इसलिए उसे कुर्सी पर बैठाकर उसने जो सवाल किया वह यही था, "मैंने सुना है, तुम बहुत पढ़े-लिखे हो, कितना पढ़ा है?"

"हाई स्कूल फाइनल न दे सका था।"

"तब तो काफी पढ़ाई की है तुमने, बाहर की भी किताबें पढ़ी हैं?"

"मेरा मतलब है, कोर्स की किताबों के अलावा घर पर पढ़ता था, पर यहां तो किताबें नहीं मिलतीं।"

"अब तक क्या पढ़ा है तुमने, मार्क्स को पढ़ा है?"

"नहीं।"

"प्रेमचंद, टैगोर...?"

"नाम याद नहीं। स्कूल में एक पगला पंडित था। वही हमें किताबें दिया करता था। कभी कहानियों की, कभी उपन्यास, कभी ऐसी किताबें जो हमें बिलकुल समझ में न आती थीं, उन्होंने हमें महाभारत भी पढ़वाई थी।

"महाभारत में कृष्ण का चरित्र कितना अजीब था है न?"

"इतनी गहराई से मैंने नहीं पढ़ा था। फिर दसवीं कक्षा के छात्र के समझ में आ जाएगी वह?"

"ज्ञान और विवेक स्कूल या कालेज के क्लासों की मुहताज नहीं होता बस किताबें पढ़नी चाहिए क्योंकि किताबें सच बोलती हैं। एकदम सच, खरी बात। मैं तो किताब पढ़ने को पूजा के बराबर मानता हूं। खैर छोड़ो इन बातों को। जिस दिन तुम्हारा झगड़ा कपिल सिंह के आदमियों के साथ हुआ था उसी दिन मैं तुमसे मिलना चाहता था। तुम्हारे तेवर..."

"उस दिन मैं झूठ-मूठ ही उस झगड़े में फंस गया था। लोग कालाचंद को घेर कर मार रहे थे। मार क्या रहे थे, अपमानित कर रहे थे और यही बात मुझसे देखी नहीं गई।"

"मगर देखना पड़ता है, कितने दिन हुए तुम्हें कोलियरी में आए?"

"आठ महीना।"

"इसीलिए।"

सहदेव ने सवालिया निगाहों से उसकी ओर देखा।

"इस कोलफील्ड में रहने की यह पहली शर्त है कि देखो सब कुछ, सुनो सब कुछ, मगर बोलो कुछ नहीं, एक शब्द नहीं। यूं समझ लो, यहां के लोगों के पास आंख हैं, कान हैं, लेकिन मुंह नहीं, जुबान नहीं। मुझे अलग-अलग कोलियरियों में काम करते-करते छह साल हो गए, मैंने किसी को बोलते नहीं सुना। किसी को आवाज उठाते नहीं पाया। जो बोलते हैं वह एक निश्चित सीमा में, अपनी बात को किसी दूसरे अर्थ में लपेटकर, हालांकि सारे कोलफील्ड में एक ही बात हैं।"

"कौन-सी बात?"

"वही धन चक्कर, वही अत्याचार। पैरों तले रौंदकर रखते हैं सबको और ऊपर से ये सूदखोद गिद्ध।"

"मगर सवाल यह है कि हम रुपया लेते ही क्यों हैं सूद पर? यह तो सभी जानते हैं कि सूद का धंधा तबाह कर देने वाला धंधा है। क्या हमारे गांव में महाजन नहीं होते? वे भी तो यही करते हैं और यह बात सब लोग भली-भांति जानते हैं।"

वह उठ खड़ा हुआ। पास पड़े स्टोव को उठाया, फिर हिलाकर इस बात का पता किया कि उसमें तेल है या नहीं। फिर सहदेव की ओर मुड़कर बोला, "क्या तुम समझते हो कि आदमी कर्ज मन बहलाने के लिए लेता है?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। एक लम्हा उसके जवाब का इंतजार करने के बाद उसने स्टोव में हवा भरते हुए कहा, "असल बात यह है कि जब तनख्वाह पेट भरने से कम हो तो भूख आदमी को पागल कर देती है। आदमी एक दिन भूखा रह सकता है, दस दिन भूखा रह सकता है मगर कब तक? बच्चों को भूख से रोता-बिलखता कब तक देखा जा सकता है? फिर और भी समस्याएं हैं। बीमारी, शादी, मौत, बच्चे, प्रसव आदि। जानते हो, बीस प्रतिशत औरतें यहां बच्चा जनने में ही मर जाती हैं। यह मजबूरी जो है न सहदेव, यह बहुत बुरी चीज है। कभी-कभी आदमी चारों तरफ से ऐसा उलझ जाता है कि कोई राह नहीं मिलती। भूखी मछली चारे को लपकती है और फंस जाती है ... मकड़ जाल का नाम सुना है तुमने?"

स्टोव अब लगातार सीटियां बजा रहा था। मजूमदार ने चाय बनाते हुए फिर उसकी ओर सवालिया निगाहों से देखा और जवाब न पाकर हंस दिया। एक जहरीली हंसी।

"तुम नए आए हो। दो-चार साल रह जाओ तब देखोगे कि तुम्हारे चारों तरफ उथल पुथल और उपद्रव का माहौल है।"

उसने बिना हैंडल वाले कप में उसे चाय बढ़ाई। साथ में पावरोटी का एक टुकड़ा था। सहदेव ने औपचारिकता निभाते हुए कहा, "इसकी क्या जरूरत थी?"

"जरूरत नहीं थी, मगर था इसलिए दे दिया। नहीं होता तो नहीं मिलता। मैं औपचारिकता में विश्वास नहीं करता। तुम भी मत करना। वैसे भी हम एक ही नाव पर सवार हैं।"

सहदेव मुस्करा दिया, "नाव तो दो हैं। एक लेबर की नाव और एक बाबू की नाव।"

वह जोर से हंस पड़ा। चाय छलकने लगी तो उसे चारपाई की पट्टी पर रख दिया, "बाबू लोगों की हालत भी तुम लोगों से कुछ बेहतर नहीं है। सब बाहरी चमक-दमक है। अंदर से वे भी सड़े हुए हैं। एक बात बताऊं, ये बाबू लोग जो हैं न ये भी सूदखोरों के चंगुल में बुरी तरह फंसे हुए हैं। तुम सूद नहीं देकर दो गाली भी सुन सकते हो। मौका मिले तो झगड़ा भी कर सकते हों मगर ये बेचारे तो अपनी इज्जत के डर से कुछ नहीं कर सकते। जब बहुत फंस जाते है तो नौकरी तक छोड़कर भाग जाते हैं। फिर कोई दूसरी कोलियरी, तीसरी कोलियरी...।"

सहदेव ने कहा, "आपने जो कहा कि हम गाली भी सुन सकते हैं तो यह बात गलत है। कम से कम मैं गाली सहन नहीं कर सकता। यह मेरे बचपन की आदत है। मैं गांव में भी इस बात पर झगड़ा कर बैठता था।"

वह हंसा, "गाली तो यहां इतनी आम है कि उसका मतलब ही खत्म हो गया है। कभी नूनिया धोड़ा और उसके नीचे जहां लोग झुग्गी जैसी झोंपड़ियां डालकर आबाद हैं उधर गए हो?"

वह उधर गया था। उधर वे लोग रहते थे जो कोलियरी के नौकर नहीं थे, जो किसी के नौकर नहीं थे। हां, यूं कह लें कि जो बेकार थे। ये कोयला चोरी करके और ठेकेदारों के यहां कभी-कभी काम करके या शहर से नाजायज शराब के कनस्तर ढोकर अपना पेट पालते हैं। तड़के सुबह अपनी औरतों और बच्चों के साथ बेंत की झूड़ियों में कोयला लेकर निकल पड़ते हैं। चार-पांच मील चलकर कस्बे की चाय की दुकानों, शहर के कारखानों, बेकरियों ओर घरों में बेच आते हैं। उन्हीं कोयले की झूड़ियों में चोरी के लोहे भी होते हैं। भारी लोहे उनके मर्द और नौजवान लड़के कभी कपड़े में लपेटकर और कभी बोरे में भरकर सुबह तड़के निकल जाते हैं। कोलियरी के चपरासियों से रकम बंधी है। फिर आगे रंगदार घेरते हैं। पुलिस वाले अलग घात में लगे होते हैं। ये सबकी आंखों में धूल झोंककर या कुछ की मुट्ठी गरम करके बचते-बचाते शहर पहुंचते हैं और माल बेचकर सीधे शराब या ताड़ी के गोदामों में उतर पड़ते हैं। पीते हैं। औरतों और बच्चों के साथ पीते हैं। झगड़ते हैं। गालियां बकते हैं। बिना समझे, बिना सोचे गाली बकते हैं। ऐसी-ऐसी नंगी, भद्दी और फूहड़ गालियां जिन्हें सुनकर खुद गालियों को पसीना आ जाए। औरतें आंचल का

कोना कमर में खोंसकर, हाथ नचा-नचाकर, झुक-झुककर, आगे जाते-जाते पलट-पलटकर एक-दूसरे की काम-क्रीड़ा का बखान करती हैं, कभी अपने मर्दों से उलझ पड़ती हैं तो और मजा आता है। मर्द उसे मारने-पीटने की धमकी देता है और वह अड़कर ललकारती है—

"ले हमरे गुलाम के बेटा, देह जरा के पूत।"

ये दोनों गालियां मर्द के बाप को पड़ती हैं और वह तैश में आकर, गुस्से से बेकाबू होकर उसके गंदे मैले बालों को मुट्ठी से पकड़कर घसीटता है। औरत दर्द से दोहरी होकर जमीन पर पछाड़ खाती है। चार मीटर की छोटी साड़ी उसके शरीर को ढके रहने में असमर्थता दिखाती है। काला शरीर जगह-जगह से झांकने लगता है। कभी-कभी खुल जाता है। मगर औरत का ताव कम नहीं होता। उसी हालत में चीखकर कहती है, "अरे गुलाम के बेटा! अरे रंडी के पूत! अरे तोर मुंह में..."

भीड़ लग जाती है। लोग आवाजें कसते हैं, मजा लेते हैं, शह देते हैं। खूब हंसते हैं। यह मुफ्त का सिनेमा है। फोकट का बाइस्कोप..., कोई उन्हें मना नहीं करता। कोई रोकता नहीं, बल्कि चढ़ाते हैं। खेल जितना खिंचेगा, जितना लंबा होगा उतना ही मजा आएगा।

जब झगड़ा नहीं होता तो मजे में बाजार से एक रुपया में एक टोकरी सड़ा आम, जिसे दुकानदार इसलिए रख छोड़ते हैं कि कोई कोयला बेचने वाली फंस गई तो ले ही जाएगी, खरीदकर, इठलाते, झूमते-झामते चले आते हैं आम के सड़े हुए हिस्से को नोचकर फेंक देते हैं और आम का शेष भाग एक हाथ से पकड़कर चूसने लगते हैं। कभी-कभी सफेद कीड़ा यानी पिल्लू हाथ के पिछले हिस्से पर रेंगने लगता है तो उसे हाथ झटककर गिरा देते हैं। हाथ-मुंह आम के गूदे से लथपथ हो जाते हैं जिन पर मक्खियां जूझती, उड़ती, बैठती उनके साथ चलती हैं और देखने वाले को विश्वास नहीं होता कि ये आदमी है। सारे प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ हैं या कि हम बीसवीं सदी में रह रहे हैं।

सहदेव सोचता रहता है और मजूमदार उसके चहेरे पर नजरें गड़ाए रहता है, उसने काफी देर बाद कहा, "अगर नूनिया धोड़े या बावरी धोड़े में भी ऐसे दृश्य दिखाई देते हैं तो यह आश्चर्य की बात नहीं है। गरीबी, निर्धनता और रोजमर्रा की चीजों का अभाव उन्हें जानवरों-सी जिंदगी जीने पर मजबूर करता है। तुम्हारा क्या ख्याल है, ऐसा क्यों होता है?"

सहदेव के पास जवाब नहीं है। उसने इस संबंध में कभी कुछ सोचा भी नहीं है। बस देखा है और जो बात वह जानता है वह वही बात है जो हजारों सालों से बड़े लोग समझाते चले आ रहे हैं और वही बात वह दुहराता भी है, "अमीर-गरीब, छोटा-बड़ा, ऊंच-नीच तो भगवान बनाता है।"

"नहीं, भगवान नहीं, हम बनाते हैं।"

"हम?"

मजूमदार ने उसे आगे बोलने नहीं दिया, "गरीब, छोटा और नीच, उन्हें भगवान ने नहीं बनाया। उन्हें नीचे गिराया गया है। उन्हें दबाया गया है। उन्हें भूखा और नंगा रखकर, सूद में जकड़कर, बेगार लेकर, मार-पीटकर इस सीमा तक पहुंचा दिया है कि वह कीड़े भरे आम खाने पर तैयार हो गए। सारी सभ्यता, सारी संस्कृति और सारी सामाजिकता उनके लिए कल्पना मात्र हो गई। वे सिर्फ एक बात जानते हैं कि उन्हें जिंदा रहना है। वही बात जो एक जानवर जानता है। यह सब एक-दो या दस-बीस साल में नहीं हुआ बल्कि हजारों साल से चलता रहा है। यह सब कुछ सामंतवादी प्रथा..."

अब मजूमदार जो कुछ कह रहा था वह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। बिलकुल नहीं आ रहा था। इसलिए वह चाय की प्याली रखकर उठ खड़ा हुआ, "अब चलना चाहिए।"

मजूमदार ने हंसकर उसका हाथ पकड़ा और बैठा दिया, "ये सब बातें तुम्हारी समझ में नहीं आ रही हैं, है न? मगर इनको समझना चाहिए और यही सब कुछ बताती हैं किताबें, सचाइयां, जिंदगी की सचाइयां जिनको जानने के बाद ही जिंदा रहने का मतलब भी समझ में आता है।"

सहदेव ने हंसते हुए कहा, "लेकिन मुझे लीडर नहीं बनना है। इसके लिए हमारे ज्वाला मिश्र काफी हैं।"

"ज्वाला मिश्र लीडर है? उसी को लीडर कहते हैं? अय्याश वह, शराबी वह, मजदूरों से रिश्वत वह खाए। कोयला-चोरों और लोहा-चोरों से पैसा वह वसूल करे। जिस आदमी की नैतिकता का यह हाल है उसे लीडर कहा जाएगा?"

सहदेव ने वैसे ही सहजता से कहा, "मगर मेरा तो उसने बहुत साथ दिया। कपिल सिंह के झगड़े के बारे में उसने सुना तो मुझे बुलवाकर कहा कि तुम उन सालों से डरना मत। मैं तुम्हारे पीछे हूं। यूनियन तुम्हारे पीछे है।"

उस दिन जैसे ही वह खान से बाहर निकला, दो आदमी उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

"तुम्हें मिश्र जी ने बुलाया है।"

"किसने?"

"ज्वाला मिश्र ने, वह यूनियन आफिस में बैठे तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं।"

उसे आश्चर्य हुआ। ऐसी कौन-सी बात हो गई जो ज्वाला मिश्र ने उसे आदमी भेजकर बुलवाया है? वे तो जल्दी दिखाई भी नहीं देते। कभी-कभी यहां-वहां जाने में राम-सलाम हो जाती है और बस। उन्हें आज ऐसी क्या जरूरत आ पड़ी? वह उसी हालत में कालिख में डूबा अंडरवियर और बनियान पहने यूनियन आफिस पहुंच गया। खपरैल की एक कोठरी जिसमें चार-पांच कुर्सियां और एक सस्ता जर्जर टेबुल पड़ा हुआ था। ज्वाला मिश्र टेबुल पर पड़े कागजों को तन्मयता से देख रहे थे। उसे देखा तो काफी खुश होकर कहा

"का, हो सहदेव?"

"पांय लागी बाबा!"

"जिओ, आनंद करो, हम तुम्हें बुलाए थे।" बाबा बिना भूमिका बांधे शुरू हो गए, "हम तुमको बुलाए थे। सुना कि तुम्हारा कपिल सिंह के आदमी से झगड़ा हो गया है, क्या बात हुई थी?"

"वे कालाचंद को सूद के लिए तंग कर रहे थे। इसी बात पर थोड़ी कहा सुनी हो गई।"

ज्वाला बाबा बोले, "यह साला कपिला बहुत बढ़ गया है। उसका रस्सी खींचना होगा," फिर सहदेव से पूछा, "कोई बात तो नहीं हुई, कोई मार-पीट?"

"नहीं, मारपीट तो नहीं हुई। बस कहा-सुनी होकर रह गई।"

"दबना मत और तनिक मत घबराना। अब समझ लो कि हम तुम्हारे साथ हैं। यूनियन तुम्हारी है। अगर आदमी का जरूरत हुआ तो वह भी हो जाएगा। नेता जी के पास बहुत आदमी हैं। एक से एक पहलवान और लठैत, बस इशारा करने की देर है, इसलिए डरना नहीं। उस साले से एक बार टकराना होगा।"

उसने धीरता से कहा, "नहीं, अब उसकी जरूरत नहीं होगी। मामला सलट गया है।"

"मामला सलट गया? कैसे सलट गया?" उसने आश्चर्य से पूछा।

"हम गए थे शाम को, उसका पैसा चुकता करके कालाचंद का कागज ले आए।"

"दे दिया उसने कागज?" बाबा के स्वर में इस बार ज्यादा आश्चर्य-बोध था।

"हां, दे दिया।"

"साला संकरवासी गांठ बांधता है गले में, जितना छूटने की कोशिश करो उतना कसता जाता है। कैसे तुमको छोड़ दिया! समझ गया होगा कि ज्वाला का आदमी है। नेता जी की यूनियन का मेम्बर है, इसलिए उसने बात नहीं बढ़ाई। साला मालिक का पहलवान है। भेस चपरासी का और काम सूद का। कोलियरी के लेबर का सारा पैसा वही तो खाता है।"

"हमसे तो बात नहीं बढ़ाया, जबकि थोड़ा नशे में भी था।"

"नशे में तो वह चौबीसों घंटे रहता है। उसे मालूम हो गया होगा कि उसका बाप ज्वाला मिश्र अभी कोलियरी में मौजूद है।" आफिस में बैठे लोग हंसने लगे। उनमें से एक ने कहा "उसकी कोर तो बस आप ही से दबती है, वरना कोलियरी में किसी को भी नहीं पूछता है।"

ज्वाला मिश्र ने उसे बड़े प्यार से देखा। "अरे अगर मेरी जगह कोई दूसरा होता तो वह यूनियन चलाने देता? दो दिन में खदेड़कर बाहर कर देता। देखते नहीं, लाल झंडे वालों को इधर फटकने भी नहीं देता है। एक श्रीवास्तव है, वह भी उसी का दलाल है। दोनों साले चोर हैं।"

सब लोग खी-खी करके हंसने लगे। सहदेव ने अप्रसन्नता से उन लोगों को देखा और कहा, "तो हम जाएं, बाबा?"

बाबा बोले, "हां जाओ, लेकिन अपना ख्याल रखना। ये लोग साले सांप हैं। कब काट लेंगे, पता नहीं। और कोई बात हो तो उसे बता देना कि तुम ज्वाला के आदमी हो।"

"ठीक है, बाबा!" उसने धीरे से कहा और बाहर निकल आया।

मजूमदार जो इतनी देर से उसके चेहरे को पढ़ रहा था, बोला, "अगर तुम्हारा कभी ज्वाला मिश्र से झगड़ा हो जाए तो बिलकुल यही बात तुमसे कपिल सिंह भी कहेगा। दोनों एक-दूसरे से टकराना चाहते हैं मगर खुद नहीं। वे आमने-सामने कभी नहीं आएंगे। वे चाहेंगे कि कोई दूसरा टकराए और ये काम निकाल लें। कपिल सिंह कंपनी का गुंडा है तो ज्वाला मिश्र नेता जी का गुंडा है। कोई खास फर्क नहीं है दोनों में। दोनों के रास्ते अलग हैं मगर उद्देश्य एक है, पैसा...और यह पैसा वे मजदूरों से प्राप्त करते हैं। एक छीनकर हासिल करता है तो दूसरा अपनी बुद्धि लगाकर। ये दोनों जोंक हैं। जोंक जानते हो? एक जानवर है जो खून चूसता है। चुपचाप बदन में चिपट जाता है और खून चूसने लगता है। बढ़ता है और मोटा होता जाता है। जितना खून चूसता है उतना ही मोटा होता है। सच तो यह है सहदेव कि ट्रेड यूनियन यहां एक मजाक से ज्यादा कुछ नहीं है। उतना ही बड़ा मजाक जितना बड़ा मजाक कपिल सिंह जैसे कंपनी के दलालों के गिरोह का है।"

सहदेव अब उकता गया था, उसने कहा, "मगर रहना तो उन्हीं के साथ है मजूमदार बाबू!"

"हां, उन्हीं के साथ रहना है। इसी अंधेरे में रहना है...उसी रास्ते पर चलना है जो अथाह अंधेरे में डूबा है," वह थोड़ा सरका और सहदेव का हाथ पकड़कर कहने लगा—

"मगर इस अंधेरे में भी एक धुंधली, थोड़ी रौशन लेकिन पतली-सी एक पगडंडी है। उसे लोगों का स्पर्श चाहिए। फिर वह बढ़ती हुई चौड़ी होती जाएगी और एक दिन बड़ी और चौड़ी सड़क बन जाएगी।"

अब सहदेव एकदम बोर हो चुका था। इतना बड़ा दार्शनिक तो पगला पंडित भी नहीं था। वह उठा तो मजूमदार ने हाथ मिलाया, "कभी कभी मेरे घर आया करो।"

बाहर निकलते-निकलते उसने पलटकर कहा, "आया करूंगा।"

अंधेरे में चलते हुए रहमत ने उसका हाथ छुआ।

"मेरे साथ-साथ चलो, मुझे डर लगता है।"

"डर!, उसने चौंक कर रहमत की तरफ देखा लेकिन वहां बहुत अंधेरा था। कुछ

दिखाई नहीं देता था, रहमत का चेहरा भी नहीं। यद्यपि उनके हाथ में लैम्प थी लेकिन उसकी रोशनी इतनी सीमित थी कि सिर्फ नीचे फर्श दिखलाई पड़ रहा था और वह भी कुछ ही कदम। उसने लैम्प उठाकर रहमत का चेहरा देखा। पीला और सुस्त चेहरा जो पहले ही अपनी सारी लाली निरंतर भूख और गरीबी को भेंट कर चुका था। वही लाली सालों की नौकरी और भरपेट खाने के बावजूद अब दुबारा बहाल न हो सकी थी। उस क्षण यह चेहरा डर से एकदम पीला लगा, पसीने में भीगा हुआ...।

उसने हाथ बढ़ाकर उसकी बांहें थाम लीं, "किस बात का डर लगता है तुमको?"

डर उसे भी लगता है। शायद सबको लगता है। अथाह अंधेरे मे मौत घात लगाए और फंदा डाले बैठी है। दिखाई नहीं देती, मगर है। हर उठते हुए पग में कहीं न कहीं संदेह का घेरा होता है। क्या पता आगे... हंसते, बोलते, गप करते लोगों का समूह, खतरों को सूंघता, अंदर ही अंदर डरता, अपनी कुशलता के लिए प्रार्थना करता नीचे दलान में, उस अंधेरी सुरंग में उतरता जाता है। गहरा, सौ-दो सौ फुट नीचे, हजार फुट नीचे, एकदम पाताल में जहां बाहर की दुनिया का कुछ पता नहीं होता, जहां अपनी ही तेज चलती सांसों की आवाज साफ सुनाई पड़ती है। अपने ही दिल की धड़कनों को गिना जा सकता है। छत को बार-बार ताकते, ट्राम लाइनों के तारों से बचते, लोग और आगे बढ़ते हैं, नीचे उतरते हैं। कोई भी पल कयामत बनकर टूट सकता है, एक आदमी के लिए, दो के लिए, दस-बीस के लिए। इसलिए आम तौर पर जमीन के अंदर की चहल-पहल खत्म हो जाती है।

रहमत कोई जवाब नहीं देता। उसके लिए कुछ बोल पाना मुश्किल है। सहदेव उसका कंधा हिलाकर पूछता है, "किस बात का डर लगता है तुमको?"

"लक्ष्मी कहता था कि यहां एक आदमी मरा था चंद साल पहले, उसकी आत्मा भटकती रहती है।"

वह थम कर खड़ा हो गया, "कितने दिन हो गए खान में आए?"

रहमत फिर जवाब नहीं देता। सहदेव जानता है कि खान में काम करते हुए दो साल बीत चुके हैं। हाड़-तोड़ मेहनत के दो साल। पसीने और कोयले की कालिमा में डूबे दो साल। इन दो सालों ने चाहे कुछ और दिया हो या न दिया हो, एक आत्मविश्वास, एक भरोसा जरूर दिया है। आशा का एक दीप जला है जिसकी रोशनी यहां से गांव तक फैल गई है। अब खतुनिया अपने बेटे के लिए खेत खरीदने की बात नहीं करती। अब वह उसे पढ़ाना चाहती है। यही तो बहुत सारे ख्वाब हैं जो इन वर्षों में मिले हैं। छोटे ही सही चमकीले तो हैं। मदहोश तो करते हैं। हंसी-खुशी जिंदगी गुजार देने के लिए और क्या चाहिए, यही थोड़ा-सा नशा...

"और लोग भी तो कहते हैं कि उसका भूत सुरंगों में भटकता फिरता है। हालिज

की घंटी बजा देता है। कभी गाड़ी उलट देता है। कुछ लोगों ने तो उसे देखा भी है।"

सहदेव ने धीरे से पूछा, "तुम भूत में विश्वास रखते हो?"

रहमत मियां ने जवाब देने के बजाए उलटा सवाल कर दिया, "और तुम नहीं रखते क्या?"

"नहीं, भूत दुनिया में होता ही नहीं।"

"वाह कैसे नहीं होता? जो आदमी समय से पहले मर जाता है उसकी आत्मा..."

उसे हंसी भी आई और क्रोध भी आया, लेकिन यहां जमीन के तेरह सौ फुट नीचे अथाह अंधेरे और गर्मी में न ही उसका मजाक उड़ाया जा सकता था और न ही उसे डांटा जा सकता था, इसलिए उसने उसे सिर्फ विश्वास दिलाने की कोशिश की, "भूत-वूत कुछ नहीं होता। जाहिल लोग हमेशा किसी न किसी वहम के शिकार रहते हैं।"

यह अंडर ग्राउंड की अंधेरी दुनिया थी। तेरह सौ फुट नीचे सुरंगों का एक जाल बिछा था। काली दीवारें, काला फर्श और काली छत, हाथ में ढिबरी लिए जो सैंकड़ों की संख्या में इस अजीबोगरीब गुफा में दाखिल हुए थे अब अलग-अलग फेसों में बंटकर सिर्फ आठ रह गए थे। आदमियों का एक समूह जिसे दंगल कहा जाता है।

वह और रहमत लालू के दंगल में थे। लालू दुसाध बहुत घिसा हुआ मलकट्टा है जिसे कोलियरी की हर गैलरी, हर फेस की जानकारी है, जो कोयले के प्रकार, उसकी बनावट और उसकी कीमत तक जानता है, जिसे मालूम है कि चाल गिरने के क्या लक्षण हैं और कौन-सी चाल कितनी देर में गिर जाएगी।

अपने फेस में पहुंचकर सभी ने अपने गैंते, बेलचे और झूड़ियां रख दीं। चार आदमियों ने सरों पर गमछे और रूमाल बांधे। गैंते संभालकर कोयला काटने में लग गए जबकि बाकी चार आदमी उलटकर रखी हुए झूड़ियों पर बैठ गए।

लालू ने कहा, "रहमत झूठ नहीं बोलता, यहां एक साया है।"

सहदेव हंसा, "अब तुम चाचा, एक नया चुटकुला छोड़ोगे।"

"चुटकुले की बात नहीं, मैंने उसे बिलकुल सामने से देखा है।"

"ऐ! चाचा तुमको डर नहीं लगा?" झूड़ियों पर बैठे लोगों में से किसी ने हैरत से पूछा।

"डर तो बाद में लगा। पहले तो मुझे पता ही नहीं चला कि क्या बात है। उधर हालिज लाइन के स्टेशन पर से गुजर रहा था कि वह मेरे साथ चलने लगा। वह खैनी मांग रहा था, 'जरा देबें न हो, जरा खैनी देबें न हो।' अंधेरे में कुछ दिखाई तो नहीं दिया। मैंने सोचा कि कोई होगा। मैंने खैनी निकालकर चूना मिलाया और मलने लगा। इस बीच उसने कोई बात नहीं की, बस बार-बार खैनी मांग रहा था, 'जरा खैनी देबें न हो।' मुझे गुस्सा आ गया। मैंने कहा कि सुन लिया, तुम एक बात की रट क्यों लगाए हुए हो? यह कहकर

चुटकी में खैनी पकड़कर उसे देने के लिए मुड़ा तो देखा वहां कोई नहीं था।"

"कोई नहीं?" डरी हुई आवाज में किसी ने पूछा।

"नहीं, कोई नहीं। मैंने ढिबरी ऊंची उठाकर चारों तरफ नजर दौड़ाई। चारों ओर सन्नाटा था। न आदमी न आदमजाद। छन से मेरा जी उड़ गया। बदन के रोंगटे खड़े हो गए। खान से निकला तो बुखार से तप रहा था। पांच दिन बाद बलियापुर से संतोष ओझा आया। सरसों से झाड़ा तब कहीं जाकर मेरा बुखार उतरा।"

सहदेव कोयला काटते उसकी बातें भी सुन रहा था। वह एकदम चुप रह गया। इतनी लंबी कहानी के बाद और क्या रह गया है कहने को? मजूमदार ठीक कहता है, 'उन लोगों ने मजदूरों को अनगिनत अंधेरे कुओं में बंद कर रखा है। जातिवाद का कुआं, क्षेत्रीयतावाद का कुआं और अंधविश्वास का कुआं। ये कितने कुओं से निकल पाएंगे? नहीं सहदेव, यह मुश्किल है, बहुत मुश्किल।'

मजूमदार पागल नहीं है। पिछले एक साल से वह उसके संपर्क में है। रविवार का दिन उसी के घर में बिताता है। घर यानी वही अकेला किताबों से भरा कमरा। वह उसे किताबें पढ़ कर सुनाता है। अखबार की खबरें बताता है। बहसें करता है। उसका दिमाग धीरे-धीरे खुलता जा रहा है। आंखें दूर तक देखने लगी हैं। यहां से अमरीका तक, रूस, चीन और इंकलाब तक। वह मेहनत की कीमत जान गया है। उसे याद है, कालाचंद ने बहुत पहले कहा था कि ये लोग चूस लेते हैं और गंड़ेरी की तरह थूक देते हैं। तब यह बात उसकी समझ में नहीं आई थी मगर वह समझ गया है।

उसने मुड़कर लालू को देखा। वह खैनी खाकर हाथ झाड़कर कोयला जमा करने के लिए उठ खड़ा हुआ। उसने पल भर के लिए सोचा कि अगर उसे भूत मिल जाए तो...?

उसने अपना हाथ ऊपर उठाया। पूरी शक्ति के साथ गैंता अपने सामने की दीवार पर दे मारा। खचाक की आवाज हुई। गैंते का फाल दूर तक कोयले की नरम छाती में उतरता चला गया। फिर उसने गैंते को झटका दिया और कोयले का एक बड़ा-सा टुकड़ा उसके पैरों के पास आ गिरा।

कोयला काटने का यही ढंग प्रचलित है। आठ अदमियों में चार कोयला काटते हैं और चार आदमी कटे हुए कोयले को झूड़ियों में भरकर गाड़ी में लोड करते हैं। फिर दूसरे चार लोग कोयला काटते हैं और ये चारों गाड़ी में लोड करते हैं। गाड़ी का वजन एक टन होता है।

एक दिन मजूमदार ने उससे पूछा, "एक गाड़ी कोयले का वजन कितना होता है, मालूम है?"

"एक टन।"

"जानते हो एक टन कितने सी.एफ.टी. में होता है?"

"नहीं।"

"एक टन होता है छत्तीस सी.एफ.टी. में और कोलटब जो बनाए जाते हैं जिसे तुम लोग गाड़ी कहते हो वह चालीस सी.एफ.टी. का होता है। इसका मतलब यह हुआ कि हर कोलटब में चार सी.एफ.टी. कोयला ऐसा कटता है जिसकी मजदूरी लेबर को नहीं मिलती है और जिस पर मालिक को कोई लागत नहीं आती।"

वह आश्चर्य से मजूमदार का मुंह ताकने लगता है।

"हैरत की बात नहीं है। यह लेबर की मेहनत ही इन मालिकों का ऐशोआराम है। ये साधारण लोग नहीं हैं। ये डाकू हैं, लुटेरे...। सिर्फ इसी बात पर मत जाओ। ये मजदूरों की छुट्टियां, उनके ओवर टाइम, उनके बोनस और उन्हें मिलने वाली कई तरह की सुविधाएं सब हड़प लेते हैं। जानते हो, मुझे तनख्वाह दो सौ रुपए मिलती है और दस्तखत दो सौ पचास रुपए पर करने पड़ते हैं।"

सहदेव ने उसे फिर हैरत से देखा।

मजूमदार हंसा, "तुम सोचते होगे कि मैं इतना बड़ा विद्वान बना फिरता हूं। इतनी लंबी-लंबी बातें करता हूं, फिर भी इस तरह के अन्याय को सहन कर लेता हूं। क्या किया जाए, यह मजबूरी है। इतने बड़े गरम तवे पर अगर एक बूंद पानी टपका भी तो क्या होगा? छन से फौरन जल जाएगा।"

मजूमदार कभी-कभी इतना सच बोलता है कि जल्दी विश्वास नहीं होता। ताबड़-तोड़ गैंता चलाते रहने से उसके पोर-पोर से पसीना फूट निकला था और उसके शरीर पर केंचुए की तरह रेंग रहा था। यहां पसीना कोई नहीं पोंछता। ऐसे ही सर, गरदन और पीठ पर से रेंगती हुई पसीने की धार पैरों से गुजरकर जमीन में चुभ जाती है। कोयला मिट्टी की तरह पसीने को सोखता नहीं है बल्कि अपने पास जमा रखता है। कोयले की धूल उसे ढक देती है, सुखाती रहती है। कोयले के ताजा नन्हें कण पसीने से मिलकर सोने की तरह चमकते हैं।

वह चुपचाप थोड़ा सुस्ताने के लिए रुका और लालू से कहा, "तुम ऐसा करो चाचा कि किसी दिन अपने भूत से मिलवा ही दो।"

लालू दुसाध ने उसे घूरकर देखा, "मजाक मत उड़ाओ, किसी दिन देख ही लोगे। यह गलत बात नहीं है। यहीं उत्तर में महतो का लड़का, क्या नाम था उसका, शंभू मेरे सामने मरा था। बस महीना भर पहले ब्याह हुआ था उसका। यह बात सब जानते हैं।

सहदेव हंसा, "चाचा, बात असल में यह है कि यह भूतों का इलाका है ही। यहां सैंकड़ों कोलियरियां हैं। हजारों लोग इन कोलियरियों में मरे भी होंगे, इस तरह हर कोलियरी

में पांच-दस भूत तो जरूर मिल जाएंगे। फिर डरने की क्या बात है?"

लालू बुरा मान गया, "तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है उस लाल झंडा वाले मजूमदार ने। चार अक्षर क्या पढ़ा दिया कि एकदम से पंडित हो गए। मतलब यह कि गुरु गुड़ रह गया और चेला चीनी हो गया।"

सब लोग हंसने लगे। मजूमदार से उसके संबंध की बात हर जगह फैल गई है। सब लोग यह जान गए हैं कि सहदेव पढ़ा-लिखा है। कभी-कभी जब कोलियरी के मजदूर किसी बात पर उलझ जाते हैं तो उसके पास सलाह लेने चले आते हैं। वे अकसर यूनियन के पास नहीं जाते। कपिल सिंह से मदद नहीं मांगते। बस सीधे उसके पास चले आते हैं। उसकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। इस अंधेर नगरी में जो जितना लोकप्रिय होता है उतना ही मैनेजमेंट और यूनियन दोनों की नजरों में चढ़ता जाता है। दोनों उसे अपनी तरफ खींचना चाहते हैं। उसके फायदे के लिए नहीं, बल्कि अपने स्वार्थ के लिए। ज्वाला मिश्र उसे अकसर पकड़कर यूनियन आफिस ले जाता है। कई बार जिद कर चुका है कि तुम यूनियन के लिए काम करो। कपिल सिंह भी कभी आते-जाते बुलाकर बैठा लेता है, "अरे छोड़ो नौकरी को, नौकरी में क्या धरा है? कोई ठेकेदारी कर लो।"

मजूमदार कहता है, "ये गड्ढे हैं और गड्ढों पर जाल है। जहां इस पर पांव रखा कि गए छपाक... और ऊपर से जाल कस जाएगा। इसलिए दोनों से बचते रहो।"

मजूमदार अपना काम बहुत लगन से करता है। उसने अपनी पार्टी के ग्यारह मेंबर बना लिए हैं। जी हां, वही लाल झंडा, हालांकि कोई फर्क नहीं पड़ा है। गरम तवे पर जहां एक बूंद पानी छन से उड़ जाएगा वहां ग्यारह बूंद पानी भी क्या कर सकेगा?

उसने एक दिन मजूमदार को मजाक में एक सलाह दी, "तुम ज्वाला की यूनियन में शामिल हो जाओ। वहीं से काम शुरू करो। बाद में पूरी यूनियन की ऐसी की तैसी कर दो।"

वह बहुत हंसा, "मतलब यह कि तुम भी वही दांव-पेंच सिखा रहे हो जो यहां अकसर चला जाता है।"

"आखिर इसमें हर्ज ही क्या है?"

"यह सिद्धांत की बात है, सहदेव!"

"सिद्धांत कौन बदलने को कहता है? मैं तो सिर्फ थोड़े दिन के लिए चोला बदलने को कह रहा हूं। आखिर ये लोग कितने हथकंडे अपनाते हैं, क्या-क्या चाल चलते हैं। एक दांव तुम भी चल दोगे तो क्या अनर्थ हो जाएगा?"

"हमारे यहां अपना कुछ नहीं होता। पार्टी ही सब कुछ है और पार्टी की पालिसी से बाहर निकलने की किसी को इजाजत नहीं है। यही हम लोगों का उसूल भी है।"

"तो मत तोड़ो अपने उसूल और सिर्फ बैठे क्रांति का सपना देखते रहो।"

चार गाड़ी लोड करके उन लोगों ने हालिज स्टेशन तक ढकेलकर पहुंचा दिया। इस बार लालू और अन्य की कोयला काटने की बारी थी। वे चारों सुस्ताने के लिए बैठ गए। रहमत ने सहदेव से कहा, ''मैं भूत-प्रेत से नहीं डरता हूं बस दिल में एक वहम समाया रहता है।''

''कैसा वहम?''

''ऐसा लगता है जैसे कुछ होगा, कोई ऐक्सीडेंट, कोई हादसा...''

''देखो, यह डर तुम्हारा अकेले का नहीं है। हर आदमी जो खान के अंदर उतरता है, यह डर कहीं न कहीं उसके दिल में मौजूद होता है और इसी वजह से आदमी चौकन्ना भी रहता है। हर चीज को देखता जाता है। खास तौर से ऐसी खतरे वाली जगहों पर एक तरह से सोचो तो अच्छा है।''

''मगर मुझे डर लगता है। ऐसा लगता है जैसे किसी दिन अचानक मैं मर जाऊंगा।''

''धत्,'' सहदेव ने उसकी बात काट दी, ''पागलों की तरह क्यों सोचते हो?''

''नहीं सहदेव भाई, मुझे ऐसा लगता है।''

सहदेव झल्ला गया, ''जब तुम्हें इतना ही डर लगता है तो गांव चले जाओ।''

''गांव?'' वह कुछ सोचने लगा, फिर कुछ देर बाद बोला, ''गांव में भी क्या रखा है? न जगह, न जमीन। वहां भी तो मजदूरी ही करनी है। यहां कम से कम खटने पर पैसा तो मिलता है, खान साहब जैसे लोगों की फटकार तो नहीं सुननी पड़ती।''

''फिर इतना घबराते क्यों हो? हम लोग भी तो काम कर रहे हैं। सैंकड़ों-हजारों लोग काम कर रहे हैं।''

सहदेव ने उसे बड़े प्यार से देखा, ''बुरी बात सोचना छोड़ दो, चार-पांच साल काम करना है। फिर हम लोग गांव में जमीन लेकर लौट जाएंगे।''

सहदेव नहीं जानता कि यह ख्वाब है। वैसा ख्वाब जिसे लगभग हर मजदूर देखता है। उसे इस बात का पता नहीं कि कोलियरी की नौकरी गुड़ भरा हंसुआ है जो टेढ़ा इतना है कि निगला नहीं लाता और मीठा इतना है कि छोड़ा भी नहीं जाता।

रहमत के दिल में जो डर बैठ गया था वह फिर कभी नहीं निकला।

आंख खुलती है तो ऊपर छप्पर के सुराखों में से आसमान के सफेद, दुधिया टुकड़े टंगे हुए-से दिखाई पड़ते हैं। कानों में झाड़ू लगाने की सपसप की एक विशेष आवाज सुनाई देती है। कभी-कभी मुर्गे की बांग सारी खामोशी को झकझोर डालती है। इक्का-दुक्का जानवरों के गले में बजती हुई घंटी की आवाज भी उन्हीं आवाजों में शामिल होने लगती है। गांव में हर रोज सुबह ऐसे ही प्रकट होती है, इसी खास अंदाज में। यह सब उसे दो

वर्षों के बाद भी एकदम अपना लगा। बिलकुल अपना।

वह दो साल बाद गांव आया है। स्वयं ही नहीं लौटा, बल्कि उसका भाई उसे लाने गया था। अब उन्हें इस बात की शंका हो चली थी कि वह शहर में किसी फंद में फंस गया है। यह शक इसलिए हुआ कि उसने इधर खत लिखना तो क्या खतों का जवाब देना तक बंद कर दिया था। ऐसे में एक दिन काम पर से वापस आया तो अपने भाई को आया देखकर एकदम हैरान रह गया।

"आप! कब आए?"

उसका भाई जवाब देने के बजाए उस पर गरम हो गया, "तुम को घर की कुछ फिक्र है? दो साल हो गए, तुमने पलटकर भी नहीं देखा कि हम जी रहे हैं या मर चुके हैं?"

"पैसे तो मैं बराबर भेज देता हूं," वह विनम्रता से बोला।

"पैसा भेजने से क्या होता है। लोग कहते हैं कि मैंने पैसे के लोभ में तुमको परदेस हांक दिया है। वैसे भगवान जानता है, जो कुछ किया है तुम्हारे भले के लिए ही सोचकर किया है।"

सहदेव ने कहा, "लोग बकते हैं, बकने दीजिए। कुत्ता भूंकता रहता है और हाथी चलता रहता है।"

"लोगों की मैं परवाह नहीं करता। तुम्हारी भाभी ने जीना दूभर कर दिया है। बार-बार यही कहती है कि सहदेव हाथ से बेहाथ हो गया है। वह जरूर किसी फंद में फंस गया होगा।"

फंद में फंस जाना एक खास मुहावरा है। यह फंद औरत भी हो सकती है, शराब भी और जुआ भी।

सहदेव धीरे से हंसा, "औरतों को तो हमेशा यह डर लगा रहता है। इन दो सालों में चार-पांच बार तो रहमत मियां घर हो आया है। उससे तो पूरी खबर मिल ही जाती होगी।"

"हां, उसने बताया था कि तुम आजकल बहुत किताबें पढ़ते हो, पगला पंडित की तरह। रात को सब सो जाते हैं तो तुम ढिबरी जलाकर पढ़ते हो। उसने एक बात और बताई है।" उसके भाई ने रुक कर रहस्यमयी ढंग से उसे देखा।

"क्या बताया है उसने?"

"यही कि तुम कम्यूनिस्ट हो गए हो। भगवान पर विश्वास नहीं रखते।"

भगवान पर वह विश्वास करता है। वह मजूमदार की तरह इतनी दूर नहीं गया है कि सारी चीजों को साफ-साफ बिलकुल स्पष्ट देख सके। कई पीढ़ियों या शायद जन्म-जन्म का संस्कार इतनी जल्दी नहीं छूटता। मजूमदार खुद कहता है कि यह आसान काम नहीं है। धर्म जो मासूम और निश्छल लोगों में एकता बनाए रखने और एक विशेष नैतिक राह

पर चलाने के लिए एक सामाजिक ढांचे के रूप में उभरा था उसका इतना गलत इस्तेमाल हुआ है कि शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। पहले सामंतों, ने, फिर पूंजीवाद के ठेकेदारों ने और अब राजनीतिज्ञों ने इसे एक घातक, मजबूत और अचूक हथियार की तरह इस्तेमाल किया है।

सहदेव मजूमदार की बात याद कर मुस्कराता है। अगर भैया से उसकी मुलाकात हो जाए तो मजा आ जाता।

वह गांव जाना नहीं चाहता था इसलिए उसने छुट्टी न मिलने का बहाना भी किया, लेकिन उसका भाई उसे छोड़कर जाने को तैयार नहीं हुआ। इस बार उसे हर हालत में ले जाना था। इसलिए ननकू की मदद से उसके भाई ने उसे पंद्रह दिन की छुट्टी दिला दी और उसी दिन, रात की गाड़ी से उसे गांव लेता आया।

गांव वैसा ही था जैसा दो साल पहले छोड़कर गया था। हरा-भरा, हरियाली की वही खास खुशबू बिखेरता हुआ। मेले-ठेले और त्यौहारों से सजा संवरा। अब सिर्फ यह हुआ था कि लड़के जरा बड़े हो गए थे। लड्डू बोलने और दौड़ने लगा था। कुछ लड़कियों ने फ्राक छोड़कर साड़ी बांधना शुरू कर दिया था। गिरधारी का बाप और सुंदरी चमैन दोनों मर गए थे। दुख्खन लाल की विधवा का खेत चौधरी साहब ने बेईमानी से मुकदमा चला कर अपने खेतों में मिला लिया था। जिंदगी वैसे ही सुस्त रफ्तार से गांव में गुजर रही थी।

अब छप्पर के सुराखों से पीले धूप की लंबी-लंबी लकीरें खिंच गई थीं और दीवारों पर, काई जमी दीवारों पर धूप यूं दिखाई दे रही थी मानो उन पर पीली रंग से पुताई की गई हो। अचानक उसकी भाभी भिड़के दरवाजे को ढकेलकर अंदर चली आई।

"अब क्या सारा दिन सोते रहोगे? शहर में जाकर आदत बिगाड़ ली है।"

गांव के लोगों का एक विश्वास बन गया है कि शहर के लोग आलीशान कमरों में दिन चढ़े खूब सोते हैं। उन्हें मालूम नहीं कि शहर में भी गांव से बदतर जगहें हैं। अंधेरी, गंदी और बजबजाती हुई नालियों वाली जगहें। उन्हें भी मुंह-अंधेरे उठना पड़ता है और ऐसी कठिन मेहनत करनी पड़ती है कि शरीर से पसीने के साथ तेल निकल आता है। लेकिन उसने अपनी भाभी को कुछ नहीं बताया। चुपचाप उठकर बिस्तर पर बैठ गया।

"मैं समझती थी कि अब तुम आओगे ही नहीं। कसी को घर में डाल लिया होगा। वहां तो बहुत मिलती हैं मेम। महीन साड़ी से बदन झलकता है उनका। पाउडर और लाली से मुंह लाल-भभूका।"

"इसमें जलने की क्या बात है, भाभी? तुम भी जा बसो भैया के साथ शहर। रोका किसने है?"

उसकी भाभी ने मुंह बिचकाया, "तुम्हारे भैया ले जाएंगे? कितना जिद किया कि मैं भी कोलियरी जाऊंगी और शहर देखूंगी, मगर तुम्हारे भैया ने ना छोड़कर हां नहीं की।"

वह हंसा, "वहां कोलियरी में क्या देखोगी, चेहरा काला हो जाएगा।"

"होने दो, वहां गाड़ी नहीं होती? बड़े-बड़े मकान, सिनेमा-थिएटर, बड़ी-बड़ी जगमग करती दुकानें। एक से एक तो सामान बिकता है वहां।"

उसकी भाभी ने अपने दिमाग में जो शहर की तस्वीर बना रखी है वह उसे तोड़ना नहीं चाहता। बस मुस्कराकर रह जाता है। उसकी भाभी ही बोलती है, "बहुत मजा कर लिया, इस बार तो तुम्हें ऐसे नहीं जाने दूंगी। पांव में बेड़ी डाल ही दूंगी।"

उसके स्वर में कुछ था। कोई दर्द, कोई शिकवा, कोई शिकायत, कोई गिला। उसकी भाभी को समझते देर नहीं लगी। ऐसे मामलों में औरतें बड़ी संवेदनशील होती हैं। वह फौरन ठीक जगह पर आ गई।

"जुलिया के लिए तुम्हारे भाई को कहा था मगर वे लोग तैयार नहीं थे। जात-गोत्र में वे लोग हमसे ऊंचे थे।"

सहदेव ने अपनी सारी श्रवण शक्ति इकट्ठी कर ली। उसकी भाभी बताएगी कि जुलिया ने कैसे-कैसे हंगामा मचाया। कैसे रो-रोकर आंखें सुजा ली थीं। कैसे डूब मरने की कोशिश की। कितना बड़ा हंगामा मचा था... मगर उसकी भाभी कुछ नहीं बोली। उठकर खड़ी हो गई।

"अब जल्दी से उठो। कहीं बाहर नहीं जाओगे?"

उसकी भाभी चली गई। वह वैसे भी चादर ओढ़े अलसाया-सा बैठा रहा। बिलकुल विचारों से मुक्त। बाहर लड्डू उसका लाया हुआ प्लास्टिक का बाजा बजाता फिर रहा था। टीन की डफली जिस पर एक खूबसूरत औरत की तस्वीर बनी थी उसे गले में लटका रखा था। आज वह किसी बड़े रईस की तरह अपने शहर के खिलौनों को लिए गांव में दनदनाता फिर रहा था और सब जगह यह खबर भी फैलती जा रही थी कि सहदेव घर आ गया है।

दोपहर को सुंदर लाल उससे मिलने आया। सुंदर लाल उसका दोस्त था। दोनों खरसवां हाई स्कूल में सातवीं क्लास तक एक साथ पढ़े थे, फिर वह खेती, गृहस्थी में लग गया। उससे छूटने के बाद भी दोनों की दोस्ती कम नहीं हुई। दिन-रात का साथ था। कभी-कभी वह सहदेव से जुलिया के बारे में कहता।

"अरे यार, यह चुम्मा-चाटी छोड़ो और उसे लेकर उड़ जाओ। बाकी जो होगा मैं संभाल लूंगा।"

"उसका मामा दारोगा है पटना में। भिजवा देगा सात साल के लिए।"

"भिजवा कैसे देगा? मियां-बीवी राजी तो क्या करेगा काजी?"

दोनों खूब हंसते। सहदेव उसे भगा ले जाने पर तैयार नहीं हुआ। वह जानता था कि उसका ब्याह उसी के साथ होगा। उसने अपनी भाभी को लगभग संकेत दे ही दिया है। जुलिया ने भी अपने घर में किसी न किसी को यह बात बता ही दी होगी।

सुंदर लाल उससे काफी गंभीरता से मिला, उसे सहदेव के इस सदमे का अहसास था। चंद औपचारिक और अनावश्यक बातों के अलावा कोई बात नहीं हुई। दोनों ने साथ-साथ खाना खाया और तीसरे पहर के बाद हाथ में हाथ डालकर बाहर निकल गए। फागुन के महीने में सुबह को ठंड लगती है लेकिन दिन की धूप तीखी होती है और शाम होते-होते हवा में रस उतर आता है। उसी रस भरी हवा में दोनों बेमतलब गांव का चक्कर काटते रहे।

जुलिया के घर के पास से गुजरते हुए सहदेव ने पूछा, "बारात बहुत बड़ी आई थी?"

"न बहुत बड़ी, न बहुत छोटी।"

"तुमने वर को देखा था?"

"वर तो तुम्हारे पांव के बराबर भी नहीं था। सूखा, मरा, बरसों का बीमार, पता नहीं क्या देखकर दे दिया उसे!"

"शादी में कोई हंगामा नहीं हुआ?"

"नहीं तो।"

"जुलिया ने कहा था अगर उसकी शादी किसी दूसरी जगह हुई तो गिरधारी के कुएं में डूबकर जान दे देगी।"

"अरे यार..." सुंदर लाल ने नफरत से कहा, "तुम भी अजीब मूर्ख हो। औरत कमबख्त बोलती है मगर करती कुछ नहीं। मजे में चुप्पी साध लेती है।"

थोड़ी देर के लिए खामोशी छा गई। दोनों खेत की आरी पर चलते हुए दूर निकल गए। थोड़ी देर बाद एकाएक सुंदर लाल ने पूछा, "तुम्हें इसका बहुत दुख है?"

उसने क्षण भर रुककर सुंदर लाल को देखा, फिर कहा, "नहीं।"

"होना भी नहीं चाहिए। पांव की जूती, एक नहीं रही दूसरी ले लेंगे।"

कहीं से एक गुस्सा सहदेव के अंदर सरसराता है। एक कड़वा, तीखा अचानक फट पड़ने वाला गुस्सा। वह सामने पड़ी मिट्टी के ढेले पर जोरदार ठोकर मारता है। मिट्टी का ढेला टूटकर बिखर जाता है।

थोड़ी देर बाद सुंदर लाल ने कहा, "भाभी कह रही थी कि तुम्हारे लिए सरामपुर में कोई लड़की देख रखी है?"

उसने रुककर फिर सुंदर लाल की ओर देखा, "मैं शादी नहीं करूंगा।"

"क्यों नहीं करोगे? अगर जुलिया से अच्छी न हो तो मत करना।"

"सवाल अच्छी-बुरी का नहीं है।"

"फिर?"

"बस, ऐसे ही मैंने फ़ैसला कर लिया है।"

दोनों खामोशी से चलने लगे मानो सब कहना-सुनना खत्म हो गया हो।

पूरे गांव का चक्कर लगाकर जब लौटे तो सूरज डूब रहा था। हवा में ठंडक समा गई थी। गांव के छप्परों से धुंआ निकलने लगा था और एक क्लेशयुक्त धुंधलका, एक बेनाम उदासी धीरे-धीरे चारों ओर फैलती जा रही थी। सुंदर लाल ने प्यार से उसके कंधे पर हाथ रखा।

"मैं तुम्हें इतना कमजोर नहीं समझता।"

"हां, कम से कम इतना मजबूत तो जरूर हूं कि कोई फैसला कर सकूं।"

"चाहे वह फैसला गलत हो।"

"गलत और सही का फैसला तो बहुत बाद में होता है।"

दोनों फिर चुप हो गए। शाम के गहराते धुंधलके में दोनों ने एक-दूसरे के चेहरे को पढ़ना चाहा मगर असफल हो गए। सहदेव ने बात पलटकर अचानक पूछा, "गांव में किसी के पास सायकिल होगी?"

"कहां जाओगे?"

"रसूलपुर जाना है। वहां का एक मियां मेरे साथ काम करता है। उसी का पैसा और सामान पहुंचाना है।"

सायकिल तो...सायकिल तो...वह मन में याद करता है, फिर बतलाता है, "कृपा के पास है सायकिल, उसे ब्याह में मिली है, बिलकुल नई है...मैं मांगकर ला दूंगा।"

रसूलपुर उसने पहले कभी नहीं देखा था। पांच साल पहले एक बार उसका बैल खो गया था तब वह बैल खोजता हुआ रसूलपुर पहुंच गया था। खान साहब के पक्के मकान में जो गांव के बाहर अवस्थित था और जिसे लोग हवेली कहते हैं, वहीं पूछ-ताछ की, वहीं से वापस भी हो गया। गांव में घुसने या गांव देखने की नौबत ही नहीं आई। आज रसूलपुर पहुंचा तो दोपहर होने को आ रही थी। सुबह उठने में देर हो गई थी और भाभी ने भी जो पकवान पकाए थे उसे भोग लगाए बिना कैसे जाने देती? रास्ता भी लंबा था। सात कोस। वह तो सायकिल नई थी और रास्ता सूखा था, इसलिए बिना रुके दनदनाता हुआ पहुंच गया। कई आदमियों से पूछता गांव पार करके अंतिम सिरे पर आ गया। यहां गरीबों और भूमिहीनों के घर थे। उन्हीं घरों में से एक घर रहमत मियां का था। दो कमरों का घर। सामने छोटा-सा बरामदा। उसी बरामदे के कोने में चूल्हा बना था जो बावर्ची खाना कहलाता था। सामने एक पुरानी जर्जर-सी चौकी पड़ी थी जिसका एक पाया टूट गया था। उसकी जगह पेड़ की एक मोटी टहनी काट कर ठोंक दी गई थी। अब यही पुरानी और टूटी हुई चौकी तख्त कहलाती थी जैसे खान साहब के छोटे-से घर को हवेली कहा जाता

है। इसी बात को कोलियरी में संतोष महतो बड़े चटखारे लेकर कहता है–

"गजभर कपड़ा दस्तरख्वान/–वाह रे बेटा मुसलमान!"

रहमत मियां के घर के सामने उसने सायकिल की घंटी बजाई तो एक औरत ने डरी-सहमी नजरों से बाहर झांका और आशा के विपरीत एक साफ-सुथरे आदमी को नई चमचमाती सायकिल पर आया देखकर एकदम घबरा गई। शायद वह समझी कि कोई कोर्ट-कचहरी का आदमी है। उसके ससुराल की जमीन पर जब मुकदमा चल रहा था तो ऐसे पियादे कई बार आए थे और अंत में खान साहब ने जमीन को नीलाम कर दिया था। सहदेव ने डरी सहमी, बेहद घबराई हुई औरत को देखा। औरत शक्ल से काफी अच्छी बल्कि बहुत खूबसूरत थी। उसे कंबल की बात याद आई। मतलब यह कि कंबल नया ही ज्यादा लगता था। चमक-दमक अभी बची हुई थी और बहुत ज्यादा इस्तेमाल के लक्षण भी दिखाई नहीं दे रहे थे।

पांच-छह साल के एक लड़के ने थोड़ा तुतलाते हुए उससे पूछा, "किसको खोदते हैं?"

उसने सायकिल स्टैंड पर खड़ी कर दी और जरा सा झुककर उसे गोद में उठा लिया, "तुमको खोदते हैं।"

अब लड़का भी अपनी मां की तरह हैरान रह गया। वह लड़के को उठाए अंदर आकर चौकी पर बैठ गया।

"मेरा नाम सहदेव है। मैं सतगांव का रहने वाला हूं।"

आगे बोलने की जरूरत नहीं हुई। खतुनिया फौरन समझ गई। रहमत मियां ने विस्तार से सारी बात पहले ही बता रखी थी। वह जब भी गांव आता तो एक बार सतगांव जरूर जाता। वह झट से सर पर आंचल डाले बाहर आ गई।

"तुमने तो भैया डरा ही दिया था। मैं समझी थी कि कोई कचहरी का पियादा है।"

सहदेव हंसा, "पियादा तो हूं, भले कचहरी का नहीं हूं, रहमत भाई का हूं।"

"कब आए हो, भैया?"

"परसों आया हूं।"

"अभी तो रुकोगे कुछ दिन?"

"हां, पंद्रह दिन की छुट्टी है। दो साल बाद आया हूं।"

"दो साल। तुम लोगों का शहर में मन लग जाता है तो गांव आने का मन ही नहीं होता, है न...?"

उसके कथन में जो शिकायत छुपी थी सहदेव को समझते देर नहीं लगी। वह मुस्करा कर बोला, "हमारे रहमत भाई का मन तो शहर में जरा भी नहीं लगता। हर महीने गांव आने की बात करता है।"

खतुनिया शर्मा गई, "अब भैया, तुम भी हंसी करने लगे।"

सहदेव ने रुपए निकालकर लड़के के हाथ में पकड़ा दिए, "तुम्हारे बाप ने भेजा है।"

फिर उठकर सायकिल के हैंडिल पर लटकते थैले को उतार कर दे दिया। थैला पाते ही लड़का खुशी से मचल गया और वहीं चौकी पर थैला उलट दिया। उसमें लड़के का एक जोड़ी कपड़ा था। खतुनिया की एक साड़ी थी, थोड़े चाकलेट और प्लास्टिक की मोटर भी थी। लड़का सारी चीजों को चौकी पर छोड़कर मोटर उठाकर भाग खड़ा हुआ। खतुनिया ने बिखरे सामान को फिर थैले में भर दिया। अल्मुनियम के गिलास में पानी लाकर उसके सामने रख दिया, "अब भैया, खा-पीकर उल्टे पहर जाना। इतनी दूर से सायकिल चला कर आए हो।"

"देर हो जाएगी। घर से निकलते-निकलते दस बार तो भाभी ने कहा कि जल्दी लौट आना।"

"वह सब मैं नहीं जानती। बिना खाए तो मैं किसी भी हालत में नहीं जाने दूंगी।" फिर वह किसी संकोच में पड़ गई और धीरे से पूछा, "पर भैया, तुम हमारे यहां का बना खाओगे।"

"क्यों?"

"नहीं, गांव में अकसर लोग नहीं खाते।"

"कोलफील्ड में सब भ्रष्ट हो गया है। वह एक ऐसी जगह है जहां छूआ-छूत की बात कोई सोचता भी नहीं। मैं और रहमत कभी-कभी एक ही थाली में खा लेते हैं।"

"पर गांव में तो नियम-धर्म है अभी।"

"नियम-धर्म को छेंके पर टांग दो। मैं यह सब नहीं मानता। पहले भी नहीं मानता था। तुम बनाओ, मैं खाऊंगा।"

"हां भैया, बिना खाए जाओगे तो तुम्हारे भाई क्या कहेंगे कि मेरे दोस्त को सूखे मुंह भेज दिया। भात और चोखा बना देती हूं।"

सहदेव हंसकर बोला, "तुम जहर दे दो, वह भी खा लूंगा।"

इसी बीच रहमत का बेटा गांव के कई घरों का चक्कर काटकर वापस आ गया। सहदेव ने उसे अपने निकट खींच लिया, "क्या नाम है तुम्हारा?"

"इलफान।"

"अरे, यह इलफान क्या हुआ?"

खतुनिया बीच में बोल पड़ी, "इसका नाम इरफान है, भैया।"

"अच्छा इरफान, तुम पढ़ते हो?"

"हां।"

"क्या पढ़ते हो?"

"अलिफ बे पे...।"

सहदेव हंसकर बोला, "अलिफ बे पे, अम्मा मुर्गी ले दे।"

इस बार खतुनिया मुंह पर आंचल डालकर हंसने लगी। सहदेव ने इरफान से पूछा, "अपने बाप के पास चलेगा?"

"मां जाएगी तब।"

खतुनिया तुनककर बोली, "मुझे क्यों ले जाएगा तुम्हारा बाप? उसके ऐश में खलल नहीं पड़ेगा?"

सहदेव बोला, "भाभी, इस बार रहमत आए तो तुम जरूर उसके साथ आओ।"

खतुनिया बोली, "कितनी बार कहा है कि यहां क्या है। बूढ़ा है और मैं, बस दो प्राणी वहीं रहेंगे तो नहीं होगा। वहां तो औरतें भी काम करती हैं। मैं भी कुछ न कुछ मजदूरी कर ही लूंगी। कम से कम लड़का शहर में पढ़ तो लेगा। यहां तो मौलवी साहब अलिफ दो जबर अन, बे दो जबर बन में सारी उम्र पार कर देंगे।"

सहदेव को आश्चर्य हुआ। यह मामूली महुए चुनने वाली औरत इतनी अक्ल कहां से सीख आई! मर्द तो है एकदम भोलाभाला, बिलकुल गाय। ठीक से बात तक करने नहीं आती। कुछ लोग औरत के मामले में काफी खुशकिस्मत होते हैं।

अभी इरफान उसकी गोद में ही था कि रहमत का बाप आ गया। जुमे का दिन था और वह खरसवां मस्जिद में जुमे की नमाज पढ़ने गया था। एक अजनबी को बरामदे में बैठा और उसकी गोद में इरफान को देखकर सवालिया निगाहों से बहू की ओर देखा। खतुनिया जल्दी-जल्दी उसका परिचय कराने लगी।

"इरफान के अब्बू इन्हीं के साथ कोलियरी में काम करते हैं। सहदेव भैया, वही सतगांव वाले जिनके यहां वे हर बार जाते थे।"

रहमत का बाप समझ गया। उसने पूछा, "कब आए, बाबू?"

"परसों आया हूं।"

"रहमत ठीक है न?"

"हां, बिलकुल ठीक है।"

"बात ऐसी है बाबू कि कभी परदेस निकला नहीं है। एक ही लड़का है। तीन और थे। सब बचपने ही में अल्लाह को प्यारे हो गए। बए एक ही बच गया। अब घर छोड़कर कमाने निकला है तो दम उसी पर अटका रहता है। वह गांव में था तो मैं नमाज नहीं पढ़ता था। वह चला गया है तो पांचो वक्त की नमाज पढ़ता हूं और हर नमाज में उसकी सलामती के लिए दुआ करता हूं।"

आंखों के सामने रहमत का डर से पीला पड़ा हुआ चेहरा उभर आता है। वह अंधेरी मौत की सुरंगें दिखलाई पड़ती हैं। वह दम घुटने वाली गर्मी, बदन के रोम-रोम से फूटता हुआ पसीना और दिमाग में कंपकंपी करता हुआ वह भय, मौत का भय, मौत जो वहीं

कहीं मौजूद रहती है। यह शायद बापों की दुआओं का ही प्रताप है कि हर रोज मौत के मुंह से सही-सलामत निकल आते हैं। सहदेव ने नजर उठाकर बूढ़े को देखा। कमजोर आदमी, खिचरी बाल, दाढ़ी और भौं के एक-दो सफेद बाल, धीरे-धीरे चलता है। शायद ठीक से दिखलाई भी नहीं देता।

रहमत का बाप सहदेव की बगल में बैठ गया।

"उससे कहना कि बेकार की चीजों में अपना पैसा बर्बाद न करे। अब उसने बहू के लिए एक महीन साड़ी भेज दी है। गांव में ऐसी साड़ी कौन पहनता है कि अंग दिखलाई दे। यह सब छलावा शहर का है। अभी कमा रहा है। दो पैसा दबाकर नहीं रखेगा तो आगे औलाद है, उसके लिए भी तो कुछ करना है। इधर-उधर करके बीघा-दो बीघा जमीन खरीद ले तो कम से कम बच्चे का आधार तो हो जाएगा। लड़के का झुनझुना भेज देने से जिंदगी नहीं कटती...।"

अचानक इरफान ने दादा का ध्यान अपनी तरफ खींचा।

"दादा...!" और आज लाई हुई प्लास्टिक की मोटर उसे चिढ़ाने के लिए दिखाई।

"एकदम बिगाड़ दिया है इसको बहू ने।"

खतुनिया मुंह पर आंचल डालकर हंसने लगी।

चार घंटे रसूलपुर में बिताकर, मियां के घर का भात भकोसकर वापस हुआ तो उसका मन एक दम हलका हो चुका था। कल की बातों से उत्पन्न होने वाली मलीनता, एक बेनाम-सी उदासी और ऊहापोह वाली स्थिति सब खत्म हो चुकी थी। वह बाहर निकल ही रहा था कि खतुनिया ने अपने ससुर से नजर बचा कर कहा, "इरफान के अब्बू को बोलना कि वह चांदी की सिकरी भेजने को कह गया था, वह भेज दे। अगले महीने खान साहब के यहां शादी है। क्या नंगी-बूची जाऊंगी?"

अभी उसने कोई जवाब भी नहीं दिया कि बूढ़ा आ धमका। दोनों साथ-साथ बाहर निकल गए। बूढ़े ने प्यार से उसके सर पर हाथ फेरा और दुआ दी, "फी अमानिल्लाह!"

सहदेव ने उसे देखा, "इसका क्या मतलब हुआ, बाबा?"

"इसका मतलब हुआ कि जाओ, तुम्हें खुदा की हिफाजत में दिया।"

वापसी में सायकिल चलाते हुए वह बहुत देर तक सोचता रहा कि यह दुआ किसने किसको दी है? एक बाप ने एक बेटे को, एक दुखी आदमी ने दूसरे दुखी आदमी को या एक मुसलमान ने एक हिंदू को? मजूमदार कहता है कि ऐसी सीमा है जहां धर्म अपनी पहचान खो देता है, हर प्रकार का भेदभाव मिट जाता है, खुद की बनाई हुई सारी दीवारें टूट जाती हैं, खुद की खींची हुई सारी लकीरें मिट जाती हैं। शायद वह जगह, वह बिंदु वह मिलन-स्थल यही है।

मन नहीं लगा था गांव में

सब कुछ सूना-सूना, लुटा-लुटा सा महसूस हुआ मानो कुछ था जो खो गया है या जैसे वह थक गया हो। जुलिया का बहुत दुख भी नहीं था और ज्यादा कुछ खो देने का अहसास भी नहीं। बस एक गुस्सा, कुढ़न, झल्लाहट और उदासी। एक गहरी बेनाम सी उदासी। इस बार फागुन भी फीका-फीका रहा। नस-नस में लहराकर चलने वाला लहू भी मानो ठंडा पड़ चुका था। न कोई तरंग मचली और न ही मन में कोई बेलगाम इच्छा पैदा हुई। न किसी को जबरदस्ती दबोचकर चुंबनों की बौछार कर देने की इच्छा हुई, न ही गलियों में नाचने का मन हुआ, और न ही रास्ते पर धूल उड़ाने की तबियत हुई। होली इतनी फीकी और नीरस कभी नहीं थी इसलिए वह दिन चढ़े तक सोता रहा। उसका मन नहीं हो रहा था कि वह बिस्तर से बाहर निकले। उसकी भाभी ने कई बार उसकी चादर खींची। दो-एक तीखी गालियां भी दीं। झल्लाई भी और पांव रंगने वाला तेज गुलाबी रंग उसके चेहरे पर मल दिया। सारा मुंह लाल हो गया, एकदम भक-भक गुलाबी, लेकिन वह वैसे ही ठंडा पड़ा रहा। अंत में जब सुंदरलाल अपने साथियों समेत आ धमका और उसे जबरदस्ती घसीटकर बाहर ले गया तब उसे पता चला कि आज सचमुच होली है। फिर भी वह रंगों के उस उत्सव में प्रकट रूप से शामिल नहीं हुआ। जिसने रंग दिया, ले लिया। जिसने अबीर लगाई, लगवा ली। सुंदरलाल के यहां पुआ और पूरी खाई। सुंदरलाल की पत्नी के मजाक का निशाना भी बना, लेकिन भांग खाने से साफ इंकार कर दिया।

कोलियरी वापस आने के लिए वह होली के दूसरे ही दिन तैयार हो गया था, मगर उसके भाई ने उसे जबरदस्ती रोक लिया। दो दिन किसी तरह और काटे। पंद्रह दिनों की छुट्टी के दो दिन अभी बाकी ही थे कि वह भाग निकला। भाभी ने ताना मारा, "ऐसे उतावले हो मानो वहां तुमसे कोई होली खेलने बैठा हो!"

भाई ने कहा, "शहर की हवा लग गई है इसको। अब गांव थोड़े ही अच्छा लगेगा।"

उसने किसी को भी कोई जवाब नहीं दिया।

रात भर गाड़ी में हिचकोले खाने के बाद जब सुबह कोलियरी पहुंचा तब उसे थोड़ा सकून मिला। जिस गांव को पहली बार छोड़ते हुए उसका दिल इतना दुखा था आज उससे जुदा होते हुए जरा-सा अहसास भी नहीं हुआ, बल्कि उसने राहत-सी महसूस की, जबकि धोड़े में आशा के विपरीत एक अजीब-सी चुप्पी लगी थी। वह पहले वाली चहल-पहल, बोलना-बतियाना, बात-बात पर हंस देना सब बंद था। सभी की आंखों में अनजान भय और चेहरे पर चिंता की लकीरें खिंची हुई थीं। किसी ने उससे उसका कुशलक्षेम भी नहीं पूछा और न ही गांव घर की हालत मालूम की, यहां तक कि होली के संबंध में भी कुछ नहीं जानना चाहा, बस इतना पूछा, "कैसे आ गए, अभी तो छुट्टी में दो दिन बाकी हैं?"

"बस, मन नहीं लगा गांव में।"

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। उसे इस सर्द रवैये का अहसास जरूर हुआ मगर वह इतना थका हुआ और उदास था कि इस तरफ ध्यान भी नहीं गया। गमछा उठा कर पोखर में नहाने चला गया। वहां से वापस आया तो चाय पीने निकल गया। धोड़े के लोग भी काम पर जा चुके थे। रात को घर से लाया भुना चावल निकालकर सबको देने लगा तब उसने देखे कि रहमत मियां नहीं है। उसने ऐसे ही पूछ लिया, "रहमत मियां क्या रात की पारी में है?"

किसी ने कोई जवाब नहीं दिया बल्कि ऐसा लगा कि उसके सवाल पर अचानक सब घबरा गए, मगर सहदेव ने ध्यान नहीं दिया और वैसे ही बोलता गया, "मैं उसके घर गया था। उसका कंबल सचमुच नया है। क्या फर्स्ट क्लास औरत है!"

कंबल की बात इतनी आम हो गई थी कि सब लोग जान गए थे कि कंबल का मतलब रहमत की बीवी है, मगर इसकी भी कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। न कोई हंसा और न ही किसी ने जवाब दिया। वह लोगों के रवैये से चौकन्ना हो गया।

"क्या बात है? कोई खास बात हुई है क्या?"

ननकू ने खखारकर गला साफ किया और कहा, "वह रहमत मियां..."

"क्या हुआ रहमत मियां को?"

"हुआ कुछ नहीं। बस, वह तीन दिन से लापता है।"

वह बिलकुल हैरान रह गया, "लापता...मतलब?"

"मतलब यह कि तीन दिन पहले वह काम पर गया था। अंदर हमारे साथ ही उतरा, फिर खान से निकलकर पता नहीं कहां चला गया।"

"मगर इतनी देर से किसी ने मुझे बताया क्यों नहीं?"

"हम लोगों ने सोचा, वह घर चला गया होगा।"

"बिना किसी को बोले, बताए वह घर कैसे जा सकता है? और वह भी होली में जब मुसलमानों और लोकल लेबर पर ही कोलियरी चलती है।"

जुगेश्वर ने कहा, "मेरे ख्याल से घर की कोई खबर मिल गई होगी इसलिए अचानक चला गया। मैं भी तो परसों आया हूं। तुम तो उसके घर जरूर गए होगे।"

"उसके घर तो मैं कोई दस दिन पहले गया था।"

"यह बात तो तीन दिन पहले की है।"

"सामान ले गया है अपना?"

"नहीं, सामान तो वैसे ही पड़ा है, सब का सब। यहां तक कि पाजामा जिसे वह सूखने के लिए रस्सी पर टांग गया था वह भी वैसे ही पड़ा है।"

"मालिक को खबर है?"

"सबको खबर है। ऐसे तो लेबर अकसर भाग जाते हैं।"

"यह बात किसने बताई थी कि वह खान से ऊपर आया था?"

"हाजरी बाबू ने।"

"उसके मन में अजीब तरह की शंकाएं उभरने लगीं। काम छोड़कर भाग जाने की बात गले से नहीं उतर रही थी। वह किसी बुरी लाइन में भी नहीं था। न शराब, न जुआ, न औरतबाजी। किसी से दुश्मनी भी नहीं थी। गऊ आदमी था। ले-देकर एक ही बात दिमाग में ठहरती थी कि वह घर चला गया होगा।

ननकू ने कहा, "कल उसके घर चिट्ठी भी भेजी है। अगर वहां हुआ तो जवाब आ जाएगा।"

सहदेव ने उसका पाजामा जो अभी तक रस्सी से लटक रहा था उठाकर तह किया और उसके लकड़ी के बक्से पर रख दिया। उसकी दरी जो फर्श पर एक तरफ सिमट गई थी उसे भी तह करके बक्से पर डाल दिया।

उस रोज रात बहुत देर तक नींद नहीं आई। फागुन की हवा जरूर ऐसी थी जो आदमी को घर बुला ले। होली में मजदूर घर जाने के लिए पागल हो उठते हैं, चाहे छुट्टी मिले या न मिले, चाहे नौकरी रहे या न रहे, इसलिए आम तौर पर होली में रेजिंग एकदम कम हो जाती है। बस वही थोड़े से मियां लेबर और वे मजदूर जो आस-पास के गांव में रहते हैं रोजाना काम करके लौट जाते हैं। इसके अलावा और कोई नहीं मिलता। बाबू लोगों की हाजरी भी कम हो जाती है। दो-चार आदमी जो आफिस में रह जाते हैं वही सारा काम-काज देखते हैं। मगर सवाल यह था कि रहमत मियां मुसलमान था। उसका न यह त्यौहार था और न ही उसे छुट्टी मिल सकती थी। वह इतने गरम खून वाला आदमी भी नहीं था कि अपनी नौकरी दांव पर लगा दे। बिलकुल ठंडे स्वभाव का आदमी। उसके अंदर ऐसी आग भड़क ही नहीं सकती थी। उससे ज्यादा गरम तो उसकी बीवी देखने में लगती है। खतुनिया का रूप उसकी आंखों के सामने आता है। उसकी बात याद आती है जो उसने चुपके से कही थी।

"इरफान के अब्बू को बोलना कि सिकरी भेज दे। क्या खान साहब के यहां नंगी बूची जाऊंगी।"

मियां दो पैसे कमाने क्या लगा है कि खतुनिया के ठाठ हो गए हैं। वह खान साहब जैसे लोगों को दिखा देना चाहती है कि वह भी गहने पहन सकती है। गिलट का नहीं, असली चांदी का चमाचम...।

फिर याद आता है रहमत। कुछ डरा-डरा-सा, कुछ सहमा-सहमा-सा।

"तुम मेरे साथ चलो, मुझे डर लगता है।"

"डर?"

वह डरता बहुत था। हो सकता है, डर से ही भाग गया हो। सहदेव था तो उसे ढांढस

रहती थी। मुमकिन है, अकेला होने की वजह से भाग गया हो।

आंखों में नींद नहीं है। उसकी तरह दूसरे लोग भी जाग रहे हैं। करवट पर करवट बदल रहे हैं। ढिबरी भी जल रही है। कोई बुझाने भी नहीं उठा। शायद किसी को याद ही नहीं रहा। ढिबरी की मद्धिम धुंआ उगलती पीली रोशनी कोठरी में बिखरी पड़ी है और सारे लोग प्रकट रूप में सोए हुए जान पड़ते हैं पर गहरी बेचैनी में गिरफ्तार हैं।

"आखिर रहमत मियां गया कहां?"

अधिकतर लोगों की राय यही थी कि वह घर चला गया है। या तो घर से कोई खबर आई हो या फिर डर की वजह से। अकसर ऐसे ही मजदूर काम करते-करते रफूचक्कर हो जाते हैं। यह बहुत ही आम-सी बात थी, लेकिन उसके पास क्या था? इंच भर जमीन भी तो नहीं थी गांव में। वह किस बूते पर भागेगा? वह तो कहो कि बाप ने एक छप्पर डाल दी थी वरना किसी पेड़ के नीचे पड़े होते। फिर उसे यह मजदूरी भी रास आई थी। वह तो हर हाल में मेहनत बेचने वाला आदमी था। कोलियरी में तो उसे अपनी मेहनत के दाम भी मिल जाते थे। कम ही सही। वहां तो बस बेगारी थी। जन्मजात गुलामी। फिर वह कैसे भाग सकता था?

रात ऐसे ही सोते-जागते कट गई। सुबह हुई। दिन निकला। लोगों में काम पर जाने की होड़ मची, लेकिन वह चुपचाप लेटे छप्पर को ताकता रहा। फिर कुछ सोचकर उठा और मुंह-हाथ धोए बिना हाजरी बाबू के पास जा पहुंचा।

हाजरी बाबू नहा-धोकर पूजा कर रहे थे। यह उनकी नित्यक्रिया थी। हर रोज नहा-धोकर, नाश्ता करके ठीक कोलियरी जाने से पहले दो अगरबत्ती जलाते और दीवार पर लगी लक्ष्मी देवी की पूजा करते। आंखें बंद करके श्लोक बड़बड़ाते और एक हाथ से अगरबत्ती घुमाते जाते। उसी लक्ष्मी का प्रताप था कि उसके घर में धन लक्ष्मी और जन लक्ष्मी दोनों मौजूद थीं।

हाजरी बाबू पूजा से निवृत्त हुए और अपने सामने सहदेव को खड़े देखा तो चौंक गए। पल भर के लिए एक साया-सा उनके चेहरे पर रेंग गया। होंठ कुछ सूख-से गए। होशियार आदमी थे, इसलिए जल्द ही स्वयं पर काबू पा लिया। धीरे से मुस्कराए और बड़े प्यार से पूछा, "कहो सहदेव, कैसे आना हुआ सुबह-सुबह?"

कुछ कहने से पहले सहदेव ने गहरी नजरों से हाजरी बाबू को देखा। वे उसे कुछ कमजोर नजर आए, "वह रहमत मियां के बारे में कुछ पूछना था?"

"रहमत...ओह...अच्छा वह रहमत, कुछ पता चला?"

"नहीं, मैं तो कल ही घर से आया हूं।"

"वह भाग गया है। कमजोर आदमी था, नहीं टिक सका।"

"यह आप कैसे कह सकते हैं?"

"क्यों? बीसों लोग भाग चुके हैं। कुछ काम के डर से, कुछ चोरी करके और कुछ तो औरतों को ही ले भागे।"

"मगर रहमत मियां के साथ यह संभव नहीं है, हाजरी बाबू! वह इस तरह का आदमी नहीं है।"

"देखो सहदेव, कौन किस तरह का आदमी है, यह कोई नहीं जानता। सब समय आने पर मालूम होता है।"

"मैं उसे बहुत दिनों से तो नहीं जानता मगर जितने दिनों से जानता हूं उससे यह बात पूरे दावे से कह सकता हूं कि इतना सीधा और शांत आदमी पूरी सिरसा कोलियरी में कोई नहीं।"

अब हाजरी बाबू थोड़ा रुष्ट होकर बोले, "बात सीधे या बदमाश की नहीं है। बहुत-से लेबर जो कोलियरी की हाड़-तोड़ मेहनत सहन नहीं करते, अकसर भाग जाते हैं। यह बात सब लोग जानते हैं। अच्छा है, तुम अपना दिमाग खराब मत करो।"

फिर एकाएक हाजरी बाबू ने नरम होकर पूछा, "तुम काम पर आ रहे हो आज से? कितना नागा हुआ?"

"अभी तो मेरी दो दिन की छुट्टी बाकी है।"

"घर में सब कुशल-मंगल तो हैं?"

"हां, सब ठीक है।"

अब मानो बात खत्म हो गई। हाजरी बाबू अपनी चमड़ी और चश्मा ढूंढने लगे। मतलब यह कि अब उसे चले जाना चाहिए, तभी अंदर से रानी निकल आई, "अरे सहदेव, कैसे आए?"

सहदेव टाल गया, "बस ऐसे ही हाजरी बाबू से काम था।"

रानी ने शिकायत भरे अंदाज में कहा, "कभी तो हमारे घर आते नहीं। कोई छुआ-छूत है क्या?"

"अभी कल तो घर से आया हूं।" वह रानी को फिर कभी आने के लिए कहकर बाहर निकल गया। सारा दिन वह तमाम जगहों में तलाश करता रहा। चाय की दुकानों में पूछा। खैनी की गुमटी वाले से पूछा। कोलियरी के धोड़ों में, यहां तक कि शहर में भी ढूंढा। झरिया का छोटा-सा शहर, वह चारों ओर घूमता रहा। लोगों के चहेरे को ताकता हुआ जैसे वह कोई बच्चा है, जो खो गया है। कलाली पट्टी के ताड़ीखाने और रंडीखाने पर भी नजर डाली हालांकि ऐसी जगहें तो रहमत मियां ने जिंदगी में देखी भी नहीं होंगी।

लौटते-लौटते शाम हो गई। क्वार्टर आने के बजाए वह बड़ी सड़क पर आगे बढ़ गया। सोनापुर बस्ती, मजूमदार के घर। मजूमदार आफिस से आ चुका था और नहा-धोकर खाना बना रहा था। उसे देखकर हंसते हुए कहा, "अगर आना ही था तो कुछ पहले आए होते,

तुम्हारे लिए भी चावल डाल देता।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। थका-थका-सा आकर चारपाई पर केहुनी के सहारे लेट गया। उसके चेहरे की परेशानी और उसकी हालत भांपकर मजूमदार गंभीर हो गया, "क्या बात है? बहुत थके लगते हो।")

"झरिया गया था।"

"क्यों?"

"रहमत मियां गायब है परसों से।"

"अच्छा वही जो तुम्हारे गांव का है?"

"खास मेरे गांव का तो नहीं, पड़ोस का है।"

"हां-हां, कहां चला गया वह?"

"नो ट्रेस।" (कुछ भी पता नहीं।)

मजूमदार ने कहा, "अरे यार, गांव चला गया होगा। शायद अचानक घर से कोई खबर आ गई हो।"

"अगर घर जाता तो किसी को बताकर जरूर जाता।"

"हो सकता है, इतना मौका न मिला हो। तुम एकदम से 'निगेटिव वे' में क्यों सोचते हो?"

"मैं ठीक से कुछ सोच भी नहीं पा रहा हूं। इतना तक पता चलता है कि वह खान के अंदर गया, फिर फौरन यानी बीस-पचीस मिनट के बाद बाहर निकल गया। उसके बाद से उसका कोई पता नहीं है।"

"इस बात का प्रमाण तो हाजरी बाबू से मिल सकता है। उसके पास एक खाता है जिसे फार्म नाइन या नौ नंबर खाता कहा जाता है। अंडरग्राउंड से जब कोई काम के दौरान बाहर आता है तो उसे उस खाते पर हस्ताक्षर करने पड़ते हैं। उसमें बाहर निकलने का टाइम भी लिखा होता है।"

"मैं आज हाजरी बाबू से सुबह में मिला था, लेकिन उन्होंने उस खाते के बारे में तो कुछ नहीं बताया।"

"भूल गया होगा।"

"इतनी बड़ी बात कोई भूल कैसे सकता है।"

"भाई, यह बात तुम्हारे लिए जितनी बड़ी है हाजरी बाबू के लिए उतनी बड़ी नहीं है। तुम ऐसा करो, कल फिर हाजरी बाबू से मिल लो। उससे रहमत की निकासी का भी मालूम कर लो और रहमत के हस्ताक्षर भी देख लो।"

"वह पढ़ना-लिखना नहीं जानता था।"

"तब भी उसके अंगूठे का निशान तो जरूर होगा।"

"मगर पता नहीं क्यों मेरा दिल बहुत घबरा रहा है। रहमत तब ही घर गया होगा जब कोई बड़ी बात हुई होगी वरना ऐसे बिना किसी को बताए वह नहीं जा सकता।"

भात पक गया था। टमाटर का चोखा पहले से तैयार था। मजूमदार ने उसे अपने साथ बैठा लिया।

"लगता है, तुमने सुबह से कुछ खाया ही नहीं?"

"मुझे याद ही नहीं रहा।"

"मेरे ख्याल से तो यह इतना परेशान होने की बात नहीं। तुम उसके घर से खबर क्यों नहीं मंगवा लेते?"

"घर खत लिखा है ननकू ने।"

"तब चार-छह दिन इंतजार कर लो।"

भात खाकर वह वहीं लेट गया। रहमत का उदास और सूखा चेहरा फिर सामने आ गया। उसने सोचा कि आदमी को इतना सीधा और बेवकूफ नहीं होना चाहिए। वह जहां कहीं भी गया था किसी को बताकर जाना चाहिए था। पूरी एक सनसनी फैलाने की क्या जरूरत थी? अचानक उसने फैसला किया कि अगर कल तक कुछ पता नहीं चला तो वह खुद उसके घर जाएगा।

मजूमदार के घर से निकला तो रात के दस बच चुके थे। चारों ओर अंधेरा गहरा गया था। यूं भी कोलियरी का अंधेरा दूसरी जगहों की तुलना में कुछ अधिक गहरा होता है। रास्ते में आना-जाना भी बंद था। रात की पारी चालू थी। दिन की पारी के मजदूर अपने-अपने धोड़ों में बेखबर हो चुके थे, सिर्फ इक्का-दुक्का शराब के रसिया कहीं कहीं दिखाई दे जाते। वह दिन भर की दौड़-धूप के बाद बुरी तरह थक गया था। आज उसे यह उम्मीद थी कि रहमत का कुछ न कुछ पता चल जाएगा, मगर किसी को कुछ मालूम नहीं था। किसी ने उसे देखा तक नहीं था।

बावरी धोड़े के पास से गुजरते हुए उसे कालाचंद मिल गया। वह बुरी तरह से नशे में था। उसे देखा तो ठिठककर खड़ा हो गया, "इतनी रात को तुम किधर निकल आया?"

"अरे यार, मेरे साथ रहमत मियां काम करता था न, उसी को खोज रहा हूं, कुछ पता ही नहीं चलता।"

"और चलेगा भी नहीं।"

सहदेव बिलकुल चौंक गया, "मतलब?"

"मतलब मत पूछो। यह साला मालिक लोग..." उसने दांत पीसे। नशे के झोंक में जरा-सा झूला फिर सहदेव का कंधा पकड़ लिया। उसकी आंखें नशे के बोझ से अधखुली थीं मगर ऐसे चमक रही थीं मानो उनमें आग जल रही हो। सहदेव ने उसके दोनों कंधों को पकड़ लिया, "कालाचंद! तुम कुछ जानते हो?"

कालाचंद गुस्से से थूककर बोला, "सब जानता होगा मगर बोलेगा कोई नहीं, कोई साला नहीं।"

"लोग क्या जानते होंगे? तुम तो बोलो।"

"क्या फायदा? अब कुछ नहीं होगा।"

अब उसका धैर्य टूट चुका था। उसने कालाचंद के कंधे पर अपनी पकड़ मजबूत कर दी, "देखो कालाचंद, मुझे साफ-साफ बताओ।"

"मैं ज्यादा नहीं जानता।"

"कितना जानते हो?"

"बस इतना कि अब रहमत मियां इस दुनिया में नहीं है।"

"नहीं...हीं....हीं!"

एक जोरदार धमाका हुआ सहदेव के अंदर। ठीक उसी क्षण पाथरडेहिया लोकल ट्रेन की तेज सीटी उसके कान के पर्दे को फाड़ती चली गई। कोलियरी के सारे बल्ब अचानक बुझ गए। सारी दुनिया एक अथाह अंधेरे में डूब गई। उस अंधेरे में सिर्फ एक आदमी दूसरे आदमी का कंधा पकड़े रह गया, एक आदमी जिसके पैरों तले जमीन नहीं थी और अथाह गहराइयों में गिरता चला जा रहा था। सहारे के लिए...अपने आप को गिरने से बचाने के लिए उसने अपने हाथ उसके कंधे से हटाए और उसके पहलू में डालकर दबोच लिया। उसे कई लम्हों तक कालाचंद दिखाई भी नहीं दिया। फिर धीरे-धीरे उसकी शक्ल धुंधली-धुंधली दिखाई देने लगी। अचानक उसने कालाचंद को छोड़ दिया, "बताओ, क्या हुआ? कैसे हुआ? तुम कैसे जानते हो यह बात?"

"पूरी बात मैं नहीं जानता। बस इतना मालूम है कि वह खत्म हो गया और इतना बात सब साला जानता होगा।"

"कौन जानता होगा?"

कालाचंद गुस्से से बोला, "सब, मगर बोलेगा कोई नहीं। सब साला डरपोक है, मालिक का दलाल है।"

"मगर तुमको कैसे मालूम हुआ?"

"मदना से।"

"कौन मदना?"

"वही मदना बावरी जिसकी औरत को कपिल सिंह का भाई लेकर भाग गया था। वह साला सब जानता है। पहले तो नशे के झोंक में हमको बता दिया, फिर जब हमने पूछा कि कैसे हुआ, क्या हुआ, तो हाथ जोड़ दिया। बोल, हमरा छोटा-छोटा बुतरू है। हम कुछ बोलेगा तो सब मर जाएगा।"

"कुछ नहीं बोला कि कैसे मरा?"

"ऐक्सीडेंट हुआ था खान के अंदर..."

"यह कैसे हो सकता है? खान में और आदमी भी तो होंगे?"

"ये सब हमको मालूम नहीं।"

"मदना कहां रहता है?"

"यहीं तो रहता है बावरी धोड़े में, मेरे घर से तीसरा वाला।"

तब रहमत याद नहीं आता। खतुनिया याद आती है। उसका फूल-सा खिला चेहरा याद आता है। उसकी चमकती हुई चंचल आंखें याद आती हैं...और इरफान याद आता है।

"अलिफ बे पे - अम्मा मुर्गी ले दे।"

और वह बूढ़ा बाप याद आता है जो हर नमाज के बाद अपने बेटे की सलामती की दुआ मांगता है, जिसके माथे पर सजदे का निशान उभर आया है, जिसकी कमजोर, धुंधली बूढ़ी आंखों में जितनी दूर तक, जितनी गहराई तक देखो बस एक ही तसवीर नजर आती है—उसके बेटे की तस्वीर... उसके रहमत की तसवीर...वह घर याद आता है जो सालों बाद अब खुशियों से, तेज ऊंची आवाजों से, बच्चे और मां की उन्मुक्त और निर्लिप्त हंसी से भर गया है। यह सारी यादें सहदेव की आंखों में अंगारे बनकर जल रही हैं...नहीं... आंसू नहीं हैं...एक तीखा बेचैन कर देने वाला दर्द है। मानो उसके अंदर किसी ज्वालामुखी का दहाना खुल गया हो। बड़ी-बड़ी चट्टानें टूट-टूटकर, चटक-चटककर बिखर रही हों। गरम लावा और आग फूट पड़ने को उतावली हो उठी हो।

कालाचंद जा चुका था। अब वह घुप्प अंधेरे में अकेले खड़ा है। कहीं कोई आवाज नहीं। सिर्फ कभी-कभी हालिज की गड़गड़ाहट सुनाई देती है। मानो सैकड़ों राक्षस एक साथ चीख रहे हों। फिर सन्नाटा छा जाता है। पलों में यह सब कुछ हो रहा है, बिलकुल व्यवस्थित ढंग से...

अब वह किधर जाए? घर?

नहीं।

मजूमदार के घर?

नहीं, वहां भी नहीं।

फिर?

वह फैसला नहीं कर पाता। बहुत देर तक खड़ा रहता है। खामोश, अंधेरे में अस्तित्वहीन होकर। फिर उसके पैर अपने आप बावरी धोड़े की तरफ उठ जाते हैं।

मदना सोया नहीं है। चार दिन से नहीं सोया। दारू भी बेकार गई। उस आदमी की शक्ल आंखों से उतर ही नहीं रही है। धंसी हुई खोपड़ी, बैठा हुआ जबड़ा, टूटी हुई गरदन और कोयले की चट्टानों में फंसा हुआ वह मियां लेबर। आज चार दिन बाद भी यही लगता

है जैसे सब कुछ अभी-अभी घटित हुआ हो। उस खूनी दृश्य का सम्पूर्ण भय उसके रोम-रोम में समा गया है। इसलिए वह चार दिनों से काम पर भी नहीं गया बल्कि घर के बाहर ही नहीं निकला। कोई आवाज होती है तो चौंक जाता है। मरे हुए आदमी उसने बहुत देखे हैं, मगर ऐसे नहीं, इस तरह तो बिलकुल नहीं...हंसते बोलते एकाएक मौत के मुंह में चले जाना...

उसके घर में कोई औरत नहीं थी। पत्नी साल भर पहले मर गई थी। कपिल सिंह के भाई सुदामा सिंह के यहां ग्यारह दिन रहकर लौटने के बाद ग्यारह प्रकार की तो उसे बीमारी लग गई और सारे शरीर पर लाल-लाल चिकते उभर आए थे। शरीर का नाजुक हिस्सा घाव से भर गया था। बरामदे में सारा दिन सिर नहोड़कर रोती रहती। इलाज के लिए था भी क्या? दोनों पति-पत्नी मिलकर कमाते थे तो दो जून की रोटी चलती थी। उनमें से एक बैठ गया तो सब आधा हो गया, लेकिन पेट तो आधा नहीं हो सकता। ऊपर से तीन छोटे-छोटे रोते-बिलखते बच्चे। दवा कहां से आए? सुई कहां से लगे? गरीब को तो ऐसी बीमारी भी नहीं लगती कि काम भी करते रहो और इलाज भी करवाते रहो। सो इलाज के बिना ही दो महीने बाद मर गई। पता नहीं अपने पाप का दंड भोगकर या दूसरे के पाप का? मगर अब ये तीन छोटे-छोटे बच्चे। बड़ी लड़की सात साल की है। बाप के साथ चौका-बर्तन में हाथ बटाती है। बिन मां के बच्चे, धूल में सने, नाक बहती हुई, सर पर धूल-मिट्टी का ताज। मदना कमाए कि बच्चों की देखभाल करे, मगर प्यार तो है ही उसे। जैसे कुडुक मुर्गी अपने बच्चों को पेट के नीचे समेटकर रखे रहती है उसी तरह वह भी अपने बच्चों को अंग से लगाए रहता है। इन बच्चों के लिए ही उसने दारू भी छोड़ दी थी मगर चार दिनों में उसने फिर दारू शुरू कर दी है। वैसे कोई फायदा नहीं हुआ, नशा ही नहीं होता। वह सब कुछ जो दिमाग में घुसा हुआ है उससे छुटकारा ही नहीं मिलता। दिन तो खैर किसी तरह कट जाता है लेकिन रात? रात को फिर वही हादसा होता है, हर रात को होता है।

लोग जब अंडरग्राउंड में स्टेशन पर 'आई सेटिंग स्टेशन' (Eye Setting Station) पर दस-पंद्रह मिनट के लिए रुक गए तो उनमें से कुछ लोग अपने फेस में जाने के लिए भाग खड़े हुए। उनमें से वह खुद भी था। ये सब अलग-अलग गैलरियों में जा रहे थे। यह संयोग ही था कि वह जिस फेस की ओर बढ़ रहा था उसी फेस में कोई उससे पहले पहुंच चुका था। वह उससे कोई तीस गज आगे था। वह तो दिखलाई नहीं पड़ रहा था लेकिन ढिबरी की मद्धिम रोशनी में एक इंसानी छाया साफ दिखाई दे रही थी। अभी वह चिल्लाकर कुछ पूछने ही वाला था कि रूफ या छत से कोयले का एक बड़ा-सा टुकड़ा टूट कर गिरा। एक धमाका हुआ। हवा का एक तेज झोंका आस-पास की स्याह धूल के साथ मिलकर एक काली आंधी की तरह सब कुछ ढांप गया। बिजली की तेजी के साथ वह

सुरंग की दीवार से चिपक गया, वरना हवा का वह तेज झोंका उसे धड़ाम से पटक देता। यह संयोग था कि उसकी ढिबरी बुझने से रह गई। जब स्याह धूल छंट गई तब उसने ढिबरी उठाकर छत को देखा। छत ठीक थी। वह पूरी हिम्मत बटोरकर आगे बढ़ा, ऊपर नजर टिकाए उस आदमी की टांग पकड़कर घसीट लाया। खतरे की जगह से बाहर आकर वह ढिबरी उसके नजदीक ले गया। इसी उम्मीद में कि शायद वह जिंदा हो मगर जैसे ही उसके चहेरे पर नजर पड़ी वह सिर से पैर तक सिहर गया। सिर ठुड्डी के पास आ गया था और ठुड्डी गरदन में धंस गई थी। गरदन कंधों के बीच में गायब थी। मदना का संपूर्ण अस्तित्व कांपने लगा। पहचान नहीं सका। पहचानने के लिए चेहरा था भी कहां? उल्टे पैर भागने को हुआ तभी रामावतार सरदार भागता हुआ आ गया। वह हवा के झोंके और हवा में कोयले के कण देखकर समझ गया था। उसने आते ही ढिबरी से मरने वाले का चेहरा देखा और पूछा, "कहां हुआ?"

"आगे...रूफ...!" वह ठीक से बोल भी नहीं सका।

"अच्छा देखो, तुम सीधे ऊपर चले जाओ और वहां से सीधे घर चले जाना। किसी से कुछ बोलना मत, एक शब्द भी नहीं।"

फिर उसने एक आदमी को बुलाया और सुरंग के मोड़ पर खड़ा कर दिया, "किसी को इस तरफ के फेस में जाने मत देना। कहना, खतरा है उधर।"

रामावतार सरदार भी उसी के साथ ऊपर उठा। हाजरी बाबू के कान में कुछ फूंक कर इंचार्ज बाबू की ओर भागा। मदना हांफता हुआ बदहवास-सा घर आया और सीधे बिस्तर पर जा गिरा। दूसरे दिन कपिल सिंह का एक आदमी आया और उसने उसे चेतावनी देते हुए कहा, "इस बात की खबर किसी को नहीं मिलनी चाहिए। तुम किसी से इसके बारे में कोई बात नहीं करोगे। घर से बाहर जाने की भी जरूरत नहीं, काम पर भी नहीं। तुम्हारी हाजरी बन जाएगी। हफ्ता भी घर में पहुंच जाएगा। और अगर तुमने किसी को बताया तो तुम्हारा तो जो होगा सो होगा ही, तुम्हारे बच्चे भी सड़क पर भीख मांगते नजर आएंगे।"

मगर उससे पहले ही वह दो आदमियों को बता चुका था। एक अपनी सात की बेटी कुसुम को और दूसरे अपने साथ पीने वाले कालाचंद को।

जब सोचते-सोचते उसके दिमाग की एक-एक रग तन गई थी तब वह अंधेरा गहराने के बाद पीने चल दिया। पूरी बोतल खरीद ली। उसका ख्याल था कि नशे में सब कुछ भूल जाएगा। दारू सब ठीक कर देगी। लेकिन कुछ नहीं हुआ। लगा जैसे दारू नहीं, दामोदर नदी का पानी पी रहा हो। शरीर की ठंडक थोड़ी-सी भी कम नहीं हुई। शरीर का कांपना भी बंद नहीं हुआ। तब वह पास बैठे कालाचंद के पास चला गया और उस पर यह भेद प्रकट कर दिया।

"तुमको पता है, खान में हादसा हो गया है?"

"हादसा?" कालाचंद चौंका फिर उसे देखकर चैन की सांस ली, "क्या बे ज्यादा चढ़ गई है?"

"गऊ कसम, नशे में नहीं बोलता।"

कालाचंद ने आनंद लेते हुए पूछा, "हां तो बेटा, कब हुआ यह हादसा? कल?"

"नहीं, आज।"

"किसी को चोट लगी?"

"एक आदमी मर गया।"

"कौन था वह?"

"यह मालूम नहीं। पहचान नहीं सका।"

कालाचंद पूरे नशे में था, उसने कहा, "अच्छा किया जो पहचाना नहीं।"

फिर उससे मजाक में पूछा, "उसका अर्थी तुम अकेले ले गया था?"

"तुम यार, मजाक समझता है।"

"कौन साला मजाक समझता है, बोलो तुमने कितना पिया है?"

"दो बोतल, मगर नशा ही नहीं होता। साला लोग पानी मिला देता है। पानी का पैसा लेता है।"

"अबे पानी नहीं मिलाएगा तो क्या तुमको खांटी देगा? जानता है, किसका दुकान है? द्वारिका प्रसाद का। कपिल सिंह का आदमी है। वह पानी नहीं बेचेगा तो महुए की पहली धार वाला बेचेगा?"

तभी मदना को अचानक अहसास होता है कि यह सब उसे कालाचंद को नहीं बताना चाहिए था। वह घबराकर उठा और लड़खड़ाकर अंधेरे में उतर गया। सोचा, अच्छा हुआ कालाचंद ने उसकी बातों पर विश्वास नहीं किया वरना...

डर से अब उसने बाहर निकलना छोड़ दिया है। रोज शाम को अपनी बेटी से दारू मंगवा लेता है। जब तीनों बच्चे सो जाते हैं तब वह पीना शुरू करता है। गिलास भर-भर कर आग अपने अंदर उंड़ेलता है मगर शरीर की ठंडक और हाथों का कंपन खत्म नहीं होगा। रात पल-पल में कटती है। कुत्ते के झुंड भूकते हैं। सियार रोते हैं। हालिज की गड़गड़ाहट सुनाई देती है...आंखें नींद को तरस जाती हैं...हर बार वही चेहरा...वही टूटी हुई गरदन...कौन था वह? फिर आगे क्या हुआ?...लाश बाहर कब लाई गई?...उसको फूंका कब गया?...कुछ मालूम नहीं...कोई खबर नहीं...कोलियरी में कहीं कोई हल्ला भी नहीं है...कहीं कोई तूफान भी नहीं उठा...फिर उसे कपिल सिंह ने क्यों कैद कर रखा है? अगर सब ठीक-ठाक है तो उसकी जुबान क्यों बंद कर दी गई है?

दरवाजा पीटने की आवाज आती है। कोई उसका नाम लेकर पुकारता है। वह दारू

की बोतल और अल्मुनियम का गिलास चारपाई के नीचे ढकेल देता है। चाहता है कि बाहर जो कोई भी है वह उसे सोता समझकर वापस चला जाए। इसलिए कोई जवाब नहीं देता। चुपचाप रहता है। इतनी रात गए कौन होगा? वह अंदाजा लगाने की कोशिश करता है...कहीं कपिल सिंह तो नहीं? मगर नहीं, यह कपिल सिंह की आवाज नहीं है। वह उसकी आवाज पहचानता है, आरा जिले वाले, ऐंठी हुई जुबान।

दरवाजा अब जोर-जोर से पीटा जा रहा है। यह कौन है? बेवकूफ को मालूम नहीं है कि बच्चे जाग जाएंगे। दरवाजा भी टूट सकता है। ठेकेदार ने पैसा लिया है। पिछले साल जामुन की लकड़ी से बनवाया था। एक बरसात हुई तो ऐंठ गया। दूसरी बरसात हुई तो कई जगहों से फट गया। अब तो घुन लगकर ऐसा जर्जर हो गया है कि कोई जोर से धक्का दे तो चौखट समेत अंदर आ जाए। दरवाजे को लगातार पीटा जा रहा है। वह उठता है। लड़खड़ाकर दरवाजे की कुंडी खोलता है। जरा-सा झांककर देखता है। अंधेरे में कुछ दिखलाई नहीं देता, तभी एक मजबूत हाथ उसका बाजू पकड़कर उसे बाहर खींच लेता है। वह डर से कांपने लगता है।

"तुम्हारा नाम मदन है?"

वह मुंह से जवाब नहीं दे पाता। कोई आवाज ही नहीं निकलती। सिर्फ गरदन हिलाता है जो सहदेव को नजर नहीं आता। वह उसके बाजू पर अपनी पकड़ और मजबूत कर देता है और सांप की तरह फुफकारता है, "तुम्हारा नाम मदन है? मदना बावरी?"

"हां।"

"रहमत मियां कैसे मरा?"

रहमत मियां...? अच्छा तो उसका नाम रहमत मियां था। वह गाय आदमी, ऊंचा पाजामा पहनता था। इसलिए कभी-कभी लोग उसे मौलवी साहब भी कहते थे। सहदेव ने उसे जोर से हिलाया, "मैं पूछता हूं, रहमत मियां कैसे मरा?"

"उसका ऐक्सीडेंट हुआ था। चाल का टुकड़ा गिरा था।"

"तुमने देखा था अपनी आंख से?"

"हां।"

"कब हुआ यह ऐक्सीडेंट?"

"चार दिन पहले, मंगलवार को।"

"तुमने देखा था कि वह रहमत मियां ही था?"

"उसकी शक्ल इतनी खराब हो गई थी कि पहचाना नहीं जाता था।"

"मगर उसकी लाश कहां है?"

"यह मुझे नहीं मालूम।"

फिर वह धीरे-धीरे सब कुछ बता देता है। सारी बात बता देता है, जितना वह जानता

है सब कुछ। पर आगे क्या हुआ, यह बात उसे मालूम नहीं। किसी को नहीं मालूम...सहदेव ने उससे कहा, "तुम्हें कल चलना होगा मेरे साथ ज्वाला मिश्र के पास।"

"मगर कपिल सिंह ने मना किया है कि मैं किसी से कुछ न बोलूं।"

"कपिल सिंह की ऐसी की तैसी। पहले तो मुझे रामावतार सरदार से मिलना है, साला दो मुंहा सांप।"

सहदेव वापस लौटता है। पहले रहमत मियां लापता था। अब उसकी लाश गायब है। आश्चर्य है, इतनी बड़ी घटना हो गई, एक आदमी की जान चली गई और किसी को खबर तक नहीं हुई। अगर कुछ खबर भी मिली तो लोगों ने चुप्पी साध ली। क्या यूनियन को कुछ मालूम नहीं?

वह अपने धोड़े में आता है। वह जगह खाली है जहां रहमत मियां की दरी बिछी हुई थी। वह वहीं जाकर बैठ गया। दीवार के साथ रखे उसके लकड़ी के बक्से को छुआ। तह करके रखे पाजामे और दरी पर धीरे-धीरे हाथ फेरा...उसके अंदर, बहुत अंदर भभक का धुंआ उठा और अंदर की सारी आग आंसू बनकर आंखों से बह निकली...अंधेरी कोठरी में...वह बेआवाज रोता रहा... आग को बहने दिया... बह जाने दिया...कतरा-कतरा... बूंद-बूंद। गालों पर रेंगती हुई बहती आग जो जलाती नहीं बल्कि सारी जलन को ठंडा कर देती है। सारी आग को बुझाती जाती है।

बूंद बूंद...कतरा कतरा...।

सुबह आंख खुली तो काफी दिन चढ़ आया था। वह नंगे फर्श पर उस जगह पड़ा था जहां रहमत मियां पहले कभी सोता था। धोड़े के लोग उठकर काम पर चले गए थे। किसी ने उसे जगाने का साहस नहीं किया। ऐसा लगता था जैसे उन लोगों ने अपनी भलाई इसी में समझी कि वह सोता रहे और वे निकल जाएं। वे उसका सामना करने से कतरा रहे थे।

बहुत देर तक यूं ही पड़े-पड़े छप्पर को घूरते हुए वह सोचता रहा कि अब उसे क्या करना चाहिए, लेकिन हर बार रहमत मियां का वह भोला-भाला मासूम चेहरा आंखों के सामने आ जाता। वह अपने आपको उससे बचा नहीं पा रहा था। बहुत देर बाद उठा और गमछा उठाकर पोखर में नहाने चल दिया। आज दो दिन से उसने स्नान भी नहीं किया था। पोखर के ठंडे पानी से उसे काफी आराम मिला, पर साथ ही उसकी भूख भी चमक उठी। तब उसे ध्यान आया कि कल से उसने कुछ खाया भी नहीं है, मजूमदार के साथ दो-चार निवाला भात के अलावा। नहाकर वह बाजार आ गया। आलू चाप खाकर और चाय पीकर यूनियन आफिस की ओर चल पड़ा। ज्वाला मिश्र यूनियन आफिस में

नहीं था। मालूम हुआ कि वह कोलियरी आफिस की ओर गया है। कोलियरी आफिस पहुंचा तो पता चला कि वह आठ घंटा पहले इंचार्ज बाबू के साथ कहीं गाड़ी में गया है। कोलियरी आफिस में मजूमदार से भेंट हुई। उसने इधर-उधर देखकर धीरे से पूछा, "कुछ पता चला?"

"हां।"

"मुझे भी कुछ सुन-गुन मिली है।"

"क्या?"

"आज शाम घर आओ, वहीं बातें होंगी।"

"ठीक है।"

वह आगे बढ़ा। अब उसे हाजरी बाबू से मिलना था। हाजरी बाबू ने उसका तेवर देखा और थोड़ा-सा सकुचा गए। फिर फौरन खुद पर काबू पा लिया। बात पलटने के लिए या शायद इस डर से कि सहदेव कोई बात न उठाए, उसने पहले ही सवाल ठोंक दिया, "ड्यूटी पर क्यों नहीं आए?"

सहदेव ने उसके सवाल को उपेक्षित कर दिया और क्रोध से पूछा, "रहमत मियां खान से निकला था, यह बात आपको ठीक से मालूम है?"

"वाह मालूम कैसे नहीं होगी? उसके अंगूठे का निशान मेरे खाते में मौजूद है।"

"यह अंगूठे का निशान जाली भी तो हो सकता है!"

हाजरी बाबू का रंग फीका पड़ गया। वह झल्लाकर बोला, "जाली कैसे होगा, कोई चाहे तो देख सकता है। एक्सपर्ट राइटिंग करवा सकता हूं।"

"मैं देखना चाहता हूं।"

"तुम?"

"हां, मैं।"

"तुम खाता देखने के अधिकारी नहीं हो।"

आज पहली बार हाजरी बाबू ने उससे कठोर स्वर में कुछ कहा। कहा क्या, उसने उसकी औकात बता दी। ऐसा लगा मानो वह पूछ रहा हो तुम्हारी क्या हैसियत है खाता देखने की? तुम हो क्या? वही एक मामूली नीच मलकट्टा, एक लेबर।

"मैं क्यों नहीं देख सकता?"

"नहीं, तुम नहीं देख सकते। लेबर को इतना पावर नहीं है। मेरा खाता या तो इंचार्ज बाबू देख सकते हैं या खुद मालिक।"

सहदेव को सहसा अपनी हीनता और बौनी स्थिति का अहसास हुआ और अंदर का क्रोध एकदम आग तरह दहक उठा।

"खाता तो दिखाना होगा आपको। चाहे ज्वाला मिश्र को दिखाएं चाहे माइनिंग औथोरिटी को। मैं रहमत मियां की लाश को खड़ा करके रहूंगा।"

उसकी गरजदार आवाज से सारा माहौल गूंज उठा। दो-तीन आदमी जमा हो गए। आफिस से भी दो-एक आदमी निकल आए। हाजरी बाबू को पसीना छूट गया। सहदेव की बात का जवाब दिए बिना ही वह आफिस से बाहर आ गया।

कोलियरी आफिस से निकलकर, हाजरी बाबू से निपटने के बाद सहदेव ज्वाला मिश्र की खोज में चला, मगर उसका कहीं पता नहीं था। शायद इंचार्ज बाबू के साथ लौटा नहीं था। यूनियन आफिस बंद था और वह कमरा भी बंद था जहां ज्वाला मिश्र रहता था। उससे मुलाकात शाम को हुई। बड़ी निश्छलता से मिला। सारी बात सुनकर उसने बड़ी नरमी से पूछा, "तुम्हें किसने बताया कि रहमत का ऐक्सीडेंट हुआ और वह मर गया?"

"मदन ने, वही मदना बावरी।"

"अरे वह साला पियक्कड़? कब बोला तुमसे?"

"कल रात को।"

"सवाल तो यह है कि अगर ऐक्सीडेंट हुआ और रहमत मियां मर गया है तो उसकी लाश...?"

"यही तो पता नहीं चलता, बाबा?"

"तुम एक काम करो, उस साले मदना को यूनियन आफिस बुला लाओ।"

"वह आएगा नहीं। बहुत डरा हुआ है। चार दिन से काम पर भी नहीं जा रहा बल्कि घर से बाहर भी नहीं निकलता।"

"मदना के सामने घटी थी यह घटना?"

"हां, उसकी आंखों के सामने बल्कि उसी ने उसकी टांग पकड़कर घसीटा था।"

"अच्छा चलो, मैं चलता हूं उसके पास।"

ज्वाला मिश्र ने यूनियन आफिस का दरवाजा बंद किया और साइकिल के हैंडिल में झोला लटकाकर उसके साथ चलने लगा।

"मुझे तो नहीं लगता कि रहमत मियां मरा है। इतनी बड़ी बात हो जाए और किसी को पता भी न चले, ऐसा कैसे हो सकता है? अगर रहमत मियां मरा है तो लाश जरूर बाहर लाई गई होगी और अगर लाश बाहर आती तो तमाम कोलियरी में हल्ला हो जाता। मुझे तो लगता है वह भाग ही गया होगा। हाजरी बाबू के खाते में उसकी निकासी भी लिखी हुई है। उस पर रहमत मियां के अंगूठे का निशान भी लगा हुआ है।"

"क्या यह संभव नहीं कि अंगूठे का निशान किसी दूसरे का हो?"

"उसकी तो जांच कराई जा सकती है।"

"फिर मदना भी तो है, उसने अपनी आखों से देखा है।"

"उस साले पियक्कड़ पर हमको जरा भी भरोसा नहीं।"

वे लोग बाजार से गुजरे। कुछेक मजदूरों ने श्रद्धा से प्रणाम किया, "पांय लागी, बाबा!"

"जिओ, आनंद करो।"

ज्वाला मिश्र के साथ उसे जाता देखकर लोगों में जिज्ञासा उत्पन्न हो गई थी पर कोई रोक नहीं रहा था, मानो सबको पता था कि कुछ होने वाला है। दोनों आस-पास की हलचलों से अनजान यूं ही बोलते-बतियाते गेवाली धोड़े को पारकर जब बावरी धोड़े में मदना के क्वार्टर पहुंचे तो दंग रह गए। मदना के दरवाजे पर ताला झूल रहा था।

"अरे, यह कहां चला गया।?"

पास-पड़ोस के लोगों से पूछ-ताछ करने पर यह पता चला कि आज सुबह तड़के ही वह अपने पूरे सामान और बच्चों समेत कहीं चला गया था। किसी को मालूम नहीं था कि वह कहां गया। किसी को कानों-कान खबर भी नहीं हुई। वह तो एक बुढ़िया को अपने घर की इकलौती चारपाई दे गया था, उसी ने यह बात बताई (दोनों चुपचाप खड़े दरवाजे पर झूलते ताले को देखते रहे। सहदेव ने ज्वाला मिश्र की ओर देखा, "अब क्या किया जाए?" )

"करना क्या है? यह मदना बेटा तो गया। अगर रहता भी तो मालिक के खिलाफ कुछ बोलना उसके लिए मुश्किल था। अरे सुदामा उसकी जोरू को उठाकर ले गया तो कुछ बोला नहीं।"

सहदेव ने कहा, "अब आखिर मैं क्या करूं?"

"करोगे क्या? कोई केस खड़ा करने के लिए कोई आधार तो चाहिए। हवा में तो घर नहीं बनाया जा सकता, इसलिए जरूरी है कि पहले तुम सबूत इकट्ठा करो। मदना की तलाश करो। जब पक्की बात मालूम हो जाए तब मेरे पास आओ। फिर देखो, मैं साले मालिक को नंगा करके नचा दूंगा। इतने बड़े केस को पी जाएगा?"

ज्वाला मिश्र मदना का पता लगाने और दूसरे सबूत जमा करने को कहकर चला गया। वह एक बार फिर अंधेरे में अकेला खड़ा रह गया। जेनरल शिफ्ट की छुट्टी हो चुकी थी। मजदूर अपने धोड़ों में वापस आ चुके थे। बाजार की रौनक बढ़ गई थी। जहां-तहां दो-दो,-चार-चार आदमी आते-जाते दिखाई दे रहे थे। चाय और पान की दुकानों में भीड़ बढ़ गई थी। दूर शराब की झोंपड़ियों में दिया जला दिया गया था। उसके धोड़े में लोग आ चुके होंगे। ननकू, जुगेश्वर, संता और दूसरे लोग। पर उसका मन नहीं हुआ कि वह धोड़े में जाए, इसलिए खगनलाल की दुकान से चाय पीकर वह माइनिंग सरदार रामावतार से मिलने चला गया। अब उसकी मानसिक उथल-पुथल लगभग समाप्त हो चुकी थी। क्रोध और दुख की टीस जरूर बाकी थी।

रामावतार ने उसे देखा पर कहा कुछ नहीं। आज पहले वाली गर्मजोशी नहीं थी। सहदेव नमस्कार करके खड़ा रहा।

"कैसे आना हुआ?" बहुत देर बाद माइनिंग सरदार ने पूछा।

"रहमत मियां के बारे में कुछ बातें करनी थीं।"

"वह तो, सुना, भाग गया कोलियरी छोड़कर?"

"वह भागा नहीं है।"

"फिर?"

"उसका खान में ऐक्सीडेंट हुआ और वह मर गया।"

"तुमसे किसने कहा?" उसका भाव आश्चर्य का नहीं बल्कि जानकारी हासिल करने का था।

"मुझे एक ऐसे आदमी से मालूम हुआ है जो हादसे के समय वहां मौजूद था। उसने अपनी आंखों से सब कुछ देखा है।"

"देखो," अब रामावतार का स्वर एकदम सर्द और दो टूक था, "देखो, कोलियरी का दस्तूर है कि हमेशा अपने काम से काम रखो। तुम्हारे आस-पास क्या हो रहा है, कौन जी रहा है, कौन मर गया है, ये सब देखने की जरूरत नहीं और अगर देख लिया तो बोलने की जरूरत नहीं। यही अच्छा रास्ता है। कोलफील्ड बहुत खराब जगह है। यहां जो आदमी जरा-सा भी सर उठाता है उसका सर कुचल दिया जाता है।"

सहदेव माइनिंग सरदार के बदले हुए तेवर को देखता रहा, फिर भी अपने क्रोध को दबाकर बोला, "इसका मतलब यह है कि आप मुझे धमकी दे रहे हैं?"

"धमकी नहीं है यह। चेतावनी है और वह भी इसलिए कि तुम अपने आदमी हो। सीधी बात है। किसी पर आरोप लगाने से पहले उसके लिए सबूत चाहिए। क्या सबूत है तुम्हारे पास? अगर ये सब सच भी हो तब भी तुमको सारी सिरसा कोलियरी में एक भी गवाह नहीं मिलेगा। जिस आदमी ने तुम्हें बताया है उसी से पूछ लो। क्या वह पुलिस के सामने अपना बयान देगा? झूठ-मूठ किसी दूसरे के मामले में मत पड़ो।"

"मगर इतनी आसानी से मैं सारे मामले को हजम नहीं होने दूंगा। यह मेरा संकल्प है।"

"बात को समझो," अब उसने अपना स्वर थोड़ा नरम कर लिया, "ये सब छोड़ो। इस बात को भूल जाओ और मजे से ड्यूटी करो। तुम्हारी तरक्की के लिए रास्ता खुला है।"

सहदेव ने आज पहली बार एक ठोस और मजबूत चीज से टकराकर महसूस किया कि वह कितना कमजोर है। उसे तकलीफ हुई। बहुत तकलीफ हुई। गुस्सा भी आया। बहुत गुस्सा आया। नफरत की आग भी भड़की। बहुत जोर की भड़की। फिर अपनी हीनता, बौनेपन और असहाय होने का बहुत अहसास भी हुआ। वह अपने आप में कटता रहा। कुछ बोला नहीं। बोलने को कुछ रह भी नहीं गया था।

उधर माइनिंग सरदार रामावतार बहुत भयभीत था। उसने इंचार्ज बाबू के निर्देशानुसार

धमकी भी दे दी। समझा-बुझा भी दिया। तरक्की का लालच भी दे दिया, लेकिन फिर भी उसे डर लग रहा था। वह अपनी सारी कमजोरियों को छुपाए उसे जाता देखता रहा। यह आदमी, यह आदमी कितना न्डिर है कितना मजबूत और निर्भय! उसे मालूम नहीं कि मालिक से टूटने का क्या मतलब होता है? अभी उसे चोट नहीं लगी इसलिए दर्द का अंदाजा भी नहीं है पर यह आदमी अगर खड़ा रहा, अगर डटा रहा तो क्या होगा? क्या पता चल जाएगा? क्या सारी सचाई खुल जाएगी? कपिल सिंह कहता है, "साला जो कोई गड़बड़ी करेगा तो उसे उठाकर जिंदा चांक में डाल देंगे।"

उसके लिए ये असंभव भी नहीं। दिन-रात उसका यही तो काम है। इसी काम के लिए मालिक ने उसे रखा भी है। अगर वह न होता... अगर वह न धमकाता और अपनी लाल-लाल अंगारे जैसी दहकती आंखों से हुक्म न देता क्या वह इतना बड़ा काम अपने दम पर कर लेता? कभी नहीं करता। चाहे इंचार्ज बाबू या मालिक खुद ही क्यों न कहे। कहां से इतनी हिम्मत आ गई थी उसमें?... मगर अब हिम्मत नहीं रही है...वह अंदर ही अंदर दहल रहा है...वह सब नहीं भूलता... बिलकुल नहीं भूलता...कैसा डर समा गया है उसके दिल में...? खान में वह उस सुरंग की तरफ मुंह करके खड़ा भी नहीं हो सकता ...उधर पीठ करके भी खड़ा होना मुश्किल है।

ऐसा लगता है जैसे रहमत मियां अचानक अंधेरे से निकलकर उसे दबोच लेगा, इसलिए ज्यादातर वह ऐसी जगहों में रहता है जहां लोग मौजूद हों। खान से घर लौटकर सब ठीक-ठीक रहता है पर जब रात गहरी होने लगती है, लोग सो जाते हैं, सर्वत्र सन्नाटा व्याप्त हो जाता है और उस सन्नाटे को भेदती हुई दर्जनों कुत्तों की आवाज के साथ हालिज की गड़गड़ाहट सुनाई देती है तो ऐसा लगता है मानो रहमत मियां खान से बाहर निकल रहा हो... जैसे वह ऊपर उठकर सीधा उसके पास आएगा...बिना सिर का आदमी...बिना चेहरे की लाश ... वह डरकर और दुबक जाता है बिस्तर में...

उसने सपने में भी यह नहीं सोचा था कि मालिक ऐसा करेगा। उसने तो डर से कि बेकार में लोगों में हल्ला हो जाएगा इसलिए यही उचित समझा कि पहले इंचार्ज बाबू को खबर दी जाए। वे जैसा हुक्म करेंगे, लेकिन इंचार्ज बाबू हुक्म देने के बजाए उसे गाड़ी में बैठाकर मालिक के पास ले गया। मालिक और इंचार्ज बाबू के बीच अंग्रेजी में क्या गटपट हुई कुछ पता नहीं, इसलिए इंचार्ज बाबू ने बाहर आकर बताया कि मालिक ने लाश को ठिकाने लगाने को कहा है। तब वह चौंका।

"कौन ठिकाने लगाएगा?"

"तुम।"

"मैं...यह काम मुझसे न होगा।"

"तुम अकेले नहीं रहोगे, कपिल सिंह के आदमी तुम्हारे साथ होंगे।"

"फिर भी, मैं यह सब नहीं कर सकता।"

"तुम नहीं करोगे तो और कौन करेगा? अंदर गूफ एरिया का किसको पता है?"

वह फिर भी इंकार कर देता मगर तब पता नहीं कहां से कपिल सिंह अपने चार आदमियों के साथ आ गया। शायद मालिक ने उसे आदमी भेजकर बुलवा लिया था। उसकी बात सुनकर कपिल सिंह ने उसे घूरकर देखा।

"तुम कुछ मत करना, सब हमारा आदमी करेगा, तुम केवल रास्ता बताना।"

यह केवल एक तसल्ली भरा वाक्य नहीं था, बल्कि एक हुक्म था। कपिल सिंह और उसके पहलवान उसी गाड़ी में लौट गए। गाड़ी कोलियरी आफिस में नहीं रुकी, सीधे मुहानी पर आकर लगी। कपिल सिंह ने हाजरी बाबू से खाता लेकर नीचे चलने को कहा पर वे साफ मुकर गए, "मेरा अंडर ग्राउंड जाने का काम नहीं है।"

"क्या बोलता?" कपिल सिंह ने उसे अपनी अंगारे जैसी जलती आंखों से उसे घूरा, "आज मालिक संकट में है तो बोलता है कि नहीं जाएगा। तुमको जाना होगा।"

हाजरी बाबू कपिल सिंह की लाल अंगारे जैसी आंखों के तेज को सहन नहीं कर सका। खाता नंबर नौ उठाया, और अंदर चला गया। कपिल सिंह के दो आदमी उसके साथ गए। काम हाजरी बाबू को मालूम था, इसलिए उसने मरे हुए रहमत मियां के अंगूठे का निशान खाता नंबर नौ पर लिया और ऊपर आकर निकासी का समय और तारीख भरी।

उसके बाद कपिल सिंह ने अपने दोनों आदमियों को उसके साथ कर दिया। उनमें से एक आदमी के पास टार्च थी और दूसरे के हाथ में तह किया खाली बोरा। रामावतार ने टार्च जलाने को मना कर दिया था। ऐसा न हो किसी को कुछ संदेह हो जाए। रामावतार आगे-आगे ढिबरी लिए हुए चल रहा था और वे दोनों उसके पीछे-पीछे। रामावतार तो खैर खान के चप्पे-चप्पे से परिचित था और इसीलिए उसे भेजा भी गया था, लेकिन वे दोनों अंडर ग्राउंड से बिलकुल भी परिचित नहीं थे इसलिए वे हर कदम संभलकर और कहीं-कहीं दीवार पकड़ कर चल रहे थे। उन्हें ज्यादा दूर नहीं जाना पड़ा। थोड़े ही दूर पर रहमत मियां की लाश पड़ी थी। तीनों ने मिलकर जैसे-तैसे लाश को बोरे में रखा और उनमें से एक आदमी जो काफी बलिष्ठ था उसने बोरे को कंधे पर लाद लिया। फिर ढिबरी की मद्धिम रोशनी में यह तीन आदमियों का यात्री दल धीरे-धीरे बढ़ने लगा। दोनों आदमियों को चलने में काफी परेशानी हो रही थी, खासतौर पर उस आदमी को जिसने बोरे को कंधे पर उठा रखा था। कई गलियारों से गुजरते, कई सुरंगें पार करके वे काफी दूर निकल गए। रामावतार ढिबरी लिए उनके आगे-आगे रास्ता बनाते हुए चल रहा था और वे दोनों उसके पीछे-पीछे। खान में होने वाला शोर-शराबा अब काफी दूर रह गया था। यहां बिलकुल सन्नाटा था। प्रचंड गर्मी थी। हवा बोझिल और गैस की तरह तीखी थी। उस जगह पहुंचकर रामावतार ने उन्हें रोक दिया, "बस, यहीं रुको। आगे खतरा है। बंद सुरंग में कुछ भी

हो सकता है।"

उसने एक आदमी के हाथ से टार्च ली और दीवार की छत का निरीक्षण करने लगा। दो फुट के डंडे से कई जगहों को ठोंक-पीटकर देखा। फिर फर्श पर टार्च की रोशनी फेंकी।

"तुम लोग यहीं रुको। मैं बोरे को और अंदर फेंककर आता हूं।")

उस कल्पना से ही वह सिहर जाता है कि जिस बोरे को लेकर वह जा रहा है उसमें एक आदमी की लाश है। वह पसीने से लथपथ हो गया। उसकी सांसें लोहार की धौंकनी की तरह चल रही थी। दोनों टांगें कांप रही थीं। बोरे को घसीटता, रास्ते के रोड़ों से उलझता वह आगे बढ़ता गया। हर दस-बारह कदम पर रुककर वह छत और दीवार का मुआइना करता और फिर आगे बढ़ जाता। कोई पचास-साठ गज अंदर जाकर उसने बोरे को छोड़ दिया। कुछ देर खड़ा सोचता रहा फिर जलती टार्च को एक पत्थर से लगाकर खड़ी कर दी और पत्थर और कोयले के टुकड़े चुन-चुन कर लाश को ढकने लगा। इस काम में उसे काफी समय लगा। इधर इन दोनों पहलववानों का भी गर्मी और घुटन के मारे बुरा हाल था। रामावतार उन्हें दिखाई भी नहीं दे रहा था। बस टार्च की रौशनी एक सफेद लकीर की तरह नजर आ रही थी।

रामावतार ने लाश को अच्छी तरह ढक दिया। अब वहां एक कब्र प्रकट हो गई थी। वह इतना थक गया था कि लगता था जैसे अब उससे एक पत्थर भी न रखा जाएगा। वह वहीं बैठकर सुस्ताने लगा। जलती हुई टार्च अब उसने हाथ में पकड़ ली। टार्च की रोशनी में अंदर का सारा वातावरण भयावह हो गया था। डर से मानो उसकी आवाज बैठ गई। प्यास ने जैसे कंठ में कांटे बो दिए थे। कुछ देर आराम करने के बाद जब बदन में जरा ताकत आई तब वह उठा और लंबी डग भरता हुआ उन दोनों आदमियों के पास पहुंचकर बैठ गया।

"मैं बहुत थक गया हूं, थोड़ा सुस्ताने दो।"

जिस आदमी के पास लैंप थी उसने लैंप उसके चेहरे पर किया और पूछा, "सब ठीक है?"

"हां, ठीक है।"

"ऐसे छोड़ देने से बदबू हो जाएगी कुछ दिन बाद?"

"ऐसे नहीं छोड़ा है, पत्थरों से पूरी तरह ढंक दिया है।"

"अच्छी तरह से?"

"हां, अच्छी तरह से," इस बार माइनिंग सरदार झल्ला गया, "अब अगर उस पर भी बदबू हो जाए तो मैं क्या करूं? मुर्दा दफन करने की मेरी ड्यूटी नहीं है। सबने हम लोगों को कुत्ता समझ लिया है, एकदम पालतू कुत्ता।")

कोई कुछ नहीं बोला। अंधेरा बहुत था। किसी की सूरत दिखाई नहीं दे रही थी, वरना

वह देखता कि दोनों के चेहरे पर सिर्फ दया के भाव थे जबकि खुद रामावतार का चेहरा अपमान और कुंठा की यातना से सुलग रहा था। वे तीनों धीरे-धीरे चलते हुए बाहर निकल आए। जो आदमी बोरा लेकर गया था उसके कुर्ते पर खून लग गया था। बाहर आकर उसने कुर्ता उतारकर लपेट लिया और बनियान पर पड़े खून के धब्बे को हाथ से छुपाए चला गया।

हाजरी बाबू ने घृणा से रामावतार को देखा, "मालिक ने शाम को बुलाया है बंगले पर।"

रामावतार ने दिल ही दिल में गाली दी—साला!

मजूमदार ने उससे पूछा, "तुमने खाना तो नहीं खाया होगा, भात खाओगे?"

वह रात का खाना बनाने जा रहा था जब वह उसके पास पहुंचा। उसे खाने की इच्छा नहीं थी। उसे याद भी नहीं था कि उसने खाया है या नहीं इसलिए उसने मजूमदार को कोई जवाब नहीं दिया। मजूमदार ने उसके लिए भी चावल डाल दिया और उसके पास आकर बैठ गया, "इधर-उधर से खबर मिल रही है कि रहमत मियां अब इस दुनिया में नहीं है।"

"हां, मुझे मालूम है बल्कि यह भी मालूम है कि वह कैसे मरा।"

मजूमदार ने उसे सवालिया नजरों से देखा।

"उसका ऐक्सीडेंट हुआ है खान के अंदर, लेकिन उसकी लाश का कुछ पता नहीं है।"

"और अब पता चलना भी मुश्किल है।"

"क्यों?"

"उसे गायब कर दिया गया होगा। या तो उसे निकालकर ठिकाने लगा दिया गया होगा या वहीं अंडरग्राउंड में कहीं...। मैं श्रद्धा कोलियरी में था। वहां पिट (Pit) थी। तीन आदमी उसमें एक साथ मरे थे। तीनों को स्टोइंग में डाल दिया गया था। अब सैकड़ों ट्रक बालू में किसकी मजाल थी कि उनको बरामद कर लेता!"

सहदेव बोला, "मेरी समझ में एक बात नहीं आती कि आखिर इसकी क्या जरूरत है? अगर अंदर कोई मर जाए तो उसकी लाश बर्बाद कर देने से क्या मिलता है?"

"वाह, मिलता क्यों नहीं? कंपनी हजारों रुपए मुआवजा देने से बच जाती है। फिर ये यूनियन लीडर, पुलिस और माइनिंग इंस्पेक्टर...। इस बात के लिए भी कंपनी को उत्तरदायी होना पड़ता है कि जब खान में हादसा हुआ उस समय खान की क्या स्थिति थी? कहीं गलत ढंग से माइनिंग नियमों को तोड़कर तो खुदाई नहीं हो रही है? हजारों लफड़े हैं।

इन सब से बचाव हो जाता है। आसानी से मरे हुए आदमी को फरार घोषित कर, कुछ खास-खास आदमियों की मुट्ठी गरम करके सारा मामला रफा-दफा हो जाता है। मजदूरों में इतना साहस तो है नहीं कि इसके लिए आवाज उठा सके। असल में इन मालिकों ने मजदूरों को इतना दबाकर रखा है कि ये जरा-सा सर ऊंचा करने लायक भी नहीं हैं।"

"मगर यह यूनियन?"

मजूमदार बहुत जोर से हंसा, "कौन-सी यूनियन? ज्वाला मिश्र की यूनियन या श्रीवास्तव की यूनियन? तुम क्या समझते हो, यह लेबर यूनियन है? यह असल में मालिकों की यूनियन है और ये लीडर, ये मालिकों के जूतों के फीते हैं। मालिक जितना चाहता है कस देता है, जब जितना चाहता है ढीला छोड़ देता है।"

"वह सब ठीक है, लेकिन आखिर यह यूनियन किसके बल पर चलती है? किसके लिए बनाई गई है, इसका काम क्या है? इसका काम मजदूरों के हितों की रक्षा करना ही तो है। उसी लेबर के चंदे पर चल भी रही है। इसकी मेंबरशिप पर ही उसका अस्तित्व है, क्या नहीं है?"

"है, मगर कागज पर। वास्तविकता उससे बिलकुल अलग है। हर आदमी जो जरा-सा समझदार है यह बात अच्छी तरह से जानता है कि यूनियन लेबर की नहीं है। ज्वाला मिश्र भी लेबर का नहीं है और सबसे बड़ी त्रासदी तो यह है कि लेबर भी लेबर का नहीं है। एक लेबर के गले में रस्सी बांधकर अगर मालिक सारी कोलियरी में घसीटता भी फिरे तब भी कोई दूसरा लेबर नहीं बोलेगा। उनके पास खोलने के लिए मुंह और बोलने के लिए जुबान नहीं है...चारों तरफ ताकत का जाल फैला है...महाजाल, मकड़-जाल। लोग इसमें फंसे बेबस मछलियों की तरह सांसें ले रहे हैं। छूटने की, निकल भागने की, जाल तोड़ देने की सारी उम्मीद छोड़कर अब सिर्फ लंबी-लंबी सांसें ले रहे हैं। दे आर रेसपायरिंग फौर एअर औनली (They are respiring for air only.)"

कोई ठंडी, बहुत ठंडी चीज सहदेव के खून में शामिल होकर बहने लगती है। दिल धीरे-धीरे हताशा और निराशा के गहरे सागर में डूबने लगता है। मजूमदार उसकी तरफ से आंखें फेर लेता है, उठकर भात पसाता है। फिर देगची को टिकाकर उसके पास आकर बैठ जाता है और बड़े दुख से कहता है, "हम लोग वहां खड़े हैं जहां पैरों के नीचे जमीन नहीं है।"

अचानक सहदेव ने उससे सवाल किया, "तुम कुछ नहीं कर सकते?"

वह गंभीर हो गया, "तुम क्या समझते हो यह एक अकेले आदमी का काम है? मेरे पीछे कौन है? न कोई यूनियन, न कोलियरी के मजदूर। क्या है? सिर्फ सिद्धांत, उसूल, मार्क्स और लेनिन का साहित्य। मगर सब बेकार है अगर व्यवहार में न हो। और व्यवहार में लाएगा कौन? मैं, तुम या कोई और? यह काम तो उन्हीं लोगों को करना है, उन्हीं मजदूरों,

उन्हीं कुचले हुए लोगों को। हम तो सिर्फ रास्ता बता सकते हैं। चलना तो उन्हीं को है। पता नहीं, अगले पचास, सौ सालों में भी यह इस लायक हो सकेंगे या नहीं?"

"तो इसका यह मतलब है कि स्थिति से समझौता कर लिया जाए?"

"नहीं, इस पर सोचते हैं कि अभी क्या करना चाहिए। लेकिन पहले खाना खा लें। तुमने वह कहावत नहीं सुनी—

भूखे भजन न होहि गोपाला।
ले ले अपनी कंठी माला।।"

मजूमदार हंस पड़ा लेकिन सहदेव वैसे ही गंभीर बना रहा, "तुम ऐसे मौके पर, इतने सीरियस मौके पर भी कैसे हंस लेते हो?"

"रोने से भी क्या फायदा होगा? और रोना तो है ही जिंदगी भर। क्यों नहीं इस उम्र भर रोने के बीच थोड़ा-सा हंस लिया जाए।"

दोनों ने चुपचाप भात खाया और अपनी-अपनी तमचीन की प्लेट एक तरफ रखकर फिर आ बैठे।

"देखो सहदेव, इस मामले में कुछ कर सकना इतना आसान नहीं है। बस, एक ही सूरत है कि एक गुमनाम चिट्ठी माइनिंग डिपार्टमेंट को भेज दी जाए। ऊपर खबर पहुंच जाएगी तो कम से कम मामला तो खुल जाएगा। इस बीच हम कोई चश्मदीद गवाह ढूंढ लेंगे।"

"बस, एक आदमी था जिसने इस घटना को अपनी आंखों से देखा था।"

"कौन आदमी? क्या ऐसा कोई आदमी है?" मजूमदार ने उत्सुकता से पूछा।

"है नहीं, था। मदना बावरी। आज सुबह कहीं भाग गया है।"

"कहां भाग गया?"

"कुछ पता नहीं। किसी को मालूम नहीं। वह इतना डरा हुआ था कि चार दिन से घर में बंद था। कल रात मैंने उसे पकड़ा तो उसने सारी बातों को स्वीकार कर लिया। मैंने उससे कहा कि वह कल मेरे साथ यूनियन आफिस चले। बस इतनी-सी बात पर वह भाग निकला। मुझे तो लगता है, उसे भगा दिया गया है।"

"हां, यह हो सकता है। मैंनेजमेंट इतना पक्का सबूत कभी नहीं छोड़ेगा।"

उसके बाद मजूमदार ने चिट्ठी ड्राफ्ट की और सहदेव को दे दी, "इसे लेकर तुम कल धनबाद चले जाओ। वहां कोर्ट में बहुत-से लोग टाइप करते हैं। किसी से टाइप करवा लेना और वहीं पास में पोस्ट आफिस है। वहीं से पोस्ट भी कर देना। देखें, क्या होता है?"

बातचीत करते, चिट्ठी ड्राफ्ट करते और फिर फेयर करते यानी उसे अंतिम रूप देते काफी रात हो गई थी। सहदेव ने जाना चाहा लेकिन मजूमदार ने उसे रोक लिया। चारपाई खड़ी कर दी और फर्श पर बिछौना बिछाकर दोनों सो गए।

"मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि लाश उन लोगों ने कहां ठिकाने लगाई होगी? इस खान में स्टोइंग तो होती नहीं। अगर स्टोइंग सिस्टम होता तो फिर यह बात साफ हो जाती कि उसे रेत में दबा दिया गया हो। ऐसा भी हो सकता है कि लाश को बाहर निकालकर कहीं गाड़ दिया गया हो।"

"मालिक लोग कुछ भी कर सकते हैं।"

"लेकिन आखिर इंसानियत भी तो कोई चीज है।"

"हां, है। किताबों में है। लीडरों के भाषणों में है। कोलियरी मीटिंगों में तुमने देखा होगा कि धुंआधार भाषणों में यह शब्द बार-बार आता है मगर यहां इस कोलफील्ड में यह कहीं नहीं है।"

नींद आने लगी है। रात भर रोने, सुबह पोखर में नहाने और रामावतार की धमकी और मजूमदार की बातों से वह थककर चूर-चूर हो गया था। सारा जोश ठंडा पड़ता जा रहा था। जीती हुई लड़ाई पराजय में बदलती जा रही थी। वह अपने थके हुए शरीर, अपने थके हुए स्नायु को ढ़ीला छोड़ देता है और अपनी आंखें बंद कर लेता है।

इंचार्ज बाबू ने तेज और तिरछी नजरों से उसे देखते हुए पूछा, "तुम्हारा नाम सहदेव है?"

"हां, साहब!"

"तुम पढ़े-लिखे हो?"

"दसवीं तक।"

"अंग्रेजी लिखनी आती है?"

अंग्रेजी के नाम पर सहदेव चौंक कर देखता है और बात को फौरन समझ कर इंकार कर देता है, "नहीं, साहब!"

"मजूमदार से तुम्हारी बहुत दोस्ती है?"

"थोड़ी दुआ-सलाम है।"

दोनों एक-दूसरे को छल रहे हैं। सहदेव जानता है कि वह कोल माइंस डिपार्टमेंट को लिखी चिट्ठी के बारे में जानना चाहता है और इंचार्ज बाबू भी समझ रहा है कि सहदेव इतना आसान आदमी नहीं है इसलिए वह थोड़ा और खुलता है।

"रहमत मियां तुम्हारे गांव का था?"

"उसका गांव मेरे गांव से कोई सात कोस पर है।"

इंचार्ज बाबू सीधे मतलब पर आ गया, "देखो, जो हुआ सो हुआ। गड़बड़ यह हुई कि किसी ने माइंस डिपार्टमेंट को एक चिट्ठी लिख दी है," उसने रुककर गहरी नजरों से सहदेव को देखा, "हालांकि उससे कंपनी का कुछ बिगड़ने वाला नहीं है। जो आदमी

पैंट सिलवाता है न, वह उसमें पेशाब करने की जगह रखता है। देखना यह है कि चिट्ठी किसने लिखी है? वह काली भेड़ कौन है? ऐसे लोगों से कंपनी को साफ रखना जरूरी है, बहुत जरूरी..."

सहदेव इस छुपी धमकी को महसूस करता है, लेकिन बोलता कुछ नहीं। वह सिर्फ इंचार्ज बाबू के मनोभाव का आकलन करता है। इस चुप्पी से तंग आकर इंचार्ज बाबू सीधे पूछता है, "तुम्हारा क्या ख्याल है यह काम किसका हो सकता है?"

"मैं कैसे कह सकता हूं?"

"मजूमदार का?"

"नहीं, अगर मजूमदार का होता तो मुझसे जरूर कहता।"

"फिर किसका हो सकता है यह काम?"

वह चुप रहा।

"कपिल सिंह और उसके आदमी उस चिट्ठी लिखने वाले व्यक्ति को शिकारी कुत्तों की तरह सूंघते फिर रहे हैं।"

यह एक और धमकी है। वह दिल ही दिल में सोचता है।

"तुम ऐसा करो, कंपनी तुमको एक महीने की पेशगी तनख्वाह देती है। तुम घर चले जाओ एक महीने के लिए।"

"मैं घर नहीं जाना चाहता।"

"यहां रहकर भी तुम कुछ नहीं कर सकोगे।"

इस बार एकदम सीधा वार किया गया। (वह चुप रहा।)

"जाओ, तुमसे जो बन पड़े कर लेना," इंचार्ज बाबू ने टेबुल पर मुक्का मारा, "कंपनी तुम जैसे लोगों का इंतजाम कर सकती है।"

उसे इंचार्ज बाबू की आवाज गेंहुअन सांप के फुफकार की तरह लगी। उस सारी बातचीत में जो एक डर, उस डर के साथ एक बेचैनी और बेचैनी के साथ घबराहट थी वह सहदेव की आंखों से छुपी न रह सकी। उसे अंदाजा हो गया था कि चिट्ठी ने काम किया है और अंदर ही अंदर एक खलबली-सी मची हुई है। (आफिस से निकलकर वह खान की तरफ जा रहा था कि रास्ते में कपिल सिंह मिल गया। उसके साथ दो आदमी भी थे और ननकू भी साथ ही था। उस पर नजर पड़ी तो कपिल सिंह रुक गया, "क्या जी, अब कुत्ता हाथी पर चढ़कर काटेगा?" )

ननकू फौरन अनुशंसा में बोला, "इसको तो सिंह जी कुछ मालूम भी नहीं होगा।"

"सब मालूम है इसको," फिर उसने सहदेव को संबोधित किया, "उस साले कटुए के लिए क्यों प्राण देते हो?"

इंचार्ज बाबू की बातों से उसका शरीर तप गया था। कपिल सिंह की बातों ने मानो

आग में घी का काम किया। उसके तन-बदन में आग लग गई। उसने 'कटुआ' शब्द में आलिप्त घृणा और गाली के भाव को तीव्रता से महसूस किया, फिर भी अपने ऊपर संयम बनाए रखा।

"हमको किसी कटुए या किसी टेकधारी से क्या लेना? हम तो मजूरी करने आए हैं और मजूरी करते हैं।"

"फिर चिट्ठी क्यों लिखा?"

"हमने कोई चिट्ठी नहीं लिखी।"

"हमारे पास रिपोर्ट है कि यह तुम्हारा काम है। ठीक है, देखा जाएगा। लगता है, तुम्हारा टाइम पूरा हो गया है।"

सांप और शेर से निपटकर वह सीधे अंडरग्राउंड में उतर गया। इन सारी धमकियों के बावजूद वह खुश था की तीर निशाने पर बैठा है। अब कुछ न कुछ होगा। इंक्वायरी हो सकती है। कोलियरी सर्च भी हो सकती है। रहमत मियां की लाश भी बरामद हो सकती है लेकिन शाम को मजूमदार ने उसे निराश कर दिया।

"कुछ नहीं होगा क्योंकि इंस्पेक्टर जो आया था उससे बात हो चुकी होगी वरना वह आफिस के बाहर भी कुछ पूछताछ करता।"

"मगर चिट्ठी ने काम तो किया, इंक्वायरी तो आई?"

"हां, इंक्वायरी आई। आफिस के लोग बुरी तरह घबराए हुए भी हैं। इंचार्ज बाबू को पसीना छूट रहा है। मालिक का मुंह सूख गया है। तमाम कानाफूसी चल रही हैं, मगर होगा कुछ नहीं।"

"लेकिन क्यों नहीं होगा?"

"अरे यार, ये लोग इतने आसान नहीं हैं। जिंदगी भर हजारों-लाखों दांव खेलते आए हैं। इतनी आसानी से थोड़े ही मात खा जाएंगे।"

सहदेव ने कहा, "तुम्हारे बारे में भी उन लोगों को शक है। मुझसे पूछा था इस बारे में।"

"हां, मुझसे भी पूछताछ हुई है। मेरा पत्ता भी कटा समझो। इस मामले को निपटाने के बाद शायद वे लोग हम दोनों को निकाल बाहर करें।"

"मुझे परवाह नहीं है। मुझे तो अपनी मेहनत बेचनी है, इस दुकान में नहीं बिकी तो किसी दूसरे दुकान में बिकेगी।"

"परवाह तो मुझे भी नहीं है क्योंकि यह मेरे काम करने की जगह भी नहीं है। लेकिन फिर भी जल्द ही कोई जगह ढूंढनी होगी और हम लोगों के लिए, मतलब आफिस स्टाफ के लिए यह थोड़ा मुश्किल काम है।"

"अच्छा, एक बात बताओ," सहदेव ने थोड़ा रुककर पूछा, "इंक्वायरी की बात

यूनियन को मालूम है?"

"क्या बात करते हो? अरे, इसे तो यह भी मालूम है कि रहमत मियां की लाश कहां है लेकिन जिस उम्मीद से तुम पूछ रहे हो वह बेकार है। ज्वाला मिश्र आज दिन में कई बार आफिस आया था। आज वह खुश भी बहुत दिखलाई दे रहा था। मालूम होता है, दाम अच्छे मिले हैं।"

सहदेव ने एक लंबी सांस भरी और बड़ी मायूसी से कहा, "सब लोग बिक जाते हैं।"

"यहां कोलफील्ड में बस दो फैक्टर काम करता है—एक पैसा और दूसरा ताकत। कुछ खास लोगों को पैसे से खरीद लिया जाता है और बाकी को ताकत से दबा दिया जाता है। मजदूर, ये मलकट्टा लोग इतने मासूम हैं कि कुछ नहीं जानते। इतने कमजोर हैं कि कुछ कह नहीं सकते। जिंदा रहना या यूं कह लें कि अपने आप को जिंदा रखना उनके लिए शर्त हो गया है। बस काम करो और खाना खाओ। देखो, सुनो, पर बोलो कुछ नहीं, कोई आवाज नहीं। आतंक की एक ऐसी दुनिया उनके चारों तरफ खड़ी कर दी गई है और ये उससे इतना डरे हुए हैं कि रोष तक प्रकट करने का ख्याल इनके दिमाग से निकल गया है। यह एक बड़ी त्रासदी है, बहुत बड़ी त्रासदी, इन तमाम लोगों की मौत से भी बड़ी।"

"अच्छा तो तुम आफिस में थे। वहां माइनिंग इंस्पेक्टर आया था, फिर क्या हुआ? क्या सारी बात खत्म हो गई?"

"नहीं, अभी सारी बात खत्म नहीं हुई बल्कि अभी तो शुरू हुई है। यह तो एक सरसरी इंक्वायरी थी। अब गवाही होगी। अगले दिन बुध को माइनिंग इंस्पेक्टर आएंगे। गवाहियां गुजरेंगी। हाजरी बाबू अपना खाता देखकर बताएंगे कि रहमत मियां नौ बजकर सात मिनट पर बाहर चला गया था। ऊपर सतह पर एक दो कपिल सिंह के आदमी और कुछेक लोडिंग कामिनें बताएंगी कि उन्होंने रहमत मियां को खान से निकलकर जाते हुए देखा है। बस खत्म..."

"लेकिन अगर मैं गवाही देना चाहूं?"

"तुम कैसे दे सकते हो? गवाहों के नाम दिए जा चुके हैं। कागज पर सिर्फ उन्हीं का बयान लिया जाएगा। यूं समझो बस खानापूरी होगी।"

"लेकिन अगर मैं जबरदस्ती गवाही देना चाहूं?"

"यह भी संभव नहीं क्योंकि बुधवार का दिन तय हुआ है, जो वर्किंग डे है। सब लोग अंडरग्राउंड में उतर जाएंगे। सिर्फ उन्हीं लोगों को रोक लिया जाएगा जिनको गवाही देनी है। फिर यह सारी कार्यवाही बंद कमरे में होगी। बाहर कपिल सिंह और उसके लठैत मुस्तैद रहेंगे पहरे पर। यहां जो भी काम होता है एकदम योजनाबद्ध ढंग से होता है।"

मंगलवार उथल-पुथल का दिन है। चारों तरफ बात चल रही है, अंदाजें, अटकलें। वैसे सबको मालूम है कि क्या हो रहा है, फिर भी सब लोग इस बात के इंतजार में हैं कि कुछ ऐसा हो जाए जिसकी उम्मीद न की जाती हो। तरह-तरह के अनुमान लगाए जा रहे हैं। भविष्यवाणियां हो रही हैं। सारे इलाके में पहलवान घूम रहे हैं, हाथ में भाले और तेल पिलाई लाठियां लिए। उनमें अधिकांश ने पी रखी है, मुफ्त मिली है कंपनी की ओर से। आतंक फैलाने के लिए वे जिस-तिस को बेमतलब गालियां बक रहे हैं। दो-एक आदमी पर बिना कारण हाथ भी झाड़ दिया है।

हर जगह सनसनी फैली है, कोलियरी आफिस में, भट्टे पर, लोडिंग शेड के पास, बाजारों में, धोड़ों में, आम आदमियों के चेहरों पर, दिलों में...।

क्या होगा? क्या हो सकता है?

मंगल की शाम को सहदेव मजूमदार से मिलता है मगर उसे यह नहीं बताता कि कल वह छुट्टी करने वाला है और यह भी नहीं बताता कि उसने तय कर रखा है कि वह इंक्वायरी इंस्पेक्टर से जरूर मिलेगा। अगर अंदर कमरे में नहीं मिल सका तो बाहर बरामदे में मिलेगा और उसे चीख-चीखकर बताएगा कि रहमत मियां मर गया है और उसकी लाश गायब कर दी गई है।

मजूमदार भी बहुत दुखी है। अपनी विवशता पर उसे बहुत क्रोध आ रहा है। सारा लिखा-पढ़ा, सारा किया-धरा एकदम बेकार लगता है। यह सारी किताबें, यह साहित्य, ये सब बोझ है। वह सहदेव की तरफ देखते हुए घबरा रहा है। उसकी अंतरात्मा सुलग रही है... धधक रही है। मगर वह क्या करे? क्या कर सकता है? कोई ऐसी चीख, कोई ऐसी ललकार, कोई ऐसा प्रतिरोधी नारा होता जो इस रहस्यपूर्ण खामोशी के चिथड़े उड़ा देता, जो कल खेले जाने वाले ड्रामे को सच से टकराकर चूर-चूर कर देता।

लेकिन वह अकेले क्या कर सकता है?

और उसके चारों तरफ जो जनसमूह है वह बेजुवान है, बेआवाज है...

पहली सर्दी की रात लम्हा-लम्हा गुजर रही है, मंगल की रात। कल बुध का दिन है, प्रलय का दिन। हर तरफ सन्नाटा है...आज लोग बाहर से, बाजार से कुछ पहले ही आ गए हैं। आज किसी धोड़े के सामने जमाव भी नहीं हुआ है। लोग एक-दूसरे से बातचीत भी कम कर रहे हैं। उनके पास बोलने को कुछ नहीं है। सभी जानते हैं कि क्या हो रहा है, क्या होने जा रहा है। ननकू बहुत चिंतित है। सहदेव अभी तक नहीं लौटा, शायद न भी लौटे। अब इधर कभी-कभी पूरी रात गायब रहता है। उसने पीना भी शुरू कर दिया है लेकिन उसे कम से कम इतनी रात तक गायब नहीं रहना चाहिए था। कपिल सिंह के आदमी

चारों तरफ घूम रहे हैं। उसने कुछ और पहलवान बाहर से मंगवा लिए हैं। ऐसे में बाहर रहना खतरे से खाली नहीं। अजीब जिद्दी आदमी है सहदेव भी। एक बात हो गई सो हो गई। कोई सगा-संबंधी तो था नहीं। अपने गांव-घर का भी नहीं था। जरा-सा मालिक की बात मान ले तो आगे बढ़ने का रास्ता मिल जाएगा और बात भी क्या माननी है, बस चुप रहना है। आदमी को थोड़ा अवसर और परिस्थिति देखनी चाहिए। वह बहुत बिगड़ गया है मजूमदार के साथ रहकर। वह साला लाल झंडे वाला आदमी है। आज भी सहदेव वहीं होगा।

सहदेव वहां नहीं था। जलती आंखों और दहकते दिमाग के साथ बेमतलब इधर-उधर मारा फिर रहा था। उसने कपिल सिंह के आदमियों को देखा था। माहौल के सारे तनाव का अहसास उसे था, लेकिन डर नहीं लग रहा था। वह चाय और पान की बंद दुकानों से गुजरकर धोड़ा आने के बजाए मुहानी की ओर चला जाता है।

खान के नजदीक पहुंचा तो दो ट्राम-ड्राइवरों ने उसे ललकारा, "कौन है बे?"

वह कोई जवाब नहीं देता। ट्राम-ड्राइवर उसे नजदीक आकर पहचान लेते हैं।

"अरे, यह तो सहदेव है।"

"क्या सहदेव, इधर कैसे आ गए? रात की पारी है क्या?"

वह जवाब नहीं देता। केवल सूनी आंखों से उन्हें देखता है। तभी उनमें से एक ने दूसरे से कहा, "ज्यादा चढ़ गई है।"

दूसरा उससे पूछता है, "क्या घर का रास्ता भूल गए?"

वह फिर भी जवाब नहीं देता। सिर्फ खान के खुले मुंह को देखता है। जमीन का खुला हुआ मुंह। मौत का दहाना। अंदर अंधेरा है...बेपनाह अंधेरा...यह काल का गाल है...इसने न जाने कितने आदमियों को निगल लिया है।

हो सकता है इसी खान के अंदर, किसी अंधेरे कोने में एक आदमी की लावारिस लाश पड़ी हो...शायद अब तक सड़ गई हो। बदबू? हां, बदबू भी हो सकती है...मगर नहीं। रहमत मियां इतना नेक आदमी था कि उसकी लाश से बदबू नहीं निकल सकती। हरगिज नहीं निकल सकती, पर नेकी क्या है...? बुराई क्या है...? रहमत मियां के बाप के माथे का दाग याद आता है। सैकड़ों, हजारों बार की मांगी हुई सलामती की दुआ को सुनने वाला क्या आसमान में कोई नहीं था...कोई नहीं था?

वह भावुक हो उठता है मगर रोता नहीं। आज उसे अपने अंदर की आग को बुझाने की इच्छा नहीं है। इसके जलने और सुलगने में एक अजीब आनंद की अनुभूति हो रही है...आग को और तेज होना चाहिए...और तेज होना चाहिए...।

वह एक कोयले से भरे कोलटब पर हाथ रखे खड़ा है। कोयला सर्द है...बिलकुल ठंडा। उसने पढ़ा था, जमीन के बहुत नीचे आग होती है। कितना नीचे होती है यह आग? हजार

फुट...दो हजार फुट... दस हजार फुट... लोग कहते हैं कि कोयला आग पकड़ ले तो...लेकिन कोयला आग कहां पकड़ता है? यह कोयला भी तो ठंडा है। एकदम बर्फ...इसमें थोड़ी भी उष्णता होती तो पता चलता कि नीचे आग है...।

"घर पहुंचा दें क्या?" एक ट्राम-ड्राइवर पूछता है।

वह कोई जवाब नहीं देता। धीरे-धीरे चलने लगता है धोड़े की तरफ, अपने घर की तरफ।

घर पहुंचकर अपने आप को फर्श पर गिरा देता है। बिस्तर नहीं बिछाता। तह किए हुए बिस्तर को तकिए की तरह सर के नीचे खिसका लेता है। रहमत मियां के घर से चिट्ठी का जवाब नहीं आया। उन लोगों को मालूम भी नहीं होगा कि यहां क्या हो गया है? खतुनिया अब तक चांदी की सिकड़ी के इंतजार में होगी। खान साहब के यहां शादी की धूमधाम शुरू हो गई होगी। खतुनिया रहमत मियां को कोसती होगी...।

नींद नहीं आ रही...आज आएगी भी नहीं। कल का दिन बहुत खास होगा, फैसले का दिन...लेकिन फैसला तो हो चुका है। अब सिर्फ खानापूर्ति होगी। एक सोची-समझी स्कीम के तहत पूर्वनियोजित रिपोर्ट। बाहर अंधेरे में कुत्तों का झुंड भूंकता है, भों... भों...भों...वन-तुलसी और कंटीले की झाड़ियों में गीदड़ रोते हैं, अजीब भयानक ढंग से। यहां इसे कहते हैं, सियार फिन कर रहा है। लोग कहते हैं, जब सियार फिन करता है तो जवान आदमी की मौत होती है...अब और किसकी मौत बाकी है?

कौन मरेगा? मरना कोई नहीं चाहता। इसी डर से तो कोई कुछ बोलता नहीं...सभी लोगों ने अपने होंठ सी लिए हैं...चुप...चुप रहो भाई, जमाना खराब है...।

दूसरे लोग भी करवटें बदल रहे हैं। शायद वे भी नहीं सो सके, सिर्फ आंखें बंद किए पड़े हैं। बाहर भयानक, बेरहम सन्नाटा है। अचानक सन्नाटे को झकझोरती, नहीं, सन्नाटे में दरार डालती एक आवाज सुनाई पड़ती है।

"अरे क्या सब साला सो गया? कोई बोलता क्यों नहीं?"

आवाज की दहाड़ से सारा माहौल झनझना उठता है। लोग सुनते हैं पर बोलता कोई कुछ नहीं। सिर्फ अंधेरे में आंखें खुल जाती हैं सबकी।

"अरे साला क्या सब मर गया? अरे बोलता काहे नहीं? बोलो कि रहमत मियां मर गया है!!"

रहमत मियां का नाम एक धमाके की तरह फटता है। लोगों के दिलों की धड़कनें तेज हो जाती हैं। वह आवाज को पहचान लेता है। यह कालाचंद की आवाज है। सहदेव उठकर बैठ जाता है। सनकू उसे मना करता है, "बाहर मत जाना, वह साला कालाचंद पीकर हल्ला कर रहा है।"

"कल साला लोग गवाही में बोलो, अरे बोलेगा कि नहीं?"

कालाचंद की गरजदार और निर्भीक आवाज शेर की दहाड़ की तरह चारों तरफ गूंज रही है पर कोई नहीं बोलता, कोई जवाब नहीं देता, कोई दरवाजा नहीं खोलता। कोई बाहर नहीं निकलता। सभी अपने-अपने बिस्तर में दुबके पड़े हैं। ये बेचारे आंख और कान होते हुए भी देखने और सुनने से लाचार हैं।

"अरे बोलो न, मुंह में क्या मालिक का लौड़ा गया है?"

कालाचंद हर जगह चिल्लाता फिर रहा है। भट्टे से बाबू क्वार्टर तक...बाबू कवार्टर से गेवाली धोड़ा, भूइयां धोड़ा, बावरी धोड़ा...हर जगह उसकी आवाज गूंज रही है। वह एक जगह से दूसरी जगह जाता है, दूसरी जगह से तीसरी जगह...आवाज कभी नजदीक हो जाती है, कभी दूर चली जाती है। लोगों के दिल धड़क रहे हैं। क्या होगा?

आज कालाचंद की खैर नहीं...

"साला मादर...बहन...तुम लोग साला सब बुजदिल है। साला हिजड़ा है सब! अरे बोलो न हिजड़ा लोग, कल गवाही देगा?"

"कल खान मत जाओ, बोलो कि रहमत मियां खान में मर गया है।"

"उसकी लाश मांगो, बोलो मांगेगा कि नहीं?"

"मांगो..."

अचानक आवाज रुक जाती है जैसे उसी आवाज का गला दबोच लिया गया हो। जैसे बोलने वाले की जुबान खींच ली गई हो। सब समझ जाते हैं कि क्या हुआ। सारे धोड़ों में जागते हुए मुर्दे जान जाते हैं कि क्या हुआ। मगर उठता कोई नहीं...बोलता कोई नहीं...

सहदेव के दिमाग की नस खिंच गई है। गुस्सा फट पड़ने की सीमा तक पहुंच चुका है। वह तेजी से उठता है और दरवाजा खोलकर बाहर निकल जाता है, फुसफुसाकर रोकने वाली आवाजों को अनसुना करके...

बाहर भयंकर अंधेरा है...गहरा सन्नाटा है... पीछा करने के लिए अब कालाचंद की आवाज भी नहीं है। वह आगे बढ़कर पुकारता है, "कालाचंद हो...हो...ओ...!"

उसे अपनी ही आवाज की प्रतिध्वनि सुनाई देती है लेकिन जवाब नहीं मिलता। वह ढलान में पगडंडी पर उतर जाता है और थोड़े फासले पर ऊपर चढ़कर फिर पुकारता है, "कालाचंद हो...हो...ओ...!"

झाड़ियों में सरसराहट होती है। चार-पांच साए झाड़ियों में से बाहर निकल आते हैं।

"मार...मार...साले को...।"

एक साथ चार-पांच लाठियों का वार होता है...फिर और लाठियां...

वह किसी सहारे के लिए अंधेरे में हाथ बढ़ाता है, कुछ पकड़ में नहीं आता। सारी दुनिया नीचे पाताल में गिरती जाती है। कुत्तों का झुंड और जोर-जोर से भूंकने लगता है।

फिर संपूर्ण वातावरण में एक दिल दहला देने वाला सन्नाटा हावी हो जाता है।

सुबह कुछ अधिक ठंडी है।

सारे आफिस में सन्नाटा छाया हुआ है। हर काम अत्यंत सतर्कता से किया जा रहा है। कपिल सिंह और उसके आदमी बाजू चमकाते, आंखें नचाते आफिस के अंदर ऐसे टहल रहे हैं मानो वे ही आफिस के मालिक हों। अंदर इंचार्ज बाबू के रूम में आए इंस्पेक्टरों की खूब आवभगत चल रही है। बाहर एक लंबी बेंच पर वे तोते बैठे हैं जिनको गवाही देनी है। मजूमदार दूर एक कोने में अपनी कुर्सी पर बैठा है। उसके दोनों तरफ कपिल सिंह के दो आदमी तैनात हैं।

आज बहुत सुबह जब अंधेरा ही था तो रानी उसके घर आई थी, रात होने वाले कांड की खबर दी। फिर कुछ लोगों को जमाकर उसने और रानी ने बुरी तरह घायल सहदेव को अस्पताल में भर्ती करवाया। कालाचंद को उन लोगों ने मार-पीटकर कहीं बंद कर दिया था।

गवाही अपने नियत समय पर शुरू हुई। एक-एक करके पुकार पड़ती रही। एक-एक गवाह अंदर जाता रहा। सब कुछ यंत्रवत बिलकुल तयशुदा कार्यक्रम के अनुसार हो रहा था। इंचार्ज बाबू जब किसी काम से बाहर आया तो मजूमदार उठा और उससे अंग्रेजी में कहा, "आई वांट टू टौक टू दी माइनिंग इंस्पेक्टर्स (मैं खान इंस्पेक्टरों से बात करना चाहता हूं।)"

इंचार्ज बाबू हैरत, क्रोध और जोश के मारे चीख पड़ा, "क्या बोला? तुम साला क्या बोला?"

"तुम?" इंचार्ज बाबू आपे से बाहर होकर गरजा, "तुम गवाही देगा? तुम को क्या मालूम है? साला बाहर जाओ आफिस से बाहर जाओ। (गेट आउट)।"

उसकी गर्जना एक सिगनल था। कपिल सिंह और उसके आदमियों ने मजूमदार को घेर लिया।

"चलो, तुम आफिस से बाहर चलो।"

मजूमदार ने कुर्सी को मजबूती से पकड़ा और खड़ा हो गया, "मैं नहीं जाऊंगा।"

"तुम्हारा बाप जाएगा," किसी ने उसका हाथ पकड़कर घसीटा।

"मैं नहीं जाऊंगा। मुझे बोलने दो कि रहमत मियां भागा नहीं, मर गया है।"

जिस हाथ से उसने कुर्सी पकड़ रखी थी उस पर एक भरपूर प्रहार हुआ। कुर्सी छूट गई। कई हाथों ने उसे घसीट लिया।

"बंगाली चोदा! साला। कम्यूनिस्ट! बाहर चलो नहीं तो उठाकर खान में डाल देंगे।"

वे लोग उसे घसीटने लगे लेकिन मजूमदार ने अपना मुंह बंद नहीं किया।

"रहमत मियां का ऐक्सीडेंट हुआ था, खान के अंदर वह...।"

मजबूत हाथों ने उसे घसीट लिया। पैरो का संतुलन बिगड़ा तो वह गिर पड़ा, मगर उन लोगों ने छोड़ा नहीं। घसीटते हुए बाहर ले गए।

मजूमदार बार-बार चीखता रहा, "रहमत मियां की लाश खान के अंदर कहीं होगी। उसे तलाश किया जाए।"

शोर सुनकर दोनों इंस्पेक्टर बाहर निकल आए पर तब तक कपिल सिंह के आदमी मजूमदार को ले जा चुके थे। इंचार्ज बाबू ने मुस्कुरा कर इंस्पेक्टर को देखा, "दिस इज नथिंग, ए मैड डॉग स्टार्टेड बारकिंग सडेनली (यह कुछ नहीं है। एक पागल कुत्ता यकायक भौंकने लगा है।)

आंखों-आंखों में ग्रीन सिगनल चला और दोनों इंस्पेक्टर अंदर चले गए।

चारों तरफ ईथर की गंध फैली हुई है।

दीवार पर लगा बल्ब रंग बदलता है, कभी हरा, कभी पीला और कभी लाल।

फिर अंधेरा...अथाह अंधेरा।

उसी क्षण अंधेरे में दो आंखें चमकती हैं। घनघोर अंधेरे में दो सुलगती हुई, दहकती हुई आखें।

कोई चुपके से कहता है।

"शेर है।"

"शेर?"

धीरे-धीरे रोशनी की लकीरें कुछ और मोटी होती हैं और दूर एक शेर की आकृति दिखाई देती है।

"हां, सचमुच शेर है।"

"भागो...शेर, भागो...भागो।"

वे सब भागने लगते हैं। सारी बस्ती, बस्ती के हजारों लोग...वह उन्हें ललकारता है।

"मगर यह शेर है... हमें मार डालेगा," बहुत सारी आवाजें एक साथ सुनाई देती हैं।

"शर्म करो, शर्म करो...तुम हजारों की संख्या में हो। अगर एक-एक पत्थर भी मारोगे तो शेर मर जाएगा।"

"नहीं, नहीं...," लोग चीखते हैं।

"बेवकूफ मत बनो। आज तक तुम्हारी बस्ती से शेर इसलिए एक-एक, दो-दो आदमी को उठा कर ले जाता रहा क्योंकि तुम में हिम्मत नहीं।"

"चलो, उठाओ हाथ में पत्थर...।" वह हुक्म देता है।

सब लोग अपने हाथों में पत्थर उठा लेते हैं। वह पत्थर लिए सबसे आगे है।

रोशनी कुछ और तेज होती है। दृश्य कुछ और साफ हो जाता है।

शेर अपने पैरों से जमीन को खखोड़ रहा है। हवा में स्याह धूल बिखर रही है।

वह शेर की आंखों में आंखें डाले खड़ा है। अचानक शेर दहाड़ता है। मानो जंग का ऐलान कर रहा हो।

शेर का पेट जमीन से लग गया है। उसके पंजों के नाखून खुल गए हैं।

तब वह देखता है, हैरत से देखता है कि उसके पीछे खड़े हजारों लोग गायब हो चुके हैं और वह अकेला खड़ा है, हाथ में पत्थर लिए। वह हताश नहीं होता...पर जानता है कि एक पत्थर से शेर नहीं मरेगा।

अचानक शेर एक लंबी छलांग लगाता है। पंजे का एक भरपूर प्रहार उसके कंधे पर पड़ता है। सारे शरीर में दर्द की लहरें उठती हैं...अनगिनत चिनगारियां हवा में बिखर जाती हैं...हर चीज खत्म हो जाती है...सिर्फ एक दर्द, तीव्र कचोटते हुए दर्द का अहसास बाकी रहता है।

दर्द... दर्द... बेपनाह.... अथाह दर्द।

नर्स उसे ऐंठता हुआ, छटपटाता हुआ देखती है और घबराकर डॉक्टर के पास दौड़ती है।

डॉक्टर अपने चैंबर में इत्मीनान से टेबुल पर टांगें फैलाए बैठा एक दूसरे डॉक्टर से बातें कर रहा है। नर्स की बात सुनकर झल्ला जाता है।

"तो मैं क्या करूं? उसके साथ जो मोटी औरत है उससे कहो कि मंदिर में भगवान भी बिना भोग लगाए नहीं सुनता। यह तो सरकारी अस्पताल है। जाओ पेथेडीन का एक डोज दे दो।"

नर्स भाग कर जाती है। सुई लगाकर कुछ देर तक सहदेव को देखती है और उसे शांत पाकर दूसरे मरीजों में लग जाती है।

दर्द का अहसास धीरे-धीरे खत्म हो जाता है। अब न वह शेर है, न बस्ती के लोग और न खुद बस्ती। कुछ नहीं...कुछ भी नहीं। लेकिन नींद आंखों पर चढ़ी आ रही है। आंखों को खुला रखना मुश्किल पड़ रहा है। वह नींद से टूटती पलकों को बड़ी मुश्किल से खोलकर देखता है।

सामने स्टैंड पर रबड़ की नली से जुड़ी एक बोतल टंगी है जिससे पानी बूंद-बूंद नली में टपक रहा है।

बूंद, बूंद... कतरा, कतरा

बूंद, बूंद... कतरा, कतरा।

और आग धीरे-धीरे बुझती जा रही है। /294

# दूसरा भाग

टर्नर मौरिसन कंपनी की मोहना कोलियरी में हर जगह सनसनी फैल गई है।

आज अगर अंग्रेजों का राज होता तो पता नहीं क्या हो जाता। वे एक का बदला हजारों से लेते। कितने लोगों पर जिंदगी हराम हो जाती। बेंत की मोटी लाठियों की मार ...बंदूक के कुंदे...क्या पता गोली भी चल जाती। देखा नहीं, क्या किया था जलियांवाला बाग में।

असगर खान ने तो एक अंग्रेज को घोड़े से घसीटकर उतारा था, वे लोग तो पता नहीं कितनों को कब्र में उतार देते। वह तो अच्छा हुआ कि अंग्रेजी राज खत्म हो गया था। न मिलिटरी उनकी थी और न थाना कि इतनी बड़ी बात दबी की दबी रह गई।

स्मॉल साहब को भी कौन कहे! जानता है कि अब वह पहले वाली बात नहीं रहीं। हिंदुस्तान को आजाद हुए ग्यारह साल हो चुके हैं। अंग्रेजों का शासन कब का खत्म हो चुका है। सैकड़ों साल की गुलामी की एक-एक गांठ, एक-एक गिरह खुल चुकी है। वह रौब और दबदबा जिससे सहमकर लोग नंगी गाली, रूल की मार सब सहन कर लेते थे उसका तो अब नामो-निशान भी बाकी नहीं रह गया है। मगर सत्ता का नशा जल्दी नहीं उतरता है। आज भी बहुत-से अंग्रेज हैं जिनकी मानसिकता इस सचाई को स्वीकार नहीं करती कि उनका हिंदुस्तान से सब कुछ खत्म हो चुका है। कल तक जो लोग उन्हें खुश करने के लिए शराब की बोतलें पहुंचाते थे, उनके बरामदे में बैठकर उनके बेडरूम के पंखे की डोरी खींचते थे, जो गाली सुनकर मुस्कराते थे और मार खाकर सर झुका लेते थे, आज वे सीना तानकर चलते हैं। आज वे स्वतंत्र हैं, आजाद हैं, उनके बराबर बल्कि उनसे बेहतर हैं। स्मॉल साहब भी ऐसे ही अंग्रेजों में हैं। कद पांच फुट से कुछ कम ही होगा, शरीर भी दुबला-पतला है मगर अकड़ वह है कि अपने आपको लॉर्ड माउंट बेटन से कम नहीं समझते। बात-बात पर गाली, जब-तब लेबर पर हाथ छोड़ देना, ये सब आज भी उसकी आदत है।

सफेद चेहरे और भूरे बालों के बीच दो छोटी-छोटी आंखें हरे रंग की कांच की गोलियों की तरह दिखाई देती हैं। ये आंखें हमेशा बेचैन रहती हैं। इधर से उधर नाचती रहती हैं और उनमें एक चीज जो हर समय झलकती रहती है वह है नफरत, तमाम हिंदुस्तानियों से नफरत...उसे अंग्रेजी हुकूमत के उस फैसले पर आज भी हैरत है कि उसने हिंदुस्तान से अपना कब्जा क्यों खत्म कर लिया, उसने उन्हें आजादी क्यों दे दी? क्या ये लोग इसके

योग्य थे, ये जाहिल, कुंद जेहन, कामचोर, बेईमान लोग...? वह इस आजादी को दी हुई चीज, दान की हुई चीज मानता है। उसे न तो जलियांवाला बाग की बात मालूम है न नमक आंदोलन की, न असहयोग आंदोलन और न ही 9 अगस्त 1942 की उस इंकलाबी की ललकार जो यहां से इंगलैंड तक बल्कि दुनिया के कोने-कोने तक में सुनी गई थी और जिसने अंग्रेजी शासन की चूलें हिला दी थीं। वह हिंदुस्तान की आजादी को अंग्रेजों की एक गलती मानता है और अंग्रेज शासकों का सारा क्रोध गरीब हिंदुस्तानियों पर निकालना चाहता है।

उस दिन जब यह घटना घटी सुबह से ही तेज गर्मी थी। वैसे भी कोलफील्ड में गर्मी का मौसम काफी पीड़ादायक होता है। पसीने से चिपचिपाते बदन में कोयले के कण चिमट जाते हैं और शरीर में उनकी करकराहट तमाम महसूस होती है। अभी सुबह के आठ ही बजे थे कि पसीना निकलना शुरू हो गया था। मजदूर जल्दी-जल्दी अंडरग्राउंड उतरने के लिए बत्ती और टोपी ले रहे थे कि इस परिदृश्य में एक घुड़सवार प्रकट हुआ। यह स्मॉल साहब था। वह अकेला आदमी जो रोजाना कोलियरी घोड़े पर चढ़कर आता था। दो और अंग्रेज थे कोलियरी में—एक व्हाइट साहब जिसके पास एक हिंदुस्तानी फोर्टीन थी, दूसरा लोकस साहब जो हमेशा जीप इस्तेमाल करता था। मगर स्मॉल साहब की तो शान ही निराली थी। घंटों तक गमबूट पहने, सर पर इंग्लिश हैट जिस पर जगह-जगह कोयले के काले धब्बे लगे होते, हाथ में बेंत की छड़ी जिससे वह घोड़ा हांकने का कम और राह चलते लोगों पर लहराने का काम ज्यादा लिया करता था। आंखों में वह अहंकार है और शरीर में वह अकड़ है मानो वह ईस्ट इंडिया कंपनी के हेडक्वार्टर कालीकट से दिल्ली तक को अपने घोड़े की टापों से रौंदता, तमाम फतह के झंडे लहराता चला आ रहा हो।

तो उस दिन सुबह को वह उसी शान से कोलियरी आफिस आ रहा था कि आफिस के बाहर खुले मैदान में असगर खान ने उसके घोड़े की लगाम थाम ली। स्मॉल साहब क्रोध में सर से पांव तक कांप उठा बल्कि वह थरथराने लगा, ऐसा कि जुबान से एक शब्द भी निकालने में असमर्थ हो गया।

एक हरामजादे हिंदुस्तानी गुंडे की यह मजाल...!

अभी गंदी गालियों का तूफान उसके मुंह से उठने ही वाला था कि असगर खान ने कड़ककर पूछा, "तुमने इदरीस खान को गाली क्यों दी?"

स्मॉल साहब ने गुस्से से होंठ काटे, हरे कांच की गोलियों जैसी आंखों में शोले लहराए मगर उसने अंग्रेजों की खास सहिष्णुता और सहनशीलता को हाथ से जाने नहीं दिया। "तुमसे मतलब?"

"मतलब है।"

"देखो, तुमको जो कहना हो आफिस में आकर कहो।"

"मैं यहीं फैसला करूंगा। वह मेरा भतीजा है।"

"वह साला कामचोर..." (अभी स्मॉल साहब का वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि असगर खान के मजबूत हाथों ने उसका गिरेबान पकड़कर उसे खींच लिया।)

"हरामजादे, मुझे जानते हो? मेरे नाम से अच्छों-अच्छों का पेशाब रुक जाता है।"

आसपास भीड़ सिमट आई जिसमें कोलियरी के मजदूर, आफिस के कुछ स्टाफ, पास के चाय-पान की दुकानों के दुकानदार और उनके ग्राहक शामिल थे। सभी लोग इस अनहोनी घटना पर चकित रह गए।

"अरे बाप रे, असगर खान ने यह क्या कर दिया!!"

यह बात सभी लोग जानते थे कि असगर खान की बहादुरी बेमिसाल है। असगर खान जो पठान दंगल का मुखिया था इतनी हिम्मत रखता था कि अकेले सैकड़ों की भीड़ में घुस पड़े। पता नहीं उसने कितने खून किए थे। कितने लोगों को मौत के घाट उतारा था। उसे मालूम ही नहीं था कि डर और भलाई-बुराई किस चिड़िया का नाम है। उसकी इस बेलगाम दिलेरी की बस एक ही वजह थी कि उसके सर पर इनामुल खान का हाथ था।

इनामुल खान मोहना कोलियरी का बेताज बादशाह था। आसपास के इलाके का सबसे बड़ा ट्रेड यूनियन लीडर। उसने मुंगेर जिले से पठानों का एक दंगल जमा कर रखा था जिसको सारे इलाके में इनामुल खान की "फौज" के नाम से जाना जाता है। उसी पठान दंगल का मुखिया है असगर खान। सारे इलाके में खुले सांड की तरह दनदनाता फिरता है। बहुत-से लोग तो उससे आंख मिलाकर बात करने की भी जुर्रत नहीं कर पाते, और आज तो उसने गजब ही कर दिया था। इतने बड़े अफसर और वह भी अंग्रेज अफसर को घसीटकर उतार लेना... असगर खान की तो मति मारी गई है।

भीड़ आहिस्ता-आहिस्ता पीछे खिसकने लगी जैसे अब कुछ हो जाएगा, गोली चल जाएगी।

बात ही बात में जंगल की आग की तरह यह खबर सारी कोलियरी में फैल गई।

"अरे कुछ सुना? असगर खान ने स्मॉल साहब को घोड़े से घसीटकर उतार लिया।"

"अरे? तो कंपनी का चपरासी नहीं था का हो!"

"अरे असगर खान के सामने किस साले की हिम्मत है खड़ा होने की?"

"मगर इस बार व्हाइट साहब नहीं छोड़ेगा पठान दंगल को।"

"पर चाहे जो कहो, असगर खान है बड़ा मर्द आदमी।"

कानाफूसी चलती रही और इधर स्मॉल साहब असगर खान की पकड़ में थरथर कांपता रहा। चेहरा इतना लाल हो गया था मानो भक से खून फेंक देगा। अगर उसके पास पिस्तौल होता तो वह अब तक कई लोगों को भून चुका होता। मगर मुश्किल यह थी कि हाथ

में जो छड़ी थी उसे भी असगर खान ने छीनकर दूर फेंक दिया था।

तभी असगर खान ने उसका गिरेबान छोड़ दिया, "कल से कोलियरी मत आना, नहीं तो टुकड़े-टुकड़े करके चांक में फेंक दूंगा।"

स्मॉल साहब असगर खान के हाथों की मजबूत पकड़ से छूटकर सीधा व्हाइट साहब के आफिस में घुस गए। चेहरा अब कागज के टुकड़े की तरह सफेद दिखलाई दे रहा था। होंठ कांप रहे थे और सफेद कमीज के कॉलर में पकड़ का निशान साफ नजर आ रहा था।

व्हाइट साहब को खबर मिल चुकी थी। वे स्मॉल साहब की प्रतीक्षा भी कर रहे थे। इस अजीबो-गरीब घटना ने किसी में इतनी हिम्मत नहीं छोड़ी थी कि वह बाहर निकलकर स्मॉल साहब की मदद कर सकता और वह जब छूटकर व्हाइट साहब के आफिस में आ गया तब भी उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे। आखिर स्मॉल साहब ही गुस्से में कांपते हुए बोले, "यह असहनीय है, बिलकुल असहनीय। आई विल शूट दैट बास्टर्ड।"

व्हाइट साहब ने उसे बिठाया। पीछे केबिन खोलकर ब्रांडी की बोतल निकाली और गिलास में उंड़ेलकर उसे बढ़ा दिया। वैसे यह मौसम बियर का था और ठंडा किया हुआ बियर एक कतार में सजा हुआ भी था लेकिन स्मॉल साहब के डर और उसके अपने गुस्से के लिए शायद यह तेज शराब जरूरी थी।

"प्लीज कॉम योरसेल्फ।" (कृपया अपने आप को शांत कीजिए।)

फिर उसने फोन उठाया और इनामुल खान का नंबर डायल किया। इनामुल खान से क्या बातचीत हुई, यह तो मालूम नहीं लेकिन उस समय व्हाइट साहब का चेहरा गुस्से से लाल हो उठा था। वह बार-बार होंठ काटता, मेज पर घूंसे मारता और दांत पीसता अपने क्रोध और बेबसी का मूक प्रदर्शन करता रहा। लगता था, जो बात भी हो रही है वह शायद बिलकुल प्रतिकूल है।

उस समय तक सारे अफसरों, ठेकेदारों और छोटे-बड़े कंपनी के चमचों की भीड़ व्हाइट साहब के आफिस के सामने जमा हो चुकी थी लेकिन आफिस का दरवाजा बंद था और दरवाजे के ऊपर लाल बल्ब जल रहा था।

व्हाइट साहब के आफिस के दरवाजे के ऊपर तीन रंगीन बल्ब लगे हैं—एक हरा, एक पीला और एक लाल। हरा बल्ब इस बात का संकेत है कि आफिस हर आदमी के लिए खुला है अर्थात हर जरूरतमंद बिना किसी रोक-टोक के व्हाइट साहब से सीधे मिल सकता है। इस बल्ब के जलने के इंतजार में एक भीड़ हमेशा व्हाइट साहब के आफिस के सामने लगी रहती है। इसमें अधिकतर ठेकेदार होते हैं। कुछ नौकरी के इच्छुक और कुछ छोटी-मोटी समस्याओं को सुलझाने के लिए कोलियरी के मजदूर। इनको

निपटाते-निपटाते व्हाइट साहब को कई घंटे लग जाते हैं। तब हरी बत्ती बुझ जाती है और पीली रौशन हो जाती है। अब सिर्फ खास-खास आदमी ही आफिस के अंदर जा सकते हैं। लाल बल्ब उस समय जलता है जब अंदर कोई बहुत गोपनीय बातचीत चल रही हो या माइनिंग के इंस्पेक्टरों और ऑफिसरों से कुछ लेन-देन हो रहा हो या फिर व्हाइट साहब आराम चाहते हों और उनके पीछे का केबिन खुला हो।

हर सुबह ठेकेदारों की कम से कम बीच-पचीस आदमियों की भीड़ उन्हें सलाम करने के लिए हाथ बांधकर खड़ी रहती है। इसके बाद नौकरी पाने वाले होते हैं। इन तमाम लोगों की मानो यह ड्यूटी होती है कि वे हर सुबह उनके आफिस के सामने एक पंक्ति में खड़े रहें। किसी का भाग्य सिर्फ दो-चार दिन में ही जाग जाता है और किसी को व्हाइट साहब की बस एक कृपादृष्टि मिलने में हफ्तों-महीनों लग जाते हैं।

"वैल, क्या मांगता?"

"तुमको क्या काम है?"

वह अकसर काम की तलाश में आए नए चेहरों से पूछ लेता है और अकसर उनकी किस्मत खुल जाती।

मजूमदार की नौकरी जब मोहना कोलियरी में पक्की हो गई उसने पत्र लिखकर सहदेव को बुलवा लिया। सहदेव पिछले दो सालों से घर पर ही रह रहा था। उसने जो कुछ झेला था उसके बाद उसकी हिम्मत ही नहीं होती थी कि वह इस काली नगरी में कदम रखे लेकिन मजूमदार ने उसे खत में विश्वास दिलाया था कि यह इंग्लिश फर्म है और इसमें भ्रष्टाचार कम से कम है। किसी तरह की धांधली नहीं है। मजूमदार ने उसे यह नुस्खा भी बता दिया था जिससे नौकरी मिलने में कोई परेशानी न हो।

अब सहदेव प्रतिदिन व्हाइट साहब के आफिस के सामने खड़ा हो जाता,

"सलाम साहब...!"

"सलाम हजूर...!"

हर रोज व्हाइट साहब की हिंदुस्तानी फोर्टीन रुकती। दरवाजा खुलता, खटाखट लोगों का सलाम लेता, किसी-किसी का हालचाल पूछ लेता और किसी-किसी को नसीहत देता अपने आफिस में घुस जाता। लगभग ग्यारह दिन बाद उसने अचानक सहदेव से पूछ लिया, "क्या मांगता?"

"साहब, नौकरी।"

व्हाइट साहब ने उसे सर से पैर तक यूं देखा जैसे कसाई जानवरों के वजन और मोटापे को आंकता है। फिर बोला, "आफिस में आओ।"

आफिस में जाने का मौका तीन घंटे बाद मिला। व्हाइट साहब ने उसे फिर सिर से पांव तक निहारा और पूछा, "तुम ए.बी.सी. का रहने वाला तो नहीं?"

ए.बी.सी. अर्थात बिहार के तीन जिले हैं—आरा, बलिया और छपरा। इन तीन जिलों के लोगों से व्हाइट साहब को बहुत चिढ़ थी। इसलिए मोहना कोलियरी में ज्यादातर दुसाध, भूइयां या मुसलमान थे। उनमें इन तीन जिले के लोग आटे में नमक के बराबर भी नहीं थे। व्हाइट साहब के उस सवाल का जवाब मजूमदार ने पहले ही समझा दिया था। इसलिए उसने फौरन जवाब दिया—

"नो सर! फ्राम गया डिस्ट्रिक्ट।"

व्हाइट साहब ने चौंककर उसे देखा, "तुम इंग्लिश जानता?"

"थोड़ा-थोड़ा, साहब!"

"वेरी गुड, पहले कहीं काम किया?"

"हां साहब, सिरसा कोलियरी में।"

"क्या काम करता था?"

"लोडर था साहब, मलकट्टा।"

"कितना दिन काम किया सिरसा कोलियरी में?"

"कोई दो साल।"

"वहां क्यों छोड़ा? यूनियन बनाया, हड़ताल किया?"

"नहीं साहब, वहां पैसा नहीं मिलता था।"

"ठीक है, काम मिल जाएगा मगर टर्नर मौरिसन कंपनी में फांकी नहीं चलेगा। यहां काम मांगता और डिसिप्लीन...।"

"हां साहब!"

"ठीक है जाओ, लोकस साहब से हमारा नाम लो।"

लोकस साहब चीफ पर्सनल आफीसर हैं। पोस्ट चाहे उनके पास जो भी हो, मगर सिरसा कोलियरी में बस वे ही हैं। सबसे पुराना और अनुभवी आदमी होने की वजह से कोलियरी के चप्पे-चप्पे पर उनके अस्तित्व की छाप मिलती है। इनामुल खान के बाद वे दूसरे आदमी हैं जो व्हाइट साहब के आफिस में उस समय भी जा सकते हैं जब लाल बल्ब जल रहा हो, इसलिए आज भी वे बिना किसी झिझक के अंदर चले गए।

अंदर स्मॉल साहब और व्हाइट साहब दोनों खामोश बैठे थे। दोनों के गिलास अभी तक उनके सामने पड़े थे। लोकस कुर्सी खींचकर बैठ गए, "सर, आप लोगों ने कुछ सोचा?"

"क्या?" व्हाइट साहब ने अपनी आंखें ऊपर उठाईं।

"सर, आज जो कुछ हुआ, ऐसा टर्नर मौरिसन कंपनी के इतिहास में कभी नहीं हुआ।"

"बेशक।"

"फिर आपने क्या सोचा, सर? हम लोगों को इस पर ऐक्शन लेना चाहिए।"

"ऐक्शन? आप क्या समझते हैं कि असगर खान आपका नौकर है?"

"मगर उसके भतीजे इदरीस खान पर कार्यवाई तो हो सकती है।"

"यह भी मुश्किल है। तुम क्यों भूल जाते हो कि असगर खान अकेला नहीं है? उसके पीछे इनामुल खान है और इनामुल खान के पीछे सोशलिस्ट यूनियन है। ऊपर जाना चाहें तो वहां पंडित नेहरू हैं। वे बहुत ही सुलझे हुए दिमाग के आदमी हैं, विदेशियों का, खास तौर पर इंग्लिश लोगों का बहुत ख्याल भी रखते हैं मगर हैं तो सोशलिस्ट मानसिकता के। वे किसी सोशलिस्ट यूनियन के खिलाफ कभी कोई कार्यवाही नहीं करेंगे।"

"मगर हमारे पास अपने आदमी भी तो हैं। फिर भगत जी भी हैं।"

"क्या तुम खून-खराबा करवाना चाहते हो?"

"इसका मतलब है, हम चुप्पी लगा जाएं।"

"इसके सिवा चारा भी क्या है?"

"आपने इनामुल खान को फोन किया था?"

"हां, वह असगर खान के खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं करना चाहता। मैंने तो मामले को रफा-दफा करने की बात भी की थी लेकिन वह कहता है कि वह उसके किसी भी निजी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। हां, अगर यूनियन की कोई बात होती तो वह कुछ कर सकता था।"

"इसका मतलब साफ है कि वह उसे शह दे रहा है।"

व्हाइट साहब ने कहा, "इसमें तो कोई शक नहीं।"

लोकस ने बहुत गंभीरता से व्हाइट साहब को देखा और कहा, "इसका एक मतलब यह भी निकलता है कि वह हम लोगों को बताना चाहता है कि यहां इस कोलियरी में बल्कि पूरे हिंदुस्तान में अब हमारी क्या औकात है।"

चंद लम्हे के लिए गहरी खामोशी छा जाती है। व्हाइट साहब स्मॉल साहब के सामने पड़ी बोतल को अपनी ओर खींचकर एक गिलास पैग बनाकर एक ही सांस में पी जाता है। यह उनका छठा पैग है। लोकस साहब भी एक बड़ा पैग बनाकर पीता है, फिर स्मॉल साहब की आंखों में आंखें डालता है और दांत पीसकर किसी सांप की तरह फुफकारता है।

"कोई बात नहीं, मिस्टर स्मॉल! तुम्हारा बदला मैं लूंगा। मैं असगर खान को खा जाऊंगा, थोड़ा-थोड़ा करके, एक-एक बोटी करके। उसे भी, इनामुल खान को भी और उसकी यूनियन को भी।"

कोई कुछ नहीं बोला। गहरी चिंता से कमरे का वातावरण एकदम बोझिल हो गया था। उस क्षण चपरासी अंदर आकर एक चिट टेबुल पर रख देता है। व्हाइट साहब के इशारे पर लोकस बोतल और गिलास उठाकर केबिन में बंद कर देता है। व्हाइट साहब लाल बत्ती बुझाकर पीली बत्ती जला देता है।

आफिस का दरवाजा जरा-सा खुलता है और जाफरी का चेहरा दिखाई देता है।

"मे वी कम इन, सर?" (क्या हम अंदर आ सकते हैं, सर?)

व्हाइट साहब कोई जवाब नहीं देता। जाफरी अंदर चला जाता है। उसके साथ चार-पांच वरिष्ठ अधिकारी भी अंदर आते हैं।

"सर, असगर खान बहुत आगे बढ़ गया है।"

किसी दूसरे ने कहा, "इनामुल खान तो डंके की चोट पर कहता है कि हमने मोहना कोलियरी में एक शेर छोड़ रखा है।"

"शेर...?" लोकस गुस्से से दांत पीसता है।

"सर, हम लोगों को ऐसे चुप नहीं बैठे रहना चाहिए। हमारे पास भी पहलवान हैं। भगत जी हैं। उनके पास दुसाध दंगल है।"

व्हाइट साहब ने सर उठाकर सबको देखा, "मैं कोलियरी के डिसीप्लीन और शांति को बिगाड़ना नहीं चाहता। उससे उत्पादन पर असर पड़ेगा।"

"सर, अगर आप कहें तो सुलह की बातचीत भी की जा सकती है। पठान दंगल के सलाहकार ईसार खान की बात वे कभी नहीं उठाते।"

इतनी देर से बिलकुल खामोश बैठे स्मॉल साहब ने चौंक कर अपनी हरी आंखें ऊपर उठाईं और सर ऊंचा करके भारी आवाज में कहा, "नहीं, आत्मसम्मान के मोल पर यह सौदा नहीं किया जाएगा।"

"सर, आत्मसम्मान को ठेस लगने का सवाल ही पैदा नहीं होता, समझौदा मर्यादा की एक सीमा में होगा।"

"नहीं मिस्टर नाथ, अब कोई समझौता नहीं होगा। मैंने फैसला कर लिया है। मैं रिजाइन करूंगा।"

"क्या?" सब सन्नाटे में आ गए। बात इतनी आगे चली जाएगी, किसी ने इसकी कल्पना भी नहीं की थी।

त्रिलोक ने कहा, "साहब, आप इतनी जल्दी कोई फैसला न करें। दो-चार दिन में सारा मामला ठंडा पड़ जाएगा। भले आप दो-चार दिन के लिए छुट्टी ले लें।"

"जहां इज्जत नहीं हो वहां काम करने का कोई मतलब नहीं होता, मिस्टर त्रिलोक! हर आदमी का अपना मान-सम्मान होता है। प्रेस्टीज गंवाकर रोटी हासिल करने से अच्छा है, आदमी भीख मांगने का धंधा कर ले।"

सारे आफिस में सन्नाटा छा गया, एकदम पिन ड्राप साइलेंस। इसलिए जब स्मॉल साहब ने व्हाइट साहब से कागज लिया तो उसकी आवाज और फिर कागज पर कलम घसीटे जाने की आवाज साफ सुनाई दे रही थी। उसने अपना इस्तीफा व्हाइट साहब को बढ़ा दिया।

"सेंड इट टू दी हेड आफिस।" (इसे प्रधान कार्यालय को भेज दो।)

वे पूरी ठसक से उठे और खड़े हो गए।

"अब मैं आजाद हूं।"

उन्होंने पहले व्हाइट साहब से हाथ मिलाया, फिर लोकस और जाफरी से। बाकी लोगों को शुभकामनाएं दीं और जैसे ही जाने के लिए मुड़ा व्हाइट साहब ने धीरे से कहा, "मेरी गाड़ी ले जाओ। पैदल जाना ठीक नहीं होगा।"

"नहीं, मैं अपने घोड़े पर जाऊंगा।"

वे बाहर आए। घोड़ा अपने नियत स्थान पर खड़ा था। स्मॉल साहब ने उसे बांधा नहीं था। स्मॉल साहब ने प्यार से घोड़े का गाल थपथपाया, घोड़ा भी ऐसे हिनहिनाया मानो उसे सांत्वना दे रहा हो।

लोगों की भीड़ अब तक जमा थी। दो-दो, चार-चार की टोलियों में बंटे सैकड़ों लोग चुपचाप अवाक और बिलकुल स्तब्ध खड़े थे। स्मॉल साहब ने चारों ओर एक विहंगम दृष्टि डाली, जैसे वह सैकड़ों आंखों में अपने अपमान की कहानी पढ़ना चाह रहे हों। उन्होंने रकाब में अपने पैर फंसाए और उचककर घोड़े पर बैठ गए। नफरत से जमीन पर थूका और शायद जीवन में पहली बार घोड़े की जांघों के बीच के नाजुक हिस्से पर खींच पूरी शक्ति से चाबुक मारी। घोड़ा इस अप्रत्याशित चोट के लिए बिलकुल तैयार नहीं था। दर्द से बिलबिला उठा। अगला पांव जमीन पर पटका और हवा हो गया।

उसकी टापों से उड़ी स्याह धूल देर तक हवा में धीरे-धीरे बिखरती रही।

स्मॉल साहब के जाने के बाद क्लर्कों और टाइपिस्टों के आफिस हाल में सन्नाटा-सा छा गया। आम तौर पर आफिस में ये जूनियर लोग एक-दूसरे से लड़ते-झगड़ते हैं। गाली-गलौज करते हैं। शिकायतें पहुंचाई जाती हैं। चुगली की जाती हैं। हर रोज यही होता है। लेकिन किसी को निकाल बाहर करने की, किसी की रोजी-रोटी छीन लेने की किसी की नीयत नहीं होती। जब तक असगर खान और स्मॉल साहब में झगड़े की बात थी, ज्यादातर लोग खुश थे। स्मॉल साहब की हरी आंखों और छोटे कद को लेकर हंसी-मजाक भी चल रहा था। व्यंग्य और कटाक्ष भी उछाले जा रहे थे, लेकिन जब यह मालूम हुआ कि स्मॉल साहब ने इस्तीफा दे दिया है तो सब लोगों को अफसोस हुआ। थोड़ी-देर कानाफूसी चलती रही, फिर एकदम सन्नाटा छा गया।

स्मॉल साहब के जाने से केवल एक आदमी खुश था और वह था घोषाल बाबू। यह साहब कैश डिपार्टमेंट के बाबू हैं। एक पैर से लंगड़े हैं। खद्दर पहनते हैं। अंग्रेजों के कट्टर दुश्मन हैं। वे एक भी गोरी चमड़ी, हिंदुस्तान तो क्या पूरी दुनिया में नहीं देखना चाहते।

अपने आपको फ्रीडमफाइटर कहते हैं और हर आदमी को अपनी टांग टूट जाने का माजरा सुनाते हैं। अंग्रेजों के सामने डटे रहने, उनसे जूझने और गोलियों की बाढ़ में उन पर पथराव करने और फिर अपनी गिरफ्तारी और पिटाई की वह कहानी सुनाते हैं कि आदमी दांतों तले उंगलियां दबा लेता है। हालांकि बस इतनी-सी बात है कि 1942 के आंदोलन में पोस्ट आफिस में आग लगाई जा रही थी। लिफाफे और पोस्टकार्ड की गड्डियां उछाली जा रही थीं। उसी को देखकर ये भी चले गए। लिफाफे की पांच-छह गड्डियां लूटकर या चुनकर कुर्ते के जेबों में भर लीं। इधर क्रांतिकारियों ने पोस्ट आफिस में आग लगाई, उधर मिलिटरी वाले आ गए। लोग सर पर पैर रखकर भाग खड़े हुए। ये भी भाग निकले। भाग निकलने में किसी से कम नहीं थे। बस किस्मत खराब थी, इसलिए अपनी ही धोती में अपना ही चप्पल ऐसा उलझा कि धड़ाम से जमीन पर गिर पड़े। फिर उठना नसीब नहीं हुआ। बंदूक के कुंदे की मार से पैर की हड्डी टूट गई। अगर संक्षेप में कहा जाए तो पांव भी टूटा और पकड़े भी गए। जेब से लिफाफों की पांच-छह गड्डियां बरामद हुईं जिसके आधार पर उन्हें छह महीने का कारावास हुआ।

सजा काटकर आए तो अंग्रेजों की ही मोहना कोलियरी में चुपके से चाकरी कर ली क्योंकि अब उन पर कलंक का टीका लग गया था, वे दागी हो गए थे। इसलिए सरकारी नौकरी तो मिली नहीं। तब लोगों को बताते थे कि उनका पैर सड़क दुर्घटना में टूट गया है पर जैसे ही हिंदुस्तान आजाद हुआ, उन्होंने फौरन चोला बदल लिया। मलमल का कुर्ता और धोती उतार फेंकी। खद्दरधारी हो गए।

वैसे उससे कोई फायदा नहीं हुआ। कांग्रेस की लिस्ट में कहीं उनका नाम भी नहीं था, इसलिए स्वतंत्रता सेनानियों को मिलनेवाली रियायत से भी वंचित रह गए। अब यह हाल है कि कांग्रेसियों को जी भरकर गाली देते हैं, पर लिबास खद्दर का पहनते हैं। इधर अंग्रेजों के प्रति भी बुरी भावना रखते हैं लेकिन नौकरी उन्हीं की करते हैं। यही कारण है कि जब उन्हें खबर मिली कि स्मॉल साहब ने इस्तीफा दे दिया है और हमेशा के लिए चले गए हैं तो वे बहुत खुश हुए।

"बाकी दो-तीन गोरी चमड़ी वालों को भी खदेड़ दिया जाता तो कितना अच्छा होता!"

दो-तीन बार जब घोषाल बाबू ने यही बात कही तो एक बूढ़े बंगाली ड्राफ्ट्समैन ने चिढ़कर कहा, "और यहां खान संभालने को क्या तुम्हारा बाप आता बाकूड़ा से?"

बाप का नाम सुनकर घोषाल बाबू बिगड़ गए।

"देखो, बाप-दादा किया तो बहुत बुरा हो जाएगा।"

"क्या बुरा हो जाएगा?"

"तुम्हारा नक्शा बिगाड़ दूंगा।"

"नक्शा...!"

ड्राफ्ट्समैन को नक्शे की बात बुरी लगी। वह तिलमिलाकर अपनी कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। कुर्ते का आस्तीन चढ़ाकर बांग्ला में ललकारने लगा।

"आ...आ...आए तो साला...तोमार...गुशटी...।"

घोषाल बाबू भी खड़ा हो गया, "ऐ खानदान का नाम नहीं लेना, साला दलाल..."

"क्या बोला, दलाल...?"

शोर बढ़ता देखकर हेड क्लर्क पाठक ने उन्हें डांटा, "तुम लोग चुप रहोगे या नहीं, यह आफिस है कि मछली बाजार...?"

इकबाल बाबू ने अपनी राय प्रकट की, "जहां दो बंगाली जमा हो जाएं वहां बक-बक होनी ही है। चीन का हिकमत और बंगाल की हुज्जत दोनों मशहूर चीजें हैं। मतलब यह कि बुद्धिमत्ता में चीन और झगड़ा करने में बंगाल का मुकाबला कोई नहीं कर सकता।"

"देखिए, आज मैनेजमेंट के साथ इतनी बड़ी बात हो गई कि ऐसा कभी नहीं हुआ था और आप लोग झगड़ा करने बैठ गए हैं।"

घोषाल बाबू ने कहा, "इस साले बूढ़े ने मेरे पूरे खानदान को गाली दिया।"

"अरे, तुमने मुझे दलाल नहीं कहा? तुम तो साला जिस थाली में खाता है उसी में छेद करता है।"

हेड क्लर्क ने फिर उन्हें डांटा, "तुम लोग चुप रहोगे कि नहीं? हम लोगों को चाहिए कि हम लोग सोचें कि हमें क्या करना चाहिए?"

पिट नंबर सात का ओवरमैन जो नीचे से स्मॉल साहब के इस्तीफे की बात सुनकर ऊपर आया था ताकि सचाई मालूम हो जाए और इस सिलसिले में आफिस का रवैया भी मालूम किया जा सके, उसने आफिस में घुसते-घुसते हेड क्लर्क का अंतिम वाक्य सुन लिया। उसने फौरन कहा, "करना तो जरूर कुछ न कुछ चाहिए। यह कोई मामूली बात नहीं है।"

"पर क्या?"

"हम लोगों की व्हाइट साहब से मिलकर कहना चाहिए कि वे स्मॉल साहब को मना लें और अगर उस पर भी न मानें तो उनके सम्मान में एक फेयरवेल पार्टी अर्थात विदाई समारोह का आयोजन किया जाए।"

राखाल बाबू ने कहा, "वाह, क्या फेयरवेल पार्टी भी नहीं होगी? क्या असगर खान का राज चलता है?"

"राज असगर खान का नहीं, इनामुल खान का चलता है।"

"वह लेबर में चलता होगा, आफिस में नहीं।"

दिन तप गया था। गरम लू के झोंके चलने लगे थे। इस तपते हुए दिन में सारा आफिस स्टाफ व्हाइट साहब से मिला और अपनी इच्छा प्रकट की। व्हाइट साहब ने इंकार नहीं

किया, बल्कि वचन दिया कि वे स्मॉल साहब का इस्तीफा वापस लेने की हर संभव कोशिश करेंगे। रह गई फेयरवेल पार्टी की बात तो यह बाद की बात है।

इन सारे आफिस स्टाफ में बस एक आदमी नहीं था।

घोषाल बाबू।

लोकस का कुत्ता लोकस से भी ज्यादा हरामी है। जब उसे देखता है भूंकने लगता है मानो वह कोई चोर-डाकू हो। एक बार तो उस पर चढ़ ही बैठता अगर मिसेज लोकस अचानक बीच में न आतीं।

यह बात इनामुल खान के अलावा कोई नहीं जानता कि सिर्फ लोकस का कुत्ता ही नहीं बल्कि पता नहीं क्यों हर कुत्ता उसे देखकर एक बार जरूर भूंकता है। उसमें कुछ ऐसी बात है, कोई ऐसी गंध जो इन कुत्तों को पसंद नहीं। यह बहुत पहले की बात है। उसकी ससुराल में भी एक कुत्ता था। वह जब ससुराल जाता है वह कुत्ता जोर-जोर से भूंकना शुरू कर देता है। उसकी साली कहती, "भाई जान, आप में जरूर कुछ खास बात है वरना यह कुत्ता तो इतना सीधा है कि चोर-उच्चकों पर भी नहीं भूंकता।" वह हंसकर कहता, "कुछ कुत्ते सिर्फ शरीफ आदमियों पर भूंकते हैं।"

आज भी जब इनामुल खान की गाड़ी लोकस के बंगले के अंदर रुकी और वह जैसे ही गाड़ी से उतरा, लोकस के अलशेशियन ने ही उसका स्वागत किया। वह हमेशा की तरह जंजीर से बंधा था इसलिए उसे कोई नुकसान तो नहीं पहुंचा, लेकिन उसका भूंकना सुनकर लोकस जरूर बाहर निकल आया।

"हैलो मिस्टर खान!"

"हैलो...!"

उसने बरामदे की तीन सीढ़ियां तय कीं और लोकस से हाथ मिलाया। लोकस का हाथ ठंडा था।

"मैं समझता था, आप नहीं आएंगे। शायद आप हम लोगों से नाराज हैं।"

इनामुल खान ने उसके चेहरे पर एक भरपूर नजर डाली। उसका चेहरा भी उसके हाथ की तरह ठंडा और संवेदनशील था। उसने यह भी महसूस किया कि लोकस के इस सीधे सादे वाक्य में कहीं चुभने वाली बात थी। उसने लोकस का जवाब देने के बजाए पूछा, "मैं व्हाइट साहब के यहां से होकर आ रहा हूं। मालूम हुआ कि वे आप ही के यहां हैं?"

"हां, वे अंदर कमरे में हैं और मिस्टर स्मॉल भी हैं।"

"गुड लक! यह बड़ी अच्छी बात है कि सब लोग एक ही जगह मिल गए।"

वह लोकस के साथ कमरे में घुसा। अंदर लगा, जैसे दौर चल रहा है। क्योंकि तिपाई पर बोतल और जग दोनों पड़े थे। उसने व्हाइट साहब से हाथ मिलाया और स्मॉल साहब का हाथ अपने हाथ में लेकर बोला, "आई एम वेरी सॉरी, मिस्टर स्मॉल! आज जो कुछ भी हुआ उसका मुझे बेहद अफसोस है।"

स्मॉल साहब ने कोई जवाब नहीं दिया सिर्फ हरे कांच की गोलियों जैसी आंखों को पूरा खोलकर देखा मानो कह रहा हो, 'साले मैं तुम्हारा सारा कमीनापन जानता हूं।'

लोकस बोला, "आज जो कुछ हुआ, मिस्टर खान, वह मोहना कोलियरी के इतिहास में कभी नहीं हुआ।"

"देखिए मिस्टर लोकस, अगर इस मामले को हल्के से लिया जाए तो यह बहुत महत्वपूर्ण बात भी नहीं है। ऐसा नहीं है कि इस तरह की बात कोलफील्ड में नहीं होती है। आपने सुना होगा कि राजापुर कोलियरी में लोडरों ने मालिक को इतना मारा कि उसे अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। यहां तो ऐसी बात भी नहीं हुई। किसी ने हाथ भी नहीं छोड़ा था।"

"हाथ छोड़ने से आपका क्या मतलब है मि. खान?"

"मेरा मतलब है, कोई मारपीट तो नहीं हुई।"

"नहीं, मारपीट नहीं हुई। लेकिन क्या बेइज्जती भी नहीं हुई सारे आदमियों के सामने?"

"आई एम वेरी सॉरी, मिस्टर लोकस!"

"थैंक यू, मि. खान!"

इनामुल खान ने महसूस किया कि सारी बातचीत को एक जगह पहुंचाकर खत्म कर दिया गया जबकि वह नहीं चाहता था कि बात को इस तनावपूर्ण माहौल में खत्म कर दिया जाए, इसलिए उसने कहा, "मि. व्हाइट, इस सारे मामले में सबसे ज्यादा दुख की बात स्मॉल साहब का इस्तीफा है। गुस्से में उन्होंने बहुत बड़ा कदम उठा लिया है। अगर मुझे मालूम होता या अंदाजा भी होता तो मैं असगर खान को मजबूर करता कि वह मि. स्मॉल से माफी मांग ले।"

"मगर आपने ऐसा कहां कहा, मि. खान? मैंने तो आपको फोन भी किया था। सुलह-सफाई का प्रस्ताव भी रखा था, पर आप तो साफ मुकर गए।"

"मुझे इसका बेहद अफसोस है, मि. व्हाइट! मुझे असल में स्मॉल साहब के इतने बड़े फैसले की उम्मीद नहीं थी। मैंने जब दोपहर में सुना तो दंग रह गया और इसीलिए मैं आया भी हूं।"

फिर उसने स्मॉल साहब की ओर मुड़कर कहा, "सचमुच मुझे बेहद अफसोस है, मि. स्मॉल! मैं आपसे विनती करता हूं कि आप अपना इस्तीफा वापस ले लें।"

"नहीं मि. खान, शुक्रिया।"

बातचीत से इनामुल खान को अंदाजा हो गया था कि ये लोग बुरी तरह नाराज हैं,

इसलिए उसने अपने आपको थोड़ा और नरम किया, "भाई, अगर आप कहें तो मैं असगर खान से माफी मंगवा दूं या अगर आप चाहें तो असगर खान की तरफ से मैं खुद माफी मांगने को तैयार हूं।"

स्मॉल साहब जो इतनी देर से चुप बैठा था अभिमान से गरदन उठाकर बोला, "नहीं मि. खान, अब यह मुमकिन नहीं है। मैंने जो फैसला कर लिया वह कर लिया। अब मेरे लिए यह मुमकिन नहीं कि मैं अपनी बात से पलट जाऊं। मेरी तरफ से आप चिंता न करें क्योंकि इंग्लैंड के पास न अभी दौलत की कमी है और न रोजगार की।"

चिंता न उसे स्मॉल साहब के भविष्य की है और न ही उसके हिंदुस्तान से चले जाने की। फिक्र बस इतनी है कि यूनियन और मैनेजमेंट के बीच एक खाई बन गई जिसको न होना चाहिए था। क्योंकि अनुभव बतलाता है कि खौलते हुए दूध में अगर बूंद भर नींबू भी पड़ जाए तो दूध देर-सवेर फट ही जाएगा। फिर भी उसने स्मॉल साहब की आखिरी वाक्य का कटाक्ष पूरी तरह से महसूस किया और वह ऐसा आदमी नहीं था कि किसी व्यंग्य को अपने सर पर से गुजर जाने दे इसलिए वह हंसकर बोला, "यह तो मुझे मालूम है मि. स्मॉल, कि इंग्लैंड के पास न दौलत की कमी है और न रोजगार की, क्योंकि पिछले सौ सालों में दुनिया के विभिन्न देशों से जो दौलत लूटकर जहाजों में इंग्लैंड पहुचाई गई वह इतनी जल्दी कैसे खत्म हो सकती है? मगर फिर भी आप इतनी दूर हिंदुस्तान की इस काली नगरी में स्याह धूल और तेज गर्मी में क्यों मौजूद हैं? यह बात मेरी समझ में नहीं आती, बिलकुल नहीं आती।"

जवाब स्मॉल साहब के बजाए लोकस ने दिया और हंसकर ही दिया, "यह बात आपकी समझ में आ भी नहीं सकती मि. खान क्योंकि आप लोग एक बंद दायरे में जीते हैं। हिंदुस्तान का यह एक छोटा-सा इलाका, बस यही आपकी दुनिया है। आप इससे ऊपर आंख उठाकर नहीं देख सकते जबकि हम लोगों की नजर ग्लोब पर होती है। हम अंतर्राष्ट्रीय व्यापार करते हैं। टर्नर मौरीसन कंपनी इस छोटे-सी कोलियरी के दम पर जिंदा नहीं है। उसकी इंटरनेशनल शिपिंग कंपनी है। सैकड़ों जहाज दुनिया भर के समुंदरों में तैरते रहते हैं। अरब देशों में तेल के कुएं हैं। जावा और सुमात्रा में रबड़ की फैक्ट्रियां हैं। यह कोलियरी तो टर्नर मौरीसन कंपनी की दौलत का एक बहुत ही मामूली-सा हिस्सा है।"

"हम अपने सीमित संसाधनों में जीना ज्यादा पसंद करते हैं, मि. लोकस! अलग-अलग देशों से अवैध ढंग से हासिल की हुई दौलत हमें नहीं चाहिए। जो हमारे पास है हम उसी में खुश हैं। मगर जो हमारे पास है वह भी हमें नहीं मिलता और बदले में गाली दी जाती है, इसलिए क्रोध भी आग की तरह फट पड़ने को चलने लगता है।"

वातावरण एक बार फिर तीखे व्यंग्य-वाणों से दूषित हो गया था। इससे पहले कि लोकस या स्मॉल कोई जवाब दे व्हाइट साहब ने मौके की नजाकत को भांप लिया। मुस्करा

कर कहा, "हैंग इट मि. खान, इस तरह की बातें तो होती रहती हैं। स्मॉल साहब थोड़े नाजुक दिल के आदमी हैं। किसी भी बात का फौरन असर ले लेते हैं। हम लोग तो एक हजार एक गाली रोज सुनते हैं। यह दूसरी बात है कि मुंह पर नहीं, पीठ पीछे सुनते हैं।"

फिर वे हंस कर बोले, "आप भी तो अपने भाषणों में मैनेजमेंट को कम गालियां नहीं देते, मि. खान?"

इनामुल खान ने दिल ही दिल में एक भद्दी-सी गाली दी, मगर चेहरे पर वही बनावटी हंसी ले आया जिसे वह और उसके जैसे बहुत-से प्रतिभावान लोग मास्क की तरह इस्तेमाल करते हैं।

"मैं जो गाली देता हूं मि. व्हाइट, वह आप लोगों को नाराज करने के लिए नहीं बल्कि मजदूरों को खुश करने के लिए देता हूं। आप तो जानते हैं कि ट्रेड यूनियन चलाने के लिए सैकड़ों बहुरूप भरने पड़ते हैं।"

"तो मि. खान, यूं समझ लीजिए कि कोलियरी चलाने के लिए भी हजारों बहुरूप भरने पड़ते हैं। हजारों लोगों से काम लेने के लिए, वह भी जाहिल, गंवार और एक से एक छंटे हुए बदमाशों से काम लेने के लिए बहुत-से हथकंडे अपनाने पड़ते हैं। जिसकी एक मामूली चीज गाली है।"

इनामुल खान ने हंसकर कहा, "हम दोनों असल में गलत जगह पर खड़े हैं, मि. व्हाइट! न स्मॉल साहब अपनी गाली के लिए सही हैं और न ही असगर खान ने जो किया वह उचित था।"

व्हाइट साहब ने मुस्कराकर कहा, "गलती किसकी है, मि. खान? मैं समझता हूं, आपकी। आपने असगर खान को बहुत आगे बढ़ा दिया है। मुनासिब यही है कि आदमी जिस घोड़े पर सवारी कर रहा हो उसे जांघों के बीच दाबकर रखे वरना...।"

"आपने फिर गलत समझा, मि. व्हाइट! असगर खान मेरा घोड़ा नहीं, मेरा शेर है। मैंने उसे अपने घर की और यूनियन की रखवाली के लिए रख छोड़ा है।"

किसी ने कुछ नहीं कहा। सारी बातचीत फिर से तनावपूर्ण मोड़ पर पहुंच गई, इसलिए बात समाप्त करने के लिए व्हाइट साहब ने शराब निकाली।

"जो कुछ हो चुका है, उसे भूल जाने के लिए और जो कुछ आने वाला है उसकी तैयारी के लिए शराब बेहतरीन चीज है।"

"बेशक, मि. व्हाइट!"

चारों खामोशी से पीते रहे। फिर धीरे-धीरे बातचीत शुरू हो गई। बहुत सारे विषयों पर बातचीत चलती रही जैसे राजनीति, चीन के साथ लड़ाई में होने वाली क्षति, मैकमोहन लाइन इत्यादि। फिर स्मॉल साहब की बात नहीं निकली, यद्यपि दिमाग में वह खट्टी बूंद की कड़वाहट मौजूद थी जो फ्रांसीसी शराब के नशे को भी धीरे-धीरे फाड़ रही थी।

रात के लगभग आठ बजे जब इनामुल खान जाने लगा तो व्हाइट साहब ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "मैं आपको एक दोस्ताना सहाल देना चाहता हूं मि. खान, और वह यह कि घर की रखवाली शेर के जिम्मे करना बुद्धिमानी नहीं है। इसके लिए कुत्ता ही सही होता है।"

बात खत्म होते होते जैसे ही वह बाहर आया, उसे देखकर लोकस का कुत्ता जोर-जोर से भूंकने लगा। सारे लोगों का कहकहा फूट पड़ा। सिर्फ लोकस चुप रहा। उसकी आंखें ...अगर बरामदे में अंधेरा होता तो किसी खूंखार दरिंदे की तरह चमक रही होतीं।

यह खबर दिन भर मोहना कोलियरी के ऑफिस, कोयला डिपो, खानों, बाजारों और धोड़ों में घूमती रही। तरह-तरह की अटकलों में और भी निखरती और संवरती रही, दूसरे दिन सारे कोलफील्ड में फैल गई। असगर खान का नाम बीच से गायब हो गया। इस घटना की पूरी जिम्मेदारी इनामुल खान और उसकी यूनियन पर जा पड़ी। एक तरह से यह इनामुल खान के लिए अच्छा भी हुआ, क्योंकि इससे चारों तरफ उसकी धाक जम गई थी। इनामुल खान की ताकत का अंदाजा सबको था, मगर यह बात कोई नहीं जानता था कि वह इतना ताकतवर है कि ए.क. सी.एम.ई. की धमकी में कोलियरी से इस्तीफा देने पर मजबूर कर दे।

दूसरी तरफ, दूसरी पार्टियों में इस खबर से काफी हलचल थी। खास तौर पर आई.एन.टी.यू.सी. वालों के यहां तो और अधिक हलचल थी। वे लोग एक लंबे समय से इस कोशिश में थे कि किसी तरह मोहना कोलियरी में अपने पांव जमाएं। इस सिलसिले में अंदर ही अंदर कोशिश भी हो रही थी। चुपचाप सावधानी से मेंबर भी बनाए जा रहे थे। अब तक लगभग एक सौ मेंबर बन चुके थे लेकिन इसकी खबर न इनामुल खान की यूनियन को थी न ही मैनेजमेंट को। यह सावधानी इसलिए बरती जा रही थी कि इनामुल खान की यूनियन को मैनेजमेंट ने मान्यता दे रखी थी, इसलिए खुल्लम-खुल्ला कुछ भी कर पाना संभव नहीं था।

किसी यूनियन को किसी कोलियरी में पांव जमाने के लिए मैनेजमेंट का सहारा मिलना बहुत जरूरी है, चाहे यह सहारा खुफिया तौर पर ही क्यों न हो। अतः यूनियन वाले ऐसे मौकों की तलाश में रहते हैं। जब किसी स्वीकृत या एडाप्टेड यूनियन और मैनेजमेंट के बीच कोई दरार पड़ जाए तो छोटी-सी चिनगारी को फूंककर दहकती आग में बदल देने के फन से सभी परिचित हैं। यह आई.एन.टी.यू.सी. वालों के लिए एक सुनहरा मौका था, इसलिए उनके पांच आदमियों का प्रतिनिधि-मंडल लाला दीप नारायण की अगुवाई में लोकस साहब के बंगले पर अपने दुख और क्रोध का प्रदर्शन करने पहुंचा। ये पांचों उसी मोहना

कोलियरी में काम करते थे। लोकस साहब भी इन लोगों से अच्छी तरह परिचित थे। मौका भी बढ़िया था, क्योंकि कुछ देर पहले इनामुल खान उठकर गया था। उससे जो गरमा-गरम बातचीत हुई थी उसकी वजह से लोहा अभी गरम था। (लोकस साहब ने उन्हें देखकर आश्चर्य प्रकट किया।)

"सर, हम लोग आई.एन.टी.यू.सी के आदमी हैं।"

"तुम लोग तो हमारी कोलियरी में काम करते हो, हमको मालूम नहीं था।"

"हां साहब, यहां खुल्लम-खुल्ला तो कोई काम नहीं किया जा सकता। यहां तो गुंडा राज है। इनामुल खान के आदमी हर जगह सूंघते फिरते हैं। उन्हें गंध मिल जाए तो समझिए खैर नहीं। अब इसी को देखिए न हजूर कि जिसकी रोटी पर जी रहे हैं उसी को काटने दौड़ते हैं।"

लोकस के दिमाग में आज सारे दिन के अपमान की चोट का अहसास फिर जाग उठा। तमाम लोगों के जाने के बाद क्रोध जो थोड़ी देर के लिए सर्द हो गया था फिर दहकने लगा। उसने उन लोगों को अंदर कमरे में बुला लिया।

"सर, हम लोगों को बहुत अफसोस है कि आज इनामुल खान ने वह काम किया है जो कोई भी शरीफ आदमी कभी नहीं कर सकता। बस एक जरा-सी गाली के लिए भेज दिया अपने रंगदार को। साहब, इतना बड़ा ऑफिसर जब गाली देता है तो वह मालिक बनकर नहीं बल्कि बाप बनकर देता है और बाप की गाली कौन नहीं सुनता?"

"सब पूछिए तो यह एक बहाना भर था। उसका असली मकसद मैनेजमेंट को अपमानित करना था। इसे यह बाताना था कि तुम हमारे सामने कुछ नहीं हो।"

"वेल, हम चाहता तो बहुत कुछ कर सकता था। कोलियरी में हमारे पास भी पहलवान हैं। उसके पास अगर पठान दंगल है तो हमारे पास भी दुसाध दंगल हैं, लेकिन इससे बात बहुत बढ़ जाती। हम लोगों ने तो सिर्फ कोलियरी की शांति और अनुशासन का ख्याल किया। इससे एक बात और होती कि यह झगड़ा दंगे में बदल जाता, हिंदू-मुसलमान दंगे में। हमारा सब वर्कर बदमाश तो नहीं है। हमारा वर्कर तो गुंडा नहीं है। इसमें हिंदू भी है और मुसलमान भी।"

"वर्कर तो साहब सब मैनेजमेंट के साथ है। इस बात का सबको बुरा लगा है। जैसे स्मॉल साहब के इस्तीफे की बात का पता चला तो तमाम मजदूरों में खलबली मच गई। सभी खुल्लम-खुल्ला असगर खान, इनामुल खान और उसकी यूनियन को गाली बक रहे हैं।"

"मुझे पता है कि लेबर एकदम ईमानदार है।"

"लेबर तो साहब इनामुल खान की यूनियन से भी परेशान है, मगर बेचारा क्या करे? कोई मन से चंदा थोड़े ही देता है, साहब!"

"अब उसका टाइम पूरा हो गया है। मैं तुम लोगों को एक सलाह देता हूं। तुम लोग अपनी ऐक्टिविटी थोड़ी तेज करो। ज्यादा मेंबर बनाओ। मैनेजमेंट तुम्हारी मदद करेगा।"

"साहब, हम लोगों को ग्रीन सिगनल मिलना चाहिए। हम लोग इस यूनियन को उखाड़ कर फेंक देंगे।"

यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात थी कि मैनेजमेंट खुद उन्हें यूनियन बनाने की दावत दे रहा था। लालाजी का चेहरा इस अप्रत्याशित सफलता से दमकने लगा। इधर लोकस की आंखें गहरी चिंता में डूबी थीं। थोड़ी देर तक लालाजी को ताड़ने के बाद उसने कहा, "आज ठेकेदार भगत जी से भी बात हो गई है। आप लोग उनसे भी संपर्क बनाए रखिए और हफ्ते-दस दिन बाद जब नया सी.एम.आई. आ जाए तो एक सभा बुलाइए। अपने वर्मा को बुलाइए। एक दो गरमा-गरम भाषण दीजिए। यह थोड़ा जोखिम का काम है, मगर इसे जरूर करना। हम इनामुल खान के यूनियन के ताबूत में कील ठोकेंगे, हम..."

लालाजी एकदम गदगद हो गए। वे तो सिर्फ हवापानी लेने आए थे कि देखें, मैनेजमेंट इस मामले पर किस ढंग से सोच रहा है। यहां तो किले का सारा फाटक ही खोल दिया गया है।

"सर, हम लोग कंपनी के इतने वफादार रहेंगे कि आपको कभी शिकायत का मौका नहीं मिलेगा। लोग समझते हैं कि यूनियन लेबर से चलती है जबकि अगर मैनेजमेंट किसी यूनियन को सहारा न दे तो कोई भी यूनियन ज्यादा दिन तक नहीं टिक सकती। इसलिए हमेशा यूनियन का दाहिना हाथ मैनेजमेंट के हाथ में होता है और बांया हाथ लेबर के हाथ में।"

"वेल मि. लाला, आप कभी-कभी हमसे मिलते रहिए। यह हम दोनों के लिए ठीक रहेगा।"

"बेशक हजूर, यह गुलाम हमेशा आपके कदमों को चूमने की लिए आपकी खिदमत में हाजिर रहेगा।"

"सबसे बड़ा फायदा यह है मि. लाला कि आपकी यूनियन को सरकार भी सपोर्ट करेगी, क्योंकि सरकार भी इसी पार्टी की है। कोई आप पर ताकत इस्तेमाल करे तो थाना, पुलिस, एस.पी., डी.एस.पी., सब आपकी मदद को आ जाएगा।"

"यही वजह तो है हजूर कि आधी से ज्यादा कोलियरियों में हमारी यूनियनें बन गई हैं। वर्मा साहब बहुत बड़े लीडर हैं। बस एक बार हमें यहां खड़े होने का मौका मिल जाए।"

"वेल मि. लाला, आई एम थैंकफुल टू यू पीपुल।"

काफी रात हो गई थी और लोकस साहब को अंतिम शब्द इस बात की ओर इंगित कर रहा था कि अब मीटिंग खत्म की जाती है। वे लोग हाथ जोड़कर श्रद्धा से प्रणाम करके उठ खड़े हुए।

वे पांच आदमी जो लोकस से मिले थे उनमें एक सहदेव भी था (उसे इनामुल खान की यूनियन से चिढ़ थी। उसकी समझ से यह यूनियन न तो मजदूरों का प्रतिनिधित्व करती थी और न ही उनके हितों की रक्षा। ऐसा लगता था जैसे ताकतवरों और बदमाशों का एक गिरोह था जो अपना टैक्स वसूल रहा था, रिश्वत की शक्ल में मालिक से और चंदे की शक्ल में मजदूरों से।

सी.पी.आई. वालों का कहीं पता नहीं था। यद्यपि मजूमदार भी यहीं था लेकिन उसकी लाख कोशिशों के बावजूद पचीस-तीस से ज्यादा आदमी इस पार्टी में शामिल नहीं हो सके। उनमें ज्यादा तादाद आफिस स्टाफ की थी। कहने का मतलब है कि इतने बड़े गरम तवे पर यह तीस बूंद पानी भी क्या कर सकेगा? सहदेव कांग्रेस की यूनियन में शामिल हो गया था। वह यूनियन का सक्रिय सदस्य नहीं था। बस, एक परिवर्तन चाहता था। और इसीलिए कांग्रेस का समर्थक बन गया था। वैसे वह ट्रेड यूनियन की राजनीति से दूर ही रहना चाहता था। उसे अपने काम से ज्यादा दिलचस्पी थी। पांच साल के इस छोटे-से समय में वह मोहना कोलियरी का एक बहुत अनुभवी और विश्वस्त लेबर बन गया था। खुद लोकस साहब और व्हाइट साहब भी उसे बहुत मानते थे। उसकी विस्तृत जानकारी की वजह से ऊपर के स्टाफ तो उससे खुश रहते ही थे, उसके साथ काम करने वाले जूनियर लोग भी उसकी बहुत इज्जत करते थे और यही वजह थी कि लाला दीपनारायण ने पांच आदमियों में उसे भी शामिल रखा।

दूसरी शाम को वह, मजूमदार, जोनाथन और हमीद जमा हुए तो हर जगह की तरह यहां भी विषय स्मॉल साहब का इस्तीफा था। जोनाथन ने कहा, "आखिर फर्क क्या पड़ेगा? एक गया दूसरा आ जाएगा।"

हमीद बोला, "फर्क तो जरूर पड़ेगा। तुम क्या समझते हो कि मैनेजमेंट इस तमाचे को सहन कर लेगा? वह हर संभव बदला लेने की कार्यवाही करेगा।"

सहदेव जो गहरी चिंता में डूबा था, धीरे से बोला, "कार्यवाही तो शुरू भी हो चुकी है। बहुत जल्द यहां आई.एन.टी.यू.सी. आ रही है। शायद हम लोगों को अगले चंदे की रसीद उसी से कटवानी पड़े।"

मजूमदार हंस पड़ा, "यानी अब सैंया कोतवाल होने वाले हैं। लो भाई, तुम्हारी तो पांचों उंगली घी में रहेगी।"

सहदेव के कांग्रेस में शामिल हो जाने पर मजूमदार अकसर उसका मजाक उड़ाया करता था लेकिन वह जानता था कि सहदेव दिल से उसी के साथ है। कोलियरी में उसकी पार्टी की कोई अच्छी हालत न होने की वजह से ही वह कांग्रेस में शामिल हुआ है।

उसके कांग्रेस में शामिल होने की एक वजह जो समझ में आती है वह यह है कि वह परिवर्तन चाहता है। उसे हमेशा ऐसा लगता है मानो वह बर्फ की बड़ी-बड़ी सिलों के

बीच जम गया है। वह उसी जमी हुई बर्फ को पिघलाना चाहता है कि कोई नई बात हो। कुछ ऐसा हो जो जंजीरों को तोड़ नहीं सके तो ढीला जरूर कर दे। यह सब मजूमदार का आकलन है मगर सच्ची बात यह है कि वह पोलीटिकल आदमी है ही नहीं, वह प्रैक्टीकल आदमी है। एक श्रमिक के तौर पर वह अपनी निपुणता का प्रदर्शन खान के अंदर ही करता है, इसलिए मजदूरों के बीच उसकी इतनी इज्जत है जितनी किसी बड़े अफसर को भी हासिल नहीं। मजदूर कभी उसकी कोई बात रद्द नहीं करते। कभी उसका हुक्म मानने में आनाकानी नहीं करते।

जोनाथन ने कहा, "अच्छा यार, जब तुम्हारी यूनियन बन जाए तो जरा हम दोस्तों का भी ख्याल रखना।"

सहदेव ने कहा, "सीधी बात है, मुझे यूनियन-वूनियन से कोई दिलचस्पी नहीं है।"

"क्यों लीडर बनकर नहीं गए थे लोकस साहब के पास?"

"हां, वहां गया था या ले जाया गया था।"

वह जानता है कि उसे इस्तेमाल किया गया था। वहां उसने जो दृश्य देखे, आहिस्ता-आहिस्ता बुना जाने वाला साजिशों का जाल, तलवे चाटने का दृश्य, चापलूसी भरी बातें, हमेशा वफादार रहने का वचन, उसने उसे अंदर से बिलकुल हताश कर दिया ... कुछ नहीं होगा... सब एक ही हैं। लीडर और मालिक... यूनियन और मैनेजमेंट। मजदूर इस परिदृश्य में कहीं नहीं है। वह मेहनतकश जिसकी जिंदगी अंधेरी सुरंगों में हर पल मौत से जूझती रहती है, कहां हैं?

मजूमदार ने हंसकर कहा, 'मेरी यूनियन बन जाएगी तो मैं तुम्हें अंडरग्राउंड में काम थोड़े ही करने दूंगा। मैं तुम्हें अपना निजी सचिव बनाऊंगा। बस फाइल लिए मेरे पीछे-पीछे चला करना।'

सहदेव ने नजर उठाकर उसे देखा, चंद लम्हे देखता रहा, फिर दुख से बोला, 'वह जो अंडरग्राउंड में काम करता है वह हमेशा अंडरग्राउंड में ही काम करता रहेगा। उसकी किस्मत बदलने वाली नहीं। यह एक ऐसा सच है जिसको कहीं कभी झुठलाया नहीं जा सकता। ऊपर के परिवर्तनों से जिनको फायदा पहुंचता है पहुंचेगा। तुमने बहुत पहले कहा था, मजदूरों के पैसों से चलने वाली यूनियन भी मजदूरों की नहीं है। वे छोटी-छोटी सुविधाएं दिला सकते हैं, मजदूरों की छोटी-छोटी समस्याओं को सुलझा सकते हैं मगर उनके कल्याण के लिए, उनके भविष्य के लिए कभी कोई बड़ी कोशिश नहीं की जाएगी। यह उनके बूते से बाहर की बात है। इन इलाकों में सैकड़ों कोलियरियां हैं, दर्जनों यूनियनें हैं लेकिन क्या होता है? यहां तो फिर भी संतोष है। दूसरी छोटी-छोटी कोलियरियों में तो लोग कुत्तों से भी बदतर जिंदगी जी रहे हैं। सौभाग्य से इसका अनुभव मजूमदार बाबू आपको भी है और मुझे भी।"

मजूमदार के दिमाग को एक झटका लगा। सब याद आने लगा। कुछ देर के लिए खामोशी छा जाती है, फिर मजूमदार ही कहता है, "यार, ये लोग मरे हुए आदमी की लाश भी पूरी तरह से हजम कर जाते हैं। रहमत मियां का हादसा मुझे अब भी याद है।"

यह किसका नाम ले लिया मजूमदार ने? दिमाग के अनगिनत तार एकदम से झनझना उठते हैं मानो किसी बच्चे ने अचानक साज के सारे तारों पर जोर से प्रहार कर दिया हो।

रहमत मियां?

रहमत मियां?

रहतम मिया....?

वह फिर कभी खतुनिया के घर नहीं गया। हिम्मत ही नहीं हुई। कैसे उसका सामना करेगा? क्या कहेगा? वह झूठ बोल सकता है मगर इतना बड़ा झूठ नहीं। वह इरफ़ान की नम आंखों की खामोशी में तैरते सवालों के जवाब में शायद झूठ भी न बोल सके, इसलिए उसने कभी रसूलपुर जाने की सोची भी नहीं।

जब वह घर पर ही था तो एक सुबह उसकी भाभी ने बताया, "बाहर कोई तुमसे मिलने आया है।"

वह जल्दी से कुर्ता बदन पर डालकर बाहर आ गया। बाहर फर्श पर एक काला-सा बूढ़ा हड्डियों का ढांचा उसके इंतजार में बैठा था। बूढ़े ने उसकी आहट पर अपनी दृष्टि से नाउम्मीद होती आंखों पर हाथ का छज्जा बनाकर देखा। फिर भी न देख सका तो पूछा, "कौन हो बाबू? सहदेव...?"

सहदेव उसे पहचानकर दंग रह गया। यह रहमत मियां का बाप था। उसके सारे शरीर में सिहरन-सी दौड़ गई। वह रहमत मियां के सिलसिले में किसी तरह की बहस के लिए तैयार नहीं था। वह डर रहा था कि सच कहीं उसके मुंह से तमाम बंदिशों को तोड़कर न निकल पड़े। उसका जवाब न पाकर बूढ़ा थोड़ा-सा बेचैन हो उठा। बैठे-बैठे ही जरा-सा आगे खिसका। जमीन पर लेटे डंडे को भी अपने साथ घसीटा और अपनी बात को सुनिश्चित करने की कोशिश की, "ऐं बाबू, सहदेव हो न?"

सहदेव ने अपने टूटकर टुकड़े-टुकड़े बिखर जाने वाले अस्तित्व को इकट्ठा किया, "प्रणाम काका, इधर ऊपर बैठिए चौकी पर, नीचे जमीन पर काहे बैठ गए हैं?"

वह उसे उठाने के लिए झुकने ही वाला था कि बूढ़ा खिसककर जरा और आगे बढ़ा और उसके पैर थाम लिए।

"बाबू, हमारा रहमत...?"

आगे बोलने का सामर्थ्य नहीं रहा। आवाज फफककर फटकर रोने में गुम हो गई। सवाल अधूरा रह गया।

अब तक मुश्किल हो गया था सहदेव को खड़ा रहना। लगा कि सारी दुनिया, सारा

जमाना, आसमान और जमीन बस उस एक सवाल से भर गए हैं। कहीं कोई बात, कहीं कोई आवाज नहीं है। बस एक सवाल...।

जवाब उसके पास है। वह सब बता सकता है मगर कुछ बातें ऐसी होती हैं जो न खुलें, हमेशा पर्दे के पीछे छुपी रहें तो शायद अच्छा ही होता है। सहदेव ने उसे बाजू से पकड़कर उठाया और चौकी पर ले जाकर बैठा दिया। बूढ़े के अंदर से उठा बवंडर थोड़ा शांत हुआ और धुंधली आंखों की बरसात थमी तो उसने पूछा—

"ऐं बेटा, हमारा रहमत कहां चला गया? तुम तो उसके दोस्त हो। मेरा मन कहता है कि जरूर मालूम होगा। ननकू की चिट्ठी आई थी। उसमें बस इतना लिखा था कि वह काम छोड़कर किसी औरत के साथ भाग गया है। ऐं बाबू, हमारा रहमत तो ऐसा नहीं था। उसकी दुल्हन को तुमने देखा है। लाखों में एक है कि नहीं? ऐसी औरत के आगे कौन औरत आ गई?"

कभी-कभी, बोलने से ज्यादा अच्छा चुप रहना होता है। सहदेव ने चुप्पी साध ली। अंदर से पानी लाकर बूढ़े का हाथ-मुंह धुलवाया और अपनी भाभी को खाना बनाने के लिए कहा।

"भूख नहीं लगती बाबू, कुछ भी खाने को मन नहीं होता। रात को नींद भी नहीं आती। ऐसा लगता है जैसे किसी दिन, किसी वक्त उस औरत के चंगुल से छूटकर वापस आ जाएगा मेरा बेटा।"

वह जरा-सा रुका, फिर पूछा, "ऐं बाबू, उसको अपना लड़का भी याद नहीं आता होगा?"

कोई नहीं याद आता है वहां, जहां रहमत मियां है। न बाप, न बीवी, न बेटा, कोई नहीं, उस अंधेरी गुफा में, जमीन के तेरह सौ फुट नीचे...जहां अथाह अंधेरा है, बेपनाह गर्मी है और कयामत की खामोशी...बड़ी गहरी कब्र है उसकी। इतनी गहरी कब्र देखी है तुमने किसी की?

तेरह सौ फुट गहरी...?

"बहू रोज बोलती है, कोलियरी चलो। बोलो तो बेटा, वहां जाकर क्या करेगी अकेली औरत? मैं बुड्ढा कब्र में पांव लटकाए बैठा हूं। आंख से सूझता नहीं, पांव से चला नहीं जाता। अब सारा जिस्म थक गया है। मैं कहां घिसटता फिरूंगा उसके साथ? कहता हूं, दो मुट्ठी मिट्टी डाल लो मुझपर, फिर जो जी चाहे करना।"

उसे बहुत जोर से क्रोध आता है। यह आदमी क्यों इतना बोलता है? क्यों चुप नहीं रहता? जो होना था वह हो चुका है। छह महीना हो गया है। अब तक तो वह गुफा भी बंद कर दी गई होगी। उसके मुंह पर दीवार चुन दी गई होगी। फाइलों के अंबार में दबी हुई वह रिपोर्ट भी गुम हो गई होगी जिसमें रहमत मियां के भाग जाने का सबूत दर्ज है।

किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखा। उसने चौंककर देखा, वह मजूमदार था।

"तुम जो सोच रहे हो मैं जानता हूं, मगर इससे फायदा क्या है? हालात से हर जगह समझौता करना पड़ता है अगर हालात को बदल डालने की शक्ति आदमी में नहीं होती।"

इस साली दुनिया में कुछ नहीं बदलेगा। कभी नहीं बदलेगा। इनामुल खान जाएगा तो पी.एन. वर्मा आ जाएगा। वर्मा जाएगा तो कोई और। सबका दाहिना हाथ मैनेजमेंट के हाथ में होगा और बायां हाथ मजदूरों के हाथ में। सब कुछ यूं ही चलता रहेगा, चलता रहेगा। कयामत तक, उस आखिरी दिन तक जब तक यह दुनिया अस्तित्वमान है।

नाम रघुनंदन भगत है मगर सिर्फ भगत कहलाता है। मोना कोलियरी से कोई दो किलोमीटर दूर ठीक धनबाद रोड पर उसने एक पक्का मकान बना रखा है। दो मंजिला। काफी ताकतवर आदमी है। कभी पहलवान रहा होगा मगर अब उसने लंगोट उतार दिया है। शराब कम पीता है पर कबाब ज्यादा खाता है। मतलब यह कि नशे-पानी से उतनी दिलचस्पी नहीं जितनी औरतों से है। औरतों के मामले में दो आदमी मोहना कोलियरी तो क्या दूर-दूर तक मशहूर हैं। एक तो वेलफेयर आफिसर जाफरी साहब और दूसरे हमारे भगत जी। मगर दोनों की औरतबाजी में बहुत फर्क है। जाफरी साहब तो अपना शिकार खुद फांसते हैं। सैकड़ों कामिनों में से किसी को चुनकर हांक पर चढ़ाते हैं। बचकर निकलने का सवाल नहीं, क्योंकि एक तो यह कि माहिर खिलाड़ी हैं और दूसरे वेलफेयर आफिसर जिनसे हर रोज कोई न कोई काम पड़ना ही है। सो जाफरी साहब हर रोज एक नया चिराग जलाते हैं। उनके एक बहुत पुराने दोस्त मौलवी जलालुद्दीन कहते हैं, साले तुम पर तो सददो सवार है। रोज एक पलंग उड़ा लाते हो। वे बुरा नहीं मानते। मुंह फाड़कर इतना ऊंचा ठहाका लगाते हैं कि उस ठहाके में सब उड़ जाता है।

लेकिन इसके विपरीत भगत जी बहुत कायदे-कानून वाले व्यक्ति हैं। जो काम करते हैं बहुत ढंग से करते हैं चाहे वह औरतबाजी ही क्यों न हो। अपने सड़क वाले मकान की ऊपर वाली मंजिल उन्होंने बिलकुल खाली कर रखी है। उस पर जाने की किसी को इजाजत नहीं, सिवाए जामुनी के।

जामुनी और उसका पति दिलीप दोनों प्रत्यक्ष रूप से उनके यहां नौकरी करते हैं, मगर असल किस्सा यह है कि वे बंगाल के पिछड़े इलाके पुरुलिया से लड़कियां लाते हैं। कभी हफ्ते में और कभी पंद्रह दिन में। यह भगत जी की इच्छा पर है कि जब उनका दिल भर जाए। कभी-कभी कोई लड़की महीनों रह जाती है। भगत जी इस दौरान लड़की को ऊपर

वाली मंजिल में इस तरह रखते हैं कि उसे बाहर झांकने की भी इजाजत नहीं होती। उससे यह फायदा होता है कि जाफरी साहब की तरह उनके किस्से-कहानियां नहीं फैल पातीं। वैसे यह बात सब जानते हैं कि भगत जी की ऊपर वाली मंजिल पर क्या-क्या होता है।

भगत जी भारी बदन के आदमी हैं। निरंतर आरामपसंदी और ऐय्याशी के कारण शरीर का तमाम मांस ढीला पड़ गया है। वे अकसर गर्मी के दिनों में बरामदे में और सर्दियों में सुबह की धूप में नंगे बदन बैठे मिल जाएंगे। इस तरह कि उनकी मोटी पिलपिली जांघ किसी लड़के की गोद में होगी और बाजू किसी दूसरे लड़के के कंधे पर। उनका ईमान यह है कि रोजाना सरसों के तेल की मालिश से आदमी पुष्ट रहता है। घंटा भर की तेल मालिश के बाद वे स्नान करते हैं, तब किसी काम को हाथ लगाते हैं चाहे वह काम, काम-वासना ही क्यों न हो।

उनकी आंखों के पपोटे हमेशा सूजे रहते हैं। इन सूजे पपोटों में उनकी आंखें हमेशा डबडबाई रहती हैं। पता नहीं, सूजे पपोटों के कारण या आंखों में पानी की वजह से उनकी आंखें पूरी खुल नहीं पातीं। हमेशा अधखुली रहती हैं। मगरमच्छ की आंखों की तरह। उनका कोई भी भाव उनकी आंखों से कभी जाहिर नहीं कर पाता। तीव्र क्रोध की हालत में भी वे उसी धीमे स्वर में हुक्म देते हैं–

"जर्मन सिंह, जरा महबूब अली के दंगल को देखना। साला बहुत बदमाशी कर रहा है। उसमें दो दुसाध लौंडे हैं न, बहुत सिर चढ़ गए हैं।"

जर्मन सिंह, महुआ दुसाध, दिलावर सिंह और उनके आधा दर्जन लोग फौरन निकल पड़ते हैं। महबूब अली और दोनों दुसाध लौंडों को घोड़े से घसीटकर इतना मारते हैं कि आस-पास के तमाम धोड़ों में दहशत छा जाती है। फिर महीनों कोई चूं-चिरा नहीं करता।

भगत जी मोहना कोलियरी का सबसे बड़ा ठेकेदार है। मिट्टी काटने, बिल्डिंग बनाने या बालू सप्लाई करने का उसका ठेका नहीं है। उसका ठेका आदमी सप्लाई करने का है। मोहना कोलियरी की तीनों खानों में वह लोडर सप्लाई करता है। लगभग आठ सौ लोडर हैं। हर आदमी दो गाड़ी माल बोझता है अर्थात सोलह सौ गाड़ी रोजाना। प्रति गाड़ी दो आना कमीशन मिलता है भगत जी को। यह उनकी ऊपरी आमदनी है। इस काम के संचालन के लिए उन्हें बीसों पहलवान रखने पड़ते हैं। उनका काम लोडरों को 'ठीक' करना है। रात को अकसर मजदूर सो जाते हैं। यह पहलवान उन लोगों को धोड़ों में घुसकर घसीट-घसीट कर बाहर निकाल लाते हैं और उन्हें अंडरग्राउंड भेज देते हैं।

कभी-कभी नीचे से खबर आती है कि आज सात नंबर में मैन पावर कम है। आफिस भगत जी को आर्डर भेजता है कि सात नंबर पिट में पचास लोडर फौरन भेजो। भगत जी आदेश देते हैं। फौरन पहलवान दौड़ पड़ते हैं और देखते ही देखते पचास मजदूर अंदर उतार दिए जाते हैं।

भगत जी को यूनियन की भी मुट्ठी गरम रखनी पड़ती है, इसलिए एक माहवारी रकम बंधी हुई है। इसके अलावा भी यूनियन वाले चंदे के नाम पर बहुत कुछ नोच ले जाते हैं। यह सब इसलिए होता है कि लोडरों पर होने वाले अत्याचारों, अधिकार हनन, मारपीट और गाली-गलौज के मामले में यूनियन अपनी आंख-कान बंद रखे। अगर इस पर भी कोई समस्या खड़ी हो जाए तो यूनियन मजदूरों के बजाए भगत जी का साथ दे।

यूनियन भी देखती है कि भगत जी एक ऐसा बैंक है कि जब जी चाहे कैश निकाल लो। इसके अलावा एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि भगत जी के पास आठ सौ लोडर एक संगठित रूप में हैं और इन लोडरों को मेंबर बनाए रखने के लिए भगत जी की मर्जी जरूरी है।

वह जो यूनियन के बारे में कहा जाता है कि उसका एक हाथ मालिक के हाथ में और दूसरा हाथ मजदूर के हाथ में होता है, उसके विपरीत भगत जी का एक हाथ मालिक के हाथ में और दूसरा हाथ यूनियन के हाथ में होता है। मजदूरों से न यूनियन को कोई मतलब है और न ही भगत जी को। ये बेचारे रोज मार खाते हैं। काम से भगा दिए जाते हैं। सर उठाते हैं तो कुचल दिए जाते हैं। कहीं कोई सुनवाई नहीं। कहीं कोई पनाह नहीं।

ऐसे ठेकेदार बहुत-से हैं। लोडरों के ठेकेदार, ट्रामड्राइवरों के ठेकेदार, दिहाड़ी मजदूरों के ठेकेदार, बाबू के ठेकेदार और बिल्डिंगों के ठेकेदार। ये सब ताकतवर व्यक्तित्व हैं। उनका एक-एक अलग गुट है या यूं कहा जाए कि ऐसे लोग हैं जिनके द्वारा कंपनी मजदूरों का शोषण करती है। उन्हें वश में रखती है। सरकस के उस रिंग मास्टर की तरह जो अपनी बिजली की छड़ी से शेर को बस में किए रहता है।

भगत जी स्मॉल साहब के हंगामे में वह पहला आदमी था जो लोकस से मिला था। वह परेशान और क्रुद्ध था या कम से कम परेशान होने का अभिनय कर रहा था।

''साहब आप दबे क्यों? आठ सौ आदमी मेरे पास हैं। अगर आप चाहें तो इनामुल खान की यूनियन को चटनी की तरह चाट जाएं। आप बस हुक्म दीजिए। मैं रातोंरात उन लोगों को उजाड़कर फेंक दूंगा।''

लोकस साहब ने उसे ठंडा किया और अपने साथ आफिस लेता गया। फिर दरवाजा बंद करके घंटा भर तक भगत जी और लोकस साहब में क्या गुप्त मंत्रणा हुई, यह कोई नहीं जानता।

नए सी.एम.ई. को आए अभी दस दिन भी नहीं हुए थे कि एक दोपहर में दो कारें आफिस के सामने आकर रुकीं। उनमें से दस-बारह आदमी उतरे। उन्हीं में कोलफील्ड का एक उभरता हुआ ट्रेड यूनियन लीडर पी.एन.वर्मा भी था। लंबा कद, रौबदार चेहरा और ऊंची

पेशानी। आंखों का रंग काला नहीं बल्कि हल्का कत्थई था। गजब का व्यक्तित्व था उसका। उसके सामने आते ही लोग उसके रौब से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। उसके साथ उतरने वालों में उसे अंगरक्षक थे और कुछ छोटे-छोटे लीडर जो उसी के टुकड़ों पर जी रहे थे।

घोषाल बाबू ने खिड़की से झांककर उन्हें उतरते हुए देखा और हैरत से पूछा, "यह कौन है रे?"

"अरे यार, होगा कोई मामा, नया सी.एम.ई. आया तो सब चारा डाल रहे हैं।"

"नहीं यार, कोई कांग्रेसी है।"

"हमको तो कोई मोटा मुर्गा लगता है।"

घोषाल बाबू ने कार में लगा तिरंगा देखकर अंदाजा लगाया। आफिस से निकलकर खद्दर के कुर्ते का कालर खड़ा किया। ढंग से बटन लगाए और श्रद्धा से बढ़कर पी.एन. वर्मा का हाथ थाम लिया। अविनाश ने, जो उसी कोलियरी में काम करता था आगे बढ़कर परिचय कराया।

"सर, ये घोषाल बाबू हैं। बहुत पुराने कांग्रेसी हैं। फ्रीडम फाइटर भी रह चुके हैं और जेल भी जा चुके हैं।"

वर्मा ने गर्मजोशी से उनका हाथ दबाते हुए कहा, "भाई, आश्चर्य है कि आप जैसे लोगों के होते हुए भी मोहना कोलियरी में कांग्रेस का काम नहीं हो रहा है।"

"काम तो सर होना ही होना है। बस यहां कैडरों की थोड़ी कमी है।"

"यह काम भी आप ही का था, घोषाल बाबू!"

"सर, अब कोई कमी नहीं होगी। आपका पांव हमारी कोलियरी में आ गया तो समझिए कि काम हो गया है।"

वर्मा ने प्यार से उनके कंधे पर हाथ रखा, "अब तो सब कुछ आप लोगों को ही करना है।"

घोषाल बाबू मस्त हो गए। इतने आदर-सम्मान की आशा भी नहीं थी। आफिस में बैठे लोगों को आज मालूम हो गया होगा कि घोषाल बाबू क्या हैं। जरा यहां नई यूनियन की चलती हो जाए फिर देखना। अभी वे कुछ कहने ही जा रहे थे कि सी.एम.ई. आफिस का चपरासी उनके स्वागत के लिए आगे बढ़ा और आफिस का दरवाजा खोल दिया। यद्यपि आफिस के दरवाजे पर लाल बल्ब जल रहा था।

सिर्फ दो आदमी अंदर गए। एक वर्मा साहब और दूसरा नंद किशोर, वर्मा का विश्वासपात्र। आफिस के अंदर भी दो ही आदमी मौजूद थे। एक लोकस साहब और दूसरे नए सी.एम.ई. आईवन साहब। एक-दूसरे से हाथ मिला, हालचाल पूछने, शुभकामना आदि देने के बाद जब लोग इत्मीनान से बैठ गए तो आईवन साहब ने जरा-सा झुककर रहस्यमय ढंग से कहा, "किस्सा यह है मि. वर्मा कि अब सोशलिस्ट यूनियन ने कंपनी के साथ खिलवाड़

शुरू कर दिया है और यह बात हाइयर औथोरिटी को सख्त नापसंद है। इसीलिए मुझे इस तरह के विशेष निर्देश मिले हैं कि मैं उचित कार्यवाही करूं।"

"सोशलिस्ट यूनियन भ्रष्ट हो गई है। उसके पांव हर जगह से उखड़ रहे हैं। कतरास फील्ड जो उनका गढ़ है वहां साधन दा ने कई कोलियरियां छीन ली हैं। आसपास की कोलियारियों में तूफान की तरह बढ़ती आ रही है। मोहन कोलियरी में भी उसे पांव जमाने में देर नहीं लगेगी। अगर आप चाहें..."

आखिर वाक्य पर बहुत जोर देकर वर्मा ने गहरी नजरों से आईवन साहब को देखा। आईवन साहब ऐसे साधारण व्यक्ति नहीं थे जिनके चेहरे पर कोई प्रतिक्रिया आसानी से देखी जा सके। लोकस ने बात बढ़ाई।

"हां, इसी शर्त के साथ कि आप इस बात का यकीन दिलाएं कि कंपनी के हितों का ख्याल रखा जाएगा।"

"यह तो दोनों हाथों से होना है, मि. लोकस! यह बात आप पर भी उतनी ही लागू होती है जितनी हम पर। अगर हम आपस में टकराव की स्थिति पैदा न होने दें तो बाकी छोटी-छोटी समस्याएं आसानी से हल हो जाएंगी।"

"देखिए मि. वर्मा, टर्नर मोरिसन कंपनी इंग्लिश फर्म है और इंग्लिश फर्म में लूज प्वाइंट्स बहुत कम होते हैं। यह तो आप भी जानते होंगे। इसलिए अगर थोड़ी-सी उदारता बरती जाए तो मैं समझता हूं संबंध बिगड़ने की कोई वजह नहीं।"

"हमारी यूनियन जिस कोलियरी में भी पावर में है वहां उसने मालिकों से संबंध बहाल कर रखे हैं।"

"इसीलिए तो हमने आपको बुलाया है।"

"यह आपकी कृपा है।"

आईवान साहब ने जरा-सा झुककर भेदपूर्ण ढंग से कहा, "मि. वर्मा, मैं आपको एक मौका देना चाहता हूं, एक सुनहरा मौका। इसी उम्मीद के साथ कि आप इससे फायदा भी उठाएंगे और हमेशा इसे याद भी रखेंगे।"

वर्मा पूरे मनोयोग से सुनने लगा।

"कोई एक महीने पहले तमाम मजदूरों और लो ग्रेड आफिस स्टाफ की तनख्वाह में बढ़ोतरी के आर्डर हेड आफिस से आ गए हैं। हमने इस आर्डर को रोक रखा है। अब आप एक ड्रामा कीजिए। आप सौ-दो सौ जितने भी मजदूर जमा करा सकते हों उन्हें एक जलूस में लेकर यहां आइए। मैनेजमेंट को गाली दीजिए। खूब नारेबाजी कीजिए। कंपनी को अल्टीमेटम दीजिए। हम लोग तनख्वाह में बढ़ोतरी का एलान कर देंगे। इस बढ़ोतरी का सारा क्रेडिट आपको जाएगा और आपको मोहना कोलियरी में पांव जमाने में आसानी हो जाएगी।"

यह बहुत बड़ी पेशकश थी। वर्मा एकदम खामोश हो गया। उठकर आईवन साहब से हाथ मिलाया और कहा, "आपका बहुत बहुत शुक्रिया मि. आईवन, लेकिन इससे पहले हम एक सभा करेंगे अर्थात् स्टेज ड्रामा, वह पूरा होना चाहिए।"

"यह आपका काम है, मि. वर्मा! इससे हम लोगों को कोई मतलब नहीं।"

वर्मा उठ खड़ा हुआ। सभी लोगों ने बहुत ही दोस्ताना माहौल में एक-दूसरे से हाथ मिलाया और वर्मा मुस्कुराता हुआ आफिस से बाहर निकल गया।

पहली बार कोलियरी में मजदूर संघ की आम सभा हुई। मोहना कोलियरी में नहीं, क्योंकि वहां डर था कि कहीं टकराव न हो जाए। इसलिए सभा का आयोजन मधुबन बाजार में रविवार चार बजे शाम को किया गया। प्रशासन ने भी पूरा प्रबंध कर रखा था कि कोई अप्रिय घटना न घटे। तीन-तीन दारोगा, पुलिस, लाठी वाली पुलिस और फिर सिविल ड्रेस में भी काफी पुलिस के जवान तैनात किए गए थे। किसी भी सभा में कभी इतना बड़ा इंतजाम देखने में नहीं आया। कांग्रेसी आला कमान का आदेश था कि पी.एन. वर्मा की हर तरह से सुरक्षा की जाए। इसलिए डी.एस.पी. तक अपनी जीप लेकर मौजूद था।

उस खुली जगह को रंगीन कागज की झंडियों से सजाया गया है जहां शनिवार के दिन हाट लगती है। प्रभुलाल हलवाई और भजन लाल बनिए से एक-एक चौकी लेकर स्टेज बनाया गया है। एक गेट भी बना है जिस पर सफेद कपड़े पर सुनहरे कागज को काटकर लिखा है--"दलित मजदूर संघ--जिंदाबाद।" सभा-स्थल के चारों ओर और फिर वहां से गेट तक दोनों रास्तों पर तिरंगी झंडियां लगी हैं। माइक पर दस बजे दिन से फिल्मी गाना बज रहा था।

तीन बजे से ही सभा स्थल भरने लगा था। एक-एक, दो-दो करके लोग आना शुरू हुए। उनमें औरतें और बच्चे ज्यादा थे जो इस आम सभा को तमाशा समझकर आ रहे थे। मर्दों में भी ज्यादा संख्या दुकानदारों और बेकार आदमियों की थी। मजदूर बहुत कम थे। जो आज जरा खुलकर नई यूनियन का समर्थन कर रहे थे उन्हें मालूम था कि आज के बाद इनामुल खान की यूनियन से दुश्मनी शुरू हो जाएगी, मगर साथ ही अंदाजा हो गया था कि मारने वाले से बचाने वाला ज्यादा मजबूत है।

सुबह छह बजे से दो गाड़ियां माइक लगाए हर जगह घोषणा करती फिर रही थीं। उन पर तिरंगा झंडा हवा में लहरा रहा था। माइक के भोंपू से निकलती हुई अपील बार-बार गलियों और मुहल्लों में गूंज रही थी। खास तौर पर मोहना कोलियरी के धोड़ों, बाजारों, आफिस और वाइडिंग रूम के पास, जहां मजदूरों की भीड़ थी। रात की पारी के मजदूर बाहर आकर और जेनरल शिफ्ट के लिए अंदर उतरते मजदूर आज सुबह से ही चौंक-चौंक

कर इन ऐलानों को सुन रहे थे।

"मजदूर भाइयो, आज चार बजे शाम को कोलियरी मजदूर संघ की एक मीटिंग मधुबन बाजार में होने जा रही है। कोलियरी मालिकों के अत्याचार के खिलाफ खुल्लम-खुल्ला जंग का ऐलान हमारे नेता श्री पी.एन. वर्मा कर रहे हैं। आप लोगों से निवेदन है कि हजारों की संख्या में पधारकर उनके भाषण से लाभ उठाएं।"

हर जगह माइक की आवाज गूंज रही है। इनामुल खान की यूनियन वाले अंदर ही अंदर सुलग रहे हैं, मगर कोई चारा नहीं चल रहा है। पुलिस का इतना सख्त इंतजाम है कि खांसना भी मुश्किल है। ऐलान करने वाली एक गाड़ी को रोकने की कोशिश की गई तो दस मिनट के अंदर-अंदर पुलिस की भरमार हो गई। खुद डी.एस.पी. साहब घटना स्थल पर पहुंच गए।

ऐसी सभा कभी नहीं हुई। इतना बड़ा शामियाना कभी नहीं लगा और न ही इतनी रंगीन झंडियां सजाई गईं। लोगों की जिज्ञासा बहुत बढ़ गई है। औरतों और बच्चों के अलावा अब मजदूरों के भी झुंड के झुंड चले आ रहे हैं। सभा स्थल भरता जा रहा है। भीड़ को देखते हुए डी.एस.पी. साहब ने और पुलिस फोर्स मंगवा ली है।

इनामुल खान को यकीन था कि मोहना कोलियरी का कोई भी मजदूर इस आम सभा में नहीं जाएगा, लेकिन सब के सब वहां मौजूद थे। लोडर, ट्राम ड्राइवर बल्कि आफिस स्टाफ भी। एक महीने के बाद मेंबरशिप के नवीकरण का समय था, चंदे की रसीद काटने का, इसी में यूनियन की लोकप्रियता का अंदाजा होता है। यही समय पुरानी यूनियन को पांव जमाने का होता है और इसी अवधि में कोई नई यूनियन पुरानी यूनियन को उखाड़ फेंकने की कोशिश भी करती हे। इनामुल खान बेचैन है। यह हरामजादा वर्मा, सावन के तेज रफ्तार वाले बादलों की तरह छाता ही चला जा रहा है।

मीटिंग का समय चार बजे का था लेकिन कार्यवाही पांच बजे शुरू हुई, क्योंकि नेता जी की कार एक घंटा लेट आई। कार के आते ही लगा जैसे बवंडर आ गया हो। हर तरफ हड़कंप मच गया। सारी भीड़ अपने नेता को देखने के लिए उमड़ पड़ी।

सफेद, दूध की तरह सफेद खादी के लिबास में एक गोरा-चिट्टा, कद्दावर, वह फूलमाला जो उसके गले में डाली गई थी गले से उतारकर हाथ में पकड़े, बड़ी नम्रता से प्रणाम करता हुआ जंगल के शेर की तरह आगे बढ़ा और स्टेज पर चढ़ गया। उसके सम्मान में स्टेज के सारे लोग खड़े हो गए। वह पास पड़ी कुर्सी पर बैठ गया। नारों के शोर से सारा शामियाना गूंज उठा।

सहदेव के पास बैठे गुहा ने कान में फुसफुसाकर कहा, "एकदम हीरो लगता है।"

सहदेव ने कोई जवाब नहीं दिया, क्योंकि सभा की कार्यवाही शुरू हो गई थी।

ये छोटे लीडर बड़े लीडरों की अपेक्षा ज्यादा जोशीले भाषण देते हैं। शायद अपने भाषण

की कला की खुद परीक्षा लेते हैं। हाथ नचा-नचा कर, मुट्ठी बांध-बांधकर, चेहरे को इधर से उधर और उधर से इधर घुमा-घुमाकर, पूरे जोश में लगभग अंगूठों पर खड़े होकर बड़े वेग से बोलते जाते हैं।

इस बार गुहा एकदम से हंस पड़ा तो सहदेव ने उसे डांटा, "क्या खी-खी लगा रखी है?"

"नहीं सहदेव भाई," वह सहदेव की ओर जरा से झुककर बोला, "दुर्गा-पूजा के मेले में एक खिलौना मिलता है। ताड़ के पत्तों का बना हुआ एक बित्ते का आदमी। वह एक मोटे तिनके में लगा होता है। तिनका जरा-सा घुमाओ तो उसका हाथ कभी ऊपर उठ जाता है और कभी नीचे गिर जाता है। गर्दन भी हरदम घूमती रहती है। देखो, यह आदमी भी वैसा लग रहा है कि नहीं!"

सहदेव को हंसी आ गई।

औरतों के बैठने का अलग इंतजाम था, मगर पार्टीशन केवल एक रस्सी का था। रस्सी के एक तरफ मर्द थे और दूसरी तरफ औरतें। संयोग से सहदेव और गुहा बिलकुल सरहद पर बैठे थे। सहदेव के खिलखिलाकर हंस पड़ने से नाराज होकर एक औरत ने गाली दी, "मुंहझौंसा! इधर देखकर काहे हंसता है?"

इस बार गुहा जोर से हंसा, इतने जोर से कि कार्यकर्ताओं को चुप कराना पड़ा।

"चुप करो, खामोश, मेहरबानी करके शांति बनाए रखिए।"

मुंहझौंसा और खालभूरा कोलफील्ड में दो ऐसी गालियां हैं जिनको सुनकर कोई गुस्सा नहीं होता, बल्कि लोग हंस पड़ते हैं। इन गालियों में जो प्यार और लगाव होता है उसका मजा सिर्फ वही लोग जानते हैं जो इसको सुनते हैं। जरा-सा होंठ सिकोड़कर, आंखों में बेपनाह लगावट पैदा करके धीमी आवाज में कहा गया मुंहझौंसा एक विशेष निमंत्रण होता है। वैसे मुंहझौंसा का मतलब है तुम मर जाओ और तुम्हारे मुंह में आग लगे। एक मतलब यह भी हो सकता है—जले हुए मुंह वाला अर्थात कुरूप।

ये गालियां दिन-प्रतिदिन की चीजें हैं। इक्का-दुक्का औरत को छेड़ दीजिए। अगर वह नजर तिरछी करके तुरंत कह दे 'चल मुंह झौंसा' या 'भाग खालभूरा' तो समझ लीजिए कि मामला पट जाएगा। आज भी जो गुहा सहदेव की इतनी जोर से चुटकी भरकर हंसा था वह बेमतलब थोड़े ही था। सहदेव की जगह दूसरा कोई आदमी होता तो छेड़छाड़ शुरू हो जाती और शायद मामला मीटिंग से चुपके से खिसक जाने का होता, मगर सहदेव इस प्रकृति का आदमी ही नहीं था। वह मर्दों की भीड़ में जरा-सा खिसककर भाषण सुनने लगा।

अब वर्मा साहब खड़े हो गए। उनके लंबे कद, गोरे रंग, चेहरे के रौब और आवाज की कड़क ने सबका ध्यान आकर्षित कर लिया था। काली, मैली, स्याह और बदसूरत दुनिया में वह किसी दूसरे ग्रह का ही प्राणी लग रहा था। उसकी ऊंची आवाज एकदम साफ और

बेखौफ थी।

"हमारी यूनियन किसी गुप्त मंत्रणा में विश्वास नहीं रखती। हम किसी के आगे सर नहीं झुकाते। हम किसी से समझौता नहीं करते, क्योंकि हम मेहनत करते हैं। हम मजदूर हैं। ये जो इमारतें आप देख रहे हैं, ये जो गाड़ियां, ये जो ठाठ-बाट हैं बल्कि ये जो मालिकों के चेहरों पर रौनक झलक रही है इन सब में हमारा खून और पसीना शामिल है लेकिन इस खून और पसीने की जो कीमत हमें मिलती है वह उतनी भी नहीं होती कि हम अपना पेट भर सकें। हम आवाज भी उठाना चाहें तो कैसे उठा सकते हैं? जब रक्षक ही भक्षक बन जाए तो बड़ी मुश्किल हो जाती है।"

तालियों की गड़गड़ाहट से सारा पंडाल गूंज उठा। नारों की तेज बुलंद आवाज मधुबन बाजार से बवंडर बनकर उड़ी और मोहना कोलियरी के आफिस, धोड़ों और बाजारों में गूंज गई।

इंकलाब—जिंदाबाद।

दलित मजदूर यूनियन—जिंदाबाद।

हमारा नेता—पी.एन. वर्मा।

इंकलाब...।

बहुत देर तक नारेबाजी चलती रही। लगता है, मानो चारों तरफ आग लग गई हो और वर्मा जी के शब्द जैसे घी से भरे कटोरे हैं जो इस आग में उंड़ेल रहे हैं।

"भाइयो, मजदूर साथियो, मैं तुम्हारे साथ हूं। मेरी यूनियन तुम्हारे साथ है। मैं वादा करता हूं कि मैं तुम्हें तुम्हारा हक दिलाकर रहूंगा। मैं तुम्हें भूखा नहीं रहने दूंगा। मैं तुम्हें दवाओं के अभाव में मरने नहीं दूंगा। हमने प्रण कर रखा है कि इन हरामजादे मालिकों को बता देंगे कि मजदूर क्या हैं। ये जिनको तुम रोज गाली देते हो, मारते हो, ये अगर उठ खड़े हों तो सारा कोलफील्ड दहकते हुए अंगारों के ढेर में बदल जाएगा।"

फिर तालियों का शोर उठा। नारे बुलंद हुए। वर्मा साहब अपने भाषण का जोश जरा कम करते हुए बोले—

"हम कल कंपनी को तेरह दिन की नोटिस देने जा रहे हैं कि मजदूरों की तनख्वाह बढ़ाई जाए वर्ना हम हड़ताल कर देंगे। सारा काम बंद कर देंगे। वाइंडिंग रूम का चक्का नहीं चलेगा। डोलियां अपनी जगह खड़ी हो जाएंगी। हार्डकोक भट्टा ठंडा कर दिया जाएगा। प्लांट में ताला लग जाएगा। मेरे मजदूर भाइयो, हमें सिर्फ आपका सहयोग चाहिए। यह मत समझिए कि मैं अकेला आपको इस रणभूमि में हांक दूंगा। मैं आप लोगों के साथ रहूंगा। मैं आप सबके आगे रहूंगा। अगर लाठी-चार्ज होगा तो पहली लाठी मैं अपने सर पर लूंगा। अगर गोली चली तो पहली गोली मेरी छाती पर लगेगी..."

नारों की गूंज में आगे का भाषण गुम हो गया। सहदेव ने पीछे पलटकर देखा। गुहा पता नहीं कब का चला गया था और उस औरत की जगह भी खाली थी जिसने उसे गाली दी थी।

"गुहा का मामला फिट हो गया।"

किसी ने उसे बताया। उसने पलटकर देखा। वह खूंटा मिस्तरी दिलजीत सिंह था।

"तुमको क्यों खुजली हो रही है?"

''बल्ले, बल्ले! वह बंगाली बच्चा शिकार सामने से ले गया और मैं देखता रह गया।''

तभी भीड़ में खलबली-सी मच गई। भाषण के दौरान किसी ने चिल्लाकर कह दिया था, "चोर है–।"

यूनियन के वर्कर दौड़ पड़े। वे भी चार-पांच की संख्या में थे। हाथापाई होने लगी। आधी भीड़ उठ खड़ी हुई। उसी समय अचानक पुलिस वालों ने हंगामा करने वालों को दबोच लिया। वे उन्हें लेकर जीप की तरफ ले जाने लगे तभी वर्मा साहब की मीठी आवाज सुनाई दी।

"इंस्पेक्टर साहब, जरा रुक जाइए। प्लीज, उन्हें स्टेज के पास ले आइए।"

इंस्पेक्टर उन चारों को पकड़े हुए स्टेज के पास ले गया। वर्मा ने उन्हें संबोधित करते हुए कहा, "आप कौन हैं, मैं नहीं जानता। आपको किसने यहां हंगामा मचाने भेजा है, यह भी मालूम नहीं मगर इतना जानता हूं कि आप भी वर्कर हैं, मजदूर हैं। अगर इस कोलियरी के न भी हुए तो किसी दूसरी कोलियरी के हैं। मुझे सिर्फ एक बात बताइए। आपने हंगामा करने की कोशिश क्यों की? क्या मैंने किसी यूनियन के खिलाफ कुछ कहा? क्या मैंने किसी लीडर को गाली दी? क्या मैंने मजदूरों को गलत रास्ते पर चलाने की कोशिश की? मैंने तो सिर्फ मजदूरों के भले की बात कही। उनकी भुखमरी और उनके दुख की चर्चा की। यह चर्चा आप की भी तो है। मैंने मालिकों से एक लड़ाई छेड़ी है। यह लड़ाई सिर्फ मेरी तो नहीं। इन हजारों मजदूरों की है। आप लोगों की भी है। क्या मैंने गलत काम किया? मैं यहां स्टेज पर खड़ा हूं। मैं आप लोगों के सामने शपथ लेता हूं, कसम खाता हूं कि मैं आपकी तनख्वाह बढ़ाकर रहूंगा और अगर ऐसा नहीं कर सका तो लीडरी छोड़ दूंगा। यह खादी का वस्त्र उतार दूंगा।"

एक बार फिर नारों से सारा माहौल गूंज उठा।

इंकलाब–जिंदाबाद।

हमारा नेता–पी. एन. वर्मा।

यूनियन–जिंदाबाद।

सहदेव बहुत मुश्किल में है। सच कहां है? जो बातचीत लोकस साहब से हुई थी वह उसमें शामिल था। लीडरों का घिघियाना और झुकना उसे याद था। उसे वह सारे

चापलूसी-भरे कथन भी याद थे जो वहां बोले गए थे। वो वादे भी अभी तक उसके कानों में गूंज रहे हैं जो लोकस साहब से किए गए थे। उसे तकलीफ नहीं हुई। अब तकलीफ नहीं होती। इतना उसने देख लिया है, समझ लिया है कि जिस सच को वह छूता है उस पर से काई उतर जाती है और नंगा-तीखा झूठ उसके सामने आ खड़ा होता है, इसलिए आज भी जब किसी ने बताया कि मीटिंग में हंगामा करने वाले खुद वर्मा साहब के आदमी थे तो उसे थोड़ा भी आश्चर्य नहीं हुआ।

उसने बगल में देखा। दिलजीत सिंह भी गायब था, पता नहीं कौन-सी लड़की के साथ!

रविवार के दिन सुबह से लोग दो-दो, चार-चार करके वाइंडिंग रूम के पास जमा होने लगे। उसमें कांग्रेसी भी थे तथा दूसरे दलों के लोग भी थे। ज्यादा संख्या ऐसे लोगों की थी जो आज एक नया तमाशा देखने के लिए जमा हो रहे थे। उनमें औरतें और बच्चे भी शामिल थे। एक टीन की कुर्सी जो घोषाल बाबू पता नहीं कहां से उठा लाए थे उस पर उन्होंने लाला दीप नारायण को बैठा दिया। खुद लकड़ी के एक खाली बक्से पर बैठे थे। कुछ लोग ईंटों पर बैठे थे, लेकिन अधिकांश लोग खड़े थे। पार्टी का बैनर दो डंडों में लपेटकर रखा हुआ था। मांगों के तख्ते जिन पर हिन्दी और अंग्रेजी में मांगें लिखी हुई थीं अभी जमीन पर पड़े थे। आज तक मोहना कोलियरी के इतिहास में कोई ऐसा जलूस नहीं निकला है। इनामुल खान की यूनियन कुछ गड़बड़ कर सकती है इसलिए पुलिस को भी खबर दे दी गई है। काफी संख्या में डंडाधारी और छह बंदूकधारी पुलिस वाले मौजूद हैं। एस.पी. साहब वर्मा साहब के साथ आएंगे। उनकी सुरक्षा के लिए अलग से भी पुलिस होगी। हवा खराब है। इतने पुलिस वालों को देखकर लोग डर भी रहे हैं, पर जमा भी हो रहे हैं। इस भीड़ में दूसरी कोलियरियों के लोग भी शामिल हैं। कुछ लठैत और गुंडा किस्म के लोग भी आ गए हैं। यह इंतजाम आई.एन.टी.यू.सी. वालों ने अपनी तरफ से किया है। खुद मोहना कोलियरी के वे वर्कर जो काफी समय से कांग्रेस में खुफिया तौर पर शामिल थे आज खुल कर सामने आ गए हैं। अब छुपने की जरूरत नहीं रह गई है।

बहुत देर इंतजार के बाद तीन कारें कोलियरी की कच्ची सड़क पर फुदकती, स्याह धूल के बादल बिखेरती आती दिखाई पड़ीं। ऐसा लगा मानो तमाम लोगों को एक साथ बिजली का झटका लग गया हो। सब लोग झटपट खड़े हो गए। बैनर खोल लिया गया। तख्तियां जो जमीन पर पड़ी थीं उन्हें उठा लिया गया और नारों की आवाज लगातार सुनाई देने लगी—

पी.एन. वर्मा — जिंदाबाद

इंकलाब — जिंदाबाद

रोटी दो – लंगोटी दो

कमाने वाला – खाएगा

हमारा नेता – पी.एन. वर्मा।

आवाजों के बवंडर के बीच गाड़ी रुकी। वर्मा साहब अपने दलबल के साथ उतरे। फूलों की मालाएं जो झरिया से मंगवाकर पहले से रखी हुई थीं वर्मा साहब के गले में डाली गईं।

यह छह नंबर पिट की तरफ से।

यह बरारी ओपेन कास्ट की तरफ से।

यह कोक प्लांट की तरफ से।

यह...।

वर्मा साहब का चेहरा जब फूलों से छुपने लगा तो उन्होंने एक माला निकालकर घोषाल बाबू को पहना दी। एक दीप नारायण को और बाकी की तीन मालाएं अपने साथ आए जूनियर लीडरों को पकड़ा दीं।

घोषाल बाबू का रोम-रोम इस सम्मान से खिल उठा। भरी भीड़ में घोषाल बाबू को वर्मा साहब द्वारा मिले इस सम्मान से देखने वाले विस्मित रह गए।

"अरे घोषाल बाबू को वर्मा साहब ने स्वयं अपने हाथ से माला पहनाई!"

"अरे वे भी कोई मामूली आदमी नहीं, फ्रीडम फाइटर हैं। जेल जा चुके हैं।"

"भाई, हम लोगों को तो मालूम ही नहीं था कि घोषाल बाबू इतने पहुंचे हुए आदमी हैं। हम लोग तो उनको घर की मुर्गी दाल बराबर ही जानते थे।"

"अरे अब देखना घोषाल बाबू से तो मैनेजमेंट भी डरेगा।"

स्वयं घोषाल बाबू पसीने-पसीने हो रहे थे। ब्लड प्रेशर भी बढ़ गया था। अचानक उन्होंने बड़े जोश में भरकर मुक्का हवा में लहराया और अपनी फटी हुई आवाज में चिंघाड़े–

हमारा नेता...

भीड़ ने जी खोलकर साथ दिया–

पी.एन. वर्मा, पी.एन. वर्मा...।

अपनी मांगें – लेके रहेंगे, लेके रहेंगे।

इंकलाब – जिंदाबाद – जिंदाबाद।

पूरा माहौल नारों की गूंज से झनझना उठा। क्वार्टरों, धोड़ों और जहां-तहां झोंपड़ियों से सारी जनता उमड़ पड़ी।

वर्मा साहब की तीन गाड़ियों के पीछे एक जीप भी आई थी। उसमें पुलिस के बड़े-बड़े अफसर बैठे थे। नारों की गरज और भीड़ के जोश को देखते हुए तमाम अफसर जीप से उतरकर मुस्तैद हो गए और पहले से मौजूद पुलिस को सतर्क कर दिया।

बैनर अर्थात लाल कपड़े पर सफेद कागज साटकर आई.एन.टी.यू.सी. बनाया गया था। उसके नीचे दूसरी लाइन में पी.एन. वर्मा लिखा था और बिलकुल नीचे की लाइन में दोनों तरफ लिखा था–

कोयला मजदूर जिंदाबाद – कोयला मजदूर जिंदाबाद।

बैनर हरकत में आया। तख्तियां बुलंद होकर बैनर के पीछे चलीं। इसके पीछे सैकड़ों बल्कि हजारों लोग कदम उठाने लगे। मगर सबसे आगे अर्थात् बैनर से भी आगे वर्मा साहब अपने दल-बल के साथ चल रहे थे। उनके दाहिने घोषाल बाबू और बाएं लाला दीप नारायण चल रहे थे।

एक मजदूर ने दूसरे मजदूर के कान में फुसफुसाया, "आईवन साहब शकरकंद देगा!"

किसी ने मजाक में पूछा, "छील कर या बिना छीले?"

"मजाक मत करो। वर्मा साहब जान लड़ा देगा। अपनी बात मनवा कर रहेगा।"

"अरे इनामुल खान से इतना डरता है मैनेजमेंट उसका तो आज तक सुना नहीं।"

"अरे यार, यह साला इनामुल खान कभी बोलता है मजदूर के लिए? जाकर पेट भर दारू पी लेता है लोकस साहब के पास और भगत जी के यहां से नोट का बंडल मिल जाता है। और क्या चाहिए उसे?"

"अरे भाई, सब नोट का खेल है। यह साला वर्मा कौन दूध का धुला है? सिर्फ अपनी यूनियन बनाने के लिए सारा तिकड़म फैला रहा है।"

"आईवन साहब हो या व्हाइट साहब, कोई नहीं सुनेगा। अंग्रेज का बच्चा ऐसी पट्टी पढ़ाएगा कि सब बराबर हो जाएगा। आज तक मजदूर का पैसा बढ़ा है? दादा राज से वही डेढ़ सौ रुपया महीना। मांगपत्र देने से क्या होगा? क्या वर्मा साहब की जमींदारी है यह? वह कोई गवर्नर है?"

जुलूस उसी तरह नारे लगाता हुआ धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था। घोषाल बाबू का चेहरा लाल हो गया था। बूढ़े आदमी थे। दिन भर कुर्सी तोड़ते थे। ऐसी तीखी धूप को झेल पाना मुश्किल लग रहा था, मगर इस थकावट के बावजूद जोश में किसी तरह की कमी नहीं आई थी।

उस इलाके में जहां इनामुल खान का जोर था पुलिस की एक बड़ी टुकड़ी लगा दी गई थी, इसलिए जुलूस मजे में धीरे-धीरे बढ़ता गया और लोगों की यह आशंका कि किसी भी जगह पथराव हो सकता है या पठान दंगल के लोग हमला कर सकते हैं, बेकार साबित हुई।

जुलूस जब आफिस पहुंचा तो आफिस में एकदम सन्नाटा था। आफिस स्टाफ को निर्देश मिला हुआ था कि कोई भी आदमी बाहर नहीं निकले और यथावत अपना काम करता रहे। जुलूस आफिस के सामने रुक गया। नारों की आवाज गूंजती रही।

इंकलाब -- जिंदाबाद।

हमारी मांगें -- पूरी हों।

काफी देर बाद एक आदमी आफिस से बाहर आया और वर्मा साहब से बोला, "सर, आप में से पांच आदमी सी.एम.ई. के आफिस में जाएं और मांगपत्र पेश करें।"

वर्मा साहब ने फौरन पांच आदमियों को चुना। उनमें घोषाल बाबू और लाला दीप नारायण भी शामिल थे। पांचों बड़े शान से सी.एम.ई. के आफिस में दाखिल हुए।

आफिस में नए सी.एम.ई. आईवन साहब के अलावा लोकस साहब, जाफरी साहब, मैनेजर मंगल सिंह और भगत जी पहले से ही मौजूद थे। आईवन साहब ने कुर्सी छोड़कर वर्मा साहब का स्वागत किया और तमाम लोगों से बैठने को कहा। सब लोग आराम से बैठ गए।

घोषाल बाबू की पंद्रह साल की नौकरी में यह पहला मौका था कि वे सी.एम.ई. आफिस में बैठे हों। साल में दो-चार बार इस आफिस में दाखिल होने का सौभाग्य अवश्य मिलता था लेकिन बैठने का कभी नहीं, जो काम होता बस खड़े ही खड़े होता। टांगें कांप रही होतीं। दिल धक-धक कर रहा होता। शब्द टूट-टूटकर निकलते। जल्दी से काम निपटाकर भाग निकलते लेकिन आज जब खुद सी.एम.ई. साहब ने कुर्सी पेश की तो वे खुशी और अहंकार से फूले नहीं समा रहे थे। कुर्सी पर इस तरह अकड़कर बैठ गए मानो मोहना कोलियरी के सी.एम.ई. वे खुद हों और सामने बैठा हुआ गोरी चमड़ी वाला उनके कैश डिपार्टमेंट का एक छोटा-सा क्लर्क हो, और वह कह रहा हो, 'डैम फूल काम नहीं होता तो छुट्टी काहे नहीं ले लेता।'

वर्मा साहब ने साफ कह दिया कि वे अपना मांगपत्र इस बंद कमरे में नहीं देंगे। उन्हें बाहर बरामदे में आना होगा ताकि जो भी बात हो मजदूरों के सामने हो।

आईवन साहब प्रतिनिधि-मंडल की बात मान गए। जब सब लोग बाहर आए तो वर्मा साहब ने अपना मांगपत्र उनके हवाले किया। साथ ही यह धमकी भी दी कि अगर एक महीने के अंदर मैनेजमेंट ने कोई फैसला नहीं किया तो मजदूर हड़ताल करेंगे और यह हड़ताल तब तक नहीं टूटेगी जब तक मजदूरों की मांगें पूरी नहीं हो जातीं।

मजदूर चकित रह गए।

"गजब का हिम्मतवाला है। वर्मा साहब ने साफ-साफ कह दिया कि पैसा नहीं बढ़ा तो हड़ताल हो जाएगी।"

"ऐसे डटकर तो कभी इनामुल खान भी नहीं बोला था।"

आईवन साहब ने वर्मा साहब और सामने खड़े मजदूरों को आश्वासन दिया कि वे इन मांगों को हेड आफिस भेज देंगे। सभी लोगों को उम्मीद रखनी चाहिए कि इस बात का कुछ न कुछ फैसला जरूर होगा।

आईवन साहब के इस आश्वासन पर मीटिंग खत्म हो गई। तमाशा देखने वाले लोग दो-दो, चार-चार की टोलियों में बंटकर बिखर गए। तमाशा खत्म हो गया। वर्मा साहब अपने सभी साथियों के साथ कार में बैठकर रवाना हो गए। आफिस के सामने का मैदान जो थोड़ी ही देर पहले आदमियों से खचाखच भरा हुआ था एकदम खाली हो गया।

शाम को इनामुल खान के एक समर्थक ने घोषाल बाबू से पूछा, "क्या लीडर साहब मिल गया शकरकंद?"

घोषाल बाबू आपे से बाहर हो गए, "क्या बोला?"

"यही बोला कि बाप लोग तो गाड़ी में बैठकर चला गया, अब क्या होगा?"

"अब क्या होगा, जो होना था हो गया।"

"अभी कहां हुआ बेटा, अभी तो बांस होगा।"

"बांस तो बेटा तुम लोग को होगा, बिना छीला हुआ बांस।"

"क्या बोला रे साला बंगाली, पौचा माछ, बांस तो हम लोग करेंगे। एक-एक को।"

बात बढ़ गई। घोषाल बाबू ने जोश में आकर उसे धक्का दे दिया। वह गिर पड़ा। फिर क्या था, इनामुल खान के समर्थक दौड़ पड़े। इधर आई.एन.टी.यू.सी. के वर्कर भी जमा हो गए। दोनों तरफ से कुछ पत्थर भी चले। चाय-पान की दुकानें धड़ाधड़ बंद हो गईं।

इस घटना की रिपोर्ट थाने में की गई। और तो कुछ नहीं हुआ, दोनों पार्टी के लोगों पर दफा 107 का मुकदमा दायर कर दिया गया।

तनख्वाह मिलने से सिर्फ एक दिन पहले कोलियरी आफिस के नोटिस बोर्ड पर एक नया नोटिस चिपकाया गया जिसमें दर्ज था कि तमाम मजदूरों और निम्न श्रेणी के कर्मचारी वर्ग की तनख्वाह में बीस प्रतिशत की वृद्धि कर दी गई है। यह नोटिस क्या था, बम का धमाका था। आधे घंटे के अंदर आफिस के बरामदे में हजारों मजदूरों की भीड़ लग गई। घोषाल बाबू और कुछ दूसरे कांग्रेसी नोटिस पढ़-पढ़कर मजदूरों को समझा रहे थे। मजदूरों की भीड़ बढ़ती ही जा रही थी। जिसने भी सुना दंग रह गया।

"ऐं हो, दस साल में इनामुल खान कुछ नहीं कर सका और दस दिन में पी.एन. वर्मा ने मैनेजमेंट को अपने पैरों पर झुका दिया।"

"अरे यार, बड़ा धाकड़ लीडर है।"

"कंपनी भी समझ गई थी कि अगर वर्मा साहब की बात नहीं मानी गई तो हड़ताल जरूर हो जाएगी।"

"अरे वह खान साहब की तरह खाने वाला आदमी नहीं है।"

"बीसों कोलियरियों में उसकी यूनियन यूं तो नहीं चल रही।"

इधर कांग्रेस के समर्थक जश्न मना रहे थे, उधर सोशलिस्ट यूनियन के खेमे में भूचाल आ गया था। यह कंपनी की खुली हुई गद्दारी थी। वह कंपनी की स्वीकृति यानी एडाप्टेड यूनियन थी उसे पीछे ढकेलकर कोलियरी मजदूर संघ वालों के एक मेमोरेंडम पर तनख्वाह बढ़ा देने का मतलब साफ था। यह खुला हुआ विश्वासघात था। इनामुल खान जानता था कि यह बदले की कार्यवाही है। उसे मालूम है कि उसकी पीठ में छुरा घोंपा गया है। वह क्रोध से तिलमिला रहा है। दहक रहा है, लेकिन करने को कुछ नहीं है। उसने व्हाइट साहब से, आइवन साहब आदि सबसे संपर्क किया परंतु हर जगह से वही रेडीमेड जवाब मिला कि यह फैसला हेड आफिस ने किया है।

बौखलाहट में चाहा कि मजदूरों को तनख्वाह लेने से रुकवा दिया जाए जब तक तनख्वाह चालीस प्रतिशत न बढ़ जाए, लेकिन यह हथियार भी कारगर साबित नहीं हुआ क्योंकि दूसरे दिन तमाम मजदूरों ने हंसी-खुशी अपनी तनख्वाह उठा ली।

झंझरी ने आज जमकर पी ली है। मुफ्त मिली थी। कांग्रेसियों ने आज दारू बांटी है। पियो-पियो, और पियो, जितना जी चाहे पियो। कोई रोक नहीं है। बेलदार भूइयां और बावरी सब पीकर मस्त हैं। औरतों ने भी चढ़ा ली है। और तो और, घोषाल बाबू भी पीकर बौरा गए हैं। भरी सड़क में भगवान दास को पकड़कर नाचने लगे। लोगों की भीड़ लग गई। बिना पैसे का तमाशा हो गया।

इधर बावरी पाड़ा में नाच चल रहा है। बेलदारों ने मृदंग निकाल ली है। खूब धमाधम हो रही है। उधर इनामुल खान और उसके साथियों के कलेजे पर आरा चल रहा है। गाने की आवाज, खुशियों के नारे और जोर से लगाए गए ठहाके उन्हें चुभ रहे हैं। वे कसमसा रहे हैं। खौल रहे हैं। कुछ करना चाहिए। अगर अभी नहीं किया तो फिर कभी नहीं किया जा सकेगा। सर जोड़कर बातें हो रही हैं। कानाफूसी हो रही है और गुप्त मंत्रणा चल रही है। शक्ति का प्रदर्शन जरूरी हो गया है। कंपनी को मालूम होना चाहिए कि यहां सोशलिस्ट यूनियन है। अभी जिंदा है, मरी नहीं है और जब तक जिंदा है...।

पहला टकराव मधुबन बाजार में ही हुआ। सोशलिस्टों ने कोलियरी मजदूर संघ के एक वर्कर को पकड़कर पीट डाला। वह आदमी शराब के नशे में धुत सोशलिस्टों को गाली बक रहा था। उसे पीटने के लिए यह कारण काफी था। चंद कांग्रेसियों ने उस आदमी की मदद करनी चाही तो उन्हें भी खूब पीटा गया। लाठी चल गई। एक आदमी का सर फट गया, एक के हाथ की तीन उंगलियां टूट गईं।

हर जगह शोर मच गया। सब ओर सनसनी फैल गई। आखिर वही हुआ जिसका डर था। दोनों यूनियन के लोग दो खेमों में बंट गए। दोनों दलों के समर्थक आसपास की दूसरी कोलियरियों से आकर जमा होने लगे। दोनों तरफ से जमाव हुआ। दोनों पार्टियां

आमने सामने आ गईं। इनामुल खान खुद खड़ा होकर ललकार रहा था। उधर एक ट्रक आदमी लेकर पी.एन. वर्मा भी आ गया। पहले दोनों तरफ से पथराव हुआ। स्याह पत्थर के टुकड़े कौओं के झुंड की तरह उड़ने लगे। तमाशा देखने वाले भाग खड़े हुए। मोहना कोलियरी की अधिकतर आबादी अपने घरों में बंद हो गई।

बाहर शोर होता रहा। गाली-गलौज, पत्थरबाजी, ललकारने की आवाजें सब सुनाई देती रहीं। हवाओं के कंधे पर सवार अफवाहें बंद मकानों में गूंजने लगीं।

"पठान दंगल का दो आदमी गिर गया है।"

"पांच आदमी कोलियरी मजदूर संघ के गिरे हैं।"

"घोषाल बाबू के सामने के दो दांत पत्थर लगने से टूट गए हैं।"

"वर्मा साहब का पांच ट्रक आदमी हथियारों के साथ आ रहा है।"

"आज लाशें गिरेंगी।"

"आज अनर्थ हो जाएगा।"

वर्मा साहब के पांच ट्रक आदमी नहीं आए, लेकिन पुलिस आ गई। पुलिस ने बंदूकें दिखाकर और हवाई फायर करके दोनों पार्टियों को तितर-बितर कर दिया। दोनों तरफ से आठ-आठ, दस-दस आदमी गिरफ्तार किए। बाकी सब भाग निकले।

अफवाहें बहुत गलत नहीं थीं। पत्थरों और लाठियों से बहुत सारे लोगों को चोट लगी थी। घोषाल बाबू के दो दांत सचमुच में टूट गए थे। टूटे दांत से बहते खून को उन्होंने अपने सफेद खद्दर के कुर्ते में इस तरह लगा लिया था कि देखने से ऐसा लगता था कि सबसे ज्यादा चोट उन्हीं को लगी है। पुलिस ने फौरन उन्हें इलाज के लिए सरकारी अस्पताल भिजवाया।

बहुत तनाव है। अभी भी दोनों तरफ से काफी तैयारी है। वैसे अस्थाई रूप से पुलिस ने स्थिति पर नियंत्रण कर लिया है लेकिन आशंका है कि कभी भी कुछ हो सकता है।

मैनेजमेंट एकदम बेफिक्र है। यह दो पार्टियों का झगड़ा है। इस झगड़े से उन्हें क्या लेना? उनको तो एक हद तक पहले से भी अंदाजा था कि कुछ न कुछ जरूर होगा। खास तौर पर लोकस बड़े इत्मीनान से है। उसने कई बार फोन करके शांति बहाल करने के लिए कहा था। यह उसका फर्ज था। घोषाल बाबू ठीक कहते हैं कि यह अंग्रेज लोग अपने काम में कहीं भी झोल नहीं छोड़ते। कोई ऐसी जगह नहीं होती जहां आदमी उंगली रखकर बता सके कि यहां उनकी गलती है।

रात आज मोहना कोलियरी में सरे-शाम आ गई है। दुकानें सब बंद हैं। शराब वालों ने भी आज दिया नहीं जलाया है। जुए के अड्डे वीरान हैं। ढोल-ताशा, गाना-नाचना सब बंद है। हर जगह उल्लू बोल रहे हैं। भाई जमाना खराब है। अच्छा है, आदमी चुपचाप अपने घर में पड़ा रहे। न बाहर निकलेंगे, न किसी आफ़त में फसेंगे।

सहदेव देर रात तक जागता रहा। शाम को उसकी मुलाकात जोनाथन से हुई थी। उसने बताया कि दोनों तरफ से काफी तैयारी है। मुमकिन है, कल या एक-दो दिन बाद फिर टकराव हो जाए। अब जो टक्कर होगी उसमें उम्मीद है कि बहुत अधिक खून-खराबा होगा।

देर रात तक वह यही सोचता रहा कि यह किसकी लड़ाई है? यूनियन की, मजदूर की या फिर मैनेजमेंट की? इस लड़ाई से किसको क्या मिलेगा? यह केवल प्रभुत्व की लड़ाई नहीं है। इसके पीछे भी वही एक चीज है, पैसा....!

मजदूर का चंदा!

कंपनी की रिश्वत!

ठेकेदारों के उपहार!

बहुत रात तक मस्तिष्क के सुनसान वीराने में भटकने के बाद अंत में वह सो गया।

मगर सुबह जो खबर उसे सुनने को मिली वह उसके लिए बिलकुल तैयार नहीं था। वह घबराकर अचानक बिस्तर से बाहर आ गया, "नहीं, नहीं...ऐसा नहीं हो सकता।"

"अरे यार, लाश पड़ी है इधर पश्चिम की झाड़ियों में, बारूद-घर के पीछे।"

"तुमने अपनी आंखों से देखा था?"

"हां भाई, मैं आंख से देखकर आ रहा हूं। वहां तो भीड़ लगी है। सैकड़ों लोग मौजूद हैं।"

"मगर रात को यह हुआ कब? कोई हल्ला-गुल्ला तो हुआ नहीं?"

"यह तो किसी को मालूम नहीं। सुबह-सुबह रमजू की घरवाली हगने के लिए गई तो उसने देखा। लोटा वहीं फेंककर चिल्लाती हुई भागी।"

"तुमने देखा, वह लाला ही था?"

"हां भाई, मैं लाला दीप नारायण को नहीं पहचानता?"

"अच्छा चलो, देखते हैं।"

वहां भीड़ कम हो गई थी। पुलिस ने दोनों लाशों को कब्जे में ले लिया था। एस.पी. साहब को धनबाद खबर चली गई थी। पी.एन. वर्मा आंधी-तूफान की तरह अपनी गाड़ी उड़ाता आ धमका। वह पुलिस वालों को बुरी तरह झाड़ रहा था। उसका सफेद गोरा चेहरा लाल हो उठा था। वह अपने आदमियों पर भी कुपित था।

"तुम लोग क्या कर रहे थे? हाथ में चूड़ी डालकर बैठ गए थे? तुम्हारे सामने उन लोगों ने दो-दो आदमियों की जान ले ली और तुम लोगों को मालूम भी नहीं पड़ा? मैं उन लोगों को बता दूंगा कि उन्होंने किसके घर न्योता दिया है?"

एस.पी. आया तो उस पर ऐसे बरसा जैसे मार ही बैठेगा।

"पुलिस की नाक के नीचे दो-दो खून हो गए। हमारे दो आदमी मारे गए। आखिर

ये पुलिस के जवान जो यहां तैनात थे वे क्या कर रहे थे? क्या भांग पीकर सो रहे थे? हम कल ही फैसला कर लेते अगर आपने रोका नहीं होता। अब बोलिए, हम किस पर भरोसा करें? इन निकम्मे, घूसखोर पुलिस-कर्मियों पर...!"

एस.पी. साहब ने बड़ी मुश्किल से उसे ठंडा किया। साथ ही वादा भी किया कि वे हत्यारों को अवश्य पकड़ेंगे और ऐसे लोगों को भी पकड़ेंगे जिनके समर्थन से या जिनकी शह पर इतना बड़ा कांड हुआ है।

लाश का पंचनामा बनाकर पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया और गिरफ्तारी शुरू हो गई। पी.एन. वर्मा ने खुद ऐसे पचासों नाम दिए थे जिन पर उसे शक था। परिणाम यह हुआ कि सोशलिस्ट पार्टी के अधिकांश आदमी गिरफ्तार कर लिए गए, जिनमें इनामुल खान भी था। बहुत-से लोग भाग निकले। पूरा पठान दंगल भूमिगत हो गया। सिर्फ असगर खान और कासिम खान पकड़े गए।

तब मोहना कोलियरी को सोशलिस्टों से छुटकारा मिल गया। जिस तरह पुराने जमाने में विजयी लोग हारकर बिखर जाने वाले विरोधी फौज के जवानों को धीरे-धीरे अपनी फौज में शामिल कर लेते थे उसी तरह पी.एन. वर्मा ने उन तमाम लोगों को समेट लिया जो सोशलिस्ट यूनियन की तबाही से बेसहारा हो गए थे। यह बात भी दिलचस्पी से खाली नहीं कि असगर खान और कासिम खान की जमानत खुद पी.एन. वर्मा ने करवाई। उसी ने उन दोनों को अदालत से बरी भी करवा लिया। मोहना कोलियरी में मजदूर संघ की यूनियन बन गई। दो कमरों के एक क्वार्टर में इसका आफिस खोला गया और खुद कंपनी ने इसे मान्यता प्रदान कर दी।

इस तरह सोशलिस्ट यूनियन का वह कांटा निकल गया जो बहुत दिनों से कंपनी को चुभ रहा था।

एक दिन मजूमदार ने उससे पूछा, "मेरे साथ एक जगह चलोगे?"

"कहां?"

"सोनापुर, जहां मैं पहले रहता था।"

"क्या काम पड़ गया तुमको वहां? मैं तो उधर का मुंह करके थूकता भी नहीं।"

"सिरसा कोलियरी नहीं जाना है? बस, ऊपर-ऊपर चले चलते हैं।"

"आखिर काम क्या है?"

"बस एक आदमी से मिलना है। तुम्हें भी मिला दूंगा।"

"कोई खास आदमी?"

"मेरे लिए तो बहुत खास है।"

वह तैयार हो गया। दूसरे दिन रविवार की छुट्टी थी, इसलिए दोनों सोनापुर जा पहुंचे, उसी घर के उसी कमरे में जिसमें पहले कभी मजूमदार रहता था। घर में और कोई नहीं

था। बस एक औरत थी। सर से पांव तक सफेद लिबास में नंगे पांव, नंगे हाथ, बड़ा-सा घूंघट निकाले। उसे समझते देर नहीं लगी कि वह कोई विधवा औरत है।"

औरत ने मजूमदार के पैर छुए। मजूमदार बोला, "इस बार यूनियन के चक्कर में काफी देर हो गई। हमारे यहां खूब मारामारी चल रही थी।"

औरत धीरे से बोली, "हां, मैंने सुना था। आपकी तरफ से बहुत चिंता थी क्योंकि आप भी तो ऐसे चक्कर में रहते हैं।"

मजूमदार हंसा, "मेरा चक्कर दूसरा है। मैं अगर कभी लड़ा भी तो पैसे या पावर के लिए नहीं लडूंगा। बस, सिर्फ मजदूरों के लिए लडूंगा।"

सहदेव बोला, "अब हांको मत।"

मजूमदार हंस पड़ा पर उसे कुछ कहने के बजाए औरत से पूछा, "तुमको तकलीफ तो बहुत हुई होगी?"

"नहीं, तकलीफ तो नहीं हुई। धर्मपाल पैसे के लिए बोल जरूर रहा था लेकिन उसने सौदा देना बंद नहीं किया।"

"भला सौदा देना बंद कर देगा? उसे सोनापुर में रहना है कि नहीं?"

सहदेव ने चुटकी ली, "हां भाई, मोहना कोलियरी वालों से तो अब लोग डरने भी लगे हैं।"

मजूमदार बोला, "बहुत बोलने लगे हो आजकल...।"

मजूमदार ने उसकी ओर से ध्यान हटाया और जेब से पचास रुपए निकालकर औरत की तरफ बढ़ा दिए, "मैं तो डर रहा था कि कहीं मेरी बहन भूखी न मर रही हो।"

औरत ने कोई जवाब नहीं दिया। वह खुद ही बोला, "और देखो, आज खाना हम लोग यहीं खाएंगे। कोई हर्ज तो नहीं है?"

औरत धीरे से बाली, "हर्ज क्या होगा?"

वह अब तक घूंघट काढ़े हुए थी। बोलने का स्वर भी बहुत धीमा था। मजूमदार समझ गया कि वह सहदेव की वहज से शरमा रही है इसलिए उसने कहा, "यह मेरा साथी सहदेव है। हीरा आदमी है। हम दोनों एक साथ इसी सिरसा कोलियरी में काम करते थे और अब भी इसने मेरा पीछा नहीं छोड़ा है। मोहना कोलियरी में भी मेरे साथ है। फर्क सिर्फ यह हुआ कि यहां था तो कम्यूनिस्ट था। वहां गया तो कांग्रेसिया हो गया है। अब तो मोहना कोलियरी में उसी की यूनियन बन गई है। मतलब यह कि सैंया कोतवाल हो गए।"

आखिरी वाक्य पर सहदेव मुस्कराकर रह गया। और कोई जगह होती तो वह कुछ कहता भी मगर यहां...।

अगर कमरा एक ही हो, वही रसोईघर भी हो, खाने का कमरा भी और आराम करने का भी तो पर्दा ज्यादा देर तक नहीं टिका रह सकता इसलिए खाना बनाते, बर्तन मांजते

जल्द ही उस औरत का घूंघट बिखरने लगा। वैसे पूरी तरह से उसने घूंघट हटाया नहीं, मगर फिर भी बहुत कुछ दिखाई दे गया। तब देखा सहदेव ने एक सांवली सलोनी लड़की को, बड़ी-बड़ी हिरण जैसी स्याह गहरी आंखें, काफी लंबे उलझे हुए बाल, तीखे नैन-नक्श और दिल लुभाने वाला भरा पूरा शरीर। खाना खिलाते समय वह कभी-कभी आंखें टेढ़ी करके उसे भर नजर देख लेती थी। उसकी आंखों में कुछ नहीं था। कोई आवेग नहीं, कोई ललक नहीं, कोई लगावट नहीं, बस एक मूक वेदना थी और एक बेगानापन। यह सहदेव को अच्छा लगा।

मजूमदार ने बाद में बताया कि जब वह यहां था तब वह नई-नई ब्याहकर आई थी। किस्मत की ऐसी मारी थी कि अभी साल भर भी नहीं हुआ था कि विधवा हो गई। कोई सगा-संबंधी नहीं था, न ही कोई दौलत थी। इतनी बड़ी दुनिया में अकेली लड़की कहां जाए? वह अंधेरा रास्ता खुला पड़ा था जो पता नहीं उसे कहां पहुंचा देता। वह उस रास्ते पर चल भी पड़ती अगर मजूमदार ने उसका हाथ थाम नहीं लिया होता।

तब से मजूमदार उसे पचास रुपए महीना खर्च के लिए देता है। घर में सिलाई मशीन है। बीस-तीस रुपए महीना उससे भी कमा लेती है। दिन किसी तरह कट जाते हैं। अकेली जान का क्या है? खाया खाया, नहीं खाया। कौन रोने वाला बैठा है? मजूमदार उसके अकेलेपन के दर्द को जानता है, शायद इसीलिए अपनी उस बहन के लिए कोई लड़का, कोई आदमी ढूंढ रहा है। मगर एक विधवा से शादी करने के लिए कोई तैयार नहीं होता। कौन तैयार होगा?

इस घटना के कोई तीन महीने बाद मजूमदार को मलेरिया हो गया। अपनी तनख्वाह तो ले आया था। अब परेशानी यह थी कि सोनापुर पैसे भेजे कैसे जाएं? सहदेव के अलावा किसी ने उसका घर भी नहीं देखा था। इसलिए मजूमदार ने किसी तरह उसे तैयार कर लिया कि वह सोनापुर पैसे पहुंचा दे।

प्रतीबाला ने उसके पांव नहीं छुए। किवाड़ की आड़ में खड़े होकर उसने मजूमदार के न आने का कारण पूछा और जब उसे मालूम हुआ कि मजूमदार को मलेरिया हो गया है तो वह एकदम से बेचैन हो गई।

"कब से बीमार हैं वे? कौन देखभाल करता होगा? कोई तो नहीं है उनका? डाक्टर को दिखलाया कि नहीं? दवा खा रहे हैं कि नहीं?"

उसने बहुत सारे सवाल पूछ डाले। सहदेव के लिए इस तरह खड़े-खड़े सारे सवालों का जवाब देना मुश्किल हो गया। शायद वह भी इस स्थिति को समझ गई और दरवाजे से जरा हटकर बोली, "आइए न, अंदर नहीं आएंगे?"

"अंदर आने का रास्ता मिलेगा तब न?"

सहदेव के इस कथन पर उसने चौंककर उसकी तरफ देखा। औरत गूढ़ अर्थ का वह

मतलब भी बहुत जल्दी निकाल लेती हैं जो बहुत अंदर कहीं छुपा होता है। वैसे सहदेव ने इस मतलब से यह बात नहीं कही थी।

इस बार घूंघट छोटा था। उसकी गहरी स्याह आंखों का दुख भी मद्धिम था, उस जमीन की तरह जिस पर कुछ ही दिन पहले थोड़ी-सी बारिश हो गई हो, नमी न हो मगर धूल गर्द सब बैठ गई हो और एक साफ-सुथरा अहसास जागता महसूस हो। हालांकि अब वह सीधी आंखें से उसकी तरफ नहीं देख रही थी। बस कभी-कभी आंखों के कोर से नजर डाल लेती।

"दादा आपकी इतनी तारीफ किया करते हैं, इतना बखान करते हैं कि मुझे आश्चर्य होता है, क्योंकि वे ऐसे आदमी नहीं हैं जो जल्दी किसी से प्रभावित हो जाएं।"

"यह सच है कि मैं उतना अच्छा आदमी नहीं हूं जितना वे समझते हैं। शायद काफी दिनों से एक साथ रहने की वजह से ऐसा हो या यह भी हो सकता है कि वे खुद इतने भले हैं कि सारे लोग उन्हें अच्छे लगते हों।"

वह हंसी तो नहीं, मुस्कराई भी नहीं मगर एक रोशनी-सी जरूर उसके चेहरे पर आई मानो अंदर कोई चराग जल उठा हो और उसकी मद्धिम रोशनी का यह प्रतिबिंब भर हो।

"तब तो आप उनको जानते ही नहीं हैं। कभी कोलियरी लीडरों, मालिकों या सूदखोरों की बात छेड़िए तो वे एकदम छोटे लोगों की तरह गाली-गलौज पर उतर आते हैं। मैंने कितनी बार मना किया है, मगर उनको गुस्सा आ जाए तो बड़ी मुश्किल हो जाती है।"

"वे जिस सिद्धांत के आदमी हैं उसके बिलकुल उलटा है यहां सब कुछ, इसलिए वे झल्लाए रहते हैं। अब इसी को देखो। तीन दिन से बुखार लग रहा है। जाते हैं, कोलियरी के डाक्टर मुखर्जी से गोली लेकर खा लेते हैं। मुखर्जी के बारे में एक लतीफा मशहूर है मोहना कोलियरी में कि जिसे परलोक का टिकट लेना हो वह जाए मुखर्जी के पास।"

उसने अचानक बातचीत का विषय बदल दिया।

"कब से बुखार लग रहा है उनको?"

"आज चार दिन हो गया है।"

वह चुप हो गई। थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली, "वे नहीं आते हैं तो मैं डर जाती हूं, क्योंकि कोई बड़ी बात हो जाए तभी वे नहीं आते वरना मामूली रुकावटें उन्हें नहीं रोक सकतीं।"

"मैं पहले भी यहां अकसर आता था जब मजूमदार यहां रहता था। इसी कमरे में, लेकिन मैंने पहले कभी आपको नहीं देखा।"

तब मैं दूसरे घर में रहती थी। फिर जब मैं बेसहारा हो गई और मजूमदार दादा की भी नौकरी छूट गई तो उन्होंने यह कमरा मुझे दे दिया। इसका किराया भी कम है और मकान-मालिक भी अच्छे लोग हैं। एक नजर मुझे भी देखते हैं। सच पूछिए तो अकेली

औरत के लिए बड़ी कठिनाई है।

एक अकेली औरत का सारा सूनापन कमरे में बिखरा पड़ा है। सारा सामान ढंग से रखा हुआ है। कहीं कोई अव्यवस्था नहीं, कहीं कोई बिखराव नहीं, जैसे इनको छेड़ने वाला, बिखेरने वाला कोई न हो।

"हां कठिनाई तो है, लेकिन आप बाहर निकलकर कोई काम करतीं तो अच्छा होता। इस इलाके में काम की कोई ऐसी कमी नहीं है। और कुछ नहीं तो किसी कोलियरी में नौकरी तो मिल ही जाती।"

"मैंने शुरू-शुरू में यही सोचा भी था और बाहर निकल भी पड़ती क्योंकि जिंदा रहने के लिए कुछ न कुछ तो करना जरूरी था लेकिन दादा ने रोक दिया। बोले—तुम मेरी छोटी-सी भोली-भाली बहन हो और यह एक खतरनाक जंगल है। यहां हजारों भेड़िए और दरिंदे आजादी से घूमते-फिरते हैं। तुम क्या करोगी? अच्छा है, अपने आपको बचाकर रखो। मैं जब तक जिंदा हूं तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होने दूंगा।"

सहदेव हंस दिया, "इतने बड़े कम्यूनिस्ट हैं मजूमदार साहब। मार्क्स और एंगेल्स से नीचे बात नहीं करते। हैरत है, उन्हें सिर्फ अपनी बहन दिखाई दी। ये जो हजारों औरतें विभिन्न कोलियरियों में कोयला लोड करती हैं, कोयला चुराकर बेचती हैं और दूसरे बीसियों तरह के काम करती हैं वे भी तो इसी जंगल में रहती हैं उन्हीं भेड़ियों और दरिंदों के बीच। इनका ध्यान नहीं आया उनको?"

वह कुछ बोली नहीं। उसे शायद बुरा लगा। शायद वह अपने मुंह-बोले भाई, अपने दादा के खिलाफ कुछ भी सुनना नहीं चाहती थी। मगर यह क्रोध और नापसंदगी उसके चेहरे से जाहिर नहीं हुई। सहदेव ने उसे पैसे दिए और उठ खड़ा हुआ।

"अच्छा, मैं चलता हूं।"

"क्यों! खाना नहीं खाएंगे?"

वह हंस कर बोला, "हर बार खाना जरूरी तो नहीं।"

"एकदम जरूरी है। अगर दादा होते तो कोई बात नहीं थी। अब तो उन्हें शिकायत हो जाएगी कि मैंने पूछा नहीं?"

"अरे पूछ तो आप ही रही हैं। इंकार तो मैं कर रहा हूं।"

"क्या सचमुच आप इंकार कर रहे हैं?" उसने यह सवाल करके सहदेव को देखा तो उसे जवाब देना मुश्किल हो गया। अंत में वह खुद ही बोली और ऐसे बोली मानो हुक्म दे रही हो।

"खाना बना हुआ है। खाकर जाइएगा।"

खाना खाते हुए सहदेव ने बड़ी नरमी से उससे पूछा, "अच्छा, एक बात बताइए। पता नहीं, मुझे यह बात पूछनी चाहिए या नहीं? मजूमदार आपके लिए कोई लड़का ढूंढ

रहा है?"

वह चुप रह गई। सहदेव ने दूसरा सवाल किया, "क्या आपके यहां विधवा की शादी होती है?"

"नहीं, हमारे यहां विधवा की शादी नहीं होती। मैं ब्राह्मण हूं। दादा ने आपको बताया होगा। मगर दादा कम्यूनिस्ट आदमी हैं। धरम-वरम को नहीं मानते, इसलिए चाहते हैं कि मुझे कोई सहारा मिल जाए।"

"और आप? आप क्या सोचती हैं?"

प्रतीबाला ने जवाब जल्द नहीं दिया बल्कि कोशिश की कि इसका जवाब दे ही नहीं, पर सहदेव के कई बार पूछने पर उसने कहा, "मेरे लिए धर्म बहुत बड़ी चीज है, मगर इससे भी बड़ी चीज मेरे दादा हैं। अगर वे कह दें कि तुम कुएं में कूद जाओ तो मैं एक पल के लिए भी नहीं सोचूंगी।"

सहदेव चुपचाप उसे देखता रहा। छोटे-से घूंघट से उसका आधा चेहरा दिख रहा था। सुतवां नाक जिसके छेद में तिनका लगा था और एक आंख जिस पर पलकों की लंबी कतार झुकी हुई थी। होठों का कोना एक तरह से थोड़ा सूखा, रूखा और प्यासा लग रहा था।

सहदेव को बहुत दिन नहीं लगे फैसला लेने में। उसने जब यह बात मजूमदार को बताई तो पहले वह चौंका, फिर एकदम गंभीर हो गया।

"क्या तुम्हारे परिवार वाले राजी हो जाएंगे?"

"क्या उनका राजी होना जरूरी है?"

"फिर भी आदमी एक समाज में ही रहता है। उससे विद्रोह करना ठीक होगा?"

"यह मैं नहीं, जानता। मुझे फैसला करना था कर लिया। मुझे इसके बाद न परिवार की परवाह है और न समाज की। मैं सिर्फ अपने विवेक की बात मानता हूं और यह बात तुम भी जानते हो कि यह गलत काम नहीं है।"

"मैं जानता हूं सहदेव, लेकिन तुम मेरे बहुत अच्छे दोस्त हो, बहुत प्यारे दोस्त हो। मैं नहीं चाहता कि थोड़ा-सा जहर, थोड़ी-सी कड़वाहट तुम्हारी आने वाली जिंदगी में शामिल हो जाए।"

"मजूमदार साहब, मैंने यह फैसला भावना में बहकर नहीं किया है, बल्कि बहुत सोच-समझ कर किया है।"

वह व्हाइट साहब के आफिस जा रहा था कि रास्ते में जाफरी साहब मिल गए।

"अरे सहदेव! सुना, तुमने शादी कर ली किसी बंगालिन से?"

"शादी की नहीं साहब, हो गई।" सहदेव ने प्रसन्नता छलकाते हुए कहा।

"अमां यार, हुई कहां? शादी तो तुमने की। जो हुई थी वह मुहब्बत थी।"

जाफरी साहब के साथ शाही साहब, लोडिंग बाबू और एक जूनियर इंजीनियर जायसवाल भी थे। सहदेव ने कोशिश की कि खिसक ले मगर जाफरी साहब इतनी आसानी से कब छोड़ने वाले थे। उन्होंने कहा, "मगर यार हैरत है, तुम्हें यह मुहब्बत हुई कैसे? यह तो हुआ करती है अपने लेखनऊ या फिर दिल्ली में, पाक मुहब्बत...कमर से ऊपर वाली। कोलफील्ड में हर आदमी डायरेक्ट हिट (Direct hit) करना चाहता है।"

शाही साहब और जायसवाल जोर से हंस पड़े। सहदेव एकदम से झेंप गया। हंसी जरा रुकी तो शाही बोला, "जाफरी साहब, हर आदमी आपकी तरह तो है नहीं, आप तो नीचे से चलते हैं। पांव के अंगूठे से शुरू होते हैं और कमर तक जाते-जाते खत्म हो जाते हैं। उससे ऊपर जाने की कभी जरूरत ही नहीं समझी आपने।"

"अरे यार, उसके ऊपर जो है वह बच्चों के लिए है।"

इस बार फिर लंबा ठहाका होगा। सहदेव ने फिर भाग निकलने की कोशिश की और जाफरी साहब ने फिर पकड़ लिया।

"अरे भाई, भागो मत। आजकल तो तुम्हारा सितारा बुलंदी पर है। पहले तो माइनिंग सरदारी के लिए दरख्वास्त दे ही दी है। फिर बैठे-बिठाए बिना खर्चा-पानी के बीवी हासिल कर ली। अब ओवरमैन होने में कितनी देर लगेगी? तुम कम से कम मिठाई तो खिलाओ।"

सहदेव ने शरमाकर कहा, "खिलाएंगे साहब, आप जब बोलिए।"

"अच्छा छोड़ो, किसी दिन मछली-भात खाएंगे तुमसे। अभी फिलहाल चाय भिजवा दो मेरे आफिस में।"

जान बची और लाखों पाए। जल्दी से चाय वाले को तीन चाय जाफरी साहब के यहां भेजने को कहकर भागा तो सीधे वाइंडिंग रूम और वहां से नीचे...

वह तो गया था व्हाइट साहब से बोलने कि दो गार्ड की जरूरत है सपोर्ट के लिए और फंस गया जाफरी के फेर में।

इस शादी पर कोलियरी के दूसरे लोगों को भी हैरत थी। धोड़ों की औरतें रोज कोई न कोई बहाना बनाकर उसकी पत्नी को देखने आ जातीं।

"बंगालिन है, लेकिन फटाफट हिन्दी बोलती है।"

"बड़ी सुंदर है।"

"जूठी हांड़ी..."

शादी हुए डेढ़ महीना बीत गया। एक दिन जब वह काम पर से वापस आया तो यह देखकर हैरान रह गया कि प्रतीबाला बेहद घबराई हुई कभी दरवाजे के बाहर झांकती है कभी अंदर चली जाती है। उसे देखा तो फौरन बाहर निकल आई।

"जेठ जी आए हैं देस से।"

"कौन भैया? कहां हैं??"

"पता नहीं, झोला रखकर बोले कि कह देना, तुम्हारा भाई आया है। बहुत नाराज थे। मैंने कितना कहा अंदर आने को, पर वे आए नहीं बल्कि कोई जवाब भी नहीं दिया।"

सहदेव उल्टे पैरों भाई को खोजने निकल गया। ज्यादा खोजना नहीं पड़ा था। वे बाजार की एक चाय की दुकान पर चुपचाप बैठे थे।

"चलिए, घर नहीं चलेंगे?"

"कौन-सा घर? घर तो तुमने बर्बाद कर दिया। बाप-दादा की इज्जत मिट्टी में मिला दी। तुम चलो घर, देस...मैं तुम्हें लेने आया हूं।" उसके भाई ने काफी गुस्से से कहा।

"पहले आप तो घर चलिए। फिर आप जैसा कहेंगे वैसा होगा।"

"कहूंगा क्या? सीधी बात है। इस बंगालिन को छोड़ो और मेरे साथ चलो। बहुत कर चुके नौकरी। चलो, वहीं दोनों जन खेती करेंगे। कम से कम बाप-दादा की इज्जत तो बची रहेगी।"

"गुस्सा मत होइए। मैंने कुछ गलत नहीं किया है।"

"अरे यह गलत नहीं है?"

"क्या गलत है?"

"क्या वह विधवा नहीं थी? क्या विधवा से शादी..."

"कहां लिखा है कि विधवा से शादी नहीं की जा सकती?"

इस बार उसका भाई बिगड़ गया, "मैं तुमसे बहस करना नहीं चाहता। सीधे-सीधे कहता हूं कि इस औरत को छोड़ दो नहीं तो..."

"नहीं तो क्या?"

"नहीं तो हम लोगों को तुम्हें छोड़ना होगा।"

"ठीक है, पहले आप घर चलिए। इस तरह सड़क के किनारे बखान करना क्या अच्छा लगता है?"

"मगर मैं उसके हाथ का खाना नहीं खाऊंगा।"

"मत खाइएगा, मगर चलिए तो..."

वह घर में दाखिल हुआ तो प्रतीबाला ने घूंघट निकाला। साड़ी के कोने को गले में लपेटकर आगे बढ़ी और उसके पांव की मिट्टी छूकर हाथ सर पर फेरा। उसके भाई का हाथ अनायास आशीर्वाद के लिए उठ गया। असल में उसे यह अंदाजा नहीं था कि वह इतनी कमसिन और खूबसूरत होगी। सब समझ रहे थे कि वह कोई पक्की उम्र की विधवा बंगालिन है जिसे सहदेव ने घर डाल लिया है। अपने भाई के चेहरे का भाव समझकर सहदेव मुस्कराया। उसने प्रतीबाला से पूछा, ''खाना तैयार है?"

"हां।"

"पानी ले आओ।"

उसका भाई तुनककर बोला, "मैं खाना नहीं खाऊंगा।"

"ब्राह्मण के हाथ का परोसा खाना ठुकरा देंगे आप?"

"मैं कल चला जाऊंगा। तुमको भी चलना है।"

सहदेव बोला, "कल की बात कल करेंगे। पहले खाना खाइए।"

"नहीं खाऊंगा।"

इस बार प्रतीबाला आगे बढ़ी और धीरे से बोली, "जेठ से कहिए जी, खाना खा लें। मैं अभागिन जरूर हूं, मगर अछूत नहीं। मेरे हाथ का खाने से धर्म भ्रष्ट नहीं होगा। जो पाप लगना है वह मुझे लगेगा।"

अब इंकार की गुंजाइश नहीं थी, इसलिए वे बैठ गए। दोनों भाइयों ने खाना खाया और देर रात तक बातचीत करते रहे। तय यह हुआ कि दोनों प्रतीबाला के साथ घर जाएंगे अर्थात गांव–

गांव ने प्रतीबाला को स्वीकार नहीं किया...

हर जगह बड़ी थू-थू हुई। गांव में ऐसा कभी नहीं हुआ था। किसी युग में नहीं। डोमिन चमैन को लोगों ने रखैल बनाकर रख लिया था। रात के अंधेरे में उसके घर आना-जाना भी होता था, लेकिन शादी करके किसी ने घर कभी नहीं बसाया। औरतें देख-देखकर जातीं और सौ-सौ तरह की बात बनातीं।

"बंगालिन है, मगर जाति क्या है?"

"ब्राह्मण? ब्राह्मण तो कभी होगी नहीं। ब्राह्मण क्या कहार से शादी करेगी?"

"भाई रांड़ औरत जिस घर में घुसी उसका सत्यानाश किया।"

"फंसाया है सहदेव को।"

"बंगाली लोग दहेज के डर से अकसर लड़कियों की रस्सी ढीली कर देते हैं।"

प्रतीबाला एकदम से बुझ गई है। वह कहीं न कहीं से इस तरह के कटाक्ष सुन लेती है। अपमान का अहसास उसे जलाए डाल रहा है। वह हमेशा गुस्से से तिलमिलाई रहती है। उसका बस नहीं चलता वरना वह एक दिन भी यहां नहीं रहे, हालांकि उसकी जेठानी और जेठ उसकी काफी आवभगत कर रहे हैं। सहदेव उसके दिल का हाल जान रहा है, समझ भी रहा है इसलिए सिर्फ सात दिन रहकर लौट आया। इन सात दिनों में दो बहुत महत्वपूर्ण बातें हुईं।

एक तो जुलिया उससे मिलने आई और जरा-सा एकांत पाते ही उससे पैसा मांग बैठी।

"कुछ पैसे हों तुम्हारे पास तो...आजकल बहुत तकलीफ में हूं। तीन महीने से बीमार हूं। ससुराल वालों ने यहां ढकेल दिया है।"

सहदेव ने उसे सौ रुपए का नोट दे दिया।

सहदेव को अफसोस नहीं हुआ। सिर्फ हैरत हुई कि क्या मुहब्बत में भी पैसे की इतनी

पहुंच है? क्या हर चीज चलकर सिर्फ एक ही केंद्र तक पहुंच जाती है? पैसा...इस जमाने की शायद सबसे निर्दयी चीज, सबसे वीभत्स और घृणा के योग्य यही है। लेकिन ठहरो। क्या सचमुच यह वीभत्स और गर्हित चीज पैसा ही है या वह गरीबी, वह मजबूरी और वह निरंतर भूख की मार है जो शनैःशनैः जिंदगी को जलील करते करते इस हद तक पहुंचा देती है कि एक महबूबा अपने महबूब के सामने पैसे के लिए हाथ फैलाने पर मजबूर हो जाती है। वह जुलिया से आंख नहीं मिला पा रहा था। अगर आंख मिला पाता तो कम से कम इतना जरूर कहता कि तुमने मुहब्बत की कीमत बहुत कम आंकी है।

जुलिया समझ रही है कि सहदेव क्या सोच रहा है। वह पैर के अंगूठे से जमीन कुरेदती जा रही है और उसकी गरम हथेली में सौ रुपए का मुड़ा-तुड़ा नोट पसीने से भीगता जा रहा है। हल्के बुखार में धीरे-धीरे सुलगता बदन अब ज्यादा दिन नहीं टिकेगा, जुलिया यह जानती है। यह भी उसे मालूम है कि सौ रुपए में उसका इलाज नहीं हो सकता मगर थोड़ी-सी राहत, महीने भर की उम्मीद, दुख और गरीबी के इस तपते हुए रेगिस्तान में हवा का एक ठंडा झोंका—फिर उसने किसी गैर से थोड़े ही कुछ मांगा है। सहदेव से तो वह कुछ भी मांग सकती है...कुछ भी...वह नीचे झुका हुआ सिर ऊपर उठाती है तो आंसू की दो चंचल बूंदें आंखों से छलक पड़ती हैं। जुलिया उसे इतनी सफाई से छुपाती है कि उसकी ओर देखता हुआ सहदेव भी नहीं देख पाता।

और दूसरी बात जो हुई वह भी कम आश्चर्यजनक नहीं थी। उसके आने के एक दिन पहले भाई ने रात के खाने पर कहा, "अब तुम पता नहीं, कब आओगे। एक बात का फैसला कर जाते तो अच्छा था।"

"कौन-सी बात?" वह चौंक गया।

"यही गांव-घर की जायदाद के बारे में। अब तुम्हारे भी बच्चे होंगे। मेरे भी हैं। आगे चलकर बच्चों में खून-खराबा क्यों हो? बेहतर है कि हम लोग पहले ही कोई फैसला कर लें।"

"आप क्या फैसला करना चाहते हैं?" सहदेव को बड़ी हैरत हुई।

"अब देखो न, तुम शहर में कमाते हो और भगवान की कृपा से अच्छा कमाते हो। तुम्हें कंपनी की ओर से घर भी मिला हुआ है। तुम वह सब छोड़कर यहां आने से तो रहे। तो क्यों नहीं कोलियरी का जो कुछ है तुम ले लो। यहां की जमीन और घर लड्डू को दे दो। लड्डू को तो तुम मानते भी बहुत हो।"

सहदेव आसानी से समझ गया। उसके भाई की बातचीत साफ थी। इतने दिनों से उनकी जो आवभगत हो रही थी वह बेमतलब थोड़े ही थी। अभी वह कुछ बोल भी नहीं पाया था कि फैसला प्रतीबाला ने कर दिया।

"जेठ जी ठीक कह रहे हैं। हम आखिर गांव की जमीन लेकर करेंगे भी क्या? यहां

हमें न रहना है, न ही बार-बार आना है और न ही गृहस्थी करनी है।"

सहदेव ने नजर उठाकर प्रतीबाला को देखा। औरत नहीं जानती कि जमीन एक ऐसी चीज है जिसकी वजह से गांव से रिश्ता बना रहता है। इतने जमाने से, पुरखों से बना हुआ यह रिश्ता आसानी से नहीं तोड़ना चाहिए। फिर भी उसने प्रतीबाला की बात नहीं उठाई और अपने भाई से बोला, "ठीक है भैया, मैं हिस्सा लड्डू को देता हूं।"

सहदेव के अलावा सिर्फ एक इंसान और ऐसा था जिसके चेहरे पर यह सुनकर चमक आ गई। वह थी प्रतीबाला।

गांव से हमेशा के लिए रिश्ता तोड़कर वह खुश थी।

रविवार का दिन था और वह जोनाथन के साथ झरिया गया था। उस दिन बहुत अधिक ठंड थी, इसलिए वापसी में जोनाथन ने एक चाय की दुकान के पास रोक लिया, "आओ, चाय पी लो, बहुत ठंड है।"

वे दोनों वहीं चाय पीने लगे। वहीं सड़क के किनारे बेंत की झूड़ियां उलटकर बैठी हुई चंद कोयला बेचने वाली औरतें भी चाय पी रही थीं। उनमें से एक बहुत देर तक गौर से सहदेव को देखती रही, फिर धीरे से उठकर उसके पास चली आई।

"सहदेव भैया हो न?"

अपना नाम सुनकर वह दंग रह गया। शायद उसकी हैरत को भांप कर औरत बोली, "हमको नहीं पहचानते?"

कहीं कुछ था जो जाना-पहचाना लग रहा था। उसकी आवाज, आंखें, चेहरा, कोई चीज ऐसी जरूर थी जो किसी पुरानी जान-पहचान का यकीन दिला रही थी मगर दिमाग पर जोर देने के बाद भी वह उस औरत को नहीं पहचान सका। इधर जोनाथन भी हैरत में था। औरत ने कहा, "हम खतुनिया हैं, भैया रसूलपुर वाली।"

एकदम से जैसे घुप्प अंधेरा हो गया। जैसे मस्तिष्क की सारी बत्तियां अचानक बुझ गईं। उसे ऐसा लगा जैसे पूछ रही हो—इरफान के अब्बू कहां हैं? जैसे वह मांग रही हो, इरफान के अब्बू को ला दो, अब बहुत दिन हो गए हैं...

जोनाथन सहदेव की उड़ी हुई रंगत और सूखे हुए होठों को देखकर एकदम से डर गया।

"क्या बात है, सहदेव? यह...यह औरत कौन है?"

जवाब खतुनिया ने ही दिया, "हम खतुनिया हैं भैया, रसूलपुर वाली। भैया ने हमें पहचाना नहीं। मेरे मियां इन्हीं के साथ काम करते थे। यह एक बार मेरे घर भी गए थे। मेरे घर का खाना भी खाया था।"

मत बोलो..और कुछ मत बोलो...भगवान के लिए...

आंखों में तेजाब पड़ा है। दिमाग पर उंड़ेला गया है या सारी दुनिया इस जहरीले झील में डुबो दी गई है! तीव्र जलन का एकदम तीखा और असहनीय अहसास...

जोनाथन उसकी बांह पकड़ लेता है।

"सहदेव क्या बात है? तुम्हारी तबीयत तो ठीक है?"

वह धीरे-धीरे अपने आपको शांत कर पाता है। अपने आपको दरयाफ्त करता है। उस जगह को महसूस करता है जहां वह खड़ा है। उस औरत को पहचान जाता है जो उसे बड़े आश्चर्य से देखे जा रही है और तब वह डरता है कि आज उससे जवाब मांगा जाएगा। आज खतुनिया उससे जरूर मालूम करके रहेगी कि रहमत मियां कहां है?

"ऐं भैया, हमको पहचाना नहीं?"

वह पहचान गया है। चेहरे की झुर्रियों के पीछे, बुझी हुई आंखों के अंदर, बेहद उदास चेहरे के दूसरी तरफ वह खूबसूरत, हंसमुख, अकस्मात बोलने वाली, अनायास हंसने वाली औरत साफ दिखाई दी। इस डर से कि कहीं वह कुछ पूछ न ले, उसने खुद ही पूछा, "बाबा ठीक हैं?"

"बाबा को गुजरे तो जमाना हो गया।"

"ओह...अच्छा बीमार थे क्या?"

"बीमार क्या थे भैया, बस बेटे का सोग ले गया।"

"मगर तुम यहां कब आईं?"

"हमको आए तो छह साल हो गया। वहां रहती तो क्या करती भैया? वहां खान साहब जैसे लोगों का लात-जूता मिलता सो यहां चली आई कि भीख मांगकर जी लूंगी मगर रसूलपुर में नहीं रहूंगी।"

उसने किसी अंदरूनी या अनजाने डर के कारण इरफान के बारे में कुछ नहीं पूछा। वह खुद ही बताती है।

"मेरा इरफाम अब बड़ा हो गया है। बड़े स्कूल में पढ़ता है, यहीं तो। हमको मना करता है कि कोयला मत बेचो। हम बोले भैया कि जब तुम कमाने लगोगे तो नहीं बेचेंगे।"

उसके मैले बूढ़े चेहरे पर थोड़ी-सी चमक आ जाती है। उसके साथ बैठी हुई औरत उठकर खड़ी हो जाती है।

"ऐ खतुनिया, घर नहीं चलोगी?"

"ठहरो, इतने दिन पर मेरा देवर मिला है," फिर वह सहदेव से बोली, "कहां काम कर रहे हो, भैया? कौन-सी कोलियरी में?"

"मोहना कोलियरी में हूं, भाभी! किसी दिन आओ न। किसी से भी पूछ लोगी कि लीडर सहदेव का घर कौन है तो वह बता देगा।"

"अच्छा भैया, आऊंगी किसी दिन।"

वह टोकरी को सर पर रखकर नहीं बल्कि ओढ़कर उन औरतों के साथ चली गई। जोनाथन बहुत देर से सब्र किए हुआ था। जैसे ही वे बाबू गादा की पगडंडी पर मुड़े तो उसने बेसब्री से पूछा, "कौन थी वह औरत?"

सहदेव उसे जवाब नहीं देता। छह साल से वह यहीं है। इसी कोलफील्ड में, वह झूड़ी में भरकर गली-गली घूमकर कोयला बेचती है। क्या उसे मालूम है कि रहमत मियां के साथ क्या हुआ था? क्या वह जानती है कि वह कौन-सी कोलियरी है? उस कोलियरी की कौन-सी गुफा है? उस गुफा का वह कौन-सा अंधेरा कोना है जहां उसके बेटे का बाप, उसका सरताज, उसकी हंसी, उसकी खुशी, उसकी जवानी, उसकी ताजगी, उसकी सारी दुनिया सोई पड़ी है? शायद वह नहीं जानती। शायद वह उससे पूछ ले...क्या जवाब देगा वह? सब कुछ थोड़ा-थोड़ा, विस्तार के साथ क्या बता देगा या फिर वह चुप रह जाएगा? जैसे वह तब चुप रह गया था जब रहमत मियां का बाप उससे मिला था। लेकिन रहमत के बाप और खतुनिया में बहुत अंतर है। वह इतनी आसानी से धोखा नहीं खाएगी। इतनी आसानी से नहीं बहल सकती।

जोनाथन फिर अपना सवाल दुहराता है, "यह औरत कौन है? मैंने उसे कभी नहीं देखा। उसे देखकर तुम इतना परेशान क्यों हो गए?"

"उसका एक बड़ा कर्ज है मुझ पर।"

"सूद वाला या बिना सूद वाला?"

"मजाक मत करो। यह औरत मुझे न मिलती, कभी नहीं मिलती, जिंदगी भर नहीं मिलती तो अच्छा था।"

"अब मैं तुमसे और कुछ नहीं पूछूंगा।"

"कभी बताऊंगा मैं खुद ही, बहुत लंबी कहानी है।"

घर पहुंचकर उसने थैला दीवार के साथ लगाकर खड़ा कर दिया और रोज के नियम से हटकर बरामदे में बिछी नंगी चारपाई पर लेट गया। दूसरे अधिकांश लोगों की तरह वह भी लगभग हर रविवार को झरिया जाता था और जरूरत की खास-खास चीजें जिसमें सब्जी और कभी-कभी मांस भी शामिल होता ले आता था। हर रविवार को वह प्रतीबाला को पुकारकर थैला उसके हाथ में पकड़ाकर खुद आंगन में रखे पानी के ड्राम के पास पहुंच जाता। वहां अच्छी तरह हाथ-मुंह धोता तब जाकर चारपाई पर बैठता। मगर आज वह ऐसे चुपचाप आकर लेट गया तो प्रतीबाला को चिंता हुई।

"क्या बात है? ऐसे क्यों लेट गए? तबीयत तो ठीक है न?"

उसने आंखें जो थोड़ी देर के लिए बंद कर ली थीं, खोलकर प्रतीबाला को देखा और धीरे से बोला, "आज खतुनिया मिली थी।"

"कौन?"

"खतुनिया—तुम्हें रहमत मियां का किस्सा बताया था न, उसी की पत्नी।"

"अच्छा वह...क्या अभी तक जिंदा है?"

"तुम्हारा क्या ख्याल है, उसे मर जाना चाहिए था?"

"नहीं-नहीं..." प्रतीबाला घबरा गई, "मेरा मतलब है इतनी बड़ी घटना हुई उसके साथ। इतना बड़ा सदमा तो किसी की भी जान लेने के लिए काफी है।"

"तुम्हें याद है? उसका एक लड़का भी था। अब जवान हो गया है।"

"अच्छा?"

"वह यहीं झरिया में पढ़ रहा है। हाई स्कूल में।"

"चलो, उसके अच्छे दिन लौट आएंगे।"

"क्या सचमुच उसके अच्छे दिन लौट आएंगे? ऐसे दिन जैसे रहमत मियां की जिंदगी में थे?"

प्रतीबाला तिलमिला गई इस सवाल पर। जवाब वह दे सकती है। हर औरत दे सकती है मगर देगी कोई नहीं। गृहस्थ जीवन का सुख, चाहे ऊपर छप्पर हो या न हो, चाहे फर्श पर बिस्तर पड़ा हो या न हो, चाहे साड़ी तार-तार हो गई हो, चाहे पेट में मुट्ठी भर अन्न भी न हो मगर मजबूत बांहों का घेरा, चौड़ी बाल भरी छाती का स्पर्श उसकी उन खुशियों की गारंटी होता है जो उसे फिर कभी हासिल नहीं हो सकतीं। ये खुशियां जो शायद दुनिया की हर औरत के लिए सबसे अहम हों।

प्रतीबाला ने होशियार औरतों की तरह बात बदल दी।

"उसे लाए नहीं साथ, मैं भी देखती जरा।"

"उसने आने को कहा तो है।"

"क्या करती है वह?"

"कोयला बेचती है।"

"कोयला बेचती है? पढ़ाती कहां से लड़के को?"

"पता नहीं, शायद और कोई काम करती है।"

इधर वे बातों में लीन थे, उधर दोनों लड़कों ने मौके का पूरा-पूरा फायदा उठाकर थैले को उलट दिया। हर हफ्ते सहदेव उनके लिए झरिया से कुछ न कुछ ले आता था। कभी मिठाई, कभी बिस्कुट, कभी कोई नमकीन चीज। उसी की तलाश थी उनको। मां की नजर पड़ी उन पर तो वह दौड़ी।

"ए री सरबोनाश कोरे छी।"

वह कभी-कभी अनायास बंगला बोल उठती थी और तब सहदेव को मजा आ जाता था मगर आज उसकी बंगला सुनकर भी वह चुप ही रहा।

जिस दिन खतुनिया उसके यहां आई यानी दूसरे रविवार को उस दिन भी चुपचाप ही रहा। ज्यादातर बातें प्रतीबाला ही करती रही।

"आपको कितना मिल जाता है कोयला बेचने से दिन भर में?"

सहदेव को बड़ा गुस्सा आया। कमबख्त औरत चाहे जो कोई हो सबसे पहला सवाल पैसे का करेगी। चाहे लखपति की पत्नी ही क्यों न हो।!

"पांच-छह रुपया।"

"छह रुपया?" प्रतीबाला को आश्चर्य हुआ तो सहदेव बोला, "तुम भी चल दो कल से अपनी जेठानी के साथ।"

खतुनिया फौरन बोली, "अरे यह क्यों जाएगी कोयला बेचने? मैं तो अभागन हूं। मेरा नसीब जल गया तब न निकलना पड़ा घर से। अल्लाह ऐसा दिन किसी को न दिखाए।"

उसके आखिरी वाक्य में जो दर्द था उसने अचानक सारे माहौल को गंभीर बना दिया। सहदेव ने डरते हुए उसकी ओर देखा कि कहीं वह कुछ पूछ न बैठे, मगर कुछ पूछने के बजाए वह खुद ही बोली, "हमको तो भैया शुरू से ही अंदाजा हो गया था कि इरफान का अब्बू ऐसे आदमी थे ही नहीं। सो जब ननूक की चिट्ठी आई कि वह किसी औरत के साथ भाग गया है उसी वक्त कह दिया कि यह गलत है। उनको कुछ न कुछ हो गया है। यह बात तो यहां आने पर मालूम हुई कि उनके साथ क्या हुआ। वह भी, दो साल बाद।"

प्रतीबाला दाल चुन रही थी। थाली जमीन पर रखकर पूछा, "दीदी, तुमको मालूम है, क्या हुआ था?"

"हां, यहां आने के बाद पता लगाया। सिरसा कोलियरी भी गई। बहुत-से लोगों से पूछा। थोड़ा-थोड़ा बहुत से लोगों ने बताया। कुछ दिन के बाद जुगेश्वर से भेंट हुई। सतगांव वाला, वह भी तो सहदेव भैया के साथ ही काम करता था। उसी ने पूरी बात बताई।"

सहदेव को जरा-सा इत्मीनान हुआ, चलो अच्छा हुआ उसे बताना नहीं पड़ा कुछ। प्रतीबाला चूल्हे पर चढ़े गरम पतीले में दाल डालकर लौटी तो दूसरा सवाल किया।

"इरफान को सब कुछ मालूम है?"

खातून धीमे से मुस्कराई, "भला मालूम नहीं होगा! वह आठ साल का था। चार क्लास में पढ़ रहा था जब उसके अब्बू का इंतकाल हुआ। यहां आया तो वह अक्सर सिरसा कोलियरी भाग जाता, कभी-कभी तो दिन-दिन भर वहीं पड़ा रहता मगर इधर तीन-चार सालों से उसने उधर जाना छोड़ दिया है।"

"तुमसे कुछ बोला नहीं?"

'क्या बोलेगा? एक दिन उसने कहा था—अम्मा! अब्बू की लाश सिरसा कोलियरी में किसी बंद गुफा में है। क्या अब उसे निकाला जा सकता है...'

'क्या करोगे निकाल कर?'

'मैं सोचता था थाना में लिखा दूंगा कि मेरे बाप को उन लोगों ने मार दिया है और वहां से लाश निकल जाए तो बात साबित हो जाएगी।'

'पर अब पांच साल बाद वहां क्या बचा होगा? हड्डी भी मिट्टी हो गई होंगी।'

"फिर उसने कुछ नहीं पूछा। जाकर चुपचाप अपनी चारपाई पर लेट गया। बहुत देर के बाद जब मेरी नजर उस पर पड़ी तो देखा कि वह रो रहा था। उसके आंसुओं से आधा तकिया भीग गया था।"

"अब नहीं पूछता कुछ?"

''नहीं अब कुछ नहीं पूछता। सिर्फ हमको मना करता है कि कोयला मत बेचो। एक दिन जी जल गया तो बोली, कोयला नहीं बेचूंगी तो खाना कहां से चलेगा? तुम्हारी पढ़ाई कैसे होगी? उसी दिन जो सुबह घर से निकला तो दिन भर गायब रहा। रात हो गई उसका पता नहीं। मैं परेशान कि कहां रह गया? सबसे पूछा, किसी को कुछ पता नहीं। आठ बजे आया तो बोला, मैंने दो जगह लड़कों को पढ़ाने का काम कर लिया है। अब तुमको मेरी फिक्र नहीं करनी होगी।"

फिर वह सहदेव से बोली, "भैया, बड़ा आन वाला है। बड़ा गुस्सैल है। किसी की बात बर्दाश्त नहीं करता। अपने बाप की तरह नहीं है।''

सहदेव इस विषय को जारी रखना नहीं चाहता। चाहता है कि रहमत के बारे में कोई चर्चा या कोई बात न हो, मगर प्रतीबाला को क्या मालूम कि हर सवाल जवाब उसे यादों के भंवर में ढकेलता जा रहा है। एक अज्ञात शिकंजे में कसता जा रहा है इसलिए उसने बात बदलने के लिए पूछा, "जुगेश्वर आजकल क्या कर रहा है?"

"ऐ भैया, वह तो बड़ा आदमी हो गया है। बहुत बड़ा ठेकेदार। सतगांव में इतना बड़ा मकान बनवाया है कि पूरी पलटन उसमें समा जाए। ऊंचा इतना है कि देखो तो सर की टोपी गिर जाए। उसी बेचारे ने तो बड़ी मदद की। शुरू-शुरू में चपरासी लोग कोयला उठाने नहीं देते थे। उसी ने कह दिया तो अब कोई कुछ नहीं बोलता। उसी ने कहा कि इरफान को काम में लगा देगा। अभी उम्र कम है।"

उसे जुगेश्वर के बारे में सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ। वह शुरू ही से कपिल सिंह के साथ लगा रहा था। जाहिर है, उसी की रस्सी पकड़कर ऊपर भी उठा देगा।

प्रतीबाला फिर बीच में टपकी, "दीदी, खाना तैयार है।"

खातून चौंकी, "हम खाना नहीं खाएंगे। बेकार में किसी का धर्म..."

प्रतीबाला बहुत जोर से हंसी, "मैं आपका संकोच समझ रही हूं, मगर यह तो पहले ही आपके यहां का खाना खाकर अपना धर्म गवां चुके हैं। चलिए, उठिए।" प्रतीबाला ने उसका हाथ पकड़ कर उठा लिया।

खातून उठते हुए बोली, "बड़ी सुंदर है हमारी देवरानी। हम समझ गए भैया, अपनी पसंद से ब्याह किए हो।"

सहदेव हंसकर बोला, "मैंने कहां किया ब्याह, भाभी? उसी ने कर लिया, तुम्हारी देवरानी ने।"

प्रतीबाला तमककर बोली, "अब इतना साफ झूठ तो मत बोलो। तुमने नहीं कहा था मेरे दादा को?"

"क्या करता, तुम्हारा भाई इतना परेशान था कि मुझसे उसकी परेशानी देखी नहीं गई।"

खतुनिया छह साल से इस इलाके में रहकर जान गई है कि बंगला में दादा बड़े भाई को कहते हैं, इसलिए उसने प्रतीबाला से पूछा, "तुम्हारा भाई यहीं रहता है?"

जवाब सहदेव ने दिया, "रहता था, अब नहीं रहता। मजूमदार बाबू। हमारे साथ सिरसा कोलियरी में भी था। हम दोनों को एक साथ ही नौकरी से निकाला गया था।"

"अरे वही....।" वह चौंकी, फिर सहदेव से बोली, "तुम्हें भी तो उन लोगों ने बहुत मारा था। सिर फाड़ दिया था। बचने की उम्मीद नहीं थी। तुम दो महीने अस्पताल में भी थे। यहां आकर मुझे सब मालूम हुआ। मगर भैया, इतनी बड़ी कोलियरी में जब कोई नहीं बोला तब तुम क्यों इतनी रात को अकेले निकल गए थे? अगर तुमको कुछ हो जाता, भैया....।"

सहदेव ने पहली बार इस विषय पर धीरे से कहा, "मुझे आज भी इस बात का अफसोस है भाभी कि मैं उसके लिए कुछ नहीं कर सका।"

"तुम क्या करते, भैया? मेरा ही नसीब खराब था। अगर नसीब खराब नहीं होता तो इतनी दूर परदेस में आकर....।"

"मुझे गुस्सा इस बात का था कि उन्होंने लाश क्यों बर्बाद कर दी? न देते मुआवजा मगर लाश तो दे देते।"

"हां भैया, एक बार मरा मुंह देख लेते हम लोग को सब्र आ जाता।"

उसकी आवाज में कहीं कोई कंपकंपाहट, कहीं कोई हकलाहट नहीं थी, मगर आंसू उबलकर आए और छलककर गालों पर बह गए। खातून ने आहिस्ते से आंचल का कोना उठाया और उन बहते हुए आंसुओं को पोंछ लिया।

माहौल एक बार फिर विषादपूर्ण हो गया।

"मैं तुम्हारा भी गुनाहगार हूं भाभी कि मैं तुम्हें इस बात की खबर न दे सका। मुझे असल में कभी हिम्मत ही नहीं हुई रसूलपुर जाने की। मैं सोचता था, मैं कैसे तुम्हारा सामना कर पाऊंगा? क्या बताऊंगा तुम्हारे बेटे को और उस आदमी के लिए शब्द कहां-कहां से लाऊंगा जो रात-दिन अपने बेटे की सलामती के लिए दुआ मांगता रहा है! इतना साहस

मुझमें कभी नहीं था। आज भी नहीं है।"

अब रोकने की कोशिश के बावजूद सहदेव उन आंसुओं को रोकने में नाकाम हो गया जिसे नौ साल से रोके-रोके उसका सारा अस्तित्व पथरा गया है।

खतुनिया खड़ी हुई। दो कदम आगे बढ़कर सहदेव के सर पर हाथ रखा। ऐसे जैसे वह उसकी मां हो और बोली, "भैया, इसमें तुम्हारा क्या कसूर था? यह तो मेरे भाग्य में लिखा था।"

प्रतीबाला हैरान खड़ी है। वह देख रही है कि आंसू सहदेव के गालों से बहकर गर्दन पर उतर गए हैं। रोने की आवाज नहीं है। सिर्फ ठुड्डी थोड़ा-थोड़ा कांप रही है। इधर खतुनिया का उसके सर पर रखे हाथ पर खतुनिया के आंखों से बरसने वाली बूंदें टप-टप गिर रही हैं।

प्रतीबाला सोचती है, इन दोनों में क्या रिश्ता है?

सहदेव को सब खबर मिल रही है।

कोलियरी मजदूर संघ की मीटिंग हुई थी। इस बात पर चिंता व्यक्त की गई थी कि कुल तीन सालों में कोलियरी मजदूर संघ की साख मोहना कोलियरी से उखड़ गई है और इतनी उखड़ गई है कि इस साल चंदे के समय शायद पचीस प्रतिशत से ज्यादा टिकट नहीं कट सके। पी.एन.वर्मा बहुत परेशान है। अब वह कोलफील्ड का छोटा-मोटा लीडर नहीं है। इस सारे इलाके का सबसे बड़ा नेता है। उसके रौब और दबदबे का यह असर है कि उसके सामने खड़े होकर बात करते हुए अच्छे-अच्छों की टांगें कांपती रहती हैं। पाथर डेहिया से सोनार डेहिया तक पचासों कोलियरियों में उसका झंडा लहरा रहा है। अब पी. एन. वर्मा को इतनी फुर्सत कहां है कि वह कोलियरियों की देखभाल करता रहे। उद्घाटनों और बड़ी-बड़ी पार्टी-मीटिंगों से उसे फुर्सत ही कहां मिलती है?

जिस तरह पहले जमाने में राजा इलाके जीतकर अपना नुमाइंदा नियुक्त करके आगे बढ़ जाते थे वैसे ही, पी.एन. वर्मा ने तमाम छोटे दर्जे के लीडरों और चाटुकारों को नियुक्त कर दिया है। मोहना कोलियरी अलख बाबू, घोषाल बाबू, दिलदार खां और रामभजन पांडे को सुपुर्द कर दी गई है।

अलख बाबू वैसे आदमी तो ठीक हैं। राजनीतिक समझ-बूझ के अलावा ट्रेड यूनियनवाद का अनुभव भी उनके पास है। ऐब बस इतना है कि पीते बहुत हैं और इतना अधिक पीते हैं कि ठीक से आंख भी नहीं खोल सकते। उन अधखुली आंखों से कुछ दिखाई भी देता है तो कामिनों की कसी हुई छातियां, कमर और सुडौल पिंडलियां। औरत उनकी दूसरी बड़ी कमजोरी है, इस बात को लगभग सभी लोग जानते हैं, इसलिए ठेकेदार अपनी छोटी-मोटी

गलतियों के बदले में लच्छीपुर ढाल से और कभी-कभी कलकत्ता से पेशेवर औरतों को बुलवाकर उनके शयनकक्ष की शोभा बढ़ा देते हैं। अब भला बताइए, ऐसे में अलख बाबू अगर ठेकेदारों का काम नहीं करेंगे तो क्या मजदूरों का करेंगे? ये कमबख्त, बदजात मजदूरों की जाती हुई नौकरी बचा भी दें तो भी पचास रुपया देने में दम निकलता है, मानो अलख बाबू भीख मांग रहे हों। अरे सौ-पचास तो ये ठेकेदार बिना मांगे जेब में भर जाते हैं। अगर ठेकेदार न होते तो वे भीख मांगते नजर आते।

घोषाल बाबू बड़े मजे में हैं। अब उन्होंने खादी के कुर्ते पर जवाहरकट यानी सदरी को बढ़ा दिया है। खूब कलफ लगा हुआ खड़खड़ाता लिबास पहनते हैं। सुरा और सुंदरी दोनों से परहेज है। पीने की आदत नहीं है। किसी पार्टी में चल गई तो दूसरी बात है। उनको तो बस एक ही नशा है। पैसा कमाने का नशा। इसलिए वे जहां भी मौका पाते हैं नोच लेते हैं। मजदूरों से पांच या दस रुपए भी वसूल कर लेने में उन्हें शर्म नहीं आती। पी.एन. वर्मा के नजदीक के आदमी हैं, इसलिए व्हाइट साहब और लोकस साहब दोनों उनसे धौंस खाते हैं। जिस आफिस में घुसते हुए उन्हें कभी पसीना आता था, डर के मारे कांपते रहते थे अब उसमें ऐसी शान से जाते हैं, इतने आराम से बैठते हैं मानो यह आफिस उन्हीं का हो। व्हाइट साहब और लोकस साहब से मजदूरों का छोटा-मोटा काम-काज करवाकर मजदूरों से तो वसूल करते ही हैं, साथ ही मैनेजमेंट की छोटी-मोटी अनीतियों को दबाकर व्हाइट साहब और लोकस साहब को भी खुश रखते हैं। यह उसी का करिश्मा है कि फूस बंगला में सड़क के किनारे उन्होंने एक पक्का मकान बनवा लिया है। सीमेंट कंपनी का, ईंट कंपनी की, लोहा कंपनी का, बस मजदूरी भर खर्च आया। वह भी ठेकेदारों ने पूरा कर दिया। दिन-रात नोटों के चक्कर में ऐसे पड़ गए हैं घोषाल बाबू कि अब कोई दूसरी चीज नजर नहीं आती।

दिलदार खान और रामभजन पांडे को लीडरी से कोई दिलचस्पी नहीं है। वे तो ठेकेदारी के लिए इस लाइन मे आए थे और वर्मा साहब के एक इशारे पर उनका काम हो गया। कंपनी को भी किसी न किसी को ठेका देना ही था, इसलिए उन्हीं को दे दिया। कम से कम ये दो आदमी तो हाथ में रहेंगे।

मजदूर संघ के आफिस में काफी भीड़ रहती है, लेकिन मजदूरी को नहीं। इस लूट में थोड़ा-बहुत हिस्सा लेने की लालच में कुछ अवसरवादियों का आना-जाना लगा ही रहता है। मजेदार गप्पें हांकी जाती हैं। मजदूरों की कोई चर्चा नहीं होती। उनकी समस्याओं पर बात नहीं होती। बस, यूनियन और वर्मा साहब के कारनामें बयान किए जाते हैं। एक दूसरे की वाह-वाह लूटी जाती है। मजदूर अब इस तमाम भीड़ से नफरत करने लगे हैं। मजदूर संघ के कर्ता-धर्ता लोगों से उन्हें घृणा होने लगी है। अब वे इतने बेवकूफ नहीं रहे कि जिधर भी चाहा हांक दिया। अब वे समझने लगे हैं। कम से कम इतना जरूर जान

गए हैं कि कौन काम कर रहा है और कौन-कौन नोच-खसोटकर अपना घर भर रहा है। मुंह से कोई कुछ नहीं बोलता। चाहे भलाई जानकर या डर से, लेकिन अंदर ही अंदर नफरत का शोला जरूर लहक रहा है।

सहदेव यह सब अच्छी तरह जानता है। शुरू से ही उसे मालूम है कि यूनियन आपसी सहयोग का एक ऐसा संगठन है जिसे मजदूरों से कोई दिलचस्पी नहीं है। कोई नहीं देखता कि कौन जी रहा है और कौन मर रहा है। हद तो यह है कि इस यूनियन की बुनियाद का पहला पत्थर रखने वाले और इसी यूनियन के लिए अपनी जान गंवाने वाले लाला दीप नारायण को भी लोग भूल गए हैं।

पिछली तीन बरसातों ने वन-तुलसी की झाड़ियों पर जमे हुए खून को धो दिया है। वैसे भी इन मजदूरों का खून इतना लाल और गाढ़ा नहीं होता कि ज्यादा दिन तक दिखाई दे सके। स्याह जमीन खून की लालिमा को धीरे-धीरे आत्मसात कर लेती है। एक विधवा की पागल चीखें, एक बूढ़ी मां की खामोश बहती आंखें और तीन मासूम बच्चों की सिसकियां—कितनी जल्दी गायब हो जाती हैं सब! तेरह दिन के बाद फिर वही पेट की चिंता सताने लगती है। हमदर्दी के हाथ सर पर से उठा लिए जाते हैं। तब ऊपर खुला हुआ नीला बेरहम आसमान होता है और नीचे कठोर, पथरीली, सख्त जमीन होती है। इनसे ऊपर चारों तरफ भूख की तेज आंधियां लहराती रहती हैं। बच्चों के सूखे होंठ और तरसती हुई आंखें कलेजा नोचने लगती हैं। तब चेतना जगती कि कुछ करना होगा। अब बिना कुछ किए गुजारा नहीं।

इसलिए लाला दीप नारायण की मां और पत्नी दोनों लोडिंग की नौकरी कर लेती हैं। बुढ़िया झूड़ी भर कोयला लेकर चलती है तो पसीने-पसीने हो जाती है। पैर लड़खड़ाते हैं। अब गिरी कि तब गिरी। बहू ज्यादातर उसके साथ रहती है कि कहीं बूढ़ी का पांव फिसले तो उसे संभाल ले। बेवकूफ संभाल सकेगी उसे? अब खुद उसमें कितनी ताकत रह गई है!

लेकिन कुदरत का भी क्रूर मजाक देखिए। बहू जो हर पल अपनी सास पर नजर जमाए रहती थी कि कहीं गिर न जाए। वह नहीं गिरी, गिरी खुद। वैगन और अस्थाई प्लेटफार्म के बीच लगे तख्ते से भरी झूड़ी लिए वह ऐसी फिसली कि एकदम नीचे रेल लाइन पर जा गिरी। कमर में ऐसी चोट आई कि फिर उठ नहीं सकी, बल्कि थोड़ी देर के लिए तो बेहोश हो गई। उसे गिरता देखकर साथ की औरतें दौड़ीं। लोडिंग बाबू दौड़े। आफिस खबर पहुंची तो वहां से ढेर साले लोग आकर जमा हो गए। उसे उठाया गया। डाक्टर ने बताया कि जांघ और कमर को जोड़ने वाली कोई हड्डी टूट गई है।

तीन महीने से प्लास्टर में पड़ी है। धोड़े के कोने में एक झीलंग चारपाई है। उसी पर झूलती रहती है। बूढ़ी सास के बदन में इतना बल नहीं कि उसे उठाकर आवश्यक

क्रियाओं से निवृत्त करा सके। वह तो चिरंजी रविदास की घर वाली बेचारी आकर किसी तरह उसे निवृत्त करा देती है और मैला भी फेंक आती है। फिर भी कोठरी में बहुत कुछ रह जाता है, और कुछ नहीं तो बदबू तो रह ही जाती है। इसलिए सहदेव जब इस अंधेरी कोठरी में दाखिल हुआ तो उसे ऐसा लगा कि मारे गंध से उसकी आंतें उलटकर उसके कंठ में आ गई हैं। आंखें जब अंधेरे से हिल-मिल गईं तो उसने देखा कि एक कोने में एक चारपाई पड़ी है और उस चारपाई पर हड्डियों का एक ढांचा पड़ा है।

यह लालाइन थी?

साढ़े पांच फुट ऊंची, भरे बदन की कसी हुई औरत। लालाइन जब तोड़े पहनकर निकलती थी तो उसके तोड़े की आवाज पर लोग पलट-पलटकर उसे देखते।

"कौन बा हो?"

"लाला दीप नारायण की मेहरारू बा।"

अब लालाइन चार फुट के सिकुड़े, सिमटे हड्डियों के ढांचे में बदल गई है। उसने सहदेव को देखा और रें-रें करके रोने लगी।

आज सुबह-सुबह लाला दीप नारायण की बूढ़ी मां आई थी।

"ऐ बबुआ, बहू का हाल ठीक नहीं है। तुमको बुलाया है। बड़ी भूखमरी है, बेटा!"

"मगर चाची, कंपनी पैसे तो देती है।"

"हां बबुआ, लेकिन एक ठोकाने देती है। एक जन के पैसे से इतना बड़ा परिवार कैसे चलेगा? तीन ठो छोटा-छोटा बच्चा है। मेरा शरीर भी थक गया है, बाबू! भगवान काहे हमको छोड़ दिया धक्का खाने को?"

वह सुबह तो नहीं जा सका लेकिन ड्यूटी के फौरन बाद उसके धोड़े में जा पहुंचा। जब तक लाला जी जिंदा थे वह बड़े शान से रहती थी। बाहर निकलती तो हाथ भर का घूंघट खिंचा होता। सहदेव के सामने कभी पड़ जाती तो एकदम से सिमट जाती पर लाला जी के गुजर जाने के बाद तो उसे सब कुछ त्यागना पड़ा। लोडिंग में आम तौर पर बावरिनें, मुसहरिनें अर्थात निचली जाति समझे जाने वालों की औरतें ही काम करती थीं। लालाइन ने अपनी लोकलाज त्यागकर, छह वर्षों का घूंघट खोलकर जो बाहर पांव निकाला तो उसकी बस एक ही वजह थी। उसके बच्चे। उन्हीं के लिए उसने यह लंबी लड़ाई लड़नी शुरू की थी पर कभी-कभी विधाता भी अजीब खेल खेलता है।

आज सहदेव ने नजर भरकर उस हड्डियों के ढांचे को देखा। आज घूंघट नहीं था। अब उसकी जरूरत भी नहीं थी। सहदेव ने चारों ओर कमरे में नजर दौड़ाई और एक मचिया खींचकर उसके पास बैठ गया।

"कैसी हो, भौजी?"

लालाइन रोने लगी। आवाज नहीं निकली उसके मुंह से।

"कोई तकलीफ है भौजी, अब तो जल्द ही प्लास्टर भी कट जाएगा।"

"अब नहीं बचूंगी, अब साहस नहीं रहा, भैया!"

वह हांफने लगी। सहदेव उसकी तरफ झुक गया और अपनी आवाज में मिठास लाते हुए बोला, "हट ! खराब बात काहे सोचती हो? तुम्हारे तीन बेटे हैं। बड़े हो जाएंगे तो कमाकर तुम्हारा घर भर देंगे। कंपनी उनको नौकरी देगी। यूनियन उनके लिए लड़ेगी।"

"बड़े होंगे तब न, बाबू! मैं तो चली। कौन इनको पाले-पोसेगा? बूढ़ी तो अपने दम को रोती है। बच्चों की चिंता ही मुझे खाए जा रही है।"

"देखो भौजी, ''सहदेव समझाने लगा, "जिसका कोई नहीं होता उसका भगवान होता है। जो इतनी बड़ी सृष्टि चलाता है वही इन बच्चों का भी इंतजाम कर देगा। तुम काहे फिक्र करती हो?"

"अब तो भैया, उस पर भी भरोसा नहीं रह गया। हम लोगों ने क्या बिगाड़ा था किसी का? लाला जी भी ऐसे आदमी नहीं थे जो किसी चींटी का भी दिल दुखाते। फिर यह दंड क्यों दिया गया?"

सहदेव चुप है। लालाइन की बातों में जो सचाई है उसे काटने का, अपने झूठे शब्दों से ही काटने का साहस नहीं हो रहा है। भगवान को वह भी नहीं मानता। मजूमदार के साथ रहकर यह भरम भी तोड़ लिया है उसने, पर दुनिया के हजारों-लाखों दुखियों, मजबूरों और टूटकर बिखरने वालों के लिए यह नाम बड़ा सहारा है। अगर यह भी न होता...अगर यह भी न होता...

बुढ़िया चौखट पर बैठकर बेआवाज रो रही है। पता नहीं इस बूढ़ी, कमजोर और धीरे-धीरे क्षीण होती दृष्टियों में इतना आंसू कैसे रह गया है! लाला जी का बड़ा लड़का जिसकी उम्र अब आठ साल की है मां के पैताने बैठा उसके पांव धीरे-धीरे दबा रहा है। महीनों से लेटे रहने के कारण शरीर लकड़ी की तरह कड़ा हो गया है। बड़ा लड़का होशियार है। गरीब और बेसहारा लोगों के लिए आठ साल की उम्र बहुत सारी बातों को समझने के लिए काफी होती है। जमाना उन्हें रौंदकर, कुचलकर जल्दी तैयार कर देता है कि वे इस लड़ाई में शामिल हो सकें जिसे हम सबने एक खूबसूरत नाम 'जिंदगी' दे रखा है।

लालाइन थोड़ी देर चुप रही, फिर बोली, "बाबू, हमने तुम्हें इसलिए बुलाया था कि भीम को कहीं किसी काम में लगा देते।"

भीम उसके बड़े लड़के का नाम है। वही बड़ा बेटा जो मां के पांव दबा रहा है। सहदेव सोच में पड़ गया। वह आठ साल के लड़के को कहां काम पर लगा दे? कोलियरी में काम करने के लिए कम से कम अठारह साल का होना जरूरी था।

अगर कहीं किसी ठेकेदार के यहां भी कह सुनकर काम दिला दे तो फिर वह भी इतने

छोटे बच्चे से क्या काम लेगा? लालाइन ने उसे सोचता देखकर कहा, "और नहीं तो किसी होटल में लगा दो। तुम्हारी तो बहुत जान-पहचान है। और कुछ नहीं तो अपना पेट तो भर लेगा।"

कोलियरी में ऐसे होटल भी नहीं हैं। फिर भी फूस बंगला या झरिया में किसी जगह उसे लगाया जा सकता है। मगर फिर सवाल एक यह भी खड़ा होता है कि लाला घराने का लड़का क्या जूठी प्लेट धोएगा? उससे सुबह छह बजे से रात दस बजे तक काम लिया जाएगा। कितने दिन बचेगा यह? लालाइन ने कहा, "बहुत आदमियों से कहा, भैया! मगर कोई नहीं सुनता। सब बोले कि सहदेव बाबू कह देंगे तो कोई न कोई काम मिल जाएगा। उसकी बहुत पहुंच है।"

सहदेव अपने आप से सवाल करता है। क्या सचमुच उसकी बहुत पहुंच है? कहां है यह पहुंच? यह ठीक है कि व्हाइट साहब उसे मानते हैं। मजदूर उसकी बहुत इज्जत करते हैं, मगर क्या उनसे यह काम हो जाएगा? व्हाइट साहब नियम-कायदे की पाबंदी पर उम्र का सवाल खड़ा कर देंगे। और मजदूरों के हाथ में है ही क्या? रह गई यूनियन...

उसने कहा, "देखो भौजी, इतने छोटे-से बच्चे के लिए कोई भी काम बहुत मुश्किल है। फिर भी मैं यूनियन से बात करूंगा कि वह कोई ऐसी स्थिति पैदा कर दे कि तुम्हारी परेशानी दूर हो जाए।"

"यूनियन? हमको तो भैया, यूनियन पर जरा भी भरोसा नहीं। हमारे मालिक को..."

वह बिलख-बिलख कर रोने लगी। झीलंग चारपाई पर उसका बदन हिलने लगा। अगर उसके शरीर में ताकत होती तो इतने जोर से चीख कर, दहाड़ें मारकर रोती कि सारी दुनिया, आसमान और जमीन हिल जाती। परंतु वह कमजोरी की उस आखिरी हद पर थी जहां आवाज निकालना भी उसके बस से बाहर हो गया था। इसलिए सिर्फ हड्डियों का ढांचा हिलता रहा। रें-रें की आवाज आती रही और अंदर का गरम लावा बूंद बनकर छलकता उसके सूखे मुर्झाए गालों पर बहता रहा। सहदेव चुपचाप उसे देखता रहा। जिंदगी में ऐसे क्षण क्यों आते हैं जहां शब्द अपनी पूरी शक्ति और धार के बावजूद बेकार हो जाते हैं? मजबूर और कुंठित हो जाते हैं?

लालाइन बहुत देर तक रोती रही। फिर धीरे-धीरे उसके अंदर का तूफान कम होता गया। बहुत देर बाद वह फिर बोली, "सहदेव भैया, एक बात मैं तुमसे बोलना चाहती हूं। किसी से नहीं कहा है, पर अब मरने के कगार पर हूं इसलिए तुमको बताकर जाना चाहती हूं। यह बात हमेशा मेरा कलेजा नोचती रहती है।"

सहदेव पूरे मनोयोग से सुनने लगा। उसने सहदेव से एक सवाल पूछा, "भीम के बाबू

को किसने मारा था?"

सहदेव ने जवाब नहीं दिया। उसी के बोलने का इंतजार करता रहा।

"सब समझते हैं कि उसे खान के आदमियों ने मारा। इनामुल खान की पार्टी ने मारा, पर यह सच नहीं है।"

तब सच क्या है? एक सवाल सहदेव के दिमाग में बिजली की तरह कौंध गया, लेकिन उसने पूछा नहीं।

"उसे वर्मा साहब के आदमियों ने ही मारा था।"

वह दंग रह गया। यह कैसे हो सकता है? सब जानते हैं कि इनामुल खान के आदमियों ने ही उसकी जान ली थी। बहुत-से लोग पकड़े भी गए थे। दो आदमियों को दस-दस साल की सजा भी हुई थी। ये सब किसने कह दिया लालाइन से? उसने सहज भाव से पूछा, "यह बात तुम कैसे कह सकती हो, भौजी? किसने कहा तुमसे?"

"अगर कोई कहता तो मैं विश्वास नहीं करती। मैंने खुद अपनी आंखों से देखा था। उन तीन आदमियों ने जिन्होंने उनकी हत्या की, वे तीनों कुछ ही देर पहले मेरे घर से चाय पीकर गए थे। लाला जी की चीख सुनकर बाहर निकली तो उन लोगों ने मुझे भी पकड़ लिया। जान से मारने की धमकी दी और हमेशा के लिए चुप रहने को कहा। उन्होंने साफ कहा कि अगर तुमने जबान खोली तो तुम्हारे तीनों बच्चों को चांक में डाल देंगे। सो बाबू, मैं डर गई। मांग तो उजड़ ही चुकी थी। अब कम से कम कोख तो बच जाए।"

सहदेव को ऐसा लगा जैसे किसी खूबसूरत, रौबदार और बेहद चमकीले चेहरे को किसी ने नोच लिया। पता चला कि वह सिर्फ एक मुखौटा था। असली सूरत इतनी घृणास्पद, इतनी भयानक और इतनी घिनौनी है कि उसे नजर भरकर देखना भी मुश्किल लगता है।

लालाइन फिर रोने लगती है। यादों का खंजर उसके दिल में बहुत दूर तक उतर गया है। लहू बूंद बनकर उसकी आंखों से उबल रहा है। यह जो कमरे की खामोशी में लगातार एक आवाज डूबकर उभर रही है, यह रोने की आवाज नहीं है। यह कभी न खत्म होने वाली चीखों का सिलसिला है जो अंदर ही अंदर अपनी चीत्कारें खो चुकी है। सहदेव को लगा कि उसका दम घुट जाएगा। सांस कांटे की तरह पीड़ा देने लगी है। वह उठ खड़ा होता है।

"ठीक है भौजी, मैं कोशिश करूंगा कि भीम के लिए कुछ कर सकूं।"

वह कमरे से बाहर आता है। खुली हवा उसे जिंदगी का, जिंदा होने का अहसास दिलाती है। वह आसपास की चलती हुई भीड़ को देखता है। चाय की दुकानों और शराबखानों से लौटते लोग, जुआ खेलने के लिए जाते लोग, हंसते, बोलते, बातचीत करते लोग। जिंदा, गरम और जवान लोग। ये सब कौन हैं? क्या सचमुच ये लोग जिंदा हैं? और अगर जिंदा

हैं तो क्या इन्हें अहसास है कि मौत इनकी पीठ पर खड़ी है? इनके साथ परछाई की तरह चल रही है? रोज इनका शिकार होता है। ये रोज मरते हैं। जो हादसों से बच जाते हैं वे भूख से मरते हैं। जो भूख सह लेते हैं, वे कभी न अच्छी होने वाली बीमारियों से मरते हैं। जो बीमारियों से भी बच जाते हैं वे कर्ज के अपमान के बोझ से मरते हैं और कभी-कभी आस्तीन में छुपे हुए खंजरों से मरते हैं। चारों तरफ मौत का गर्म बाजार फैला हुआ है। अनगिनत अंधेरी कोठरियां, अनगिनत झीलंग चारपाइयां, इन चारपाइयों पर झूलते हुए अनगिनत कंकाल और पी.एन. वर्मा की सफेद कार से उड़ी हुई स्याह धूल जो आहिस्ता-आहिस्ता फेफड़ों पर बैठती जा रही है।

वह घर आता है तो यूनियन का एक आदमी पहले से ही प्रतीक्षा कर रहा था। "वर्मा साहब ने आपको बुलाया है आफिस में।"

"कह दो, मैं नहीं जाऊंगा।"

वह आदमी हक्का-बक्का खड़ा है। बात उसकी समझ में नहीं आ रही है। वर्मा साहब बुलाएं और कोई आदमी जाने से इंकार कर दे, ऐसा कैसे हो सकता है? क्या इतनी हिम्मत रखने वाले भी इस मोहना कोलियरी में रहते हैं? इतनी जुर्रत तो शायद सी.एम.ई. और डब्ल्यू.बी.व्हाइट भी न कर सके। वह बात और वजनदार बनाने के लिए फिर कहता है, "अलख बाबू, घोषाल बाबू, भगत जी सब आफिस में मौजूद हैं। वर्मा साहब आपको खासतौर पर याद कर रहे हैं।"

"जाकर कह दो, मेरी तबीयत ठीक नहीं है। दूसरी बात यह कि मुझे यूनियन के कामों से कोई दिलचस्पी भी नहीं है।"

वह आदमी समझाने लगा, "क्या करते हैं, रमानी साहब? इतना बड़ा लीडर आपको बुला रहा है कि अगर बारह बजे रात को एस.पी. के यहां आदमी भेज दे तो वह उसी समय चला आए। सुबह का इंतजार भी न करे और आप जाने से इंकार कर रहे हैं। आपको पागल कुत्ते ने काटा है क्या?"

"सुना !" सहदेव ने उसे आगे कहने से रोक दिया, "सुनो, मैं टर्नर मौरीसन कंपनी का नौकर हूं, और किसी का नहीं। मुझे उन मजदूर यूनियनों से नफरत है जो अपने नाम के साथ मजदूर शब्द जोड़कर रखते हैं।"

"ठीक है," वह आदमी भी थोड़ा गरम हो गया, "आप जो कर रहे हैं उसका परिणाम कभी अच्छा नहीं होगा। जिनका राज चलता है मोहना कोलियरी में उन्हीं से वैर बसाना बुद्धिमानी नहीं है। मैं कहता हूं, अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा। आप चले चलिए। मैं अपना मुंह बंद रखूंगा।"

"तुम अपना मुंह खोल देना। मैं नहीं जाऊंगा।"

"ठीक है, आप समझिएगा।" वह आदमी कुपित होकर पांव पटकता हुआ चला गया।

दूसरे दिन जोनाथन ने उससे कहा, "कल सुना तुम्हारे पास वर्मा साहब का आदमी गया था बुलाने और तुमने जाने से इंकार कर दिया।"

"तुमसे किसने कहा?"

"तमाम कोलियरी में चर्चा है इस बात की।"

सहदेव का दिमाग अभी तक लालाइन के कमरे की सिसकती, रोती, बिलखती मौत को नहीं भूल पाया था। कल शाम की कड़वाहट अभी तक उसके होठों पर मौजूद थी। दिमाग में जैसे कोई अंगारा हवा के झोंके के साथ रह-रहकर दहक उठता था।

"मुझे इन यूनियनों से नफरत है। मैंने सोचा था कि कोलियरी मजदूर संघ कोई काम करेगा या कम से कम इन मजदूरों को एक नजर देखेगी जिनकी बदौलत उन्हें यह बादशाहत मिली है। मगर ये लोग...इनामुल खान और पी.एन. वर्मा में फर्क कहां रह गया है?"

जोनाथन ने गंभीरता से कहा, "तुम ठीक कहते हो। धीरे-धीरे सभी लोग उनसे नफरत करने लगे हैं।"

फिर उसने अपने स्वर को रहस्यपूर्ण बनाते हुए कहा, "इसी बात की तो आफिस में मीटिंग थी। इस बार अंदाजा है कि पचीस प्रतिशत भी टिकट नहीं कटेगा। यूनियन काफी बदनाम हो गई है। जो लोग यहां यूनियन के कर्ता-धर्ता हैं उन्होंने लूट मचा रखी है। वर्मा साहब अच्छे आदमी हैं। उन्होंने कभी किसी लेबर से पैसा नहीं खाया। जब उन्हें पता चला कि यहां की हालत इतनी बदतर है कि इस बार शायद मोहना कोलियरी में उनका सिंहासन ही डोल जाए तो वे परेशान हो गए। यहां उनको किसी ऐसे आदमी की तलाश हुई जिससे मजदूर प्रभावित हों। बहुत छानबीन के बाद तुम्हारा नाम आया कि पूरी कोलियरी में वही एक ऐसा आदमी है जो अगर मजदूरों को कह दे तो उसकी बात उठाना उन लोगों के लिए मुश्किल हो जाए। इस बार यूनियन ने तुम्हें कोई ओहदा देने का भी फैसला किया था...।"

"मुझे यूनियन के किसी सम्मान की जरूरत नहीं है। मैंने नेता बनने का कभी ख्वाब भी नहीं देखा। मैं एक माइनिंग मैन हूं और यही मेरी पहचान भी है और यही विवेक भी।"

"मगर यूनियन से बैर बसाकर रखना भी तो मुश्किल है।"

"देखो जोनाथन!" वह चलते-चलते रुक गया, "मैं यूनियन के भरोसे पर जिंदा नहीं हूं। मैं मेहनत बेचता हूं। कहीं भी बेच सकता हूं। कोई मेरे ये हाथ नहीं काट सकता। यूनियन नाराज होकर मेरा क्या कर लेगी?"

"यह मत कहो, सहदेव! यूनियन के हाथ बहुत लंबे हैं और वह कुछ भी कर सकती है।"

"करने दो, मुझे परवाह नहीं है।"

वे बातें करते हुए वाइंडिंग रूम तक आ गए। अभी केज पर सवार होना ही चाहते

थे कि आफिस का पैगाम सहदेव को मिला कि व्हाइट साहब अभी फौरन बुला रहे हैं।

उसने जोनाथन को देखा और धीरे से कहा, "लगता है, कहर टूटने वाला है।"

"लगता तो है।"

व्हाइट साहब आफिस में अकेला नहीं था। जब सहदेव वहां पहुंचा तो व्हाइट साहब के साथ लोकस साहब भी मौजूद थे और एक ऐसा आदमी जिसे सहदेव पहचानता नहीं था लेकिन वह अपने हाव-भाव और हुलिए से यूनियन का ही कोई आदमी लग रहा था। आशा के विपरीत व्हाइट साहब ने उसे कुर्सी पेश की मगर उसने बैठने से इंकार कर दिया। व्हाइट साहब ने उसे गौर से देखकर कहा, "वेल मि. रमानी, आज सुबह पी.एन.वर्मा का फोन आया था। तुमने उनके पास जाने से इंकार क्यों कर दिया?"

"सर, मैं एक माइनिंग मैन हूं। अपने काम से ज्यादा दिलचस्पी है मुझे।"

व्हाइट साहब हंस पड़ा, "आई नो, मगर मि. वर्मा असल में तुमसे कुछ मदद लेना चाहते हैं यूनियन के मेंबरशिप के लिए।"

"यह तुम कैसे कह सकते हो, मि. रमानी? मुझे मालूम है कि मजदूरों पर तुम्हारा जबरदस्त होल्ड है। वे तुम्हारी हर बात मान लेते हैं। इतना बड़ा लीडर तुमसे प्रार्थना कर रहा है, क्या यह बड़ी बात नहीं है?"

व्हाइट साहब उसे समझाने लगा।

"देखो, कोलियरी में रहने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। सिर्फ कोयला काटना ही काम नहीं है। तुम्हारे लिए यह बहुत बड़ा औफर है। आगे बढ़ने के लिए एक खुला रास्ता पड़ा है। ऊपर चढ़ने के लिए यह एक सीढ़ी है।"

सहदेव बहुत देर तक चुप रहा। फिर उसने धीरे-धीरे अपना सिर उठाया और बहुत ठहरकर कहा, "सर, मजदूर मेरी बात नहीं मानेंगे। मैं लीडर नहीं हूं। माइनिंग के संबंध में वे मेरी बात इसलिए मान लेते हैं कि वह सही होती है, लेकिन यूनियन के मामले में उनके अपने फैसले हैं।"

गहरी खामोशी छा गई। तीनों आदमियों ने एक-दूसरे को गहरी नजरों से देखा। आंखों-आंखों में क्या बात हुई, वह अच्छी तरह से जान गया था। व्हाइट साहब ने द्वेषपूर्ण आंखों से उसे देखा और भरे गले से कहा, "ठीक है, जाओ।"

उसकी आवाज में कुछ ऐसा था कि वह अंदर ही अंदर दहल गया मगर सहदेव के दिमाग में बस एक ही तेजाब खौल रहा था, लाला दीप नारायण का। और सिसकियों के बीच कही गई लालाइन की बात की चोट से उसका सारा अस्तित्व झनझना रहा था।

यह संभावित कहर तीन हफ्ते के बाद टूटा जब व्हाइट साहब ने उसे फिर अपने आफिस में बुलाया।

"तुम यह बता सकते हो कि दो हफ्ते से रेजिंग क्यों डाउन है?"

टर्नर मौरीसन के हर कोयले की खान की एक टारगेट रेजिंग थी अर्थात जिस खान से दो सौ टन कोयला निकलता हो, उसे इस टारगेट को पूरा करना जरूरी था, मगर यह जिम्मेदारी उसकी नहीं थी।

उसे चुप देखकर व्हाइट साहब ने क्रोधित होकर पूछा, "तुमने मेरा सवाल सुन लिया है?"

सवाल उसने सुन लिया था, मगर उसकी छोटी-सी हरी आंखों में जो एक बेरहम चमक थी वह उसी को देखने में लग गया था। व्हाइट साहब के दोबारा पूछने पर वह चौंका।

"मगर यह मेरी जिम्मेदारी नहीं है, साहब! यह बात आप माइनिंग सरदार से या ओवर मैन से पूछ सकते हैं।"

"किसकी क्या जिम्मेदारी है, मैं अच्छी तरह जानता हूं। तुम्हारे बारे में शिकायत है कि तुम खुद तो कोई काम करते नहीं, दूसरों को भी नहीं करने देते।"

"यह बिलकुल गलत आरोप है, सर! दो हफ्ते से सपोर्ट नहीं मिलता। अठारह अदद खूंटे के लिए कोई दो हफ्ते से कहा जा रहा है। वह अभी तक नहीं मिला। दो गार्डर चाहिए था। वह भी नहीं मिला। हद तो यह कि 'खुलिया' भी नहीं मिलता।"

"ये सब बहाने मैं नहीं मानता। अगर ऐसा था तो तुमने रिपोर्ट क्यों नहीं की?"

"मैंने रिपोर्ट की है। माइनिंग सरदार से भी और ओवर मैन से भी।"

"अगर ऐसा था तो तुमने मुझसे सीधे आकर क्यों नहीं कहा?"

"ऐसा करने से समझा जाता कि मैंने माइनिंग सरदार और ओवर मैन की शिकायत की है। सर, सीधी बात यह है कि यह जो मुझे सपोर्ट नहीं मिल रहा है यह जानबूझकर हो रहा है, सोची-समझी साजिश के तहत।"

"अपनी गलती दूसरों के सर मत मढ़ो। तुम इस बात को क्यों नहीं मानते कि तुमने जानबूझ कर रेजिंग डाउन कर रखी है? यह सरासर तुम्हारी बदमाशी है।"

उसके तनबदन में आग लग गई, मगर उसने फिर भी धैर्य से काम लिया।

"तुम यह चार्जशीट लो। कंपनी ऐसे आदमियों के लिए कोई हमदर्दी नहीं रखती जो अपने काम में खरे न हों या जो कंपनी के वफादार न हों।"

वफादारी...!

वफादारी का मतलब जानते हैं आप व्हाइट साहब? शायद वफादारी से आपका मतलब लोकस साहब का कुत्ता है। लोकस साहब का कुत्ता जो पैरों की चाप पर दुम हिलाने लगता है। बिना बुलाए, बिना पुचकारे, और जब लोकस साहब नजदीक पहुंचता है तो अपनी

लंबी-सी लाल जिह्वा से उसके जूते चाटने लगता है।

बिना शर्त वाली वफादारी।

उसे याद आता है।

कोलमाइंस आफिस के दो इंस्पेक्टर आए हैं। उनको कोयले का नमूना लेना है अर्थात् सैम्पुल, ताकि वे रासायनिक जांच के बाद तय कर सकें कि यह किस कोटि का कोयला है। कोयले का ग्रेड, जिससे उसकी कीमत तय होती है।

लोकस साहब उसे बुलवाते हैं।

"मि. सहदेव, इन साहब लोगों को नीचे से कोयले का सैम्पुल दे दो।"

चार मजदूरों को उनके साथ हांक दिया जाता है। उन चारों ने बड़े-बड़े हाफ-पैंट पहन रखे हैं। उनकी जेबें भरी हुई हैं। सहदेव जानता है कि उनमें 'ए ग्रेड' कोयले का पाउडर है।

यह समूह नीचे उतरता है। सहदेव एक स्थान पर मजदूरों से छह इंच की पट्टी काटने को कहता है। एकदम ऊपर से नीचे तक (फ्रॉम टॉप टू बॉटम) मजदूर गैंता लेकर दीवार को छीलना शुरू करते हैं। जब यह काम पूरा हो जाता है तो नीचे गिरे हुए कोयले को चूरकर पाउडर बना लिया जाता है। बस यही मौका है। सहदेव उन इंस्पेक्टरों के सामने खड़े होकर उन्हें गप्पों में फंसाता है और चारों मजदूर अपनी जेबों में रखा कोयले का पाउडर उस कोयले में मिला देते हैं। बोरी भरकर यह कोयला बाहर लाया जाता है। फिर सील बंद करके रासायनिक जांच के लिए दोनों इंस्पेक्टर उसे ले जाते हैं। अब सी ग्रेड का कोयला बी ग्रेड हो जाता है और यही सी ग्रेड कोयला बी ग्रेड की कीमत पर तमाम सरकारी कारखानों में सप्लाई होता है। साल भर में लगभग पचास लाख रुपया का फायदा टर्नर मौरीसन कंपनी को देता है।

वफादारी की एक और कहानी उसे याद है।

रात को आठ बजे व्हाइट साहब ने उसे और ओवर मैन शिवपूजन को बुलवाया। आफ़िस में नहीं, बंगले पर। जरूर कोई खास बात है। दोनों वहां पहुंचे तो व्हाइट साहब बेचैनी से बरामदे में टहल रहे थे। वह उन्हें लेकर अपने कमरे में चले गए।

"तुम लोगों को मालूम है, कल हड़ताल है?"

"हां, साहब!"

"तो कल तुम लोगों का खान चालू रहेगा।"

"मगर यह कैसे मुमकिन है, सर?"

"सब मुमकिन है। दुनिया में सब मुमकिन है।"

"सर, यह जेनरल स्ट्राइक है। पूरे हिंदुस्तान में जितनी कोलियरियां हैं सब बंद रहेंगी।"

"वह ठीक है, मगर टर्नर मौरीसन चालू रहेगा।"

"मगर यह किसी तरह मुमकिन नहीं है, सर!"

"कैसे मुमकिन नहीं है?" वह गरजकर पूछता है।

"सर सारे लेबर को मालूम है कि कल हड़ताल है। कल कोई आदमी काम पर आएगा ही नहीं।"

"यह मैं नहीं जानता। बस इतना जानता हूं कि कल टर्नर मौरीसन चालू रहेगा। अगर सौ आदमी नीचे नहीं जाएगा तो बीस आदमी से चालू रखो, दस आदमी से चालू रखो। पचास गाड़ियों की जगह सिर्फ पांच गाड़ी रेजिंग करो, मगर काम चालू रखो।"

"यूनियन? पी.एन. वर्मा का क्या होगा, सर?"

"उसी को तो जताना है कि यूनियन के मना करने के बाद भी काम होगा, हो सकता है।"

फिर उसने खामोश होकर थोड़ी देर तक उन्हें बड़े प्यार और अपनेपन से देखा फिर धीरे से कहा, "तुम लोग कंपनी के वफादार हो। कंपनी को तुम पर भरोसा है। मैं यकीन दिलाता हूं कि यूनियन तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी। मैं तुम्हारे साथ हूं। टर्नर मौरीसन कंपनी का सारा मैनेजमेंट तुम्हारे साथ है।"

दोनों बाहर निकलकर बहुत सोच में पड़ जाते हैं। कैसे होगा? लेबर को कैसे लाया जाएगा? फिर यूनियन को क्या जवाब दिया जाएगा? कुछ समझ में नहीं आता। बहुत देर की सोच-विचार के बाद सहदेव पूछता है।

"अच्छा एक बात बताओ, क्या इस हड़ताल के बारे में यूनियन के आदमियों ने तुम्हें सूचना दी है?"

"नहीं।"

"यूनियन के किसी लीडर ने?"

"नहीं, किसी ने कुछ नहीं बताया।"

"तब तो यूनियन से बचने का रास्ता है। हम लोग कह देंगे कि हमें पता ही नहीं था। अगर हड़ताल थी तो आप के ये आधा दर्जन लीडर हैं। उनमें से किसी ने खबर क्यों नहीं दी?"

"हां, यह रास्ता तो है।"

"मगर लेबर को कैसे लाया जाएगा?"

शिवपूजन ने कहा, "एक रास्ता है। अगर यह दांव चल गया तो समझो चल गया। हम लोग सुबह आकर वाइंडिंग रूम का हालिज चालू कर दें। सिर्फ डोली अंदर जाए और बाहर आए। अपने क्वार्टरों से लेबर जब यह देखेंगे कि चांक का चक्का चल रहा है तो समझेंगे कि खान चालू है।"

दूसरी सुबह यही हुआ भी। कुल बत्तीस मजदूर आए। उन्हें समझा-बुझा कर नीचे

उतार दिया गया। उसके बाद वे खुद भी नीचे चले गए। और इस तरह उस दिन जब सारे हिंदुस्तान की कोलियरियां बंद थीं, टर्नर मौरीसन चालू रहा।

"क्या सोचने लगे, मि. रमानी?"

"कुछ नहीं, सर! सोच रहा हूं, वफादारी का क्या मतलब है?"

व्हाइट साहब ने उसकी बात के कटाक्ष को महसूस किया। एक पल के लिए उसे घूरकर देखा और कहा, "टू बी लॉयल इन एवरी सिच्यूएशन (हर-एक स्थिति में वफादार होना)। यही वफादारी है और तुम इसमें नाकाम हो।"

सहदेव ने तीखी मुस्कान बिखेरी। चोट गहरी न सही पर लगी जरूर थी। व्हाइट साहब को अजीब बेनाम-सी वहशियाना खुशी का अहसास हुआ। वह जाने के लिए मुड़ा तो व्हाइट साहब ने उसे रोक लिया।

"तुमने अनमोसा ज्वाइन कर लिया है?"

इस बार सहदेव ने चौंककर गहरी नजरों से उसे देखा। तो इस चार्जशीट की एक वजह यहां भी मौजूद थी। उसने जल्दी से कहा, "नहीं सर, ऐसी तो कोई बात नहीं है और अभी तो मैं सरदार भी नहीं बना हूं।"

"कल मधुबन बाजार में उनकी जो मीटिंग हो रही थी, उसमें तुम शामिल थे?"

"मैं उस मीटिंग में शामिल नहीं था। उधर से गुजरते हुए थोड़ी देर के लिए रुक गया था।"

और यह सच था कि उधर से गुजरते हुए वह थोड़ी देर के लिए रुक गया था। लोगों ने उसे पहचान लिया और हाथ पकड़कर एक कुर्सी पर बैठा दिया गया। व्हाइट साहब ने फिर अपनी छोटी और दरिंदों जैसी हरी चमकीली आंखों से उसे देखा। सहदेव को ऐसा लगा मानो ये आंखें दूर तक उसमें उतरती और उसे खंगालती जा रही हैं। थोड़ी देर के बाद व्हाइट साहब ने गेहुंअन सांप की तरह फुफकारा।

"तुमको उस मीटिंग में कुर्सी पर बैठे हुए देखा गया है और वर्मा साहब इस बात से बहुत नाराज हैं।"

उसने अपने आपको उन तेज, तीखी और दूर तक उतर जाने वाली नजरों से बचाया। शरीर की शक्ति को बटोरा और निर्भय होकर बोला, "अनमोसा कोई गैरकानूनी पार्टी नहीं है। वह तो इंडियन नेशनल कांग्रेस की तरह ही है। और रह गई वर्मा साहब की नाराजगी की बात तो वह पहले से ही मुझसे नाराज हैं।"

"उनकी नाराजगी महंगी पड़ सकती है तुमको।"

"सर, मैं पहले कह चुका हूं कि मैं एक मजदूर हूं। वर्मा साहब सब कुछ कर सकते हैं, मगर मेरे ये हाथ नहीं छीन सकते।"

"बहुत गुमान है तुमको इन हाथों पर?"

"ये हाथ ही तो हमारे सब कुछ हैं।"

"नानसेंस ! सारे काम हाथ से नहीं होते। कुछ दिमाग से भी किए जाते हैं। तुमको चाहिए कि वर्मा साहब से मिलकर सारी गलतफहमियां दूर कर लो। उनसे माफी मांग लो।"

"यह मुमकिन नहीं है, सर! मैं तलवे चाटने वालों में से नहीं हूं।"

"क्या मतलब?"

''मतलब यह सर कि मैं लोकस साहब के कुत्ते जैसा (वफादार) नहीं हूं।''

व्हाइट साहब ने गुस्से से अपने होंठ भींच लिए।

"बहुत बोलने लगे हो आजकल, मगर याद रखो टर्नर मौरीसन से निकलने के बाद तुम्हें कहीं कोई ऐसी जगह नहीं मिलेगी।"

उसके अंदर वही खौफनाक, अचानक फट पड़ने वाला गुस्सा समा जाता है। वह तिलमिला गया, मगर क्रोध को पीकर उस गोरी चमड़ी और बेरहम आंखों वाले आदमी को देखा। फिर धीरे-धीरे अपना सर उठाया और कहा, "सर, जो लोग टर्नर मौरीसन में काम नहीं करते वे भी जी रहे हैं। जो लोग इस काली दुनिया से अलग हैं वे भी जिंदा हैं। दुनिया बहुत बड़ी है, सर! मैं जानता हूं कि मेरे साथ क्या होने वाला है, मगर मैं बड़े प्यार से आपको यकीन दिलाता हूं कि मुझे इस पर पछतावा या अफसोस कभी नहीं होगा।"

बातचीत अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई थी, इसलिए सहदेव ने नमस्कार किया और बाहर निकल गया।

उस समय सुबह के आठ बज रहे थे। जिंदगी शुरू करने का वक्त। जिंदगी शुरू भी हो चुकी थी। चांक का चक्का चल रहा था। डोली बोल और हाब्स हो रही थी। आठ-आठ, दस-दस आदमियों का समूह लिफ्ट से नीचे उतर रहा था। दो-दो, चार-चार की टोलियों में मजदूर वाइंडिंग रूम के पास जाने के लिए जमा हो रहे थे। फेरी वाले जमीन पर टाट बिछाए, उस पर अपना सामान फैलाए आवाजें लगा रहे थे। लोगों के जोर-जोर से बातें करने और ठहाके लगाने की आवाजों से सारा माहौल गूंज रहा था। सी.एम.ई. आफिस से निकल कर वह वाइंडिंग रूम की तरफ नहीं गया। आज उसे नीचे नहीं जाना था। उसकी जरूरत भी क्या थी? यह चार्जशीट बस एक प्रक्रिया थी। एक खुली हुई साजिश और राजनीति के तहत उसे निकाल बाहर करने का ताना-बाना। वह जानता है कि उसके किसी भी जवाब से कंपनी संतुष्ट होने वाली नहीं है। बस एक औपचारिकता पूरी की जा रही है।

जोनाथन शाम को उसके घर आया।

"मिल गया है?"

"हां।"

"देखूं, क्या चार्ज लगाए हैं?"

"सब वही चार्ज हैं जिनसे किसी को निकाला जा सकता है।"

दिन भर में यह खबर बहुत धीरे-धीरे सारी कोलियरी में फैल गई। यूनियन वालों के कैंप में खुशी की लहर दौड़ गई। वे दूसरे मजदूरों को धमकाते फिर रहे थे।

"देखा यूनियन से टूटने का मतलब!"

"साला बहुत अकड़ता है। समझता है, वही पी.एन. वर्मा हो गया है। साला व्हाइट साहब का चमचा!"

"अरे वर्मा साहब तो एस.पी., डी.एस.पी. का कान पकड़कर मिनटों में तबादला करवा देता है। यह साला दो कौड़ी का लोडर किस खेत की मूली है? अब बुलाए अनमोसा वालों को।"

जोनाथन चिंतित है। प्रतीबाला भी बहुत घबराई हुई है। दोनों मिलकर उसे समझाते हैं।

"अभी बात नहीं बिगड़ी है या यूं समझ लो कि सब दरवाजे अभी बंद नहीं हुए हैं। अगर तुम कहो तो घोषाल बाबू या अलख बाबू से बातचीत की जा सकती है। अभी मामला रफा-दफा हो सकता है।"

मगर सहदेव के अंदर जो आग धधक रही है वह इन छींटों से बुझने वाली नहीं है। वह अपनी जगह अटल है। वह देख रहा है कि आगे अथाह गहरा अंधेरा है। कहीं कोई रोशनी नहीं। एक शोला भर भी नहीं, एक चिंगारी भर भी नहीं, मगर फिर भी वह हार मानने पर तैयार नहीं। वह जानता है कि अगर आज वह झुक गया तो जिंदगी भर कभी सीधा खड़ा नहीं हो सकेगा। ये लोग उसके रीढ़ की हड्डी तोड़ देना चाहते हैं और वह इतनी बड़ी कीमत चुकाने को तैयार नहीं है।

कोलियरी के मजदूरों में बेचैनी है। थोड़ी-सी हलचल। वे सहदेव के साथ की जाने वाली खुली नाइंसाफी को अच्छी तरह जानते हैं। उन्हें यूनियन और कंपनी का उठाया गया यह कदम सख्त नापसंद है, मगर कुछ कर नहीं सकते। वे सोच सकते हैं, कुढ़ सकते हैं, मगर अपने गम और गुस्सा को प्रकट करने के लिए न उनके पास जुबान है और न ही खुद को किसी मुश्किल में डालने की जुर्रत। उनका अपना कुछ नहीं है। वे यूनियन और ठेकेदारों के डंडे से हांके जाते हैं। पहलवानों और बदमाशों के द्वारा काबू में रखे जाते हैं और जो थोड़ा-सा भी विरोध जताते हैं उसके लिए कंपनी का वह बिजली की हीटर है कि जो छू ले वह खत्म।

सब कुछ खत्म हो गया है। सहदेव की नौकरी चली गई। आमदनी का एक अकेला रास्ता था जो बंद हो गया। अब लोग क्वार्टर खाली करवाने के पीछे पड़े हैं। इस नंगी भूखी दुनिया में कुछ नहीं बचा है। बस एक गुस्सा, एक झल्लाहट, थोड़ी-सी आग, थोड़ी-सी नफरत और

इसके अलावा वह एक चीज जो और बची रहती है, वह है शराब।

शराब गुस्से को बढ़ा देती है। अंदर धधकने वाली आग को और धधकाती है। अन्याय और अत्याचार से लड़ने की जुर्रत पैदा करती है। मुंह को जुबान और जुबान को बोलने की शक्ति प्रदान करती है। तब आदमी हवा में मुट्ठी भींचकर और चीखकर कह सकता है—

"तुमको मालूम है, लाला दीप नारायण का खून किसने किया था?"

चाय और पान की दुकान में लगी भीड़ का ध्यान उसकी ओर खिंच जाता है।

"सहदेव आज पीकर बौरा गया है।"

"दीप नारायण को खान ग्रुप ने नहीं मारा। उसे इनामुल खान की यूनियन वालों ने भी नहीं मारा।"

काफी लोग जमा हो गए। लोगों ने चारों तरफ से सहदेव को घेर लिया। वे सच्ची बात सुनना चाहते हैं। वे एक आदमी को सच बोलता हुआ देखना चाहते हैं।

"लाला दीप नारायण को पी.एन. वर्मा ने मरवाया है।"

"हत, क्या बोलते हो, सहदेव भाई?"

"ठीक बोलता हूं। उसे पी.एन. वर्मा के आदमियों ने गोली मारी थी।"

"नहीं।"

''मैं सबूत दे सकता हूं। साबित कर सकता हूं। अभी उसकी पत्नी जिंदा है। ललाइन ने सब कुछ अपनी आंखों से देखा था।''

"ऐसा कैसे हो सकता है?"

"ऐसा हुआ है। जिन लोगों ने उसे मारा वे उसी के घर से चाय पीकर निकले थे।"

तभी चाय की दुकान से दो पहलवान उठे।

"क्या बोला रे साला?"

"ठीक बोलता हूं।"

एक उसका गिरेबान पकड़ लेता है।

"साला पीकर बकवास करता है।"

बात बिगड़ने लगी। सहदेव के चारों तरफ जमा भीड़ काई की तरफ फट गई। पहलवानों से आतंकित लोग खिसकने लगे। अब कुछ होगा...अब कुछ...।

"साला चार चुल्लू पीकर बौरा गया है। साले इतना मारेंगे कि घर का रास्ता भूल जाएगा।"

पहलवान ने उसे झटका दिया। वह गिरने को हुआ तभी उसे दूसरे पहलवान ने छुड़ा दिया।

"छोड़ो साले को, नशे में है।"

चौराहे की सारी भीड़ गायब हो गई। अब वहां कोई नहीं है। न सच सुनने वाला और न सच बोलते हुए किसी को देखने वाला। पहलवान ने उसका गिरेबान छोड़ दिया है। सहदेव लड़खड़ा कर जमीन पर बैठ गया।

"साला अभी पी.एन. वर्मा सुनेगा तो गांड़ में डंडा कर देगा। जानता नहीं है उसे?"

वह जानता है, वह पी.एन. वर्मा को जानता है। वह इन पहलवानों को भी जानता है। वह व्हाइट साहब और उसके गुर्गों को भी पहचानता है। वह उन सारे पालतू ठेकेदारों से भी परिचित है जो असल में मैनेजमेंट के दलाल हैं। वह इस सारी लूट-खसोट से, इस सारे शोषण और अत्याचार से भी परिचित है जो उनके चारों तरफ एक बड़े महाजाल की तरह फैला है और धीरे-धीरे उनके चारों ओर कसता जा रहा है। इससे छूटने का कोई रास्ता नहीं। इसे तोड़ डालने की शक्ति नहीं। जल में फंसी मछली तड़पती है और तब क्या बचता है? शराब।

यह तरल आग अंदर की आग को बुझने नहीं देती, कलेजा नोचती है। दिमाग पर खरोचें डालती है मगर आदमी को जिंदा रखती है। कालाचंद ठीक कहता था, शराब ही हमें जिंदा रखती है। कालाचंद सच्चा आदमी था। खरा आदमी। अब कहां है वह?

उसे कालाचंद की याद आती है। लंबा कद्दावर आदमी जो अब हड्डियों का ढांचा रह गया है। जिसने शोषण और अत्याचार के जहर को घूंट-घूंट पिया है और उसने जहर की सारी कड़वाहट को अपने रग-रग में समो लिया है।

कहां है वह?

कुछ पता नहीं।

कितने लोग हैं जो इस कोलफील्ड में खो जाते हैं। हमेशा के लिए गुम हो जाते हैं, इस तरह कि फिर उनका नामोनिशान भी नहीं मिलता।

अब लोग फिर से उसके नजदीक आने लगे हैं। दोनों पहलवान छोटे गिलासों में चाय लेकर वहीं खड़े-खड़े पी रहे हैं। सहदेव वैसे ही फर्श पर बैठा है। यह देखकर एक पहलवान उससे कहता है, "क्यों बे सहदेव! अब यहीं बैठा रहेगा? अब घर जा, चल...।"

घर—? एक सप्ताह से लोग परेशान कर रहे हैं। घर छोड़ दो। क्वार्टर खाली कर दो। कंपनी के गुंडे रोज आकर बोलते हैं अगर क्वार्टर खाली नहीं किया तो सारा सामान सड़क पर फेंक दिया जाएगा। ठेकेदारों के गुर्गे अलग धमकी देते हैं। साले क्वार्टर खाली करो नहीं तो ऐसा गायब कर देंगे कि कयामत तक पता नहीं चलेगा कि कहां गया। वह इन धमकियों से नहीं डरता। वह अड़ा हुआ है। वह क्वार्टर खाली नहीं करेगा, जिसको जो करना है कर ले।

वह उठा। चलने लगा तो पैर लड़खड़ाने लगे। कुछ दूर चलकर वह फिर पलट गया।

"साले पी.एन. वर्मा के कुत्ते! क्या मैं तुमसे डरता हूं? मैं किसी साले से नहीं डरता।

मैं सारी दुनिया को बता दूंगा कि लाला जी का खून पी.एन. वर्मा ने करवाया है। अपने ही आदमी का गला खुद काटा है। साला चेहरा देखो तो फरिश्ता लगता है। बेइमान, खूनी, डाकू..."

दोनों पहलवान चाय का गिलास फेंककर उस पर झपटते हैं।

"यह साला ऐसे नहीं मानेगा।"

तभी न जाने कहां से चार पहलवान और निकल आए।

"मारो साले को।"

मोहन कोलियरी के बाजार में भगदड़ मच गई। दुकानों के शटर धड़ाधड़ गिर गए। उन छह आदमियों ने सहदेव को घेर लिया।

"चर्बी चढ़ गई है साले को।"

"अब बोल तुम्हारे बाप को कौन मारा था?"

सहदेव ने उनको नजर उठाकर देखा। ये सारे चेहरे उसके पहचाने हुए थे। वह उनमें से एक-एक को जानता था। वह समझ गया कि शायद आज वक्त आ गया है। इसलिए जवाब दिए बिना ही वह चुपचाप निकल जाना चाहता था।

"भागते कहां हो?" उनमें से एक रास्ता रोक कर खड़ा हो गया।

"देखो रास्ता मत रोको, नहीं तो बहुत बुरा हो जाएगा।"

"क्या बुरा हो जाएगा? तुम क्या कबाड़ लोगे?"

उसने पलट कर देखा। भरे पड़े बाजार की भीड़ गायब हो गई थी। जो थोड़ा साहसी थे वे दूर खड़े होकर तमाशा देखने लगे। बंद दुकानों से विस्मित और भय से फैली हुई आंखें एक भयानक दृश्य की साक्षी थीं। वह इन सैकड़ों मजदूरों में, अपने ही साथियों में अपने आपको अकेला पाता था। वह एक बार फिर आगे बढ़ना चाहता था मगर सामने वह आदमी चट्टान की तरह खड़ा था। बाकी बचे पांच आदमियों ने उसके चारों तरफ घेरा डाल दिया था। हिम्मत बटोरता था और उस आदमी को सामने से हटा कर बढ़ना चाहता था। तभी वे उस पर पिल पड़े।

"मारो साले को।"

"और मारो।"

"साला इतना ऐंठ गया है कि वर्मा जी को गाली बकता है।"

उस पर घूंसों की बारिश होने लगी। उसने भागने की कोशिश नहीं की, प्रतिरोध किया। उन लोगों से जूझ पड़ा। उसके गैंता चलाने वाले मजबूत हाथ और कड़े परिश्रम का आदी शरीर जल्दी हार मानने को तैयार नहीं हुआ। उसके मजबूत हाथों की मार से वे लोग तिलमिला गए। यह पहली बार हुआ कि किसी मजदूर की ओर से जवाब मिला। घूंसे का जवाब घूंसे से। इस चीज ने और भड़का दिया।

"और मारो साले को।"

"अब बोलो, लाला दीप नारायण को किसने मारा था?"

"अब लो अपने बाप का नाम।"

वह बेबस होने लगा था। वह एक थे। दूसरी तरफ छह थे। छह खूंखार दरिंदे, वहशी, शिकारी कुत्ते। मार लाठी, डंडे या भाले, गंड़ासे से नहीं हो रही थी। सिर्फ घूंसे और लात चल रहे थे। लोगों ने सहदेव को निढाल कर दिया। अब वे उसे पकड़कर पीट रहे थे।

सहदेव अब भी होश में था। थक गया था। निढाल हो गया था मगर अब भी अपने पैरों पर खड़ा था। ऊपर के फटे होंठ से बहता खून उसके मुंह में चला गया था। उसे खून का खट्टा और नमकीन स्वाद महसूस हुआ। अपने ही खून का स्वाद। उसने जोर लगाकर अपने हाथ को उनकी पकड़ से छुड़ाया। अपने आपको समेटा है। पैर मजबूती से जमाया और सबसे करीब वाले आदमी के मुंह पर घूंसा जमा दिया। वह आदमी लड़खड़ा कर पीछे हटा। तभी कोई चीख पड़ा।

"अरे यह साला, ऐसे नहीं मानेगा, गिरा दो मारकर।" सहदेव के अंदर एक भयंकर गुस्सा तिलमिला रहा था। अंदर ही अंदर एक आग थी जो खौल रही थी। यह आग जो बाहर निकलना चाहती थी। जो फटकर, उबल कर बह जाना चाहती थी। वह फिर एक आदमी पर झपटा मगर आंखों के आगे अंधेरा-सा छा गया। उसने अपने आपको खड़ा रखने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा दी मगर उसके भारी शरीर को उसकी टांगें संभाल नहीं पाईं और वह जमीन पर गिर पड़ा।

उन लोगों ने उसे ठोकरों पर रख दिया।

"इतना मारो कि साला तीन महीने तक चारपाई से नहीं उठ सके।"

"हाथ-पांव तोड़ दो साले का।"

वह आदमी जिसे सहदेव का घूंसा लगा था उसकी एक आंख सूज गई थी और आंख की निचला भाग काला पड़ गया था। वह दांत पीसकर आगे बढ़ा।

"ऐसे नहीं, साले को गोफ में ले चलो।"

"हां, ले चलो। आज साले को वहीं गाड़ देंगे।"

उसने सहदेव की एक टांग पकड़ ली और अपने साथी से दूसरी टांग पकड़ने के लिए कहा।

"पकड़ साले की टांग, और घसीट।"

दूसरे आदमी ने दूसरी टांग, पकड़ ली।

और दुकानों के बंद ओटों से झांकती आंखें इस अमानवीय दृश्य को देखकर और फैल गईं। दूर-दूर से तमाशा देखने वाले लोग चौंककर और पीछे खिसक गए।

दोनों पहलवान उसकी टांगें पकड़े बेरहमी से घसीटते हुए ले जा रहे थे।

सहदेव बेहोश नहीं हुआ था। डूबती-उभरती चेतना में वह सब जान रहा था कि क्या हो रहा है। मार से चूर-चूर उसका शरीर प्रतिरोध की सारी शक्ति खो चुका था। उसकी पीठ कोयले के रोड़ों से छिल रही थी। एक अथाह दर्द का समुंदर था जिसमें वह डूब रहा था। डूबता जा रहा था। कोई बचाने वाला नहीं, कोई एक शब्द कहने वाला नहीं...ये सारे लोग, ये सैकड़ों लोग जो इस दर्दनाक दृश्य को दूर से और पास से देख रहे थे। ये न गूंगे थे, न बहरे थे, न ही नामर्द थे मगर किसी में जरा-सी आग, जरा-सी गर्मी नहीं बची थी। ठंडे, संवेदना-शून्य लोग...

तब चाय की एक बंद दुकान से जो एक व्यक्ति तड़पकर निकला वह भगवान दास था। हिजड़ा भगवान दास, मौगा भगवान दास, वैसे ही आधी धोती पहने, औरतों की तरह ओढ़े, लचककर चलता हुआ, हाथ नचाकर बोलता हुआ।

"अरे हाय-हाय, मार डाला है बेचारे को, अरे रोको..."

"तू कहां से निकल आया बे? चल भाग।"

"हाय-हाय, बड़ा मर्द बनते हो! छह आदमी एक आदमी को पीट रहे हो।"

वह दोनों हाथ से ताली बजाकर बोला। उनमें से एक आदमी ने भगवान दास को जोर का धक्का दिया।

"चल भाग, तेरा भतार लगता है क्या?"

"भतार लगता है तुम्हारा, तुम्हारी मां का।"

पहलवान ने एक घूंसा उसके मुंह पर जड़ दिया तो वह बैठकर हाय-हाय करने लगा।

"अरे भड़वे का चोदा, बड़ा मर्द बनते हो। तुम लोग तो हमसे भी खराब हो, हिजड़े..."

भगवान दास गाली बकता रहा और वे लोग सहदेव को पैरों से ऐसे घसीटते हुए चलते गए मानो डोम मरे हुए कुत्ते को घसीटते हुए ले जा रहा हो। थोड़ी दूर चलकर वे गोफ एरिया की ढलान पर उतर गए।

वन-तुलसी की सूखी झाड़ियों ने उसकी पीठ पर लंबी-लंबी खराशें डालनी शुरू कीं मगर तब तक वह संज्ञा-शून्य हो गया था।

वह बेहोश हो गया था।

खतुनिया उसे जगाती है।

"भैया, क्या सोते रहोगे? दिन चढ़ आया है।"

वह आंखें खोलकर देखता है। सचमुच दिन निकल आया है। धूप की चादर ओढ़े रात की सारी गंदगी को धोकर उदय होने वाला एक पीला चमकीला, साफ-सुथरा खूबसूरत

दिन। वह हर रोज दिन को इसी तरह उदय होते देखता है। हर रोज कोई न कोई उसे जगाता है। कभी प्रतीबाला, कभी इरफान और कभी जब देर हो जाती है तो खतुनिया। खतुनिया मुंह अंधेरे कोयले की झूड़ी उठाकर कोयला बेचने चल देती है और जब वापस होती है तो दिन पूरी तरह निकल चुका होता है। वह अपने घर जाने के बजाए उसके दरवाजे पर झूड़ी पटक कर अंदर आ जाती है। आंचल का एक सिरा कमर में खोंसकर थैला जैसे बनाए वह कभी-कभी सहदेव के लिए गरम जलेबियां ला देती है और कभी बेसन का भाभरा। सहदेव उसे बहुत मना करता है। प्रतीबाला भी कई बार बोल चुकी है मगर वह नहीं मानती। सिर्फ हंसती है। ठीक उसी तरह जिस तरह इरफान के कोयला बेचने से मना करने पर हंसती है। इरफान को उसका कोयला बेचना पसंद नहीं है मगर उसे किसी की निर्भरता मंजूर नहीं, अपने बेटे की भी नहीं। कहती है, जब तक शरीर चलता है किसी के आगे हाथ क्यों फैलाऊं? बड़े हौसले वाली औरत है। इतनी बड़ी जवानी अकेले काट दी, बिल्कुल अकेले। जांघ भर के लड़के को पाल-पोसकर बड़ा कर दिया। अब वह चासनाला कोलियरी में काम भी करने लगा है। इतना पैसा भी मिल जाता है कि मां-बेटे का खर्च चल जाए, इसलिए इरफान उसे तंग करता रहता है कि वह गली-गली घूमकर कोयला बेचना छोड़ दे। खतुनिया हंसती है।

"ऐ भैया देखो तो, दो पैसा कमाने लगा है तो कहता है कोयला बेचना छोड़ दो। कल जब कुछ नहीं था, दुनिया में कोई नहीं दिखता था तब तो यही सहारा था। था कि नहीं, भैया...?"

'सहारा' शब्द एक लम्हे के लिए सहदेव को पकड़ लेता है।

अगर खतुनिया का सहारा न मिलता तो क्या होता? जख्मों से चूर जब उसे खैराती अस्पताल में भर्ती कराया गया तो प्रतीबाला पागलों की तरह लोगों से सहारा मांग रही थी। घिघिया रही थी। उधर कंपनी के पहलवानों ने उसका सारा सामान क्वार्टर के बाहर फेंक दिया था और क्वार्टर किसी दूसरे आदमी के नाम कर दिया था। तीन दिनों तक वह सामान वैसे ही पड़ा रहा और तीन दिन प्रतीबाला सब कुछ छोड़कर, सब कुछ भूलकर अस्पताल के बरामदे में चमगादड़ की तरह चक्कर खाती रही।

"अरे बचा लो हमरे मालिक को, डाक्टर बाबू! इतनी बड़ी दुनिया में बस वही एक सहारा है हमारा..."

तीन रातों के बाद खतुनिया एक खूबसूरत दिन की तरह प्रकट हुई।

"ऐ दुल्हन, हमको काहे खबर नहीं किया, क्या हम मर गए थे?"

वह प्रतीबाला को अपने घर लेती आई। क्वार्टर का सारा सामान ठेले पर उठवाकर मंगवा लिया और जब सहदेव को अस्पताल से डिस्चार्ज किया गया तो उसके लिए अपने बिलकुल पास में एक कोठरी किराए पर दिलवा दिया। तीस रुपए महीने पर।

उसी सीलन भरी दुर्गंधयुक्त कोठरी में उसने चार महीने गुजारे थे। उसने अपने भाई को चिट्ठी भी लिखी परंतु जवाब नहीं आया। वह जानता है कि वह भाई अब उसका नहीं है। वह जानता है कि अब वह गांव भी उसका नहीं है। फिर भी दिल के शायद सबसे पहले हिस्से में जो तस्वीर टंगी है वह उसके भाई की है। उस गांव की है जिससे बिछड़े एक जमाना हो गया। जिसको भूले एक युग बीत गया। जब कभी दुख का कोई तेज बहाव उसे बहाने लगता है, जब कभी चारों ओर से काली आंधी घेरने लगती है तब गांव का वह खुला-खुला माहौल, वह छोटा-सा अपना सुरक्षित घर, दुनिया की तमाम परेशानियों से अछूता रहने वाला वह गांव याद आता है और याद आते हैं वे लोग, मासूम, निष्कपट लोग जो दोस्ती भी करते हैं तो खुलकर और दुश्मनी भी करते हैं तो खुलकर, जहां पालतू शिकारी कुत्ते नहीं होते, जहां जिंदगी नंगे पांव ओस से भीगी घास पर चलती हुई नव-यौवना की तरह अल्हड़, मासूम और निर्भय है।

सहदेव अपने प्लास्टर चढ़े पांव को सीधा किए चारपाई पर पड़े अकसर अपने गांव चला जाता है। घंटों वहां के कच्चे रास्तों पर घूमता है। मैदानों की घास पर हाथ का तकिया बनाकर लेटा रहता है। बड़ के घने पेड़ के नीचे कबड्डी खेलता है।

"सल कबड्डी तारा–सुलतान गंज मारा...मारा...मारा..."

पेड़ों, झाड़ियों और घास की विशिष्ट महक उसे मुग्ध कर देती है, मदोन्मत्त किए रहती है यहां तक कि कोई न कोई कुछ बोलकर, उसे पुकारकर उस हरी-भरी वादी से फिर इसी स्याह और उजाड़ दुनिया में खींच लाता है।

इरफान एक हाथ में जूता लिए और दूसरे हाथ में ब्रश पकड़े उसके पास आकर खड़ा हो जाता है।

"नाऊ यू आर गेटिंग वेल, अंकल!"

"यस आई एम गेटिंग वेल," वह आसानी से जवाब देता है।

"अगले हफ्ते आपका प्लास्टर भी कट जाएगा।"

वह जवाब नहीं देता। वह उस स्वस्थ, जवान और बेफिक्र आदमी को देखता है। हां, अब वह जवान आदमी है। वह बच्चा जो तुतलाकर बोलता था और हाथ में प्लास्टिक की मोटर लिए सारे गांव में दौड़ता था, अब एक जवान है; आत्म विश्वास और स्वाभिमान से पूर्ण आदमी है।

सहदेव उसकी बांह पकड़कर अपने पास बैठाता है।

"कहीं जाने की तैयारी हो रही है?"

"जाना कहां है, अंकल? बस वही मियां की दौड़ मस्जिद तक। अपने गुरु के पांव छूने सिंदरी जा रहा हूं।"

"मतलब, मजूमदार के पास?"

उसने सर हिलाकर हामी भरी।

"उस साले से कहो, उसकी बहन बहुत याद करती है उसे।"

इरफान हंस दिया, "मैं मामा कहता हूं तो बिगड़ जाते हैं। कहते हैं, कामरेड कहो। उनका ख्याल है कि दुनिया में कोई रिश्तेदारी नहीं है। ये सब छोटे-छोटे फंदे हैं। इन फंदों से निकलना होगा।"

"साले ने शादी नहीं की वरना उसे मालूम होता कि इन फंदों के बिना जिंदगी की कोई कल्पना नहीं की जा सकती। खैर छोड़ो, यह बताओ क्या मेरी रिश्तेदारी भी याद नहीं है उसे? कभी पूछता है मेरे बारे में?"

"आपके बारे में जब जाता हूं तब पूछते हैं। उन्होंने तो आपके लिए एक नौकरी भी ढूंढ रखी है।"

"नौकरी?"

"हां ! पक्की बात कर रखी है उन्होंने। बस आप जल्दी से ठीक हो जाइए।"

सहदेव ने एक ठंडी सांस भरी, "क्या वह समझता है कि मैं इतनी जल्दी ठीक हो जाऊंगा? अभी तो पता नहीं कितने दिन लग जाएं मुझे काम के योग्य होने में?"

"अरे, अंकल काम करने को कौन कहता है? दस्तखत तो कर सकते हैं न आप?"

"हां।"

"तो बस दस्तखत ही करने हैं। पत्थरखेड़ा कोलियरी एक बहुत छोटी-सी कोलियरी है। उसका मालिक एक बनिया है। वह पूरा स्टाफ नहीं रख सकता लेकिन माइनिंग कानून की खानापूर्ति के लिए उसे एक माइनिंग सरदार की जरूरत है। काम आपको नहीं करना है। रोजाना जाकर सिर्फ हाजरी बनवानी है और खाते में दस्तखत करने हैं ताकि वह माइनिंग कानून से बच सके। इसके लिए वह ढाई सौ रुपए महीना देगा। कहिए, मंजूर है?"

पी.एफ के मिले हुए सारे पैसे खर्च हो चुके हैं। कुछ लंबे इलाज पर और कुछ खाने में। इरफान जानता है कि वह खाली है। जरूर उसी ने यह बात मजूमदार को बताई होगी और तब उसके लिए यह नौकरी ढूंढी होगी। सहदेव नजर उठा कर प्यार से उसकी तरफ देखता है। मजूमदार कहता है, वह बहुत तेज लड़का है, बहुत आगे जाएगा।

आजकल इरफान मजूमदार के साथ ही ज्यादा लगा रहता है। सप्ताह में दो-चार दिन सिंदरी जाना उसके लिए जरूरी है। फिर वहां से लाई हुई किताबें और पत्रिकाएं पढ़ता है। देर रात तक, यहां तक कि ढिबरी का काला धुंआ उसकी नाक में भर जाता है। खतुनिया डांटने लगती है।

"सारी-सारी रात जागकर क्या अपनी आंखें फोड़ेगा?"

वह किताब रखकर प्यार से उसका हाथ पकड़ लेता है।

"क्या मेरे बाप को भी इसी तरह डांटती थीं तुम?"

बाप—? यह उसने किसका नाम ले लिया! अनजाने में खतुनिया की बंद यादों का पिटारा खुल जाता है। उससे अनगिनत मधुमक्खियां निकलकर उसे डंक मारने लगती हैं और संजोकर, छिपाकर, सारी दुनिया से छिपाकर रखे हुए असंख्य पल उसका कलेजा नोचने लगते हैं। इरफान चौंक जाता है। फौरन समझ जाता है कि क्या हो गया। मां के चेहरे का भाव अचानक इतना कैसे बदल गया है। हमेशा चमकने वाली आंखें, इस बुढ़ापे में भी जगमगाने वाली आंखें एकाएक आंसुओं से कैसे धुंधला गई हैं। वह पछताता है। किताब बंद करके उठ बैठता है। मां का पकड़ा हुआ हाथ खींचकर उसे चारपाई पर बैठा लेता है फिर उसके गले में बांहें डालकर कहता है, "सॉरी मम्मी।"

पहले खतुनिया 'सॉरी' का मतलब नहीं जानती थी। मगर अब जानने लगी है। वह नजर उठाकर अपने बेटे को देखती है। एक और जवान मर्द। बित्ते भर का कमजोर, मरियल सा लड़का आज एक जवान मर्द हो चुका है। वह उसकी रचना है। वह उसकी सर्जना है। इस इमारत की एक-एक ईंट उसके अपने हाथों की रखी हुई है। उसके अंदर सब कुछ मोम की तरह पिघलने लगता है। वह अपने बेटे की छाती पर सर रखकर अपने आपको समेटती है।

"तुम उसका नाम मत लिया करो।"

सहदेव इस बात को भली भांति जानता है, इसलिए कभी खतुनिया के सामने रहमत मियां की कोई बात नहीं करता। बल्कि इरफान से भी इस बारे में कुछ नहीं कहता। सिर्फ एक दिन उसने इरफान से पूछ लिया, "तुम्हें मालूम है, रहमत मियां के साथ क्या हुआ था?"

इरफान बिलकुल गंभीर होकर चारपाई पर बैठ गया।

''हां अंकल, मुझे मालूम है। मैं शुरू-शुरू में यहां आया था तो कई बार सिरसा कोलियरी गया था। वहां के बहुत सारे लोगों से मैंने पूछताछ की। थोड़ा-थोड़ा करके मुझे सब मालूम हो गया। मैं खान के नीचे जाकर उस जगह को भी देखना चाहता था मगर वहां ले जाने के लिए कोई तैयार नहीं हुआ। मालूम हुआ कि खान के उस इलाके को बंद कर दिया गया है हालांकि वहां गैस निकल आती है।

"तुमको कुछ याद आता है, मतलब अपने बाप का?"

"नहीं, कुछ नहीं। बस एक चेहरा, वह भी धुंधला-धुंधला।"

मगर सहदेव को सब याद है। उसका मासूम, भोला भाला चेहरा। हरदम डरी हुई आंखें। भूख और खान साहब की बेगार से कुचला हुआ बदन। झिड़कियों से टूटा हुआ उसका हौसला। अभी कल की बात लगती है जब उसने खान के अंदर सहदेव का हाथ पकड़कर कहा था—

"सहदेव भाई, मेरे साथ-साथ रहो, मुझे डर लगता है।"

अगर वह जानता, अगर वह जानता तो उसे कभी अकेला नहीं छोड़ता।

थोड़ी देर बाद इरफान ने धीरे से कहा, "एक और आदमी था जिसने सब कुछ मुझे विस्तार से बताया था। जरा, जरा....।"

सहदेव ने सवालिया नजरों से उसकी तरफ देखा। "मजूमदार अंकल ने, उन्होंने मुझे सारी बातें बताईं, शुरू से अंत तक। आश्चर्य है, मां मुझसे कम नहीं जानती इस बारे में। वह जो आपको इतना मानती है उसकी यही वजह है कि अगर आप न होते तो शायद पता भी नहीं चलता कि क्या हुआ। लोग यही समझते कि रहमत मियां कोलियरी छोड़कर भाग गया है। मां का तो यहां तक ख्याल है कि अगर आप उन दिनों घर नहीं गए होते तो शायद यह दुर्घटना कभी न घटती।"

सहदेव ने उसे बड़े प्यार से देखा।

उसे सब कुछ कहां मालूम है? क्या उसे मालूम है कि उसकी मां ने चांदी की एक सिकड़ी मंगवाई थी? क्या उसे मालूम है कि वह सिकड़ी पहनकर खान साहब की लड़की की शादी में अपनी अमीरी और संपन्नता को दिखाना चाहती थी। वह सब छोटी-छोटी असफलताएं और वह जिंदगी भर की सारी गरीबी जिनके पूरे होने के दिन नजदीक, एकदम से नजदीक आ गए थे कि अचानक एक अंधेरे कुंए में सब कुछ गिरकर खो गया। सब कुछ अंधेरे कुएं में डूब गया। उस आदमी की असफलता का आकलन नहीं किया जा सकता जिसकी अंधेरी, घटाटोप अंधेरी जिंदगी में बिजली एक झमाके की तरह चमकी हो और फिर सब कुछ वैसे ही अंधेरे में डूब गया हो बल्कि उससे भी ज्यादा गहरे अंधेरे में। और कोई होता तो तड़पकर मर गया होता, मगर खतुनिया बड़े हौसले वाली औरत है। उसकी जिंदगी जहां से खत्म हुई थी वहीं से उसने एक दूसरी जिंदगी शुरू कर ली। यह बड़ा काम है और यह काम अक्सर निचले वर्ग के लोग करते हैं या शायद उन्हें करना पड़ता है।

इरफान अपने जूते पर लगातर ब्रश चला रहा था। उसे सोचता देखकर रुक गया।

"अंकल, आप सोचते बहुत हैं। यह सोचने का जमाना नहीं, कुछ करने का है।"

यह कुछ करने की सनक जरूर मजूमदार ने उसके दिमाग में डाली होगी। आजकल वह ए.के. घोष के साथ काम कर रहा है। उसने सिंदरी खाद कारखाने में एक बड़ी कामयाब यूनियन बनाई है और आस-पास के देहातों में आहिस्ता-आहिस्ता लाल रंग बिखरता जा रहा है। अब उसके साथ सिर्फ ग्यारह आदमी नहीं हैं। ग्यारह सौ या ग्यारह हजार भी नहीं, अब उसके साथ पचास हजार लोग हैं। फैक्टरी के मजदूरों के अलावा, सिंदरी, बलियापुर, गोविंदपुर के सारे गांव उसके मातहत हैं। इन इलाकों के हजारों छोटे किसानों, खेतिहर मजदूरों और पिछड़े वर्ग के लोगों को वह आहिस्ता-आहिस्ता संगठित कर रहा है। इस सिलसिले में मजूमदार इतना व्यस्त हो गया है कि उसे इधर आने का मौका ही नहीं मिलता। जब वह अस्पताल में था तब वह इधर आया था।

''मुझे इस बात का अफसोस नहीं है कि उन लोगों ने तुम्हें मारा। मुझे इस बात की खुशी है कि तुमने अपने अंदर की आग को अभी तक बुझने नहीं दिया है। इसका यह मतलब हुआ कि तुम अभी तक जिंदा हो वरना इतने दिनों में तो इस कोल फील्ड में लोगों का दाह संस्कार तक हो जाता है।"

वह मजूमदार को देखकर रोने लगा। मजूमदार आगे बढ़कर उसकी चारपाई पर बैठ गया और उसके सर पर हाथ फेरने लगा।

"तुम तो बहुत बहादुर आदमी हो। इतनी छोटी-छोटी बातों के लिए रोते हो? रो मत, आंसू अंदर की आग को बुझा देते हैं। इसको बुझने मत दो। क्रोध और नफरत की यही आग एक न एक दिन इस अंधेरी काली सुरंग से निकलने का रास्ता निकालेगी।"

प्रतीबाला भी बोलती है।

"आप हाथ पर हाथ धरकर बैठ गए हैं। क्या लड़के को पढ़ाना नहीं चाहते?"

उसे यह ढाई सौ रुपए महीने की नौकरी करते हुए तीन साल हो गए हैं। वैसे काम कुछ नहीं है, केवल हस्ताक्षर करना है। मगर इसी में आधा दिन गुजर जाता है। बाकी आधे दिन में वह ट्यूशन करता है। फिर भी सब मिलाकर भी पेट नहीं चलता। ऊपर से राजेंद्र के प्राइवेट स्कूल की लंबी फीस। वह कई बार कह चुका है कि उसे इस प्राइवेट स्कूल से निकालकर किसी सरकारी स्कूल में प्रवेश दिला दो, मगर प्रतीबाला इस बात को स्वीकार नहीं करती। वह बंगालिन है, इसलिए पढ़ाई को बहुत महत्व देती है। हालांकि एक दिन चिढ़कर उसने कह दिया था, "आखिर पढ़-लिखकर ही क्या होता है? तुम्हारे बंगालियों ने ही कौन-सा कमाल कर दिया है? वही फटीचर स्कूलों की मास्टरी या सरकारी और प्राइवेट दफ्तरों की कलर्की।"

उसने तड़पकर कहा, "क्या बंगालियों में डाक्टर नहीं होते? इंजीनियर नहीं होते? आज जिस विभाग में देखो बंगाली ही बंगाली दिखाई देंगे। यह सब क्या बिना पढ़े-लिखे ही..."

वह उसके तर्क से निरुत्तर हो गया। प्रतीबाला गलत नहीं कह रही थी, मगर वह नहीं जानती कि जब हाथ का हथियार कुंद हो तो आदमी वार करने के बजाय सिर्फ वार रोकता है और राजेंद्र को उस अच्छे स्कूल से निकालकर सरकारी स्कूल में प्रवेश दिलाना समस्या का एकमात्र समाधान था।

प्रतीबाला बहुत पढ़ी-लिखी नहीं है। जैसे सहदेव सोचता है या जैसे इरफान सोच सकता है वैसे प्रतीबाला नहीं सोच सकती है। वह सिर्फ जिद कर सकती है और पिछले कई दिनों से वह जिद किए हुई थी।

"स्कूल में लड़कों की फीस माफ भी तो होती है। हमारा राजेंद्र पढ़ने में बहुत तेज है। क्या उसकी फीस माफ नहीं हो सकती? आप उसके स्कूल तो जाइए। दरखास्त तो लिखकर दीजिए।"

वह मन मारकर तैयार हो गया। एक आवेदन-पत्र लिखा और न चाहते हुए भी राजेंद्र के स्कूल जा पहुंचा। वहां हेडमास्टर ने इस सिलसिले में जो बात बताई उससे लगा कि काम हो सकता है। उसने कहा, "यह काम हमारे अधिकार में नहीं है। इस तरह की बातों का फैसला एक कमेटी करती है। आप ऐसा कीजिए कि यह आवेदन पत्र लेकर जे.पी. सिंह जी के पास चले जाइए। वे कमेटी के बहुत महत्वपूर्ण मेंबर हैं। अगर वे सिफारिश कर देंगे तो आपका काम फौरन हो जाएगा।"

उसने झिझकते हुए कहा, "वे पहचानते नहीं हैं।"

"इससे क्या होता है? ऐसे आदमियों के घर जब कोई पहुंच जाता है तो जल्दी इंकार नहीं करते। बस थोड़ा रोइए-धोइएगा। अपना दुखड़ा सुनाइएगा। बस, आपका काम हो जाएगा।"

इरफान सही कहता है कि आदमी को जिंदगी के अनगिनत मोर्चो पर लड़ना पड़ता है। आज जब वह जेब में आवेदन-पत्र रखकर अपने बेटे के साथ जे.पी. सिंह से मिलने जा रहा है तो यह क्या है? यह भी तो एक लड़ाई है। वह जानता है कि वहां क्या होगा। उसके स्वाभिमान को एक और घाव लगेगा। कहीं अंदर से वह आहत होता चला जाएगा। अपने अस्तित्व के अंदर जख्मों की कतारें सजाए वह बोलता जाएगा, साहब 'बहुत गरीब आदमी हूं। ढाई सौ रुपए महीने पर नौकर हूं। पेट ही नहीं चलता तो लड़के को कैसे पढ़ाऊं? अगर उसकी फीस... हर वाक्य, हर शब्द उसे तीर की तरह लगेगा। हर वाक्य, हर शब्द एक घाव लगाएगा और वह अपने अपमानित घायल अस्तित्व का लहू पोंछता हुआ चुपचाप उस आदमी के सामने सर झुकाए, हाथ बांधे खड़ा होगा। उन चुभते हुए शब्दों का घाव खाने के लिए जो उस आदमी के मुंह से निकलेंगे।

वह अपने बेटे की तरफ देखता है जो चलने से ज्यादा भाग रहा है। उसके कैन्वस के जूते धूल में सने पड़े हैं। चेहरे पर पसीने की बूंदें दिखाई दे रही हैं। क्या उसे मालूम है कि वह कहां जा रहा है? क्या एक-दो घाव उसके हिस्से में भी आएगा? सात साल का लड़का है, वह तीसरी कक्षा में पढ़ता है। क्या वह उन वारों से अछूता रह जाएगा? इन घावों की पीड़ा झेलने के लिए अभी उसकी उम्र ही कितनी हुई है!

मगर लड़का अपनी गंदी बस्ती से निकलकर खुश है। शहर की चकाचौंध और खूबसूरती में मगन है। उसे मालूम नहीं कि इस चकाचौंध और खूबसूरती में उसका कितना हिस्सा है? कुछ नहीं, थोड़ा-सा भी नहीं। बस, वही गंदी बस्ती उसका भविष्य है और उसकी बपौती उस गंदी बस्ती में स्थित सीलनयुक्त कमरा है जिसके फर्श पर फटे-पुराने कपड़ों से सिला

हुआ 'खेंदड़ा' डालकर उसकी मां उसे सुलाती है। बाद में पत्नी सुलाएगी, फिर उसकी बहू। फिर तब उसी स्याह अंधेरी सुरंग के किसी कोने में उसे छोड़ कर लोग आगे चल देंगे। रोशनी की तलाश में, सुरंग के दूसरे दरवाजे की खोज में...।

दरवाजे का बटन दबाते हुए वह डरता है। थोड़ा संकोच करता है। फिर थोड़ी हिम्मत बटोरकर बटन दबाता है। अंदर घंटी बजती है तो झिझक कर जल्दी से उंगली हटा लेता है। कुछ सेकेंड बाद एक बूढ़ा आदमी निकलकर पूछता है।

"क्या बात है? किससे मिलना है?"

"जे.पी. सिंह जी नहीं हैं?"

"क्या काम है?" उसका हुलिया देखकर अपने चेहरे पर रौब लाता है।

"एक...", वह बोलते बोलते रुक जाता है। फिर कुछ सोच कर कहता है, "उन्हीं से मिलना है।"

"अच्छा, ठीक है। वहां उस बेंच पर बैठ जाओ। साहब अभी ब्रेकफास्ट ले रहे हैं।"

वह नौकर के स्वर में छिपे तिरस्कार के भाव को महसूस करता है। किसी हल्के घाव की पीड़ा का अहसास होता है। जख्म गहरा नहीं लगा है। वह अपने बेटे की बांह पकड़कर बरामदे में पड़ी बेंच पर बैठा देता है।

लड़का इन घात-प्रतिघातों से बेखबर सारे माहौल को बड़ी दिलचस्पी से देखता है। वह सामने छोटे-से बागीचे में खिले रंग-बिरंगे फूलों को, गैराज में खड़ी चमचमाती कार को, बरामदे के साफ-सुथरे चमकीले फर्श को देखकर बहुत खुश है। यह एक दूसरी दुनिया है। ऐसी दुनिया जिसे उसने पहले कभी नहीं देखा या कम से कम इतने निकट से नहीं देखा।

यह किसकी दुनिया है?

यह सवाल सहदेव के दिमाग में बार-बार उभर रहा है। व्हाइट साहब के बंगले को देखकर, पी.एन. वर्मा के घर को देखकर, शहर की बड़ी-बड़ी इमारतों वाले हिस्से से और खूबसूरत चौड़ी सड़कों वाले इलाकों से गुजरते हुए—ये सौभाग्यशाली लोग कौन हैं जो यहां रहते हैं, पीढ़ी दर पीढ़ी...नस्ल दर नस्ल...आखिर इनमें ऐसी कौन-सी विशेषता है? क्या उन्हें, उस जैसे हजारों लाखों लोगों को जीने के लिए ऐसी जिंदगी कभी नसीब होगी? कभी??

जवाब नहीं है उसके पास। वर्षों से उसके मस्तिष्क में टंगा हुआ यह सवाल ज्यों का त्यों मौजूद है। कोई जवाब नहीं। गांगुली कहता है, "यह दौलत के अनुचित बंटवारे की वजह से है। मार्क्स इस संबंध में कहता है...।"

उसके बाद वह मार्क्स और एंगेल्स पर व्याख्यान देना शुरू कर देता है। उनके सिद्धांतों को सुनाने लगता है। मगर जो किताबों में लिखा है और जो जिंदगी इनके सामने हैं उसमें कहीं न कहीं एक फर्क मौजूद है। आने वाले सुनहरे दिनों का ख्वाब देखते-देखते हम

मर जाते हैं। हमेशा से मरते आ रहे हैं, एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी, दूसरी के बाद तीसरी...मगर इस काली सुरंग से बाहर आने का रास्ता नहीं मिलता।

दरवाजा खुलता है। एक सफेद झक बेदाग खद्दर का वस्त्र पहने हुए एक बहुत साफ सुथरा और चिकना आदमी बाहर आता है। वह सहदेव को देखकर चौंक जाता है।

"अरे, तुम हो सहदेव?"

वह भी चकित होकर खड़ा रह जाता है। फिर उसे पहचानने में देर नहीं लगी। वह जुगेश्वर दुसाध है जो अब जुगेश्वर प्रसाद सिंह हो गया है अर्थात जे.पी. सिंह।

"अरे तुम यहां बैठे हो? अंदर क्यों नहीं आए? चलो, अंदर बैठते हैं।"

अंदर कमरे का दृश्य और अचंभित कर देने वाला है। फर्श पर मोटा गफ कालीन बिछा है। एक तरफ कीमती सोफा पड़ा है। छोटी-सी अलमारी जिसके शीशायुक्त पिट (PIT) से अंग्रेजी शराब की बोतलें कतार में सजी साफ दिखलाई दे रही हैं। उसी अल्मारी के ऊपर सांप और नेवले का एक मॉडल रखा हुआ है। सांप नेवले के शरीर को जकड़े हुए है और नेवला अपने नुकीले दांत निकाले हमला करने को लालायित लग रहा है।

लड़ाई का एक और दृश्य।

हार किसकी होगी?

सहदेव हैरत में है। यह सब हुआ कैसे? जो तीन आदमी एक साथ अपने गांव से इस काली धरती पर उतरे थे उनमें जुगेश्वर भी था। मगर यह सब हुआ कैसे?

जुगेश्वर उसकी हैरत को दिलचस्पी से और शायद थोड़े अहंकार से देख रहा है। वह मुस्कुराता है।

"तुम सहदेव भाई, जहां के तहां रह गए।"

उसके कपड़ों पर लिखी, उसके चेहरे पर बिखरी और उसकी आंखों में जमी गरीबी को वह देख सकता है। कोई भी देख सकता है। इसलिए उसे जुगेश्वर की इस टिप्पणी पर हैरत नहीं हुई। वह जान गया है कि वह गरीब है। वह जान गया है कि वह किस अभाव में जीवन गुजार रहा है। सब कुछ तो साफ-साफ दिखाई दे रहा है, मगर फिर भी अंदर कहीं ठेस लगती है। किसी कोने में खराश की एक लंबी लकीर खून और तकलीफ से भरने लगती है।

"यह कोलफील्ड ऐसी जगह है न सहदेव भाई कि यहां कुछ करने के लिए, कुछ बनने के लिए बहुत-से तिकड़म लगाने पड़ते हैं। रास्ते के कांटों को हटाना पड़ता है। जो चीज रुकावट बनती है उसको एकदम से साफ कर देना पड़ता है। अब मुझे ही देखो, अगर मैं कपिल सिंह की चाकरी में पड़ा रहता तो सारी जिंदगी उसकी जी हजूरी में कट जाती। वह सबसे ऊंचा आदमी था, इसलिए मैंने उसी पर हाथ साफ किया और मालिक का दाहिना हाथ बन गया। फिर उसकी दुकानों पर कब्जा किया। फिर राशन की दुकानें हथिया लीं

और उसके बाद नोट से नोट निकलता गया, मगर यार तुम तो पियादा ही रह गए।"

शतरंज के खेल में जो पियादा कदम-कदम दुश्मनों के वार से बचता-बचाता जब बिसात के अंतिम सिरे तक पहुंच जाता है तो वह जिस घर में उतरता है वही मोहरा बन जाता है—कभी ऊंट, कभी घोड़ा, कभी हाथी और कभी वजीर जुगेश्वर एक ऐसा ही पियादा है।

जुगेश्वर नौकर को बुलाकर कहता है, "दो चाय ले आओ और फ्रीज में कलाकंद रखा है, बेटे के लिए वह लेते आना।"

फिर वह सहदेव से पूछता है, "कितने लड़के हैं तुम्हारे?"

"दो लड़का और एक लड़की।"

"सबसे बड़ा यही है?"

"हां।"

"तुमने बहुत लेट शादी की। मैं यहां आया था तो मेरी शादी हो चुकी थी। एक लड़का भी था। आजकल वह देहरादून में पढ़ रहा है। दूसरी पत्नी से दो बच्चे और हैं।"

"तुमने दूसरी शादी कर ली?"

"पहली का देहांत हो गया था। क्या करता?"

नौकर ट्रे में दो कप चाय लाकर रखता है। उसी ट्रे में फ्रीज से निकाला हुआ कलाकंद भी है। जुगेश्वर कलाकंद की प्लेट राजेंद्र की तरफ बढ़ाता है।

"लो बेटे, खाओ।"

फिर वह नौकर को संबोधित करता है।

"मेम साहब से कहो, साहब बुला रहे हैं। उनके एक पुराने दोस्त आए हैं।"

उसे जुगेश्वर की बात पर आश्चर्य नहीं होता। पैसा आदमी का संस्कार बदल देता है और बातचीत का ढंग भी...।

सिल्क की कीमती साड़ी में सजी-संवरी खूबसूरत शहरी औरत आकर उसे नमस्ते करती है।

"यह मेरी बीवी रंजना है। ग्रेजुएट है। जितनी लिखा-पढ़ी और पत्र-व्यवहार का काम होता है, सब यही करती है।"

औरत की उम्र बहुत कम है। शायद जुगेश्वर की उम्र से आधी। चेहरे पर न खुशी है न ही तृप्ति का भाव, बल्कि एक तनाव है या शायद आहत होने का क्रोध...या तिरस्कार की झल्लाहट...शायद यह अहसास भी उसके अंदर कहीं कुढ़न बनकर मौजूद हो कि वह बेची गई है, उसे खरीदा गया है।

राजेंद्र ने खाने के लिए प्लेट से एक कलाकंद उठाया और फिर घबरा कर रख दिया।

"बहुत ठंडा है।"

किसी ने उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया, मगर सहदेव धीरे से फुफकार कर बोला,

"खाओ।"

जुगेश्वर अब अपनी पत्नी से सहदेव का परिचय करवा रहा था।

"हम तीन आदमी जो गांव से इकट्ठा सिरसा कोलियरी में आए थे उनमें से एक यह सहदेव भी था। एक रहमत मियां भी था जो बेचारा ऐक्सीडेंट में मर गया। मैं रंजना से कहता हूं कि मैं खान के अंदर गैतें से कोयला काटता था और झूड़ी सर पर रखकर कोयला ढोता भी था तो इसे मेरी बात पर विश्वास नहीं होता। लो, अब पूछ इससे।"

रंजना धीरे से मुस्कराती है। जवाब नहीं देती। किसी आश्चर्य को भी प्रकट नहीं करती। सिर्फ अपने अंदर का जख्म सहलाती है।

अब सहदेव बड़ी मुश्किल में पड़ गया है। उसकी जेब में रखा कागज ज्यों का त्यों पड़ा है। वह क्या बोले? वह दरखास्त कैसे दे? इस सिलसिले में उसे बहुत-सी ऐसी बातें बोलनी पड़ेंगी जो कम से कम रंजना के सामने नहीं बोलनी चाहिए। जब जुगेश्वर अकेले था तभी उसे बात कर लेनी चाहिए थी। उससे बड़ी भूल हो गई।

रंजना उसके पास ही सोफे पर बैठ जाती है।

"आप इतने दिनों बाद आए हैं तो खाना खाकर ही जाइएगा।"

वह घबरा जाता है, "नहीं, नहीं, काम बहुत हैं, मुझे अभी ड्यूटी पर भी जाना है।"

"कहां काम कर रहे हो?"

"पत्थर खेड़ा कोलियरी में।"

"ओवर मैन हो?"

"नहीं, सरदारी कर रहा हूं, वह भी पार्ट टाइम।"

"मगर यार, तुमने बतलाया नहीं कि कैसे इधर आ गए। कोई काम तो नहीं है?"

काम—? चौंकता है। जेब में पड़ा कागज जैसे जिंदा होकर सांस लेने लगता है मगर वह उसे वहीं दबा देता है।

"नहीं, धनबाद आया था। सोचा, तुमसे मिलता चलूं।"

फिर गलती हो गई उससे। एक मौका मिला था, एक साफ मौका, वह आवेदन-पत्र उसके हाथ में पकड़ा सकता था मगर वह ऐसा नहीं कर सका, चूक गया। उसे अपनी कायरता पर बहुत क्रोध आया। वह कभी आगे बढ़कर वार नहीं कर सकता। उस समय भी नहीं जब दुश्मन उसके सामने हो। वह सिर्फ अपने आपको बचाना चाहता है। एक भी चोट खाना नहीं चाहता। एक भी जख्म उठाना नहीं चाहता, मगर किसी भी लड़ाई में क्या यह मुमकिन है?

वह उठकर खड़ा हो जाता है।

"अच्छा, अब चलूंगा।"

वे सब खड़े हो जाते हैं। रंजना औपचारिकता निभाती है।

"कभी अपनी मिसेज को लेकर आइए।"

वह मुस्कराता है, "ऑफ कोर्स।"

जुगेश्वर उसे छोड़ने बाहर गेट तक आता है। गेट पर दोनों हाथ मिलाते हैं। जुगेश्वर उसका हाथ छोड़ता नहीं है। वैसे ही हाथ पकड़े हुए कहता है, "अगर कभी पैसों की जरूरत आ पड़े या कोई दूसरा काम हो तो सीधे मेरे पास चले आना।"

यह गाली थी जो उसे दी गई या शायद एक सीधा वार था जो उसके चेहरे पर पड़ा। वह तिलमिलाया, तड़पा और ठंडा हो गया। धुआं-धुआं होते चेहरे को दूसरी तरफ पलट कर आगे बढ़ गया।

"बाई!"

अनगिनत छोटे-छोटे मोर्चो पर हम हारते हैं। फिर भी अपनी पराजय स्वीकार नहीं करते। लड़ने का सामर्थ्य नहीं होता, फिर भी खड़े रहते हैं। किसी हारे हुए, पिटे हुए बौक्सर की तरह जो रिंग पकड़े खड़ा हांफता रहता है और रेफरी की सीटी पर फिर मार खाने के लिए सामने आ जाता है।

एक लंबी अंधेरी सुरंग है और उसमें चलना है। कहीं कोई सूराख नहीं, कहीं कोई दरार नहीं जिससे छनकर कोई नन्ही-सी किरण अंदर आ जाती। कहीं कोई रोशनदान नहीं जहां से थोड़ी-सी रोशनी इस अथाह अंधेरे को चीरती हुई नजर आए। मुट्ठी भर धूप, चुटकी भर उजाला...नहीं, कुछ नहीं...कुछ भी नहीं। बस अंधेरा, घुटन और लंबी अंतहीन यात्रा ...चलते रहो, चलते रहो...पांव लहू-लुहान हो जाएं। शरीर अपनी सारी शक्ति खो दे, घुटने चटकने लगें, फेफड़ों में लंबे गहरे घाव हो जाएं तब भी चलते रहो। इस सुरंग की कहीं कोई सीमा नहीं, कहीं कोई अंत नहीं। यही हमारा भाग्य है। यही हमारा इस इतनी बड़ी रंग बिरंगी दुनिया में हिस्सा है...बस चलते रहो, यहां तक कि खून थूककर या दमे की बीमारी का शिकार होकर या फिर दिल का दौरा पड़ जाए नहीं तो सिर्फ कमजोरी के कारण कहीं बैठ जाओ, आगे चलने का सामर्थ्य न रह जाए। यह हमारा अंत है...हमारा आखिर ...तब हमारे बच्चे इस सुरंग में चलना शुरू करते हैं। फिर उनके बच्चे। सदियों से यह सिलसिला जारी है। इस सुरंग का दूसरा सिरा किसी को नहीं मिलता। क्या सुरंग का दूसरा सिरा, इस सुरंग से बाहर निकलने का दूसरा दरवाजा है?

इरफान कहता है, "अगर दरवाजा न भी हो तो हम इस सुरंग को तोड़कर दरवाजा बना लेंगे। ऊपर से ढा देंगे, खोल देंगे उसे। तब पीली धूप और एक सुहाना, खूबसूरत दिन इस अंधेरी सुरंग में प्रवेश करेगा।"

इरफान जवान आदमी है। वह कल्पना की दुनिया में और सपनों की हरी-भरी घाटियों

में ज्यादा रहता है। उसने सच को अभी देखा नहीं है। लम्हा-लम्हा बढ़कर आदमी को खा जाने वाले अंधेरे से उसका पाला अभी नहीं पड़ा है। इस कोलफील्ड की दुनिया को उसने सिर्फ बाहर से देखा है। अंदर सुरंग में कितना अंधेरा और घुटन है, उसे कुछ मालूम नहीं।

तब क्या आदमी हार मान जाए?

जीतने की उम्मीद के बगैर लड़ाई भी कैसे लड़ी जा सकती है?

लड़ना तो हर हाल में पड़ता है, चाहे जीतने की उम्मीद हो या न हो। आत्मरक्षा का यह संकीर्ण-सा सिद्धांत कि जब तक तुम्हारे हाथ में हथियार है, जब तक तुम्हारे शरीर में लड़ने की शक्ति है तब तक तुम्हें पराजित नहीं किया जा सकता।

शायद इसी लिए आदमी चाहे जिस सतह पर हो, जिस मोर्चे पर हो, उसे लड़ना पड़ता है। इसके बिना चारा कहां है?

आनंदहीन दिनों और उजाड़ रातों का एक सिलसिला है जो लगता है, कभी खत्म नहीं होगा।

दिन और रात की लगातार पीड़ा ने उसे अब तोड़ना शुरू कर दिया है। कंधों में झुकाव आने लगा है। हंसी, जिंदगी और चहल-पहल सब उसके घर से, लगता है, मानो हमेशा के लिए रुखसत हो गए हों। अब कुछ नहीं होगा। महाजाल में फंसी हुई मछलियां अब बेहाल हो गई हैं। उन्होंने तड़पना छोड़ दिया है...चुप्पी का लबादा ओढ़े हुए...भाग्य भरोसे...मौत का निर्दयी हाथ ही उन्हें इस जाल से अलग करेगा...यही अंजाम होगा...सदियों से यही तो हुआ है...उम्मीद की तरफ देखो तो कहीं कुछ दिखलाई नहीं देता। एक गहरी धुंध, एक विकराल भयंकर अंधेरा और बस...

तब अचानक वह अनहोनी होती है जिसकी किसी ने कल्पना तक न की थी।

रात के बारह बजे अनगिनत मिलिट्री गाड़ियां और पुलिस की जीपें सारे कोलफील्ड में दौड़ने लगती हैं। सारी कोलियरियों में एक साथ छापा पड़ता है। तमाम ऑफिसों को सील कर दिया जाता है। ऊपर और अंडर ग्राउंड की सारी मशीनें जब्त कर ली जाती हैं। मालिकों की तमाम गाड़ियां पुलिस अपने कब्जे में कर लेती है। हर वह चीज जो कोलियारी के स्वामित्व में थी सीज कर ली जाती है। सारी जनता अपने घरों से बाहर निकल आती है। तब रात के बारह बजे वह दिन उदित होता है जो अनगिनत लोगों की स्याह दुनिया को रौशन कर देता है।

दूसरे दिन अखबारों की सुर्खी यही थी।

इंदिरा गांधी का एक और अहम फैसला—हिंदुस्तान की सारी कोलियरियों का राष्ट्रीयकरण कर लिया गया।

भारत कोकिंग कोल के अफसर ने बड़ी हमदर्दी से उससे कहा, "आपका नाम तो बेशक खाते में दर्ज है, मि. रमानी, मगर आपके नाम का पी.एफ. कहां है?"

"वह ऐसा है साहब कि छोटी-छोटी कंपनियों में पी.एफ. का पैसा मालिक लोग अक्सर जमा ही नहीं करते थे।"

"यह कोई एक्सक्यूज नहीं हुआ, मि. रमानी! बस यही एक आधार है जिससे हम उपयुक्त लोगों की पहचान कर सकते हैं वरना नाम तो आप जानते हैं, सैकड़ों डाले जा सकते हैं खातों में, और डाले भी गए हैं। अभी यही समस्या है।"

"देखिए, इससे पहले मैं दस साल तक टर्नर मौरिसन कंपनी में काम कर चुका हूं। वहां मेरा रिकार्ड भी देखा जा सकता है और पी.एफ. ऑफिस से भी इसकी पुष्टि हो सकती है।"

"हम तो बस यह देखते हैं कि फिलहाल जो नाम हमारे खाते में हैं क्या वे सही हैं? इससे पहले आप क्या करते रहे, इससे हमें कोई सरोकार नहीं। अब आप इसी को देखिए कि अगर हम आपकी बात मान लें तो फिर हमें हर उस आदमी की बात माननी पड़ेगी जो कभी कोलियरी में काम कर चुका हो।"

मीटिंग सुबह से चल रही थी बल्कि मीटिंग न कहिए, जांच कहिए। कस्टोडियन के चार-पांच ऑफिसर सुबह से ही खातों की जांच कर रहे थे। उन लोगों का पता चला रहे थे जिनके नाम खाते में भी दर्ज थे, पी.एफ. भी जमा था और जो वास्तव में यहां के मजदूर या अफसर थे। इस सिलसिले में न मालिकों की मदद ली जा रही थी और न ही पुराने अफसरों को शामिल किया गया था। सब एकतरफा चल रहा था। ज्यादातर लोगों को अनुमोदित कर दिया गया था। सिर्फ दस-बारह केस ऐसे थे जिन पर शक जाहिर किया गया था। बताया गया था कि उन दस-बारह आदमियों की स्क्रीनिंग बाद में होगी।

यूनियन लीडरों ने कोलियरी खातों और ठेकदारी खातों में नाम डलवाकर अच्छी कमाई की है। उन्होंने प्रति आदमी दो हजार से पांच हजार तक वसूलने हैं। इसमें एक हिस्सा अफसरों का भी है। जिसका नाम खातों में चढ़ जाता है उसकी नौकरी लगभग पक्की हो जाती है। इंक्वायरी अफसर थोड़े-से दिखावे की छानबीन के बाद उसे स्वीकार कर लेते हैं। हजारों लोगों ने अपने भाई-बंधुओं, रिश्तेदारों, गांव-घर के लोगों को बहाल करा दिया है। कहते हैं, शायद ही कोई यूनियन लीडर या इंक्वायरी अफसर हो जिसने पचास हजार से कम कमाया हो।

"सर, एक बात और है, जिसकी तरफ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं, वह यह है कि आप दो साल तक उन खातों पर मेरे अपने हाथ से किए गए हस्ताक्षर देख सकते हैं। यह कोई दो-चार दिन की बात नहीं है। दो-चार दिन तो हस्ताक्षर बनाए भी जा सकते हैं मगर दो साल...?"

अफसर बहुत नरमी बल्कि बड़े अपनेपन से मुस्कुराया, "ओह मि. सहदेव इसीलिए तो हम लोग आपको रीजेक्ट नहीं कर रहे हैं। कुछ बातें ऐसी भी हैं। जो आपके समर्थन में आती हैं लेकिन पी.एफ. का मामला सबसे महत्वपूर्ण है। आश्चर्य है, आप दो सालों से काम कर रहे हैं और आपने पी.एफ. की तरफ कभी ध्यान नहीं दिया कि वह जमा हो भी रहा है या नहीं?"

"आप जानते हैं सर, प्राइवेट कंपनियों में ऊंची आवाज में बात करना भी मना है। किस बूते पर हम यह पूछने की जुर्रत करते कि हमारा पी.एफ. जमा हो रहा है या नहीं?"

''अभी कुछ केस ऐसे भी आए हैं मि. सहदेव कि जिस आदमी का नाम खाते में मौजूद है, मगर वह काम नहीं करता सिर्फ दस्तखत करता है अर्थात् वह केवल एक शो पीस है या फिर कानून से कंपनी को बचाने के लिए एक ढाल। ऐसे लोगों को आप क्या कर्मचारी कहेंगे?"

लगा जैसे किसी ने उसका गला पकड़ लिया हो। पल भर के लिए तो उसके मुंह से आवाज तक नहीं निकली और यही वह क्षण था जिससे इंक्वायरी अफसर ने इत्मीनान की सांस ली। तीर निशाने पर बैठा था। उसके होठों पर एक विजयी मुस्कान थिरक उठी। आंखों में एक विजयी चमक चमकी जो उसके बुझे हुए चेहरे को प्रदीप्त कर गई।

आखिर ऐसे लोगों का दोष क्या है? वे मजबूरीवश ऐसी नौकरी कर रहे थे। यह ठीक है कि उन्हें इस्तेमाल किया जा रहा था लेकिन भूख, अभाव और तंगी की इस अंधी दुनिया में अगर आदमी एक जुगनू की रोशनी भी पाता है तो उसे दोनों हाथों से लपककर पकड़ लेता है, पर यह बात इंक्वायरी अफसर को कैसे समझाई जाए? वह नया है। वह माइनिंग कानून की बात कर सकता है और इसी कानून के आधार पर सच और झूठ का फैसला भी कर सकता है। लेकिन अगर वह पहले से यहां होता, इस काली दुनिया के कारनामों का उसे पता होता तब उसे मालूम पड़ता कि वही सच नहीं है जो आंखों से दिखलाई दे रहा है बल्कि वह भी सच है जो पर्दे के पीछे है। ओझल है। जिसका कहीं कोई हिसाब नहीं और यह छोटी-सी बेइमानी उनकी नहीं बल्कि उन कोलियरी मालिकों की है जो ऐसे कर्मचारियों को इस मैदान में पुतला बनाकर खड़ा रखते हैं।

"सर, मेरे जेनयूइन होने का दूसरा सबूत यह है कि मैं हर माह तनख्वाह के खाते पर दस्तखत करके अपनी तनख्वाह चार सौ रुपए महीने के हिसाब से उठाता था।"

अफसर जो इतनी देर में दूसरे कागजों में उलझ गया था, उसने नजर उठाकर सहानुभूति से उसे देखा।

"क्या आप सचमुच चार सौ रुपए उठाते थे, मि. रमानी?"

सहदेव के चेहरे पर एक लम्हे के लिए एक परछाईं-सी आई और गुजर गई। क्या यह अफसर जानता है? क्या उसे सब पता है? क्या किसी ने उसे रिपोर्ट कर दी है? हर

महीने की पांच तारीख को जब उसे तनख्वाह के खाते पर हस्ताक्षर करने पड़ते तो वह एक पल के लिए जरूर रुक जाता। तीस दिन—चार सौ रुपए। एक किनारे पर रेवन्यू स्टांप (रसीदी टिकट) और दस्तखत करने के लिए छोड़ी हुई जगह। हर बार वह मन मारकर उस पर दस्तखत कर देता और हर बार अपने आपको कुचलकर चार सौ के बजाए दो सौ के नोट अपनी जेब में डाल लेता। उस रोज सारा दिन वह इस चोट के दर्द को किसी न किसी तरह महसूस करता और उस रोज सारा दिन उस पर एक बेनाम गुस्सा और एक अपरिचित-सी झल्लाहट सवार रहती। सारा दिन मुंह का स्वाद कुछ तीखा और कड़वा-सा बना रहता।

वह उठ खड़ा हुआ।

"मुझे अफसोस है, सर कि मैं आपको अपनी बात का यकीन नहीं दिला सका।"

"ओह ! नो मि. सहदेव, दिल छोटा मत कीजिए। ऐसा नहीं है कि हमने आपकी किसी बात पर विश्वास नहीं किया। हमने बहुत-सी बातों को सच माना है। इसीलिए तो आपको एकदम से रिजेक्ट नहीं किया है बल्कि आपका केस स्क्रीनिंग के लिए भेज दिया है। इतनी बात तो मान लीजिए मि. रमानी कि हम आपके दुश्मन नहीं है। आपको अगर नौकरी नहीं मिली तो हमें इससे क्या फायदा होगा? भले अगर आपको यह नौकरी मिल जाए तो हम कुछ फायदे की उम्मीद भी कर सकते हैं।"

वह बाहर निकला तो रहमान बाहर ही खड़ा था। उसे देखकर इशारे ही से पूछा, "क्या हुआ?"

वह धीरे से बोला, "कुछ नहीं...।"

"और कुछ होगा भी नहीं," वह उसके साथ-साथ चलने लगा।

"तुम भी यार अजीब आदमी हो। आज भी सोचते हो कि वही पुराना मालिकों वाला जमाना है। अरे जमाना बदल गया है। जिस नौकरी के लिए दलाल छोड़े जाते थे, आदमियों को पकड़-पकड़ कर खान के अंदर भेजा जाता था आज वही नौकरी सोना हो गई है और कुछ दिन बाद देखना हीरा हो जाएगी।"

सहदेव ने पलट कर उसे देखा।

"तुम कहना क्या चाहते हो?"

"कहना यह है सहदेव भाई, कि राजेंद्र ठीक कहता है। आजकल तो भगवान भी बिना भोग लगाए नहीं सुनता। कुछ हाथ गरम करो उन बाबुओं का और काम निकाल लो।"

"तुम जानते हो, ये लोग खाते हैं?"

"खूब खाते हैं। पेट भरकर खाते हैं। नोचकर खाते हैं। लूटकर खाते हैं। मैं ऐसे दर्जनों आदमियों को जानता हूं जिन्होंने उन्हें खिलाकर अपना काम बनाया है। अरे सहदेव भाई, चांदी के जूते में बहुत गुण होते हैं।"

"एक ऐसे दौर में, जब सारी दुनिया चांदी के जूते चमचमाती फिर रही है, चांदी का वही जूता जिसके पास नहीं है, जो नंगे पांव है—कौन पूछेगा उसे?"

दो दिन पहले लखना बावरी ने भी कहा था, "सहदेव भाई, भेड़ों से ज्यादा गड़रिए हो गए हैं। अफसरों की पूरी पलटन न जाने कहां से उतर आई है। छोटे इंजीनियर, बड़े इंजीनियर, उससे बड़े इंजीनियर, मैनेजर, मैनेजरों पर जनरल मैनेजर, फिर एरिया मैनेजर, फिर मैटीरियल मैनेजर, जोड़कर देखिएगा तो एक लेबर पर एक अफसर और सब मिलकर कोलियरी को लूट रहे हैं। दोनों हाथ से लूट रहे हैं। देखने वाला कोई नहीं। पहले मालिक था तो एक-एक पैसे का हिसाब रखता था। अब तो कोई पूछने वाला ही नहीं। अंधे की रेवड़ी बंट रही है, जो जितनी ले ले।"

तीन बज रहे थे और धूप ढलने लगी थी। चाय दुकान वालों ने आग जला दी थी और चारों तरफ धुंए के बगूले उड़ रहे थे। अभी जब पांच बजे की शिफ्ट खत्म होगी और नई शिफ्ट लगेगी तब इन दुकानों में ग्राहकों की भीड़ लग जाएगी। अभी सब कुछ लुटा लुटा-सा, वीरान-वीरान-सा लग रहा था। केवल इक्का-दुक्का आदमी चल रहे थे, मगर इतनी बड़ी खुली जगह में उनका अस्तित्व नहीं के बराबर था। सहदेव एक चाय की दुकान पर रुका और यह जानते हुए भी कि अभी चाय नहीं मिलेगी उसने चाय मांगी। दुकानदार के लाचारी प्रकट करने पर उसने पानी की मांग की। पानी देते हुए उसने पूछा, "साहब किस कोलियरी में हैं?"

उसने शायद उसके साफ-सुथरे कपड़ों से धोखा खाया था। सहदेव हंस पड़ा, "मैं साहब नहीं हूं। बाबू भी नहीं हूं। सिर्फ एक लोडर हूं बल्कि हूं भी नहीं, कभी था मालिकों के जमाने में।"

"मतलब यह कि बी.सी.सी.एल. में नहीं हैं।"

"नहीं, मेरा केस आज छह महीने से इधर से उधर हो रहा है। कोई फैसला ही नहीं हो पाता। आज इस एरिया आफिस में बुलावा था, इसलिए आ गया।"

"कुछ हुआ?"

"नहीं, कुछ भी नहीं।"

तीन भागों में कोलियरी की यह स्याह दुनिया बंट गई है। बड़े अफसर जो साहब कहलाते हैं। आफिस स्टाफ जिनको बाबू कहा जाता है और सबसे अंत में मजदूर जिसके पास कोई उपाधि नहीं। बड़े अफसर चांदी काट रहे हैं। आफिस स्टाफ भागते भूत की लंगोट खींच रहे हैं और मजदूर जिनके पास वही अंधेरी सुरंगें हैं। रिसते हुए पानी में भीगी फिसलन और ऊबड़-खाबड़ जमीन के नीचे की गरमी है, घुटन है और बदन पर केचुए की तरह रेंगता हुआ पसीना है। यह ठीक है कि मजदूरी बढ़ गई है। जीने का साधन कुछ

मजबूत हो गया है लेकिन हाड़तोड़ मेहनत वैसी ही है जैसी पहले थी, बल्कि अब शायद पहले से ज्यादा है, क्योंकि मालिक तो सिर्फ डांट-डपटकर या एक-दो हफ्ता बैठाकर छोड़ देता था मगर ये अफसर तो बात-बात पर चार्जशीट ठोंक देते हैं।

"आपकी जान-पहचान है यहां किसी से?"

"नहीं।"

"देखिए, एक बाबू है आफिस में साधन चक्रवर्ती। उसकी बहुत पहुंच है साहब लोगों में, कुछ खर्च कीजिए तो मैं बात करा दूं।"

दुनिया में सिर्फ एक चीज रह गई है, पैसा—जादू की छड़ी। क्या इसके बिना अब कोई काम नहीं होगा? लोग कहते हैं जब से कोलियरी का राष्ट्रीयकरण हुआ है, कोलियारियों में नोट हवा में उड़ रहा है, बस पकड़ने वाला होना चाहिए। वह हसरत से चारों तरफ देखता है, कहां उड़ रहा है नोट? उसे तो कहीं नजर नहीं आता।

उसे चुप देखकर दुकानदार समझ जाता है कि इन तिलों में ज्यादा तेल नहीं है, इसलिए वह एक और सलाह देता है।

"अगर पैसा कम है साहब तो किसी यूनियन लीडर को, बड़े यूनियन लीडर को पकड़िए। छोटे लीडर तो आपको नोच खाएंगे।"

ज्वाला मिश्र से लेकर पी.एन. वर्मा तक सारे लीडर उसके देखे हुए हैं। ये साले बिना मतलब किसी की कटी उंगली पर पेशाब करने वाले हैं? जितना बड़ा लीडर है उतना ही बड़ा उसका पेट है। वह सारा ठाठ-बाट, धूम-धड़ाका कहां से आता है इन लीडरों के पास, उन्हीं मजदूरों से तो। मालिक तो अब रहे नहीं कि कहीं टेलीफोन किया और पचीस हजार मंगवा लिया। अब तो जो है मजदूर ही है।

लीडर को उसने पकड़ा भी था। उसने इरफान के द्वारा मजूमदार को खबर भिजवाई थी। वह आया भी था। उसने एरिया आफिस से लेकर हेड आफिस तक से पता किया था। उसे भी वही बताया गया अर्थात चूंकि उनके नाम का पी.एफ. जमा नहीं है या यूं कह लें कि उनका नाम ही कहीं पी.एफ. आफिस में दर्ज नहीं है इसलिए उनके कर्मचारी होने पर ही शक जाहिर किया जा रहा है। उसने कई अफसरों से बातचीत भी की थी, मगर कुछ हासिल नहीं हुआ। मजूमदार का ख्याल था कि अब एक ही उपाय बचा है। इस मामले को अदातल तक ले जाया जाए। इसमें बहुत लंबा समय लग जाएगा। दो-चार साल भी लग सकते हैं। फिर ये जरूरी भी नहीं कि फैसला उसी के हक में हो क्योंकि अंततः यह कमजोरी तो रह ही जाती है कि उसका नाम पी.एफ. लिस्ट में नहीं है। तय यह किया गया कि अभी सहदेव कोशिश करता रहे। जब पूरी तरह पता चल जाए कि इधर से कुछ नहीं होगा तब भारत कोकिंग कोल पर केस कर दिया जाए।

इरफान हर दूसरे-तीसरे दिन पूछता है।

"क्या हुआ अंकल, कुछ काम बना?"

जवाब देते-देते वह इतना तंग आ चुका है कि चुप रह जाता है। इस चुप्पा से इरफान समझ जाता है कि क्या हुआ है। अब उसके पास तसल्ली देने वाले शब्द भी नहीं रह गए हैं, इसलिए वह भी चुप हो जाता है। सिर्फ खतुनिया उसका हौसला बढ़ाए रखती है।

"तुम काहे घबराते हो सहदेव भैया, क्या हम मर गए हैं? जब तक काम नहीं मिलता यहीं पड़े रहो। हम जो खाएंगे तुम्हें भी खिलाएंगे।"

वह खतुनिया के गोल चेहरे को देखता है। एक कड़ी परिश्रम भरी जिंदगी की सख्ती और कठोरता उसकी आंखों के पपोटों के नीचे कालापन लिए और नाक के नीचे झुर्रियों के रूप में मानो उसके चेहरे पर ठहर गई हों। वह बूढ़ी नहीं हुई है मगर वह पहले वाली चमक चेहरे में नहीं रह गई है। निस्संदेह आंखें आज भी रौशन और जिंदा हैं। जब वह सहदेव से हमदर्दी करती है तो उन रौशन आंखों से ज्योति फूटने लगती है। ऐसा महसूस होता है कि कुछ लोग सिर्फ मुहब्बत करने के लिए पैदा होते हैं। वही प्रेम और करुणा उनकी जिंदगी का हिस्सा भी बन जाती है और आस्था भी—कभी-कभी सहदेव सोचता है कि वह उसकी अंधेरी स्याह जिंदगी में एक छोटा-सा दीया है कि जब चारों तरफ से अंधेरा उसे निगलने के लिए बढ़ता है तो वह दीया उसके नजदीक आ जाता है। अंधेरे खिसकने लगते हैं और जिंदा होने का, जिंदा रहने का अहसास फिर से ताजा हो जाता है। कभी-कभी वह सोचता है अगर खतुनिया न होती तो क्या होता? शायद अब तक वह अथाह अंध ेरों में समा गया होता।

तब तक चाय बन चुकी थी। दुकानदार ने कांच के गिलास में चाय उसकी तरफ बढ़ाई तो वह चौंका। वह कितनी देर वहां बैठा रहा उसे कुछ पता भी नहीं चला। शायद आधा घंटा या फिर एक घंटा। सूरज कुछ और नीचे खिसक आया था और धूप कुछ और तिरछी हो गई थी। पीली सुनहरी धूप ने काले हीरों को जगमगाना शुरू कर दिया था।

"बाबू साहब, बिना चम्मच लगाए घी थोड़े ही निकलता है। वो दिन गए कि लोग उंगली टेढ़ी करके घी निकाल लिया करते थे।"

बाबू साहब—? एक और गलती की थी दुकानदान ने। बाबू साहब राजपूतों की एक विशेष उपाधि थी जो कोलफील्ड में धीरे-धीरे एक बड़ी ताकत बनकर उभर रहे थे। दुर्भाग्य से वह राजपूत नहीं था, लेकिन राजपूत की बात आई तो उसके दिमाग में एक और नाम चमक उठा।

'जुगेश्वर सिंह—जे.पी. सिंह'

जुगेश्वर ने कहा था कि कोई काम पड़ जाए तो मेरे पास चले आना। इस संकट की घड़ी में क्या उसे पकड़ना अनुचित होगा? उससे कोई रुपया-पैसा तो मांग नहीं रहा है। कुछ गलत करने को भी नहीं कह रहा है। बस उसकी नौकरी जिसे पता नहीं साहब लोगों

ने कहां दबाकर रखी है, उसे दिला दे।

सहदेव अचानक उठ खड़ा हुआ। जुगेश्वर का घर बहुत दूर है। शायद दो घंटे लग जाएं।

कुछ रास्ता बस पर और कुछ पैदल चलकर जब वह जुगेश्वर सिंह के घर पहुंचा तो दिन डूब चुका था। बाहर बरामदे का बल्ब रौशन था और जुगेश्वर दो-तीन आदमियों के साथ बैठा था। उसे देखा तो एक साया-सा उसके चेहरे पर रेंग आया मानो इस समय उसका आना उसे अच्छा न लगा हो। उसने कोई गर्म-जोशी भी नहीं दिखाई।

"कैसे आना हुआ? कोई काम है?"

"हां, काम तो है...।"

"तुम ऐसा करो, कल के बाद परसों आ जाओ। आज जरा हमारी मीटिंग चल रही है।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। उल्टे पैरों लौट गया। चार आदमियों की आठ अदद आंखों ने उसे ऊपर से नीचे, बाहर से अंदर तक खंगाल लिया और जो पाया वह उनके चेहरों से स्पष्ट था।

जुगेश्वर के चेहरे पर थोड़ी-सी कड़वाहट, थोड़ी-सी झल्लाहट थी। किसी से मिलने से पहले आदमी को अपना हुलिया जरूर ठीक कर लेना चाहिए। कपड़ों पर जमी धूल, पैर के घिसे जूते, सूखे हुए चेहरे से झलकती कंगाली और दीनता...सब चीजों पर आदमी पर्दा डाल लेता है तब किसी से मिलने जाता है।

तीसरे दिन सहदेव ने यही किया भी। कपड़े धुलवाए। रबड़ का जूता साफ किया। दाढ़ी बनवाई और एकदम चकाचक होकर जुगेश्वर के घर पहुंच गया।

जुगेश्वर ने उसे नीचे से ऊपर तक देखा और विवशता प्रकट करते हुए कहा, "उस दिन मैं बहुत व्यस्त था। वह जो चार आदमी थे न, बी.सी.सी.एल. के आदमी थे। कुछ ठेके की बात चल रही थी। अब तो कोलियरी नेशनलाइज हो गई है तो कुछ न कुछ तो करना ही होगा, इसलिए तुमको वापस जाने के लिए कह दिया था कि इस भीड़ में तुमसे ठीक से बात नहीं हो सकेगी। आओ, अंदर आओ। क्या काम पड़ गया मुझसे?"

"बात यह है कि मैं पत्थरखेड़ा कोलियरी में काम कर रहा था। काम क्या कर रहा था, बस समय बिता रहा था। तुम जानते हो, बहुत-सी छोटी-छोटी कंपनियों में इस तरह लोग रखे जाते थे ताकि माइनिंग डिपार्टमेंट को दिखाया जा सके कि हमारे यहां गैर-कानूनी काम नहीं हो रहा है।"

"वह तो मुझे मालूम है, फिर मुश्किल क्या हुई?"

"मुश्किल यह है कि अब वे लोग मेरी नौकरी स्वीकार नहीं करते।"

"खाते में तुम्हारा नाम है?"

"हां।"

"फिर क्यों नहीं मानते?"

"कहते हैं, आपका प्राविडेंट फंड जमा नहीं है।"

"कुछ भी जमा नहीं है?"

"नहीं...।"

"तब तो जरा मुश्किल काम है। मगर इतने दिन तुम क्या करते रहे? पहले क्यों नहीं बताया, अब तो केस ऊपर चला गया होगा।"

"पहले हेड ऑफिस गया, फिर इंक्वायरी के लिए एरिया ऑफिस भेज दिया गया।"

"इंक्वायरी हुई...?"

"हां..."

"वहां क्या कहा गया...?"

"वहां भी उन लोगों को वही आपत्ति है जब तुम काम कर रहे थे तो तुम्हारा पी. एफ. क्यों जमा नहीं हुआ?"

जुगेश्वर ने सर हिलाया, "इस तरह के केस में पी.एफ. का बहुत महत्व है। चाहे खाते में नाम हो या न हो, लेकिन अगर पी.एफ. जमा है तो फौरन काम हो जाता है। कुछ लोगों ने तो पी.एफ. ऑफिस के बाबुओं को पैसा देकर बैक डेट में फंड अपने पास से जमा कराया और लड़-झगड़ कर नौकरी प्राप्त कर ली।"

"सवाल यह है कि अब क्या किया जाए?"

"तुम एक काम करो कि दूसरी नौकरी कर लो।"

"मतलब...?"

"...मतलब यह कि किसी दूसरे के नाम से...।"

"इसमें कोई आपत्ति तो नहीं होगी?"

"आपत्ति क्या होगी? बस अपना और अपने बाप का नाम ही तो बदलना है। बाद में कौन पूछता है कि तुम्हारे मुंह में कितने दांत हैं?"

"मगर रमानी से सिंह बनने में...।"

"अरे, इसमें हर्ज ही क्या है? तुम्हारी जो जाति ऊपर उठ रही है। तुम तो सिंह के नाम से नौकरी करोगे। यहां तो लोग चमार के नाम पर बहाल हो गए हैं।"

सहदेव ने कोई जवाब नहीं दिया। उसकी खामोशी को स्वीकृति समझकर जुगेश्वर ने आगे कहा, "अब मुझे ही देखो, मैं अपने नाम के साथ सिंह लिखता हूं। सारा कोलफील्ड मुझे सिंह साहब के नाम से ही जानता है। क्या होता है इससे?"

कुछ नहीं होता इससे? सहदेव स्वयं से सवाल करता है। उसका अपना कोई जवाब नहीं देता, सिर्फ घृणा से मुस्कराता है...

"तुम ऐसा करो, कम से कम तीन हजार रुपए का प्रबंध कर लो। बाकी मैं समझ लूंगा। वैसे लगता तो है छह हजार, मगर मेरे होते हुए अगर रियायत न हुई तो फिर क्या बात हुई।"

तीन हजार—? उसके पास सिर्फ छह रुपए हैं। वह भी खतुनिया ने दिए हैं। इतने रुपए वह कहां से लाएगा? फिर बात आकर रुपए पर रुक गई है। क्या रुपए के बिना, रिश्वत के बिना अब दुनिया में कोई काम नहीं हुआ करेगा?

"चाय पिओगे?"

वह चौंकता है, "नहीं"

"अच्छा तो तीन-चार दिन में पैसे लेकर आ जाओ।"

यह इशारा था कि अब मेरी जान छोड़ो। वह उठ खड़ा हुआ। पहली बार उसका हाथ सलाम के लिए उठ गया और पहली बार इस अनयास क्रिया पर उसने अपने आपको मां की गाली दी।

गेट से बाहर निकलकर उसने अपने आपसे पूछा—

तुम कौन हो? सहदेव प्रसाद रमानी या...?

तुम्हारे बाप का नाम क्या...?

और मां का नाम..?

यह गाली नहीं है क्या?

वह आगे बढ़ता जाता है और हर कदम पर सवाल उसके पैरों में बेड़ियां डालता जाता है। वह सिंह जिसके नाम पर उसे नौकरी करनी है कहां का रहने वाला है? उसके बाप का क्या नाम है? अगर कभी आकर वह कहे कि असली आदमी मैं हूं तब वह क्या कहेगा, क्या करेगा? भाग जाएगा सब छोड़छाड़ कर? या फिर पकड़ा जाएगा? मुकदमा, कोर्ट, जेल और अगर ये सब कुछ नहीं भी हुआ तो उसका अपना अस्तित्व कहां रह जाएगा?

दो हिस्सों में बंटा हुआ आदमी...घर में सहदेव प्रसाद रमानी और कोलियरी में? दोहरी जिंदगी...दोगली जिंदगी...।

क्या उसके कठोर अमानुषिक श्रम की, सालोंसाल तक स्याह धूल निगलने की यही कीमत है? यही बेनामी—? उसने अपना गांव खो दिया, अपना घर खो दिया। अब क्या अपना नाम, अपना अस्तित्व भी खोना होगा...? सवालों का भंवर बढ़ता जाता है, उसे घेरता जाता है...गुस्सा उसके अंदर ही अंदर उबल रहा है....साले...हरामी...दोगले...सिंह की औलाद...!

शाम को सबकी राय हो गई। इरफान, उसकी मां खतुनिया, प्रतीबाला सबने कहा कि यह एक अच्छा मौका है। इसे गंवाना नहीं चाहिए, मगर सहदेव ने दूसरा नाम स्वीकार करने से साफ इंकार कर दिया।

छह महीने और बीत गए। कागज का सफर फाइल दर फाइल, टेबुल दर टेबुल कभी हेड आफिस, एरिया आफिस, कभी कोलियरी आफिस...सहदेव दौड़ते-दौड़ते थक गया। सारी दुनिया काम कर रही थीं। कोलियरी का राष्ट्रीयकरण भी पुरानी बात हो चुकी थी। सैकड़ों लोग दूसरे लोगों के नाम से काम कर रहे थे और वह था कि सुबह से शाम तक केवल परछाइयों के पीछे भागता फिर रहा था। स्क्रीनिंग आज होगी, कल होगी, एक माह बाद होगी। सब कुछ टलता जा रहा था। सारा मामला पैसे पर आकर अटक गया। कई साहबों ने तो साफ-साफ कह दिया कि 'देखो भाई,' जूते चटकाने से कुछ नहीं होगा। कुछ माल-पानी निकालो तो हम तुम्हारा काम कर दें।

माल-पानी?

जो थोड़ा बहुत था वह भी इस भाग-दौड़ की भेंट हो चुका था। चप्पल की एड़ी इतनी घिस गई थी कि अब उसके पैर का हिस्सा जमीन पर रखा रहता था। कमीज के बाजू के पास एक छेद हो गया था। उसके बाजू की मछलियां जो कभी तड़पती रहती थी अब मुर्दा छिपकलियों की तरह उसके कमीज से चिमटी साफ दिखलाई देती। निराशा के बवंडर उसे घेरे रहते। मजूमदार ने कहा कि अब केस कर दो, मगर कहां से करे वह केस?

तब इस अंधेरे में कल्याण दत्त एक फरिश्ते का रूप लिए उसे मिल गया। उसने कहा, "आजकल ऐसे काम नहीं निकलता। काम निकलता है पैसे से या ताकत से। जिसके पास पैसा है वह पैसा इस्तेमाल करता है और जिसके पास ताकत है वह ताकत। तुम मेरे साथ भारद्वाज साहब के पास चलो। वह अफसरों की गर्दन पकड़कर तुम्हारा काम करवा देगा। बहुत पावरफुल आदमी है।"

इधर कुछ दिनों से एक नई यूनियन 'दलित मजदूर संघ' आहिस्ता-आहिस्ता कोलियरियों में अपना प्रभाव जमा रही थी। यह यूनियन अहिंसा में विश्वास नहीं करती थी। न भाषण बांटती थी और न राशन, बस गोलियों से बात करती थी। उसमें एक से एक खूंखार आदमी शामिल है। उन्होंने दर्जनों लोगों को गोलियों से उड़ा दिया है। कभी-कभी बड़े-बड़े अफसरों की गिरेबान पकड़कर आफिस से बाहर खींच लेते हैं।

"बोल साले मार दूं गोली!"

जिस कोलियरी में भी यह यूनियन बनी वहां के लेबर एकदम उजड्ड हो गए। बात-बात पर अफसरों को गाली बकना, उनका घेराव करना, लप्पड़-थप्पड़ कर देना, ये सब बहुत मामूली बातें थीं।

और उसी यूनियन का लीडर था एस.एन. भारद्वाज अर्थात सत्यनारायण भारद्वाज। खुद पहलवान था। चौड़ा चेहरा, ऊंचा कद, सामने को उभरी हुई छाती और होठों पर हमेशा एक मुस्कान तो नहीं, हां मुस्कान का भाव बना रहता। मुस्कराता तो वह तब है जब दिल ही दिल में कोई फैसला कर लेता है।

भारद्वाज ने उसकी सारी रामकहानी कल्याण दत्त के मुंह से सुनी, फिर उससे पूछा, "अभी तुम्हारा मामला कहां अटका है?"

"एरिया आफिस में।"

"कौन-से एरिया आफिस में?"

"सात नंबर में।"

"वहां कस्टोडियन अफसर कौन है ,दत्ता?"

"सर, कोई बंगाली है, तिवारी नाथ घोष।"

"अच्छा, अच्छा ठीक है," फिर उसने अपने एक आदमी को बुलाया और कहा, "धूप सिंह, तुम इसे लेकर जरा एरिया सात में जाओ और घोष बाबू से कहो कि अगर एक हफ्ते के अंदर उसकी बहाली नहीं हुई तो...।"

फिर उसने सहदेव को देखा, "तुम इतनी बात सुन लो। मैं तुम्हारा काम कर देता हूं। तुम्हें मेरा काम करना होगा। यही मेरा उसूल है।"

"ठीक है, साहब!"

फिर वह धूप सिंह से बोला, "और उस बंगाली राम से कहना कि जब से वह बैठा है उसकी तनख्वाह मंजूर करा दे। अब जाओ उसे लेकर।"

बाहर खड़ी कार में तीनों बैठ गए। धूप सिंह ने ड्राइवर को हुक्म दिया, "एरिया सात चलना है, एरिया आफिस।"

ड्राइवर ने कोई जवाब नहीं दिया। गाड़ी स्टार्ट कर दी।

भरत सिंह ने कहा, "कोलियरी में जीने के दो ढंग हैं। एक पांव पकड़कर और दूसरा गर्दन पकड़कर। अब वह जमाना हवा हो गया। अब तो ऐसा युग है कि जिस साले को लात मारो वह ठीक रहता है।"

सहदेव कभी कार पर नहीं बैठा था। एक-दो बार टैक्सी पर जरूर चढ़ा था मगर टैक्सियों की हालत इतनी बदतर थी कि उससे तो अच्छी गांव की बैलगाड़ी है। कार की सीट में फोम लगा था। मुलायम इतना कि लगता था आदमी उसमें धंस जाएगा। फिर ऊपर हल्के पीले रंग का कवर लगा था। सहदेव डर रहा था कि कहीं उसके हाथ या उसके कपड़ों से सीट पर दाग न पड़ जाए, मगर धूप सिंह बिलकुल इत्मीनान से बैठा था।

"बस इतना मालूम हो जाए कि तुम दलित मजदूर संघ में हो तो कोई साला तुमसे सटेगा नहीं।"

सहदेव ने कोई जवाब नहीं दिया। वह सोच रहा था कि क्या ऐसे काम हो जाएगा? जो काम सालों में नहीं हो सका उसको एक मामूली आदमी कैसे कराएगा? भले भारद्वाज खुद आ जाता तो कोई उम्मीद भी थी। लगता है, इस बार भी बात टल जाएगी।

एरिया आफिस के चपरासी ने उन्हें रोकने की कोशिश की।

"पहले अपने नाम की पर्ची भेजिए।"

धूप सिंह ने उसे घूरकर देखा, "क्या पहचानते नहीं?"

उसकी बड़ी-बड़ी लाल-लाल आंखों में ऐसा कुछ था कि चपरासी सटककर रह गया।

अंदर एक बड़ा-सा टेबुल था जिसके चारों तरफ गद्देदार कुर्सियां पड़ी थीं। गोदरेज की अलमारी जिसके ऊपर भी फाइलें पड़ी थीं। फर्श पर मोटा-सा कालीन बिछा था। शांत और निस्तब्ध कमरे में एक ऐसा रौब था जैसा रौब मोहना कोलियरी में व्हाइट साहब के आफिस में भी नहीं था। अकेले बैठे अफसर ने उन्हें घोर आश्चर्य से घूरा और बड़े तीखेपन से पूछा, "क्या बात है?"

धूप सिंह एक कदम आगे बढ़कर बोला, "साहब, यह सहदेव प्रसाद रमानी है। इसका एक केस पेंडिंग पड़ा हुआ है।"

"तो हम क्या करें?" वह झल्ला कर बोला। शायद वह बिना आज्ञा लिए अंदर आने से चिढ़ गया था।

"केस जो है न साहब, वह आप ही के पास है।"

धूप सिंह के हाव-भाव से वह कुछ नरम पड़ गया।

"क्या केस है?"

इस बार सहदेव ने कहा, "सर, मैं पत्थरखेड़ा कोलियरी में काम कर रहा था। जब नेशनलाइजेशन हुआ तो वहां मेरा नाम तो खाते में है मगर पी.एफ. जमा न होने के कारण..."

कस्टोडियन अफसर ने उसकी बात काट दी, "इसमें मैं क्या कर सकता हूं?"

"सर, हेड आफिस से मालूम हुआ है कि फाइल आपके पास भेज दी गई है।"

इस बार धूप सिंह बोला, "साहब, हम लोगों को एस.एन. भारद्वाज ने भेजा है। नाम सुना है न, सर?"

इस नाम में पता नहीं क्या जादू था कि उस अफसर का रंग पीला हो गया।

"ठीक है, मैं देख लूंगा।"

"भारद्वाज साहब ने कहा है कि एक सप्ताह के अंदर काम हो जाना चाहिए नहीं तो...।"

कस्टोडियन अफसर ने भयभीत आंखों से धूप सिंह को देखा मानो पूछ रहा हो, नहीं तो...।

धूप सिंह उसके पास चला गया और अपनी कमर में खोंसे हुए पिस्तौल का दस्ता दिखाया।

"यह देख रहे हैं न, साहब?"

अब अचानक अफसर को पसीना छूट गया। मारे घबराहट के उसकी घिग्गी बंद हो

गई। वह कुछ बोल भी नहीं सका। फटी-फटी आंखों से उसे देखता रह गया।

"तो हम लोग चलें, साहब?"

वह फिर भी चुप रहा जैसे उसमें बोलने की शक्ति न हो।

"तो साहब, हम लोग क्या बोल दें भारद्वाज साहब को?"

इस बार अफसर ने हिम्मत बटोरी और कांपती हुई आवाज में कहा, "ठीक है, भारद्वाज साहब से कह दो कि काम हो जाएगा। मैं जैसे भी होगा यह काम कर दूंगा।"

"और हजूर, जब से यह बैठा है इसकी तनख्वाह?"

"वह तो मिलेगी ही, उसको कौन रोक सकता है?"

"ठीक है, तो हम चलते हैं साहब, सलाम !"

"सलाम!"

तीनों बाहर निकल आए। गाड़ी में बैठते हुए दत्ता बोला, "देखा, हमने कहा था न जहां बाप का नाम सुनेगा तो गांड़ फटने लगेगी।"

धूप सिंह ने कहा, "यह जमाना इसी का है। सीधे कोई सुनता है यहां? अब देखो, बारह महीने में जो काम नहीं हुआ था वह बारह मिनट में हो गया। हो गया कि नहीं?"

सचमुच, सहदेव को भी हैरत थी और उससे भी ज्यादा हैरत इस बात की थी कि धूप सिंह ने एरिया आफिस में घुसकर इतने बड़े अफसर को पिस्तौल दिखाया और उसने कुछ नहीं कहा। उसने धूप सिंह से पूछा, "आपने उसके ऑफिस में पिस्तौल दिखाया, अगर वह ऐक्शन ले लेता तब?"

"उससे पहले मैं ऐक्शन ले लेता। तुम क्या समझते हो कि मैं सिर्फ उसे डरा रहा था? लो देखो।"

उसने कमर से पिस्तौल निकाल कर उसके बगल में डाल दी, "लोडेड है, पूरी छह गोलियां, और हम इस का घोड़ा दबाने में जरा संकोच नहीं करते।"

सहदेव ने विदेशी पिस्तौल को उलट-पलट कर देखा। उसने अपनी इतनी बड़ी जिंदगी में पिस्तौल इतने नजदीक से नहीं देखा था। धूप सिंह उसके हाथ से पिस्तौल लेकर चकरी घुमा-घुमाकर दिखाने लगा।

"देखो, ये गोलियां हैं, पूरी छह की छह, देख रहे हो न?"

वह देख रहा था। आश्चर्य की बात है, उसे डर नहीं लग रहा था बल्कि वह अपने अंदर एक अजीब तरह की ताकत महसूस करने लगा था। कई वर्षों की गरीबी, मजबूरियों से कुचला और पिछले एक साल से निरंतर भाग-दौड़ से टूटा हुआ उसका अस्तित्व आज जैसे एक अजीब तरह के आनंद से भर गया था। उन सारे अफसरों, लीडरों, दलालों के चेहरे उसकी नजरों में घूम रहे थे जिनके सामने हाथ बांधे खड़े-खड़े उसकी टांगें पत्थर जैसी हो गई थीं। वो सारे चापलूसी भरे कथन और प्रार्थना भरे शब्द जो उसके मुंह से निकले

थे आज एक गंदी गाली बनकर उसके होठों पर जग गए थे।

मादर...।

"जयरामपुर में तुम्हारी यूनियन बन गई?" दत्ता धूप सिंह से पूछ रहा था।

"अरे चौहान साला रोक लेगा यूनियन बनने से? उसके तीन आदमी मारे गए तो उसकी रीढ़ की हड्डी ही टूट गई। पूरा एरिया ही छोड़कर भाग गया। आजकल सुना है, एरिया वन में हाथ-पांव जमा रहा है।"

सहदेव उनकी बातचीत सुनने से ज्यादा अपने ख्यालों में गुम था। पता नहीं क्यों अब भी उसे शक था। क्या नौकरी मिल जाएगी...? इतनी आसानी से मिल जाएगी..? बस एक धमकी में...? अगर नहीं मिली तो..? फिर वही भाग-दौड़, वही खुशामद, वही गरीबी का दलदल जिसमें वह गर्दन तक धंस चुका है।

कार वापस पहुंची तो भारद्वाज नंगे बदन धूप में एक स्टूल पर बैठा था और एक नौकर जो नौकर से ज्यादा पहलवान लग रहा था, उसके बाजू को कंधे पर रखकर मालिश कर रहा था। कार से उतरकर जब वे लोग उसके नजदीक पहुंचे तो उसने कुछ पूछा नहीं, सिर्फ नजर उठाकर धूप सिंह की ओर देखा।

"काम हो गया, साहब!"

"क्या बोला कस्टोडियन अफसर ने?"

"बोला, काम हो जाएगा। पहले तो लगा रौब झाड़ने, आपका नाम लिया तो सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, फिर जब फटफटुआ दिखाया तो उसके मुंह से आवाज निकलना ही बंद हो गया।"

भारद्वाज हलके से मुस्कराया, "फिर?"

"फिर हमने पूछा कि क्या कह दें भारद्वाज साहब से, तो हड़बड़ा कर वचन दे दिया कि वह यह काम कर देगा चाहे जैसे हो।"

"और पिछली तनख्वाह?"

"वह भी देगा।"

भारद्वाज ने सहदेव से पूछा, "तुम्हारा नाम सहदेव है न?"

सहदेव अपना नाम सुनकर चौंक गया, फिर सर हिलाकर हामी भरी।

"तुम मोहना कोलियरी में थे न?"

"हां, साहब!"

"तुमको मालूम है, तुमको वहां से किसने निकलवाया था?"

वह चुप रहा।

"पी.एन. वर्मा ने, उसने व्हाइट साहब को कहकर तुमको जवाब दिलवाया था। मैं कुछ दिन वहां था।"

"मुझे याद नहीं आता कि मैंने आपको कभी मोहना कोलियरी में देखा हो।"

"मैं कोलियरी में कम ही रहता था। मेरा काम बाहर का था। मगर फिर भी तुम्हारे बारे में सब जानता था। मुझे मालूम है कि तुम जिस कोलियरी में रहे हो वहां के मजदूरों ने तुम्हें बहुत चाहा है। मोहना कोलियरी में तुम्हारा बहुत प्रभाव था। इसी वजह से पी. एन. वर्मा ने तुम्हें हटवा दिया। उसे डर हो गया था कि अगर तुम्हारा झुकाव किसी दूसरी यूनियन की तरफ हो गया तो अधिकतर मजदूर तुम्हारे साथ चले जाएंगे। बहुत कमीना आदमी है।"

"मोहना कोलियरी में, साहब, मैंने आठ साल तक हाड़तोड़ मेहनत की। एक से एक खतरनाक काम को निपटाया। जिस काम को कोई सरदार या ओवरमैन नहीं कर पाता था वह मैं कर देता था, मगर सब बेकार गया। मुझे उस षड्यंत्र की जानकारी थी जो मुझे हटाने के लिए की गई थी। मुझसे व्हाइट साहब ने कहा भी था कि तुम पी.एन. वर्मा से माफी मांग लो तो सारा मामला रफा-दफा हो जाएगा।"

भारद्वाज धीरे से हंसा, "मुझे सब मालूम है। तुम्हारी जो पिटाई हुई थी वह भी जानता हूं। उस काम के लिए वर्मा ने मुझसे आदमी मांगे थे, मगर मैंने इंकार कर दिया। जिन लोगों ने यह काम किया वे मिश्र जी के आदमी थे।"

"हां, मुझे मालूम है, रावत और दिलसुखराम।"

"तुम्हें तो उनके नाम भी मालूम हैं।"

"मैं कैसे भूल सकता हूं, साहब?"

"और भूलना भी मत। जिस दिन तुम इसे भूल जाओगे उस दिन तुम...." वह रुका ...फिर बोला, "मर जाओगे।"

पता नहीं सहदेव को भारद्वाज का स्वर गेहुंअन सांप की फुफकार की तरह लगा। उसने उसकी आंखों में एक दरिंदे सी चमक भी देखी।

थोड़ी देर बाद भारद्वाज ने बड़ी नरमी से पूछा, "मुझे मालूम है, तुम पढ़े-लिखे आदमी हो, फिर कोयला क्यों काटते हो?"

"ऐसा है साहब, यही काम शुरू से करता आ रहा हूं।"

"खैर, यह तो तुम्हारी मर्जी है, मगर नौकरी तुम्हें हर हालत में मिल जाएगी।"

सहदेव की आंखों में कृतज्ञता के आंसू छलक आए।

शाम को इरफान ने कहा, "यह तो वही हुआ कि खजूर से गिरे और बबूल में उलझे। आपको पता है अंकल कि यह दलित मजदूर संघ कैसी पार्टी है। नाम दलित जरूर है, मगर असल में मनी मेकरों की पार्टी है। उनकी पार्टी-पालिटिक्स उनके पिस्तौल और उनकी बंदूकें हैं। उसके आदमी रात में डाका डालते और दिन में यूनियन चलाते हैं।"

"इससे मुझे क्या लेना है? मेरा काम तो करा दिया। वह काम जो कोई भी नहीं करवा

सका था, तुम्हारे मजूमदार दादा भी नहीं।"

"हम लोग गैर-कानूनी ढंग तो नहीं अपना सकते न, अंकल! हमारा एक सिद्धांत है, एक उसूल है। यह चोर-डाकुओं की मंडली तो नहीं।"

खतुनिया तुनक कर बोली, "अरे चोर हों या डाकू, उससे हमें क्या लेना? भैया की नौकरी तो हो गई। बाप रे ! आज एक साल से भैया जो तकलीफ में हैं वह हम ही जानते हैं। एक-एक पैसे को मोहताज, एक ठो लड़का उसके तन पर कपड़ा नहीं, पांव में जूता नहीं। एक-एक आलू चाप के लिए दो-दो घंटा रोता था...।"

अभी उसकी बात समाप्त भी नहीं हुई थी कि सहदेव ने उसका हाथ पकड़ लिया, "भौजी, तुम अगले जन्म में जरूर मेरी मां होगी।"

खतुनिया लजा गई, "हट ! भाभी को मां बनाते हो, गाली नहीं पड़ती क्या?"

खतुनिया ने हाथ छुड़ाते हुए उसके चेहरे को देखा तो दंग रह गई। सहदेव रो रहा था।

उसके अंदर जो कुछ है वह आंसुओं की इन चंद बूंदों से नहीं निकल सकता। वह सारी मजबूरी, वह सारी बेबसी, वह सारा अपमान, वह सारी तिरस्कार की कड़वाहट, उसके सीने में लावे की तरह मचल रही है। फोड़े की तरह दुख रही है। कभी जाने-अनजाने में इस फोड़े पर हाथ पड़ जाता है। कभी कोई अनुचित बात, कभी कोई अशोभनीय घटना, कभी कोई तिरस्कारपूर्ण व्यवहार, चाहे जिससे किया जा रहा हो उसे एकदम गरम कर देता है। दर्द की टीस पेशानी पर रंगों के रूप में उभर आती है। वह आंख टेढ़ी करके देखता है तो लोग सहम जाते हैं। क्या है उसकी आंखों में? शायद कोई बेरहम चमक, शायद कोई ऐसी बात जिसके कारण उसकी आंखों के तेज को झेल पाना मुश्किल था। लोग उससे डरते हैं हालांकि वह कभी कोई ऐसा काम नहीं करता जिससे मालूम होता है कि वह भी जालिमों और गुंडों की उसी टोली में शामिल हो जिसका डर आहिस्ता-आहिस्ता सारे कोलफील्ड में फैलता जा रहा है।

उससे एक और वजह से भी लोग डरे रहते हैं। धर्मा कोलियरी में जब उसकी बहाली हुई तो उसके पहुंचने से पहले यह खबर वहां पहुंच गई थी कि वह भारद्वाज का आदमी है। उसका कड़ी मेहनत का आदी मजबूत शरीर, जो हजार टूटने के बाद भी किसी पहलवान से कम नहीं था। फिर बात-बात पर क्रोध, झल्लाहट और तीखे व्यवहार की वजह से भी लोगों के इस विश्वास को बल मिलता था कि वह भारद्वाज ही का आदमी है। इससे उसे कई फायदे भी हुए। एक तरफ तो उसके साथ काम करने वाले मजदूर उससे उलझने की हिम्मत नहीं करते। दूसरे, मैनेजमेंट भी उससे दामन बचाता रहता था बल्कि उसे इस तरह

की सुविधाएं भी देता था जो दूसरे मजदूरों को हासिल नहीं थीं।

इससे एक नुकसान भी हुआ। अब न मजदूर उसके करीब आते और न ही मैनेजमेंट उसे नजदीक आने देता। इसलिए वह बिलकुल अलग-थलग रह गया, लेकिन उसे इन बातों की परवाह भी नहीं थी। बुनियादी तौर पर वह एक मजदूर था सो आज भी है। उसे कोलियरी के मामलों और राजनीति से कोई खास दिलचस्पी नहीं थी। बस, वह अपने काम से काम रखता था और यही वजह थी कि मैनेजमेंट भी उसकी तरफ से निश्चिंत था।

एक बार वह किसी काम से एरिया आफिस गया। एरिया आफिस के अहाते में 305 नंबर की कार खड़ी थी। यह कार भारद्वाज की थी। वह उसी कार के पास खड़ा हो गया। उद्देश्य कुछ नहीं था, बस उसे एक नजर देखना और सलाम करना था। पिछले दो सालों में जब से उसे ड्यूटी मिली थी वह कभी उसके बंगले पर नहीं गया। उससे एक-दो बार मुलाकात हुई थी, बस। वैसे उसे भिन्न-भिन्न माध्यमों से संदेश मिलता रहता था कि धर्मा कोलियरी में दलित मजदूर संघ की यूनियन शीघ्र ही बनेगी। उसके लिए वह कोशिश करता रहे हालांकि स्वाभाविक रूप से वह लीडर नहीं था, लेकिन फिर भी उसने मजदूरों में दलित मजदूर संघ के लिए काम करना शुरू कर दिया।

कुछ देर इंतजार करने के बाद लगभग आधे दर्जन अफसरों के साथ वह बाहर आया। उनके साथ जी. एम. भी थे। जैसे ही उसकी नजर सहदेव पर पड़ी वह सीधे सहदेव के पास चला गया।

"क्या हाल है, पहलवान जी?"

"अच्छा हाल है, साहब, काम बराबर हो रहा है।"

भारद्वाज हंसा, उसके कंधे को प्यार से थपथपाया फिर अपना हाथ उसके कंधे पर ही रख दिया और कोलियरी के बारे में कुछ बताने लगा।

इस दृश्य को जिसने भी देखा दंग रह गया। आफिस स्टाफ, अफसर और अपनी जरूरतों से आए विभिन्न कोलियरी के मजदूर भी।

"अरे बाप रे! भारद्वाज तो उसके गले में हाथ डालकर चल रहा था।"

इस घटना की खबर किसी न किसी तरह धर्मा कोलियरी पहुंच गई।

"राधेलाल गया था एरिया आफिस। वहां अपना यह सहदेव है न, उससे भारद्वाज साहब एकदम लंगोटिया यार की तरह मिला। कंधे पर हाथ रखकर न जाने क्या बतियाता रहा देर तक।"

"मोहना मांझी बोल रहा था, उसके पास यह भी है।"

आदमी ने अपने हाथ उंगली टेढ़ी करके ट्रिगर दबाने की कोशिश की। आखिर डरते-डरते एक दिन हुसैन साहब ने उससे पूछ ही लिया, "भारद्वाज साहब से आपका कोई रिश्ता है?"

"नहीं।"

"दोस्ती है?"

"नहीं।"

"कैसे बोलते हैं आप? उस दिन मैंने खुद एरिया आफिस में देखा था..."

"वे मुझे बहुत अच्छी तरह जानते हैं। मैं उनके लिए काम करता हूं।"

हुसैन साहब को विश्वास हुआ या नहीं, यह कहना तो मुश्किल है लेकिन यह संवाद भी जल्द ही कोलियरी में मशहूर हो गया। अब सहदेव साथ के मजदूरों के बीच एक महत्वपूर्ण आदमी था। उन्हें यह भी मालूम था कि वह पढ़ा-लिखा भी है। अब वे धीरे-धीरे चाहे डर से या चाहे उसकी अहमियत समझकर उसे लीडरों वाली इज्जत देने लगे। कभी-कभी उससे सलाह भी लेने लगे। इस बीच एक ऐसी घटना हो गई जिसकी वजह से उसका महत्व और बढ़ गया।

तीन नंबर मुहानी की छत में एक बड़ा क्रैक था जिसे खंभों से सपोर्ट करके छोड़ दिया गया था। उस क्रैक को तमाम बड़े अफसरों, यहां तक कि सिक्यूरिटी अफसर ने भी देखा था। उन लोगों की आम राय थी कि इतना बड़ा क्रैक नहीं रखना चाहिए। किसी वर्किंग डे में अगर यह गिर पड़ा तो कितनों की जान चली जाएगी। इसलिए यह तय हुआ कि इसे गिरा देना चाहिए। इस काम के लिए रविवार का दिन निश्चित हुआ। रविवार चूंकि छुट्टी का दिन है और इस दिन मजदूर खान में नहीं होते, इसलिए यह काम आसानी से हो जाएगा।

रविवार को काम करने वालों की लिस्ट में ओवर मैन सेन का नाम दर्ज था जबकि एजेंट श्रीवास्तव चंद्र सिंह को बहुत मानते थे। चंद्र सिंह को जब-तब वे ऐसे अवसर प्रदान करते थे कि उसकी ख्याति का डंका बजे अर्थात वे चंद्र सिंह को हाइलाइट करते थे जबकि सेन को डिप्रेस। इस वजह से सेन हमेशा एक हीन भावना से ग्रस्त रहता इसलिए शनिवार को जब एजेंट ने उसे बुलाकर पूछा, "कल क्रैक गिराना है, क्या तुमसे हो जाएगा?"

वह एकदम से तिलमिला गया।

"सर, मेरे पास बीस साल का माइनिंग अनुभव है और आप पूछते हैं कि मुझसे यह काम हो जाएगा? ऐसे सैकड़ों क्रैक गिराए हैं मैंने।"

दूसरे दिन सेन ने टिम्बर गैंग, ड्रीलर गैंग, एक्सपलोसिव कैरियर, सब को माइनिंग सरदार लखन यादव के साथ नीचे भेज दिया और उसे निर्देश दिया कि होल मार्कर, टोपी माई लगा कर रखे। वह आएगा तब 'आवाज' करेगा। वह थोड़ा-सा धार्मिक विचारों का था।

लखन यादव तब तक सारा काम पूरा करके बैठा था। सेन ने उसके तमाम काम का जायजा लिया, फिर तमाम लोगों को वहां से दूर हटा दिया। तब लखन यादव ने शॉट

फायर का काम समाप्त करते हुए छत में फिट किए डायनामाइट को उड़ा दिया।

तीन धमाके हुए। सारी फटी हुई छत गिर गई। थोड़ी देर रुकने के बाद ड्रेसिंग का काम शुरू हुआ। ड्रेसिंग भी मजे में हो गई। सेन बहुत खुश था। सारा काम बहुत अच्छी तरह पूरा हुआ था और यहां तक सचमुच सारा काम बिलकुल ठीक ढंग से हुआ मगर उसके बाद सेन ने एक ऐसी गलती की जिसका परिणाम उसे भुगतना पड़ा।

होना यह चाहिए था कि रात भर इस छत को यूं ही छोड़ देना चाहिए था ताकि और कुछ टुकड़े अगर गिरने हों तो ठंडा होकर गिर जाएं, मगर सेन अपनी कामयाबी के नशे में इतना चूर था कि उसने एक बड़ी गलती कर डाली। उसने टिम्बर गैंग को आदेश दिया कि वह अभी सपोर्ट लगा दे। ऐसा उसने इसलिए किया कि ऊपर उठकर वह एजेंट को बतला सके कि उसने अपना काम पूरा कर दिया है।

सपोर्ट लगवाने का काम माइनिंग सरदार का था मगर वह दूसरे लोगों के साथ गरम जगह से हटकर ठंडी जगह में खड़ा था। उसे तो मालूम ही था कि धमाका हो गया, क्रैक भी गिरा दी गई। अब सपोर्ट का काम सुबह होगा। उसे क्या मालूम था कि सेन सपोर्ट अपनी निगरानी में लगवा रहा है?

पता नहीं, खूंटे के नाप में कोई फर्क हुआ या खूंटा लगाने में कोई गलती हुई कि ठीक उसी समय जब खूंटा ठोंका जा रहा था, एक चार फुट का बड़ा 'चाप' छत से अलग होकर गिर पड़ा। एक धमाका हुआ। स्याह धूल का बवंडर उठा। एक चीख बुलंद हुई। ठंडी जगह में खड़े लोगों के होश उड़ गए।

"अरे बाप रे ! एक्सीडेंट हो गया।"

जब थोड़ी देर के बाद स्याह धूल कम हुई तो लोगों ने देखा कि ओवरमैन सेन साहब, एक खूंटा मिस्त्री और हेल्पर मौत की नींद सो चुके हैं। तमाम कोहराम मच गया। पुलिस, बी.सी.सी.एल. के ऊंचे अफसर और छोटे-बड़े लीडरों की भीड़ लग गई।

मैनेजर, एजेंट और सिक्यूरिटी अफसर के तो होश उड़ गए। रातों की नींद हराम हो गई। अपने गले का फंदा वे किसके गले में डालें? रात-दिन वे इसी चिंता में रहते। अक्सर दो-दो घंटे बाद कमरे में मीटिंग करते।

अंत में बहुत सोच-विचार कर उन लोगों ने सारा केस माइनिंग सरदार लखन यादव के सर मढ़ दिया।

बेचारा लखन यादव! अभी उसे सरदारी मिली थी। सीधे स्वभाव का आदमी। न उसे नौ आता न छह। किसी ने कहा उठो तो उठ गया, किसी ने कहा बैठो तो बैठ गया। ऐसे गाय आदमी पर जब इतना बड़ा पहाड़ लाद दिया गया तो उसे सिवाय रोने के कुछ न सूझा। लीडरों और अफसरों के पास दौड़ते-दौड़ते वह पागल-सा दिखाई देने लगा। न खाने को होश, न नहाने की फिक्र। धूल में अटा वह सारा दिन यहां से वहां मारा फिरता। जो

मिलता उसी से अपना दुखड़ा रोता, पर सुनने वाला कौन था? एक दिन उसकी मुलाकात सहदेव से हो गई तो सहदेव उसे घर लेता आया। सहदेव को सारी बात मालूम थी। उसने लखन से कहा, "देखो, तुम बच सकते हो पर थोड़ी दौड़-धूप करनी होगी।"

लखन यादव सीधे उसके पैरों पर गिर गया, "बचा लो मालिक, जब तक जिएंगे आपका पांव धोकर पिएंगे।"

"ये साले जो सारा इल्जाम तुम्हारे सर डाल रहे हैं इन सालों को कानून मालूम है?"

लखन यादव फूट-फूटकर रोने लगा, "अब नौकरी नहीं बचेगी, सहदेव भाई! जेल भी हो जाएगी। मैं जानता हूं, मेरे छोटे-छोटे बच्चे सड़क पर भीख मांगेंगे। इतना जानता तो लोडर ही रहता, सरदारी नहीं करता।"

"कोई लीडर है तुम्हारे जान-पहचान का?"

"है तो सहदेव भाई, मगर वह पांच हजार मांगता है।"

"ठीक है, आज रात को आओ मेरे पास, मैं देखता हूं।"

रात को लखन यादव को लाकर वह उस टिम्बर गैंग के पास चला गया जो दुर्घटना के दिन नीचे था। फिर बारूद ढाने वाले से मिला और सबको राजी कर लिया कि जो इंक्वायरी आने वाली है उसमें ये गवाही दें कि सेन दबाव डालकर सपोर्ट लगवा रहा था हालांकि लखन यादव ने उसे मना किया था। इसी बात पर दोनों में कहा-सुनी भी हो गई थी। अंत में गुस्से में आकर वह खुद खूंटा मिस्त्री और हैल्पर के साथ सपोर्ट लगाने लगा। थोड़ा समझाने-बुझाने पर वे यही कह देने पर सहमत हो गए।

उसके बाद उसने तीनों अफसरों से अलग-अलग मुलाकत की और उन्हें बताया कि सब कुछ बेचारे लखन यादव के सर पर थोप देने से क्या होगा? क्यों न कोई ऐसा उपाय निकाला जाए कि आप लोग भी बच जाएं और लखन यादव भी।

"क्या ऐसी कोई तरकीब है?"

"बिलकुल है। आप लोग सारा इलजाम मरने वाले सेन के सर पर क्यों नहीं थोप देते?"

"मगर इसमें एक कमी है।"

"कौन-सी कमी?"

"एक्सप्लोड करने के अलावा सपोर्ट लगवाना भी लखन यादव का काम था।"

"यह ठीक है, मगर ड्रेसिंग करने के बाद उसने छोड़ दिया था कि खूंटा कल लगेगा और वे गरम जगह से हवा वाली जगह में आ गए थे, लेकिन सेन ने नहीं माना और खूंटा मिस्त्री को जबरदस्ती हुक्म देकर ले गया।"

"मगर सवाल यह है कि उस समय लखन यादव क्या कर रहा था?"

"वह तो बताया न कि वह और लोगों के साथ गरम जगह से हवा वाली जगह में

खड़ा था।"

"मगर इसका क्या सबूत है?"

"सबूत वे लोग हैं जो वहां मौजूद थे।"

"क्या वे इस तरह की गवाही देंगे?"

"जरूर देंगें, मैं सबसे बात कर चुका हूं।"

"तब तो ठीक है, लेकिन हैरत की बात है कि इतने सामने की बात हमें क्यों दिखलाई नहीं दी।"

आखिर इसी तरकीब से यह केस खत्म कर दिया गया। अफसर भी बच गए और लखन यादव भी साफ निकल गया।

इस घटना से मजदूरों में तहलका मच गया।

"यह सहदेव साला तो बहुत पहुंचा हुआ आदमी है। एक चुटकी बजाते ही लखना यादव को निकाल लिया।"

कोई दो महीने बाद भारद्वाज से मुलाकात हुई तो उसने कहा, "हमारा काम-धाम क्यों नहीं संभाल लेते हो, कोयला काटने से क्या होगा? सारी उम्र इसी में चली जाएगी।"

"अंधेरी कोठरिया में जादू के खेल
भैया में देवे गइलन भौजी में गेल
ऐसन भूल काहे भेल।"

यह गाना नेपाल यादव एलेक्शन के लिए नहीं गा रहा था बल्कि पास ही से गुजरती हुई फूलमुनी को सुनाकर गा रहा था। आजकल बहुत बन-संवर कर रह रही है। सफेद झक साड़ी, दूध की तरह सफेद ब्लाउज जिसमें से ब्रेसियरी का कसाव साफ दिखाई देता है, मांग में भर-मांग सिंदूर, माथे पर टिकली, पैरों में महावर, आंखों में काजल की पतली लकीर! उफ! इन कामिनियों के शरीर में इतना कसाव होता है कि चालीस-पैंतालीस साल तक तो बदन जरा भी ढीला नहीं पड़ता। सर पर बेंत की टोकरी में मन भर कोयला लेकर दोनों हाथ से टोकरी थामकर जब वे चलती हैं तो शरीर का एक-एक पोर दिखाई देने लगता है। दोनों कमानें कानों तक खिंच जाती हैं। कोयले की कालिख में डूबी वे किसी स्याह पत्थर से बनी मूर्तियों की तरह दिखाई देती हैं।

यही कामिनियां जब नहा-धोकर महीन साड़ी, ब्लाउज में बन-ठन कर निकलती हैं तो अफसरों के दिमाग में थल-थल, पलपल औरतों का सारा लजलजापन उभर आता है। यही वजह है कि अक्सर इन कामिनियों पर बाबू लोगों का दिल आ जाता है।

भाई, आप कोलफील्ड में लैला-मजनू और हीर-रांझा वाली मुहब्बत खोजेंगे तो कहां

से मिलेगी? गर्दन से ऊपर वाली मुहब्बत भले लखनऊ और दिल्ली में होती होगी। यहां तो जो कुछ है गर्दन के नीचे है। मोहना कोलयरी में जाफरी साहब इनकी तारीफ यूं करते थे कि साहब क्या औरत है, बुशर्ट उतार कर टांग दीजिए। क्या मजाल जो गिर जाए! अब उनके जैसे रसिक कहां रहे? अब तो जो हैं 'आओ सैंया जाओ सैंया' वाले लोग हैं। अब इस भागदौड़ वाली जिंदगी में वह इश्क मुमकिन भी नहीं है कि आदमी सारा दिन खिड़की पर नज़र गड़ाए खड़ा रहे या उनके आगे-पीछे महीनों चक्कर काटे। अब तो बस बात ही बात में मामला तय हो जाता है। अभी-अभी नेपाल यादव जो गाना गा रहा था अगर उसे सुनकर फूलमुनी मुस्करा देती तो बस मामला फिट था, मगर हुआ उल्टा। वह जाते-जाते पलट गई।

"क्या बोला रे खाल भूरा?"

"कुछ नहीं फूलमुनी, हम तो गाना गा रहे थे।"

"तो अपने घर जाकर गाओ, अपनी मां-बहन के सामने।"

नेपाल यादव खी-खी हंसने लगा, "नाराज हो गई भौजी?"

फूलमनी तुनक कर बोली, "अपनी मैया को नहीं बोलता भौजी?"

महेंद्र बीच में आकर समझाने लगा, "क्या हुआ, फूलमुनी?"

"देखो ने, हम जा रहे हैं तो यह साला ग्वाला गाना उड़ा रहा है?"

"अरे ये ग्वाले लोग शुरू से ही ऐसे हैं। कृष्ण कन्हैया को नहीं देखा, छोकरियों के पीछे बांसुरी बजाता फिरता था।"

"तो अपनी मां के पास जाकर बांसुरी बजाए।"

कुछ और लोगों को जमा होते देखकर फूलमुनी रुकी नहीं और न नेपाल यादव का जवाब ही सुना जो बहुत धीरे से कहा गया था। पर वह हंसी जरूर सुनी जो कई लोगों की थी। जब वह काफी दूर चली गई तो नेपाल यादव ने कहा, "साला औरत और तोता का कोई विश्वास नहीं कि कब उड़ जाए!"

उसके इस कथन में जो था वह वहां जमा सब लोग नहीं समझ सकते थे, मगर जो खास-खास लोग थे उन्हें मालूम था कि फूलमुनी का कभी नेपाल यादव से संबंध रह चुका है, पर जब से कोलियरी मैनेजर ने उसे अपने यहां चौका-बर्तन के लिए बुलाना शुरू किया है तब से उसके पांव ही जमीन पर नहीं पड़ रहे। बहुत ऊंचा उड़ रही है।

महेंद्र ने कहा, "नेपाल भाई, तोता उड़कर इतने ऊंचे मीनार पर जा बैठा है कि उसे उतारना ही मुश्किल है। क्यों नहीं कोई दूसरी रख लेते?"

जहां तक रख लेने का सवाल है तो यह बात ही गलत है। वह पहले हुआ करता था कि किसी-किसी कामिन को कोई भाई साहब अपने जाल में फंसा लिया करते थे। अब यह हाल है कि खुद कामिनें दो-दो बल्कि कभी-कभी तीन-तीन मर्दों को रखे हुए हैं। अपने

से दस-दस साल छोटे मर्दों को—जी नहीं, फिर इश्क का सवाल मत उठाइए। यह मामला न इश्क का है, न ही शरीर का, ये मामला सीधा-सीधा रुपए का है।

"कहत कबीर सुनो भई पटवारी
सबके गांड़ रुपया मारी।।"

कामिनों को जो लंबी तनख्वाह मिलती है उसको खींचने के लालच में और अधिकांश उस पैसे के मोह में जो नौकरी के बाद मिलने वाला होता है, चाहे उनके रिटायर होने के बाद या उनकी मौत के बाद, इन कामिनों को अक्सर फांस लिया करते हैं। अगर मौत किसी दुर्घटना में होती है तो एक नौकरी भी। देखा आपने, इश्क कितना बजारू हो गया है इस कोलफील्ड में!

नेपाल यादव, फूलमुनिया के ऐसे ही रखैल थे। उनके अलावा एक और था, लोडिंग बाबू बादल सरकार। दोनों ही एक-दूसरे को जानते थे। दोनों को मालूम था कि दोनों एक ही कुएं से पानी पी रहे हैं, मगर दुश्मनी या ईर्ष्या बिलकुल नहीं थी। बस, एक खामोश समझौता था कि देखें लाटरी किसके नाम निकलती है?

मैनेजर झग्गर को इस लाटरी का लालच नहीं था। उनको तो बस यह हुआ कि घर वाली मायके चली गई। अब चौका-बर्तन कौन करे? इसलिए उन्होंने ओवरमैन त्यागी से कहा कि भाई मिसेज घर गई हुई है, कोई अच्छी-सी कामिन चूल्हा-चौका के लिए भेज दो। 'अच्छी सी' का जो मतलब निकलता है, वही मतलब निकाला त्यागी ने, अर्थात कम उम्र, देखने में आकर्षक और शारीरिक रूप से थोड़ी सजल, इसलिए त्यागी ने फूलमुनी को भेज दिया। पहले तीन-चार दिन तक सिर्फ चौका-बर्तन ही हुआ। उसके बाद बिछावन और फिर एक दिन साहब का पांव दुखने लगा—उसके बाद वह कभी-कभी रात में भी ठहर जाती है मैनेजर साहब के पास। घर में बहाने बनाती है कि आज साहब के यहां पार्टी थी या आज उनके यहां मेहमान आ गए थे। घर के लोग सब जानते हैं, मगर बोले कौन? औरत जब खुद कमाने लगे तो उसे रोकना मुश्किल हो जाता है। शायद इसीलिए पुराने जमाने में लोग औरतों को काम करने नहीं दिया करते थे बल्कि घर से बाहर भी नहीं निकलने देते थे कि तोते को पर हुआ कि वह उड़ा...!

अब यह हाल है कि मैनेजर साहब पत्नी को मायके से नहीं लाते कि फूलमुनी को छुटकारा मिले। पत्नी का पत्र आता है तो लिख देते हैं कि क्वार्टर दूसरे को दे दिया है, नया क्वार्टर बन रहा है, वह जब मिल जाएगा तो बुलवा लूंगा। वह इस धोखाधड़ी की चर्चा फूलमुनी से करके खूब हंसता है। फूलमुनी को इस हंसी से घिन आने लगी है। वह साहब के मैदे की तरह नरम शरीर से ऊब गई है। वह पत्थर की औरत है, उस पर फूल बरसाने से क्या होगा? उसे तो चिंगारी उड़ाने के लिए पत्थर ही चाहिए था मगर बेचारी क्या करे? साहब है, सब कुछ उसी के हाथ में है।

दूसरी बात जो उसकी जान का जंजाल हो गई है वह है साहब का दारू पीना। भक-भक मुंह इतना महकता है कि वह चेहरे पर आंचल डाल लेती है। मैनेजर साहब बार-बार उसके मुंह से आंचल हटाते हैं। आदमी कितना नंगा हो जाता है बिस्तर पर!

फूलमुनी के दिल में धीरे-धीरे ऐसी नफरत भरती जा रही है कि कभी-कभी मन होता है कि उसका मुंह नोच ले मगर फिर वही मजबूरी—औरत होना ही पाप है और वह भी इस कोलफील्ड में।

सहदेव से उसकी बातचीत नहीं थी। सहदेव जल्दी किसी से बोलता भी नहीं था, मगर उस दिन पता नहीं क्या हुआ कि उसने फूलमुनी से पूछ लिया, "का रे, कैसी हो?"

फूलमुनी अभी-अभी नेपाल यादव से लड़कर आ रही थी, बिगड़कर बोली, "वह खाल भूरा नेपाल भरे बाजार में छेड़ता है।"

"क्या छेड़ा?"

"हमको देखकर गाना गाता है।"

"अरे तो इसमें क्या हुआ। तुम लोगों में तो बहुत दोस्ती थी।"

"हूं, दोस्ती? आवारा, हिजड़ा से?"

"अरे अरे रे..." सहदेव ने उसे रोका। नजर उठाकर देखा तो वह रो रही थी। सहदेव बिलकुल घबरा गया।

"क्या हुआ, फूलमुनी? कोई बात हुई? नेपाल ने कोई बुरी बात कही?"

उस दिन तो बस इतनी ही बात हुई। सहदेव पूछता ही रह गया, पर वह कुछ बोले बिना ही चल दी। सहदेव हैरान खड़ा दूर तक आंचल से आंख पोंछ-पोंछकर जाते हुए उसे देखता रहा। दिमाग में उथल-पुथल मच गई। जरूर नेपाल यादव ने कोई बहुत ही बुरी बात कह दी होगी। सहदेव को मालूम था कि आजकल वह मैनेजर झग्गर का चौका-बर्तन कर रही है। शायद इसी मामले पर कुछ कहा-सुनी हो गई होगी।

मगर बात खुली तीन दिन बाद, जब एक दिन फूलमुनी उसे अकेला देखकर उसके पास चली आई।

"एक बात बोलूं, सरदार साहब !"

"क्या बात है, आज फिर किसी से लड़कर आई हो?"

"नहीं।"

"फिर क्या बात है?"

"क्या बोलें, सहदेव बाबू? मैनेजर हमको बहुत सताता है।"

"क्या करता है वह?"

"क्या नहीं करता? एकदम जनावर है।"

"हमने तो सुना है कि आजकल तुम बहुत खुश रहती हो।"

"खुश रहती हूं? मेरा तो रात-दिन सब नर्क हो गया है।"

फिर उसने अचानक सहदेव का हाथ पकड़कर कहा, "सहदेव बाबू, हमको बचा नहीं सकते उससे? आप तो यूनियन के आदमी हैं।"

"यूनियन ऐसे तो कुछ करेगी नहीं जब तक तुम अपनी तकलीफ या अपने पर होने वाले अत्याचार लिखकर न दो। फिर वह बहुत बड़ी कार्रवाई हो जाएगी। सब अफसर तुम्हारे खिलाफ हो जाएंगे। सुना नहीं, लहसुन जड़ में सारे इकट्ठा हो जाते हैं।"

"तब क्या आप कुछ नहीं कर सकते?"

"तुम अपने नेपाल यादव को क्यों नहीं कहती?"

"उसकी बात मत करो। वह सिर्फ दिखावे का मर्द है। अगर उसमें कुछ होता तो आज मेरी यह हालत क्यों होती?"

सहदेव सोच में पड़ गया। कुछ देर सोचने के बाद उसने एक योजना बनाई और धीरे-धीरे अपनी योजना फूलमुनी को समझाने लगा। सारी बात सुनकर फूलमुनी घबरा गई, "और अगर वह बिगड़ गया तो क्या कोलियरी में रहने देगा?"

"उसका बाप रहने देगा। तुम नहीं जानती, ऐसी बातें खुलने से ये लोग बहुत डरते हैं। इससे उनकी बदनामी भी होती है और रेप्यूटेशन भी खराब होता है।"

"क्या खराब होता है?" फूलमुनी ने चौंक कर पूछा।

"कुछ नहीं, अब तुम जाओ। हम लोगों को इस तरह बातें करते कोई देखेगा तो अभी सारी कोलियरी में हल्ला हो जाएगा।"

फूलमुनी हंस दी, "होने दो हल्ला, क्या मैं डरती हूं?"

"अरे बाप तुम नहीं डरती, मैं तो डरता हूं। अब जाओ, मैं ठीक सात बजे आऊंगा।"

उसी दिन सात बजे शाम को सहदेव ने वह तमाशा दिखाया कि लोग दंग रह गए। थोड़ी-सी दारू पी और एक तीन फुट का डंडा लेकर मैनेजर के बंगले के सामने भांजने लगा।

"कहां है साला सक्खर बाबू...अरे साला मैनेजर का बच्चा निकल...साले बाहर निकलो...अभी काट दूंगा...टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।"

बात ही बात में भीड़ जमा होने लगी।

"अरे क्या हुआ, सहदेव भाई?"

"कुछ नहीं, यह साला हमारी औरत को ले आया है।"

"औरत!"—लोगों की उत्सुकता बढ़ने लगी, "कौन औरत?"

"फूलमुनी को—साला बोला, चौका-बर्तन करना है। अभी रात को कौन-सा चौका बर्तन हो रहा है? निकाल साला फूलमुनी को...फूलमुनी हमारी है...आज मर्डर हो जाएगा।"

सहदेव कभी दौडकर इधर आता, कभी दौड़कर उधर जाता। उसकी गरज से बाहर

जो हंगामा था वह तो था ही, बंगले के अंदर भी लग रहा था कि कुछ हो रहा है। भीड़ बढ़ती जा रही थी। अंत में घबराकर मैनेजर ने फूलमुनी को बाहर ढकेलकर दरवाजा बंद कर लिया। सहदेव ने लपककर फूलमुनी के बाल पकड़ लिए और उसे घसीट कर कंपाउंड से बाहर ले आया।

"चल हरामजादी। छिनाल...आज तेरी चमड़ी उधेड़ दूंगा।"

सहदेव ने हाथ में पकड़े डंडे से सचमुच माराना शुरू कर दिया। एक, दो, तीन...फूलमुनी दर्द से बिलबिला कर चिल्लाने लगी।

"अरे खाल भूरा...अरे...!"

मगर सहदेव ने उसे नहीं छोड़ा। बाल तो छोड़ दिया, मगर बांह पकड़कर घसीटता हुआ लेकर चलने लगा।

भीड़ को बहुत मजा आया। बिना पैसे का तमाशा। कोई हंस रहा है। कोई मजाक कर रहा है। कोई बोलियां उछाल रहा है।

''अरे भौजी के हो गइल गौना...

हम न जइबे ससुर घर हो बाबा...!!''

भीड़ के बाहर आकर अकेली पगडंडी पर सहदेव ने उसकी बांह छोड़ दी, मगर वह उससे वैसे ही लिपटी रही।

"छोड़ो मत, गिर जाऊंगी। बहुत दुख रहा है।"

"क्या दुख रहा है?"

"तुम एकदम कसाई की तरह क्यों मारने लगे थे? देखो तो कैसा बदन बदन फट गया है।" उसने साड़ी जांघ तक उड़ा ली, मगर अंधेरे में उसके काले पांव दिखलाई कैसे देते?

सहदेव हंस दिया, "अगर इतने जोर से नहीं मारता तो लोगों को विश्वास कैसे होता कि यह नाटक नहीं है?''

फूलमुनी ने चलते-चलते रुककर उसकी बांह पकड़ ली।

"विश्वास तो हमें भी नहीं हो रहा था कि यह बस नाटक भर है।"

सहदेव ने उसकी तरफ देखा और यह देखकर चौंक गया कि उसकी आंखें हीरे की तरह चमक रही थीं। सारा शरीर अमरबेल की तरह से उसके बदन से लिपट गया।

इस नाटक से दो समस्याएं उत्पन्न हो गईं। पहली समस्या तो यह कि मैनेजर उससे बुरी तरह चिढ़ गया। वह उससे बदला लेने की तरकीब सोचने लगा। उसने एक-दो अफसरों से बात भी की कि सहदेव को फंसाना चाहिए। उसको कुछ नहीं किया गया तो लोग और शेर हो जाएंगे। इसलिए अंदर-अंदर साजिश चली लेकिन जब पी.ओ. तक पहुंची तो उसने मैनेजर को डांट दिया।

"जानते हो, वह किसका आदमी है?"

"किसी का हो, उससे क्या?"

"किसी का नहीं मैनेजर साहब, वह भारद्धाज का आदमी है और बहुत खास आदमी है। आप जानते हैं न भारद्धाज को? बांस हो जाएगा...।"

भारद्वाज के नाम से ताश के पत्तों से बना यह घर ढह गया।

दूसरी समस्या घरेलू थी। दूसरे दिन सहदेव ड्यूटी से घर पहुंचा तो प्रतीबाला का मुंह लटका हुआ था। सहदेव कुछ पूछ रहा है तो कोई जवाब नहीं। बस चुप...एक बार, दो बार, सहदेव हैरान कि बैठे-बिठाए उसे क्या हो गया! लाख पूछा कि भाग्यवान कुछ तो बताओ कि क्या हुआ, मगर इधर कोई जवाब नहीं।

आखिर रात को जब बच्चे सो गए तो उसने सहदेव से बड़े ही खुफिया ढंग से पूछा, "यह फूलमुनी कौन है?"

सहदेव बहुत जोर से हंसा, "अच्छा तो यह बात थी....मगर उसी समय क्यों नहीं पूछ लिया?"

"मैं पूछती हूं, यह फूलमुनी कौन है?"

"तुम्हारी सौतन है।" सहदेव को मजाक सूझा।

"तो ठीक है, उसे घर ले आओ। चोरी-छिपे रखने का क्या मतलब है?"

"घर लाने की तो मैं भी सोच रहा था। तुम्हारा बहुत काम कर दिया करेगी। तुम मजे से चारपाई पर बैठी रहना।"

प्रतीबाला ने तुनककर कहा, "तुम क्या समझते हो कि तुम उसे ले आओगे और मैं यहां बैठी रहूंगी!"

"तब क्या करोगी?"

"चली जाऊंगी जिधर मुंह उठेगा।"

"आजकल तुम्हारा भाई मजूमदार भी काफी तरक्की पर है उसी के पास चली जाना।"

"उसके पास क्यों जाऊंगी? बहुत जगह है मेरे लिए, खतुनिया दीदी के पास चली जाऊंगी।"

सहदेव खतुनिया का नाम सुनकर खूब हंसा, "यह ठीक सोचा तुमने, वहां तक तो मेरा भी दिमाग नहीं गया था।"

"दिमाग कैसे जाएगा, फूलमुनी से फुरसत मिले तब न, " प्रतीबाला जलकर बोली।

सहदेव उठकर चारपाई पर बैठ गया और सारी बात उसे विस्तार से बता दी। सारी बात सुनकर उसने अविश्वास से कहा, "अब और मत छलो। यह मत समझो कि मैं औरत हूं और तुम जो बोलोगे उसको मान लूंगी।"

इतना कहकर उसने करवट बदली और सुबक-सुबककर रोने लगी। अब लाख सहदेव

समझा रहा है। लाख कसमें खा रहा है। हर तरह से उसे विश्वास दिलाने की कोशिश कर रहा है, मगर सब बेकार।

दलित मजदूर संघ का धर्मा कोलियरी में आफिस खुल गया है। खूब बाजा-गाजा बजा है। धूम-धड़क्का, लौंडे का नाच भी हुआ है।

''आरा हिले, बलिया हिले, पटना हिले ला।

जब तू चलेला डगरिया सारा जिला हिले ला !!''

लौंडे के नाच में बहुत भीड़ हुई। छपरा की सबसे मशहूर नाच पार्टी थी। एक लड़का तो ऐसा था कि जिसे देखकर कितनों का कलेजा पानी हो गया।

"का पेटी बा हो, दम निकल जाई।"

इब्राहीम मियां ने साथ वाले से पूछा, "यह पेटी क्या होती है?"

"पेटी का मतलब पेट।" वह आदमी उसे समझाता है।

"मगर पेट में ऐसा क्या होता है?"

"लौंडों का तो पेट ही सब कुछ होता है।"

उसकी समझ में कुछ नहीं आया तो वह फिर नाच देखने लगा। अब फिल्मी गीत उड़ रहा था।

''तोरी मीठी मीठी बोलिया करेजा छुए ला जी करेजा छुए ला''

लोग नोट लुटा रहे हैं, मगर कैसे? एक आदमी नोट दातों से पकड़ लेता है। अब यह नोट लौंडे को अपने दांत से ही लेना है। जब वह नोट वाले के पास जाता है तो वह आदमी नोट का ज्यादा हिस्सा मुंह के अंदर कर लेता है। कोई हाथ में नोट पकड़कर हाथ सर के ऊपर उठाए रखता है। लौंडा नजदीक आता है तो हाथ को पीछे कर लेता है। खूब ठट्ठा चल रहा है। लोग नाच का पूरा मजा ले रहे हैं।

यह दलित मजदूर संघ की सभा है। उद्घाटन तो तीन दिन के बाद हुआ जिसमें खुद भारद्धाज साहब अपने दल-बल के साथ आए और जोशीला भाषण दिया और ऐसे लोगों को खुले आम चेतावनी दी जो उनके काम में रोड़ा अटकाने की कोशिश करेंगे। इस सभा में सहदेव ने भी अपना पहला भाषण दिया। अप्रासंगिक और लगभग अर्थहीन। क्या करता बेचारा, टांगें कांप रही थी, दिल की धड़कन दस गुना बढ़ गई थी और दिमाग था कि ऊट-पटांग सोचे जा रहा था।

चलो, सहदेव लीडर बन गया हालांकि लीडर नहीं बनना चाहता था। उसे आज भी, बीस साल गुजर जाने के बाद भी अपने काम से ही ज्यादा दिलचस्पी थी, मगर भाग्य का क्रूर मजाक देखिए कि वह लीडर बन गया।

यूनियन आफिस का सारा काम सहदेव को ही देखना पड़ता है। दो-चार आदमी उसकी मदद जरूर करते हैं मगर नाम मात्र के लिए। उसे मजदूरों की समस्याएं सुलझाने के अलावा पेपरवर्क भी करना पड़ता है। फिर दूसरी कोलियरियों में भी जाना पड़ता है और साहब के बंगले पर सबसे ज्यादा हाजरी देनी पड़ती है जो दलित मजदूर संघ का हेड आफिस भी है। वहां अकसर मीटिंग हुआ करती हैं। वाद-विवाद, दूसरी कोलियरियों की स्थितियों का वर्णन। अपनी यूनियनों के क्रिया-कलापों का जायजा, लोग देर रात तक रुके रहते हैं।

दूसरी यूनियन वाले यह सब देखकर जल-भुन रहे हैं। वे नहीं चाहते कि दलित मजदूर संघ यहां किसी तरह के संगठनात्मक स्तर पर काम करे। उन्हें डर हो गया कि वे दलित मजदूर संघ के मुकाबले में खड़े नहीं हो सकते। भारद्वाज खूंखार आदमी है। वाद-विवाद, लेक्चरबाजी और जोड़तोड के बजाए सीधा रास्ता इस्तेमाल करेगा, बंदूक की नाल वाला सीधा रास्ता। यहां किसमें हिम्मत है कि उससे आंख मिला सके? लोग एक-एक कर टूट-टूट कर दलित मजदूर संघ में शामिल हो रहे हैं। दूसरी पार्टी के लीडरों के होशोहवास गुम हैं। अब क्या होगा?

होना क्या? यह तो सब जानते हैं कि जहां दलित मजदूर संघ पहुंच जाए वहां दूसरों का रहना मुश्किल हो जाता है। वह ताकत की पार्टी है और ताकत...चारों तरफ दलित मजदूर संघ के लोग ऐंठते फिर रहे हैं। सहदेव के चारों तरफ भीड़ लग गई। ताकत इतनी है कि अगर वह चाहे तो झग्गर जैसे मैनेजर को कालर से पकड़कर आफिस के बाहर खींच लाए और यही चाहती है फूलमुनी।

ऐसी कौन-सी नफरत बैठ गई उसके दिल में कि वह झग्गर को फूटी आंख नहीं देख सकती, हालांकि उसने कोई नया नहीं किया है। अकसर कामिनें अफसरों के घरों में चौका-बर्तन करने जाती हैं। और ज्यादातर वहीं सोने भी लगती हैं। वैसे भी यह फूलमुनी कौन-सी दूध की धुली है? अरे भिखारी की झोली है, जहां दस घरों का दस मुट्ठी चावल है वहीं एक मुट्ठी और पड़ गया तो कौन-सा प्रलय टूट पड़ा! पर वह पता नहीं क्यों बहुत झल्लाई रहती है! जितना क्रोध उसे झग्गर साहब पर आता है उतना क्रोध नेपाल यादव और लोडिंग बाबू बादल पर भी आता है। उसका ख्याल है कि नेपाल यादव और लोडिंग बाबू इतनी बड़ी बात को बरदाश्त कैसे कर गए? उनको तो वहां जाने से रोक लेना चाहिए था, जबरदस्ती रोक लेना चाहिए था। क्या कर लेता झग्गर? क्या उनको नौकरी से निकाल देता? नामर्द...!

आजकल वह उन्हें जरा मुंह नहीं लगाती बल्कि कोई टोक दे तो लड़ने-मारने पर उतारू हो जाती है। असली बात यह है कि उसका दिल सहदेव पर आ गया है। प्यार-मुहब्बत की बात नहीं, बस उसे भा गया है। उसका झग्गर के घर के सामने शेर की तरह ललकारना,

उसके बंगले से निकलते ही उस पर झपटकर उसके बाल पकड़ लेना, बेरहमी से उसे घसीटना और उसकी जांघ और कमर पर छड़ी बरसाना, ये सब उसे अच्छा लगा था। बहुत अच्छा लगा था। एक खूंखार भरपूर मर्द की तरह लपकता-झपकता उसका वजूद उसके दिल पर वशीकरण छाप छोड़ गया था। इसलिए उस दिन से वह अकसर उसके आगे-पीछे घूमा करती। एक दिन तो उसका रास्ता रोककर खड़ी हो गई।

"तुम मुझको रख लो।"

"क्या—?" सहदेव एकदम हक्का-बक्का रह गया।

"तुम जो बालोगे मैं करूंगी। अपनी सारी तनख्वाह तुमको दे दूंगी। बल्कि लिख दूंगी कि मेरे मरने के बाद मेरा सारा पैसा तुमको मिल जाए। पी. एफ. का भी और जो ऊपर से आता है वह भी।"

सहदेव उसे समझाने लगा, "देखो, मैं बाल-बच्चेदार आदमी हूं। घर में पत्नी मौजूद है... ।"

फूलमुनी उसकी बात काट कर बोली, "मैं पत्नी को छोड़ने को थोड़े ही कह रही हूं। एक मर्द क्या दो औरत नहीं रख सकता? और मैं कोई तुमसे खाना-खर्चा तो मांग नहीं रही हूं।"

"क्या करती हो?" सहदेव झल्ला गया, "इस इतनी बड़ी कोलियरी में सैकड़ों मर्द हैं, किसी के साथ रह लो। अरे भाई, सब गुड़ मीठा होता है।"

फूलमुनी का मुंह फूल गया, "ठीक है, तुम मुझे मत रखो मगर मैं तुमको रखूंगी।"

इस वाक्य का कोई अर्थ अगर निकाला जा सकता है तो वह यह है कि तुम मुझे न चाहो पर मैं तुम्हें चाहती रहूंगी। सचमुच उसने चाहा भी और इतना टूटकर चाहा कि उसकी मिसाल कम ही मिलेगी।

फूलमुनी उसे चाहती है, यह बात सब जानते हैं। यहां तक कि प्रतीबाला को भी मालूम है बल्कि कोलियरी का बच्चा-बच्चा जान गया है। इस रिश्ते की वजह से फूलमुनी की भी इज्जत बढ़ गई है। अब उसे कोई नहीं छेड़ता बल्कि छेड़ने की जुर्रत नहीं करता। अब वह बड़े गर्व से रहती है। किसी ऐरे-गैरे से तो बात भी नहीं करती। इधर जब से सहदेव नेतागिरी करने लगा है उसने भी रंगीन साड़ी को त्याग दिया है। अब सफेद साड़ी पहनती है। कोई-कोई आदमी मजाक से कहता है, "नए जमाने की लैला है।"

पुराने जमाने की लैला कैसी होगी, यह तो मालूम नहीं लेकिन इस नए जमाने की लैला ने कोलफील्ड में मुहब्बत के सारे रिकार्ड तोड़ दिए हैं। हर पर्व-त्योहार पर कोई न कोई सामान सहदेव के घर भेज देती है, बल्कि कभी-कभी तो पैंट और शर्ट के कपड़े भी। दीपावली में तो कई डिब्बे मिठाई के भेजती है। वैसे प्रतीबाला वह मिठाई किसी को भी खाने नहीं देती। उसका विचार है कि इस मिठाई में जरूर कोई ऐसी बात होगी जो आदमी

को मोह ले। ऐसी औरतें इस तरह का बहुत टोटका जानती हैं। फूलमुनी से वह काफी रुष्ट रही है। एक बार दुर्गा पूजा के अवसर पर ठीक पूजा-मंडप में दोनों का आमना-सामना हो गया था। फूलमुनी ने गर्दन में आंचल लपेटा और लपककर प्रतीबाला के पांव छू लिए। प्रतीबाला ने पांव इतनी तेजी से हटा लिए मानो बिच्छू ने डंक मार दिया हो।

इरफान बहुत दिनों के बाद सहदेव के घर आया है। वह बेंत की कुर्सी पर बैठकर स्वेटर बुनती हुई प्रतीबाला को दिलचस्पी से देखता है। क्वार्टर की दीवारों पर तसवीरें टंगी हैं। एक सस्ते किस्म का सिंगारदान जिस पर ढाई फुट का आइना लगा है, इस तरह रखा है कि जो व्यक्ति कमरे में दाखिल हो सबसे पहले उसे अपनी शक्ल उसमें दिखाई दे। इसी आइने में अभी-अभी इरफान ने अपने आपको देखा है। एक दुबला-पतला लंबा लड़का या नौजवान जिसके कुर्ते और पाजामे में उसकी हैसियत आंकी जा सकती है लेकिन चेहरे पर जो एक मासूम आकर्षण है या आंखों में एक रौशन चमक है उसको नजरों से परे नहीं किया जा सकता। वह दबे पांव आकर प्रतीबाला को सलाम करता है तो वह बिलकुल चौंक जाती है।

"अरे तुम, इरफान? ऐसे चोरों की तरह आए कि मुझे पता भी नहीं चला। तुम लोगों ने तो बिलकुल आना-जाना ही छोड़ दिया है। तुमको पता है, कितने दिनों बाद आए हो तुम?"

"आंटी, काम इतना बढ़ गया है कि फुरसत ही नहीं मिलती।"

प्रतीबाला ने स्वेटर नीचे रख दिया, उसकी ओर देखा, फिर हंसकर कहा, "मैंने तो सुना है कि कोई लीडर काम ही नहीं करता। फोकट की तनख्वाह उठाता है।"

"अरे काम बी.सी.सी.एल. का नहीं करता तो क्या हुआ? पार्टी का काम तो करना ही पड़ता है।"

फिर उसने भेदपूर्ण ढंग से कहा, "अब तो सुना है, अंकल भी लीडर हो गए हैं। आपको तो खुद अंदाजा..."

प्रतीबाला ने उसकी बात काट दी, "उनकी बात मत करो। बुढ़ापे में उनकी मति मारी गई है।"

"अच्छा ! ऐसा क्या किया है हमारे अंकल ने?"

प्रतीबाला धीरे से मुस्कराई, "करेंगे क्या, तुम्हारे लिए एक चाची ढूंढ रखी है।"

इरफान बहुत जोर से हंसा, "वाह ! क्या बढ़िया खबर सुनाई है, सुबह सुबह जी खुश हो गया। मां सुनेगी तो कल ही चली आएगी।"

"दीदी कहां आती हैं? उनको देखे तो साल भर से ऊपर हो गया।"

"मां आजकल मुझसे कुछ नाराज हैं। मैंने उनका 'कोल बिजनेस' खत्म कर दिया है।"

वह हंसा तो प्रतीबाला ने कहा, "उसके कोयला बेचने का मजाक मत उड़ाओ। उसी से उसने तुम्हें पालकर इतना बड़ा किया है। उसी से तुमको पढ़ाया-लिखाया वरना आज तुम भी भैया की तरह गांव में खान साहबों के खेत में हल चला रहे होते।"

"इसका मतलब है, अंकल ने आपको हमारा सारा भूगोल समझा दिया है।"

प्रतीबाला ने पहले उसे कुर्सी लाकर दी, फिर बैठाया और बोली, "जब तुम लोगों से मेरी मुलाकात ही नहीं हुई थी तब ही उन्होंने मुझे सब कुछ थोड़ा-थोड़ा करके बता दिया था। वे भैया को यानी तुम्हारे बाबूजी को बहुत चाहते थे। उनके मरने का उन्हें बहुत दुख था। अकसर आधी-आधी रात को उठकर पागलों की तरह अचानक पूछ बैठते, अब उनका क्या होगा?

''मैं हैरत में पड़ जाती, किसका क्या होगा?

"अरे उसी रहमत भाई की बीवी का एक छोटा-सा बच्चा भी है।"

इरफान शब्दों की दुनिया से निकलकर अतीत में खो जाता है। वह देख रहा है, सारे घर में मौत का सन्नाटा-सा छाया हुआ है। मां जाड़े की धूप में झीलंग खटोले पर पैर सिकोड़े मुंह छिपा कर लेटी है। कभी-कभी उसका बदन हलका-सा हिल जाता है। शायद वह रो रही है। एक तरफ उसका दादा बैठा धूप सेंक रहा है। जब से रहमत मियां की खबर आई है कभी उसकी आंख से पानी बंद नहीं हुआ, लगातार बहता रहता है। मां कहती है, बूढ़े की आंख बह गई है। उसे अब कुछ नहीं दिखाई देता इसलिए जहां वह बैठता है एक डंडा पड़ा रहता है। जब उठता है तो टटोलकर एक हाथ से दीवार और दूसरे हाथ से डंडा पकड़ता है। डंडे के द्वारा आगे की चीजें टटोलकर आगे बढ़ता है। कभी-कभी वह दौड़कर उसे पकड़ लेता है तो बूढ़ा भभककर रो उठता है। उसके मुंह से विचित्र-सी आवाज निकलती है और अंधी आंखों से पानी इतनी जोर से बहने लगता है कि मैली दाढ़ी भीग जाती है। मां उसके मरने की राह देख रही है। कई बार कह चुकी है कि बूढ़ा कोई घाट लगे तो वह बेटे को लेकर शहर चली जाए। यहां कौन बैठा है? दोनों में से कोई एक-दूसरे से बात नहीं करता। सच तो यह है कि इस घर में कोई किसी से बात नहीं करता। सारे घर में सन्नाटा छाया रहता है। उसे मालूम है कि क्या हुआ है? उसमें इतनी समझ है, मगर वह अपने आपको खेलने से और कभी-कभी हंसने से नहीं रोक सकता। भूल जाता है कि क्या हुआ है। फिर जब अचानक याद आता है तो उसकी भी चुप्पी लग जाती है। तब पता चलता है कि आवाज किसी घर के लिए, जिंदा लोगों के लिए कितनी जरूरी चीज है—एक तरफ उसकी मां लेटी हुई, एक तरफ उसका दादा अपनी आंखों की बुझी हुई ज्योति से खाली रास्ते को देखता हुआ, आंखों से नहीं, कानों से आहटों की बाट जोहता हुआ। एक तरफ बुझा हुआ चूल्हा, एक तरफ स्याह पड़ गई अल्मुनियम की खाली देगचियां, मैले गेंदड़ों

का अंबार जिसे न कोई धोने वाला है और न ही तह कर रखने वाला। धूल और अंधेरे में डूबा हुआ बरामदा, अंधेरी शोभाहीन कोठरी। सब कुछ मानो चलते-चलते रुक गया हो, जम गया हो।

खान साहब की मां दिन का बचा हुआ खाना लेकर आती है। कुत्तों को नहीं डाला है। कुत्तों से पहले आदमी को देखना चाहिए। यही असली ईमान है। अल्लाह इसका पुरस्कार देता है। आदमी भी अजीब होशियार प्राणी है। फेंके जाने वाले खाने की भी कीमत वसूलना चाहता है। आदमी से नहीं मिले तो अल्लाह से।

दादा की अल्लाह मियां से लड़ाई हो गई है। कभी-कभी वह अल्लाह मियां को बहुत गाली बकता है—रोजा, नमाज सब बंद; यहां तक कि काबा की तरफ पांव फैलाकर सोता है। कहता है, सब झूठ है। बड़े खान साहब समझाते हैं, "कुफ्र क्यों बकते हो? अल्लाह मियां के कहर से डरो।"

बूढ़ा बिदक जाता है, "कहर गिराना है तो गिराकर देख ले। वह ऐसों पर कहर क्यों नहीं गिराता जो रात-दिन बेईमानी करते हैं, दूसरों का हक छीन लेते हैं, जमीन हड़प लेते हैं।"

बड़े खान साहब लाहौल पढ़ते हुए अर्थात् शैतान को भगाने की एक विशेष दुआ पढ़ते हुए चले जाते हैं। ससुर की बुढ़ापे में मति मारी गई है। पागल हो गया है। तब वह भी सोचता था कि सचमुच दादा पागल हो गए हैं, मगर अब जब वह बड़ा हो गया है तब उसकी समझ में आया है कि नहीं, असल में उसके दादा को होश आ गया था। उसकी अंधी आंखें यहां से आसमान के अंतिम सिरे तक देखने लगी थीं।

जिंदगी ने कितना छला है उसे, कितना दुख दिया है! एक लंबा दुख भरा लड़कपन, मामूली से मामूली चीजों के लिए तरसती जवानी। सब कुछ तो उसने अकेले ही झेला है। यहां आया था तो मां जब कोयला बेचने चली जाती तो वह अकेला सिरसा कोलियरी चल पड़ता। जल्दी-जल्दी लगभग भागता हुआ, ताकि मां के लौटने से पहले वापस आ जाए।

पहले कई दिनों तक यूं ही सिरसा कोलियरी में फिरता रहा। कभी मुहानी के पास, कभी आफिस के पास, कभी लोडिंग शेड के पास, कभी धोड़ों के बीच—कुछ भी पता नहीं चला। सारी दुनिया ठीक-ठाक थी। कोलियरी में काम वैसे ही हो रहा था। चाय और पान की दुकानों में भीड़ लगी थी। धोड़ों के पास औरतें मजेदार गप्पें हांक रही थीं। आफिस में बाबू लोग वैसे ही अंदर-बाहर हो रहे थे—वह किससे पूछे? क्या पूछे? कोई ऐसा आदमी मिल जाता जो उसके बाप को जानता होता, जिससे वह पूछ सकता कि उसका बाप कैसे मर गया था? मर गया था या किसी औरत के साथ भाग गया था? सब चेहरे अजनबी थे। सारे आदमी अनजान थे। हर रोज वह कोलियरी में दो-तीन घंटे बिताकर वापस आ जाता—मां के लौटने से पहले।

तब एक दिन किसी ने सिरसा कोलियरी में उसकी पीठ पर हाथ रख दिया, "किसको ढूंढते हो, बाबू?"

उसने मुड़कर देखा। एक औरत का चेहरा, बिंदी लगी हुई, मांग में सिंदूर, वह चुप रह गया। औरत ने उससे बहुत पूछा मगर वह चुप। क्या बताता कि वह कितनी बड़ी मुहिम पर निकला है!

उसका नाम, उसका पता पूछकर हार गई तो पड़ोस के धोड़ों से कई औरतें निकल आईं।

"कौन है, भौजी?"

"कोई लड़का बिलट गया है हो।"

दूसरी औरतों ने उसे चुमकारा-पुचकारा तब उसने जरा हिम्मत करके अपना नाम बताया।

"इरफान!"

"बाबूजी का नाम?"

वह चुप--

"बाप का नाम?"

वह आंखें उठाकर पांचों औरतों को देखता है। क्या वे जानती होंगी? इनमें से कोई?

"रहमत मियां।"

"कहां रहते हो? घर कहां है?"

वह मुहल्ले का नाम नहीं जानता, शहर का नाम जानता है।

"झरिया।"

"देस कहां है?"

"गया जिला !"

"गया जिला में कहां?"

वह फिर चुप है। आम सहमति से फैसला होता है कि लड़का कहीं से भटककर आ गया है, मगर इतना बड़ा लड़का ठीक से कुछ नहीं बताता। लगता है, देहाती है।

"मैं घर जाऊंगा।"

औरतें कुछ सोचकर उसे छोड़ देती हैं। वह तेजी से निकल जाता है। आज बहुत देर हो गई।

उस दिन सचमुच बहुत देर हो गई थी। मां आ चुकी थी और उसे न पाकर चारों तरफ खोजती फिर रही थी। रो-रोकर उसने अपना बुरा हाल कर लिया था। उसका ख्याल था कि उसकी अनुपस्थिति में इरफान किसी तरफ निकल गया है और फिर रास्ता भूल गया है। इतना बड़ा शहर है, दुनिया की भीड़ है, जल्दी पता थोड़े ही चलेगा पर जब वह

खुद ही आ गया तो उसे पकड़कर इतना रोई, इतना रोई कि इतना तो उसके बाप की चिट्ठी पाकर भी नहीं रोई थी।

प्रतीबाला ने चाय की प्याली उसकी ओर बढ़ाई तो वह लौट आया। बैठे-बैठे दूर चले जाने की आदत अब कम पड़ गई थी। शुरू-शुरू में तो ऐसी स्थिति थी कि लोग बातें करते रहे और वह दूर चला जाता। कभी अपने गांव, कभी सिरसा कोलियरी और कभी-कभी किसी अंधेरे सुरंग में, जहां कोयले के टुकडों से बनी एक कब्र, जमीन से तेरह सौ फुट नीचे, सारी दुनिया से अलग-थलग एक सवालिया निशान बनी मौजूद होती। कभी-कभी वह इस कब्र पर समाधि लेख लगाता—

रहमत मियां वल्द...

पैदाइश...

मौत..

लेकिन अब ये सब कुछ बहुत कम हो गया था इसलिए आज जब प्रतीबाला ने उसे चाय बढ़ाई तो वह खुद भी चौंक गया। बहुत दूर चला गया था। प्रतीबाला से भी यह बात छुपी न रह सकी, वह हंसकर बोली, "दिन को सपने मत देखा करो। दीदी से कहना, आंटी ने आपको बुलाया है।"

"कोई काम है?"

"बहुत जरूरी काम है। बेटा जब बैठे-बैठे दिन को सपने देखने लगे तो मां को उसके ब्याह की चिंता करनी चाहिए।"

इरफान हंस दिया, "अजीब बात है, बहन कहती है शादी कर लो और भाई कहता है कभी ऐसी गलती मत करना। बोलिए, मैं किसकी बात मानूं?"

"मजूमदार ने खुद शादी नहीं की तो क्या सारी दुनिया नहीं करे।"

"यह तो आप अपने भाई से पूछिए।"

"वे आते कहां हैं, जो पूछूं!"

"अरे, आपको पता है, वे बहुत बड़े लीडर हो गए हैं, घोष बाबू का दाहिना हाथ। आजकल कोलियरियों में यूनियन बनाने में लगे हुए हैं। अब उन्हें फुरसत कहां?"

मजूमदार सचमुच बहुत व्यस्त था। पहले तो सिंदरी और बलियापुर के गांव की किसान बेल्ट में काम चल रहा था। फिर पार्टी ने सोचा कि मजदूरों की बेल्ट में भी काम जरूरी है।

मजदूरों की बेल्ट अर्थात् कोलियरी एरिया।

कई साल पहले जो बवंडर उठा था वह अभी थमा नहीं है। क्या-क्या इस बवंडर में उड़ गया और क्या-क्या बचा है, उसका हिसाब अभी बाकी है। जो कोलियरियों के मालिक थे, लाखों में खेलते थे, जिनके घर नोटों की बारिश होती थी, जिन्होंने चार-चार कारें रख

छोड़ी थीं, वे आज कहां हैं, पता भी नहीं।

उनको मुआवजा देने की बात पक्की थी मगर पता चला कि लगभग तमाम मालिकों ने सरकार का इतना पैसा दबा रखा था जो कोलियरी के मुआवजे से भी ज्यादा था इसलिए सबमें कटौती कर ली गई। बची क्या? रास्ते की धूल, जाओ बेटा, फांको, बहुत मौज उड़ाई है तुम लोगों ने...।

कोलियरी लीडरों ने खूब हाथ सेंका है। दोनों हाथ से लूट रहे हैं। रोज एक हंगामा होता है, रोज एक मामला खड़ा होता है, रोज लीडर एक नया तमाशा बनाते हैं, उन्हें रुपए चाहिए। घूस चाहिए मगर बेचारे अफसर क्या दें....सो उन्होंने उनका मुंह बंद करने के लिए उन्हें सामान देकर अनुगृहीत करना शुरू कर दिया। जी हां ! सीमेंट, लोहे की छड़ें, गार्डरें, बिजली के उपकरण लोग ट्रक भर-भरकर गांव भेज रहे हैं। वहां उनके पक्के मकान बन रहे हैं। सारे छोटे-छोटे लीडर बी.सी.सी.एल. के कर्मचारी बन गए हैं, बस नाम के कर्मचारी। काम नहीं करते, सिर्फ वेतन उठाते हैं। काम तो वे यूनियन का करते हैं बल्कि सिर्फ वही काम करते हैं जिसमें उन्हें मोटा माल मिले। नौकरियों में भी बहुत धांधली होती है। आओ भाई, नौकरी बिक रही है। लोडर पांच हजार, ट्रामड्राइवर छह हजार, खूंटा मिस्त्री आठ हजार। किस्मत बना लो, फिर मौका नहीं मिलेगा। इस रेले को संभालना मैनेजमेंट को भारी पड़ रहा है। हर दूसरे-तीसरे दिन हड़ताल की धमकी मिलती है। हर चौथे दिन घेराव कर लिया जाता है। मजदूरों को उकसाकर गाली-गलौज करवा देना तो बहुत ही मामूली बात है। मैनेजमेंट रोज ऊपर वालों को लिखता है, हमारी सुरक्षा का प्रबंध किया जाए।

और ये जो अफसर हैं ये कहां दूध के धोए हैं! जिसका हाथ जितना लंबा है, जितनी दूर जा सकता है, हाथ बढ़ाकर नोच-नोचकर अपना घर भर रहा है। ठेकेदारों और सप्लायरों से पहले ही बात तय हो जाती है। पांच प्रतिशत इंजीनियर का, दो प्रतिशत सामान पास करने वाले इंजीनियर का, एक प्रतिशत रीजनल स्टोर का, तीन प्रतिशत फाइनेंस वाले का, सील वाले और पर्चेज वाले तो राजा हो गए हैं। जितनी तनख्वाह नहीं है उससे अधिक ऊपर से मिल जाता है। बाकी लोग जिनके हाथ लंबे नहीं होते अथवा नहीं हो सकते हैं, कुढ़ते रहते हैं और दो-एक मौका पाने के लिए तिकड़म लगाते रहते हैं, षड्यंत्र रचते रहते हैं। वे भी जिनके हाथ लंबे हैं और वे भी जिनके नहीं हैं.सब अंदर से बहुत कमजोर हैं इसलिए हमेशा डरते रहते हैं और कोलियरी में डरने की बस एक चीज है और वे हैं लीडर।

ये लीडर कब किस की टांग खींच लें, कुछ पता नहीं। कोई गलती पकड़ी नहीं कि मजदूरों को बहकाकर खड़ा कर दिया। चले आ रहे हैं झंडियां लिए नारा लगाते।

"एस.ई. बेटा चोर है—चोर है, चोर है।"

"सामानों में हेरा फेरी—नहीं चलेगी, नहीं चलेगी।"

आगे-आगे लीडर हैं। पीछे मजदूर और कामिनों की भीड़। अब बेचारे सुपरिंटेंडेंट इंजीनियर का बुरा हाल।

कुछ होता-जाता नहीं है। बस, बाद में लोग मजाक उड़ाते हैं, व्यंग्य कसते हैं। इतने सारे जूनियर स्टॉफ के सामने झुकना पड़ता है, यह क्या कम है? इसलिए उनमें धीरे-धीरे इतना डर समा गया है कि लीडरों के नाम से ही अफसरों का दम निकलता है।

कोलफील्ड में धीरे-धीरे एक और परिवर्तन हो रहा है। बड़े लीडरों की आमदनी के सबसे बड़े स्रोत मालिक थे। उनके जाने के बाद एक शून्य-सा पैदा हो गया था, इसलिए ये लीडर बड़े-बड़े ठेके हासिल कर रहे हैं। कुछ अपने नाम से, कुछ अपने रिश्तेदारों के नाम से। मजदूर क्वार्टरों के ठेके जिनके एक साथ सैकड़ों की संख्या में टेंडर निकलते हैं, ट्रक से कोयला ढोने का ठेका और सबसे कीमती बालू सप्लाई करने का ठेका। इन ठेकों का टेंडर कोई दूसरा नहीं भर सकता। जो भरता है या भरने की कोशिश करता है उसकी जिंदगी खतरे में पड़ जाती है, इसलिए पुराने ठेकेदार जो अपना सारा काम मालिकों की खुशामद करके निकाला करते थे अब परिदृश्य से गायब होते जा रहे हैं और सारा कोलफील्ड विभिन्न माफिया दलों में बंट गया है। हर इलाके का एक अलग माफिया सरदार है। ये माफिया सरदार अक्सर एक-दूसरे से लड़ते रहते हैं। आज इसके दो आदमी मारे गए तो कल उसके दो आदमियों को गोली मार दी गई। बदले की आग का यह खेल चलता ही रहता है। इन माफिया सरदारों के ट्रक जो प्रत्येक माफिया सरदार के पास पचास-पचास की संख्या में हैं, रात-दिन उनके लिए नोट बटोरने का काम कर रहे हैं। बालू का ट्रक दस ट्रिप लगाता है तो बी.सी.सी.एल. के खाते में पंद्रह ट्रिप लिखा जाता है। ऐसा भी पाया गया है कि एक ही ट्रक एक ही समय में बालू के ट्रिप में भी मौजूद है और कोयले के ट्रिप में भी।

पहले वाले ठेकेदारों के पास अब छोटे-छोटे ठेके रह गए हैं। बाउंडरी वाल, खंभों और फेस की रंगाई, अंडर ग्राउंड में छोटे-मोटे कामों के ठेके। ये ठेके भी हासिल करने के लिए उनकी खुशामद करनी पड़ती है। मैनेजमेंट की भी, और इन माफिया सरदारों की भी।

रह जाता है मजदूर, तो उस पर जैसे नशा-सा छाया हो। जिस मजदूर को दो सौ रुपए महीना मिलता था उसे बारह सौ, चौदह सौ मिलता है। अब ये बैंगन को शिंगन नहीं कहेंगे तो कौन कहेगा? पहले गुड़ के लड्डू और बेसन के भाभरे पर मजदूर संतोष कर लेता था मगर आज ये चीजें उसके कंठ से नीचे ही नहीं उतरतीं। अब उन्हें खस्ता कचौड़ी और इमरती-जलेबी भाती हैं। पहले वह महुए से चलाई या स्पिरिट से बनाई दारू पीता था। अब थ्री एक्स रम उड़ता है। पहले दस रुपए सैकड़ा सूद पर कर्ज लेता था। अब बीस रुपए सैकड़ा पर लेता है। पहले दुर्गा पूजा में खरीदी दो साड़ियों में साल कट जाता था अब आठ साड़ियां लगती हैं। स्नो पाउडर, लिपिस्टिक और खुशबूदार साबुन की जो दुकान

खुली है, खूब चलती है। अब हर हफ्ते शहर जाकर सिनेमा देखा जाता है। झरिया बाजार की कीमतों में अचानक उछाल आ गया है। अगर कोई हिसाब करने वाला हो तो देखेगा कि मजदूर आज भी वहीं है। यह और बात है कि जरा चमक-दमक बढ़ गई है।

यह दिन पर दिन गहरा होता धुआं, यह दिन पर दिन बढ़ता-फैलता अंधकार, यह दिन पर दिन लहू में डूबता कोलफील्ड—आग कहां है? क्या यहां सिर्फ धुआं है? कहते हैं, जहां धुआं होता है वहीं आग भी होती है।

मगर आग कहां है?

इरफान की जवान और ज्वलंत आंखें इस धुएं भरे अंधेरे पर बराबर लगी हैं। कभी-कभी वह निराश होने लगता है तो मजूमदार उसे डांट देता है।

"क्या तुम समझते हो कि फ्रांस की क्रांति या रूस के जार का तख्ता पलटने की कार्यवाई एक दिन की थी? नहीं, पचासों वर्ष तक यह आग अंदर ही अंदर सुलगती रही है, अब आकर यह सुलग पाई। सच तो यह है कि यह एक लंबी लड़ाई है। जीत कब होगी, कहना मुश्किल है। शायद उस समय तक मैं न रहूं, तुम भी न रहो मगर लड़ाई जारी रहेगी। पीढ़ी दर पीढ़ी आदमी अपने अधिकारों के लिए डटकर लड़ता रहेगा। पीढ़ी दर पीढ़ी इंसान अपने अपमान, गरीबी और भूख के खिलाफ झंडा ऊंचा किए रहेगा। यह मत सोचो कि अचानक जब तुम सोकर उठोगे तो देखोगे कि दुनिया बदल गई।"

रात आठ बजे तक इरफान सहदेव की प्रतीक्षा करता रहा। उसने खाना भी वहीं खाया। अंत में चलने की आज्ञा मांगी तब प्रतीबाला बोली, "आजकल अक्सर देर से आते हैं। यूनियन का आफिस भी संभाल रहे हैं। धनबाद में कोई मीटिंग होती है तो बहुत रात हो जाती है।"

प्रतीबाला की बात पर ध्यान दिए बिना वह घर से बाहर निकल जाता है।

बहुत रात हो गई है। अब कोई सवारी नहीं मिलेगी।

सहदेव टैक्सी से उतरकर चारों तरफ देखता है। जाड़े की रात सुनसान पड़ी है। हवा तीखी है और सुनसान रात के इस समय चौड़ी सड़क पर मानो तांडव में लीन हो। वह कंधे से सरकती चादर को ठीक से लपेट लेता है। उसे उतारकर टैक्सी सिंदरी चली गई है। अब कोई चारा नहीं। इतनी रात गए न रिक्शा मिलेगा और न ही दूसरी सवारी। पैदल ही जाना होगा।

घर ज्यादा दूर नहीं है। बस यही कोई तीन किलोमीटर, पर रास्ता वीरान है। कभी-कभी कोई कोलियरी ट्रक मिल जाए तो मिल जाए वरना और न कोई गाड़ी दिखेगी न ही राहगीर। पतली सड़क के दोनों तरफ वनतुलसी की झाड़ियां रास्ते को और अंधेरा कर देती हैं। इस

वीरान रास्ते पर इतनी रात गए अकेले चलने का साहस कम ही आदमी करेंगे।

और आजकल तो...

आजकल किसी के साथ कुछ भी हो सकता है। इसके लिए ऐसी सुनसान रात भी जरूरी नहीं। दिन दहाड़े लोग गोलियों से भून दिए जाते हैं या बमों से उड़ा दिए जाते हैं। मौत कब, कहां, किसको छापकर बैठ जाए, कहना मुश्किल है। आजकल तमाम लीडर अपने अंगरक्षकों के बिना बाहर नहीं निकलते। ये अंगरक्षक एक से एक खूंखार लोग होते हैं। ये हर समय हथियारों से लैस रहते हैं। कमर में अड़े हुए इंग्लिश या जर्मन पिस्तौल के अलावा गाड़ी की सीटों में छिपाकर स्टेनगन और टॉमी गन रखते हैं। वक्त पड़ जाए तो वे सौ-पचास आदमियों से भी निपट सकते हैं। कई बार भारद्वाज उससे कह चुका है, "मंगरू और राधे को अपने साथ रख लो।"

वह हंस देता है, "मुझे कौन मारेगा?"

"इस भरम में मत रहो।"

"मगर मेरी तो किसी से दुश्मनी नहीं है।"

"दुश्मनी से कोई थोड़े ही मारता है। यहां तो यह देखा जाता है कि तुम किस पार्टी के आदमी हो। अगर समझ में आता है कि तुम अमुक आदमी के महत्वपूर्ण आदमी हो, बस तुम पर हमला हो जाएगा और तुम तो ऐसे गाय हो कि एक पिस्तौल भी अपने पास नहीं रखते।"

सचमुच वह पिस्तौल नहीं रखता। अगर रख भी ले तो उसके लिए मुमकिन नहीं है कि वह अचानक किसी आदमी पर फायर कर दे। जान लेने की कल्पना से ही वह सिहर उठता है। उसके आस-पास जो कुछ हो रहा है उससे वह घोर आश्चर्य में है कि ऐसा क्यों कर होता है? एक आदमी भरे बाजार में, या अपने घर के आसपास या रात-बिरात कहीं से आते-जाते अचानक गोलियों से भून दिया जाता है। बाकी लोग डरे हुए भेड़ों की तरह जिस तरफ रास्ता मिलता है अंधाधुंध भागते हैं। कोई अगर उनसे पूछे कि क्या हुआ तो बस इतना बोलते हैं—

गोली चल गई..

किसने किसको मारा, किस तरह यह घटना घटी, कहां गोली चली, कौन मरा, मारने वाले कौन थे? इन सारे सवालों का जवाब कभी नहीं मिलता। खुद पुलिस पूछ-पूछकर हार जाती है, मगर लोग यही कहते हैं कि उन्होंने देखा ही नहीं है कुछ। बस गोलियों की आवाज सुनी और भाग खड़े हुए।

अगर दुर्भाग्य से कोई ऐसा आदमी पुलिस के हाथ लग जाता है जो चश्मदीद गवाह होता है और पुलिस की तरफ से गवाही देने पर तैयार हो जाता है तो उसकी जान की खैर नहीं। अगर वह कोलफील्ड छोड़कर बाहर भी भाग जाए जैसे गया, नवादा, छपरा, बलिया

या यू.पी. के किसी क्षेत्र में तो वहां भी पहुंचकर उसे खत्म कर दिया जाता है। जिस आदमी का पहले खून हुआ होता है वह उतना बड़ा दुश्मन नहीं होता जितना बड़ा दुश्मन गवाही देने वाला होता है। धीरे-धीरे यह बात लोगों की समझ में इस तरह आ गई है कि लाख सर पटकने के बाद भी पुलिस को ऐसे मामलों में गवाही नहीं मिलती।

पुलिस इंस्पेक्टर वागले जो महाराष्ट्र में है यह स्वीकार करता है कि कोलफील्ड के लोग कत्ल करने का आर्ट जानते हैं। कत्ल करने को आर्ट की संज्ञा उसने यूं ही नहीं दी है। उसका कहना है कि हर जगह कत्ल करने के बाद कातिल कोई न कोई सुराग छोड़ जाता है जिससे कानून के लंबे हाथ मुजरिम तक पहुंच ही जाते हैं, मगर कोलफील्ड एक ऐसी जगह है जहां पुलिस झक मारती रहती है और खूनी दरिंदे आसानी से घूमते हैं।

खुद उस पर खून का इल्जाम है। पिछले चार सालों से मुकदमा चल रहा है। हालांकि उसने खून नहीं किया है, मगर परिस्थितियां ऐसी पैदा हो गई थीं कि उसे दूसरे अठारह आदमियों के साथ धर लिया गया।

हुआ यूं कि धर्मा कोलियरी में जब दलित मजदूर संघ ने जोर पकड़ना शुरू किया तो वहां की मान्यता-प्राप्त यूनियन के लोग मरने-मारने पर उतारू हो गए। तनाव बढ़ते बढ़ते इतना बढ़ा कि एक दिन तो दोनों यूनियन के लोग आमने-सामने हो गए। उस समय तक मारपीट लाठी-डंडे या ज्यादा से ज्यादा भाले-गंडासे से होती थी। उस दिन भी दोनों पार्टी के लोग लाठी-डंडे से लैस एक-दूसरे को ललकार रहे थे। गालियां बककर एक-दूसरे को भड़का रहे थे और अब मारपीट हो ही जाती कि अचानक एक जीप आई। उसमें से चार आदमी उतरे और तड़ातड़ गोलियां चलानी शुरू कर दीं। विरोधी गुट के तीन आदमी गिरे। बाकी सब भाग खड़े हुए। चारों तरफ से घेरा बनाकर खड़ी, इस झगड़े का मजा लेती भीड़ सर पर पांव रखकर भागी। देखते ही देखते सारा मैदान इस तरह खाली हो गया मानो कर्फ्यू लग गया हो। चारों आदमी फुर्ती से जीप पर सवार हुए और हवा हो गए।

वे तीन आदमी जो गिरे थे उनमें से दो घटनास्थल पर ही मर गए। पुलिस आई, गिरफ्तारी शुरू हुई। चूंकि तीनों आदमी दूसरी यूनियन के आदमी थे, इसलिए गिरफ्तारी दलित मजदूर संघ के लोगों की ही हुई। कुल अठारह आदमी गिरफ्तार हुए। उनमें सहदेव भी था।

वादी की तरफ से सात गवाहों ने गवाही के लिए अपना नाम दिया था। दो साल के अंदर ही अंदर दो आदमियों को खत्म कर दिया गया। तीन आदमी गवाही से फिर गए। दो भागकर कहां चले गए, किसी को पता नहीं। दो गवाह जो मारे गए उनमें से एक को तो खुलेआम, दिन दहाड़े झरिया बाजार में गोली मार दी गई।

दिन के दस बज रहे थे। वह आदमी अभी-अभी रिक्शे से उतरा था। उसे धनबाद कोर्ट जाना था। अगर वह रिक्शे से उतरकर फौरन बस में बैठ जाता तो शायद बच जाता,

मगर उसकी तो शामत आई थी कि वह एक गुमटी से पान लेने लगा। उसी समय मोड़ पर एक गाड़ी रुकी। उसमें से एक लंबे कद का आदमी उतरा। उसने भागलपुरी सिल्क की चादर ओढ़ रखी थी। वह तेजी से बस-स्टैंड की ओर बढ़ा और उस आदमी के पीछे आकर खड़ा हो गया। जैसे ही वह आदमी पान लेकर पलटा, उस लंबे आदमी ने चादर सरकाई और पिस्तौल निकालकर चार गोलियां उसकी छाती में उतार दीं—भगदड़ मची—धड़ाधड़ दुकानों के शटर गिरने लगे। वह आदमी तेजी से चलकर अपनी गाड़ी पर सवार हुआ और गाड़ी दन से निकल गई।

उसी शाम को दोबारा वह लंबा आदमी बस स्टैंड पर आया और एक बस एजेंट को बुलाकर किनारे ले गया।

"मुझे पहचानते हो?"

वह एजेंट उसे पहचानता था। उसने खुद अपनी आंखों से सारा दृश्य देखा था। वह सहम गया। उसकी घिग्घी बंध गई।

"नहीं, साहब !"

"ठीक से देखो ।"

"नहीं साहब, मैं आपको बिलकुल नहीं पहचानता।"

वह आदमी हंसा, "ठीक है और पहचानना भी नहीं। दूसरे एजेंट और दुकानदारों से भी कह देना कि वे मुझे न पहचानें, वरना अंजाम...तुमने सुबह को देखा था न?"

"हां, साहब!"

"ठीक है जाओ।"

उसे देखकर कोई आवारा कुत्ता भूंकता है तो वह ठिठककर खड़ा हो जाता है...किस पर भूंका कुत्ते ने—? उस पर या किसी और पर—?? क्या रात के इस वीराने में कुछ और आदमी हैं—? घात लगाए हुए...।

बहुतों को यह बात मालूम होगी कि वह मीटिंग में गया है और देर रात को लौटेगा। घर को आग तो ज्यादातर घर के चिराग से ही लगती है। कौन अपना है, कौन दुश्मन है, कोई पहचान कहां है? विश्वस्त और भरोसेमंद आदमियों को तोड़ने के लिए लंबी-लंबी रकम खर्च की जाती है, पचास हजार, पचहतर हजार। अमुक आदमी की सारी योजनाओं और कार्यक्रमों की खबर दो—वह कहां जाता है और कब घर पर रहता है, कब अकेला रहता है। इन्हीं खबरों के आधार पर कत्ल की योजना बनती है। हो सकता है, आज किसी दुश्मन ने खबर पहुंचाई हो कि वह मीटिंग में गया है और देर रात को लौटेगा। हो सकता है, कहीं कोई गाड़ी छिपाकर रखी हो। हो सकता है, किसी दुकान के अंधेरे ओटे से चार-पांच आदमी निकलकर उसे गोलियों से भून दें। किसी का विश्वास नहीं। आज का युग, गीदड़ की तरह होशियार रहने का है। हर दस कदम पर पीछे पलटकर देख लेना चाहिए... क्या

पता...

वह सालों से दलित मजदूर संघ में काम कर रहा है, उसका एक महत्वपूर्ण आदमी है। भारद्वाज ने उसे कोलियरी से उठाकर पार्टी आफिस में बैठा दिया है। सारे केस वह खुद देखता है। इस मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं करता। सारे मजदूरों की फरियाद सुनता है। हर दो-चार दिन पर आवश्यक कानूनी परामर्श के लिए उसे बंगले पर बुलाया जाता है। भारद्वाज उसकी बहुत इज्जत भी करता है। अपने भाई से भी ज्यादा भरोसा मगर फिर भी बंगले के अंदर जाने से पहले उसकी तलाशी ली जाती है। आज भी गेट पर रोककर भरतसिंह ने उसके कुर्त्ते की जेबों को छुआ था। कमर टटोलकर देखी थी। दोनों हाथ उठाकर कांखों में हाथ डाला था तब उसे अंदर जाने दिया।

भरत सिंह हमेशा उसके अंदर गरज पड़ने वाले गुस्से की आवाज सुन लेता है, "क्या करें, रमानी साहब? यह हुक्म है। फिर आदमी को बदलने में देर लगती है?"

वह जवाब नहीं देता है और अंदर चला जाता है।

भरत सिंह को कोई नया आदमी, या ऐसा आदमी जो उसे नहीं जानता हो, देख ले तो चौंके बिना नहीं रह सकता। बेहद गठे हुए बदन का गैंडे की तरह मजबूत आदमी है। जो चीज देखने वाले का ध्यान सबसे पहले खींचती है, वह उसकी गर्दन है। किस्सा यह है कि उसकी गर्दन है ही नहीं। ऐसा लगता है मानो एक बड़ा-सा सर उसके दोनों कंधों के बीच रख दिया गया हो। दूसरी हैरत में डालने वाली चीज उसकी आंखें हैं। उसकी आंखें हमेशा, हर समय दाएं-बाएं नाचती रहती हैं। घड़ी के पेन्डुलम की तरह कभी दाएं, कभी बाएं। वह किसी जंगली जानवर की तरह हमेशा चौकन्ना रहता है और सच कहा जाए तो जंगली जानवरों वाली सारी विशेषताएं उसमें मौजूद है। उसने कितने खून किए हैं खुद उसी को मालूम नहीं। जुबान से ज्यादा उसका हाथ चलता है और हाथ से ज्यादा घोड़ा दबाने वाली उंगली।

उसकी उंगली का कमाल यह है कि उसका निशाना कभी नहीं चूकता। वह किसी उड़ते परिंदे पर दौड़ते हुए, दोनों हाथ से समान रूप से निशाना साध सकता है। भारद्वाज उसे बहुत खास-खास मौकों पर इस्तेमाल करता है वरना वह आजाद है चाहे जहां रहे। ऐसा इसलिए है कि उसके नाम के दर्जनों वारंट निकल गए हैं। जब भारद्वाज को जरूरत पड़ती है तो वह सीधे सहदेव को टेलीफोन करता है कि भरत सिंह को खबर कर दे कि वह किसी समय आज मुझसे मिल ले।

एक भरत सिंह पर ही यह माफिया सरदारी नहीं चल रही है। उस जैसे दर्जनों और सैकड़ों हैं जो प्रत्यक्ष रूप से ठेके चलाते हैं, मगर वास्तव में वे भारद्धाज के आदमी हैं। जरूरत पड़ने पर वह किसी को भी या एक साथ तमाम लोगों को इस्तेमाल कर सकता है। पहले पहल इसी उद्देश्य से उसने सहदेव की भी मदद की थी, मगर उसकी प्रवृत्ति देखकर

उसे यूनियन आफिस में लगा दिया।

ऐसा समझना गलत होगा कि बस एक भारद्वाज ही माफिया सरदार है। नहीं, बल्कि और आधा दर्जन माफिया किंग हैं। इन गॉड फादरों ने सारे कोलफील्ड को कई क्षेत्रों में बांट लिया है। यह इलाका भारद्वाज का, यह चंद्रजीत का, यह नारायण यादव का। ये इलाके असल में उनकी रियासतें हैं जिनके विस्तार और फैलाव के लिए ये अक्सर एक-दूसरे से लड़ते रहते हैं। साजिशें करते हैं, एडमिनिस्ट्रेशन को उनके काले कारनामों की मुखबरी करते हैं। एक-दूसरे के खास आदमियों को फोड़ने की कोशिश करते हैं और जब इसमें सफल नहीं होते तो फिर भंयकर खेल शुरू हो जाता है। मौत का खेल...।

"उसने हमारे दो आदमी मारे हैं। इसके बदले में तीन आदमियों को खत्म कर दो।"

"पांडे जी को गोली मार दी गई है।"

"ठीक है, हिदायत मियां को गायब कर दो।"

शतरंज की बिसात बिछी है। और सब एक-दूसरे के मोहरे मार रहे हैं। एक दिलचस्प बात यह कि मरने वालों में ज्यादातर मजदूर होते हैं। गुंडे तो हमेशा होशियार और हथियारों से लैस रहते हैं।

"कौन है बे?"

वह किसी की आवाज सुनकर सर से पांव तक कांप जाता है। वह कमजोर दिल का आदमी नहीं है, मगर रात के इस रहस्यमयी सन्नाटे में कहीं भी मौत उसका इंतजार करती मिल सकती है। इतनी देर से यही सब कुछ तो वह सोचता भी आ रहा है। तो क्या आज वह कातिल लम्हा आ गया है? कोई शोला उगलती पिस्तौल, कोई कलेजे को फाड़ती हुई शीशे की गोली—कोई दिल दहलाने वाली चीख...।

वह कई लम्हे तक चुपचाप खड़ा रहा मानो किसी अनहोनी का इंतजार कर रहा हो। इन चंद लम्हों ने उसके दिमाग की रगों का सारा लहू निचोड़ लिया था। इस सर्द रात में, ठंडी और कंपकंपा देने वाली हवा में भी उसे पसीना निकल आया। जब चंद लम्हों तक कोई बाहर नहीं आया तो उसने डरते-डरते उधर देखा जिधर से आवाज आई थी। वह एक बंद दुकान का ओटा था और लगभग अंधेरे में वहां एक साया खड़ा था।

सहदेव को अफसोस हुआ कि उसके पास कुछ नहीं था। कम से कम एक सिक्स राउंडर तो जरूर उसके पास होना चाहिए था। अगर पिस्तौल उसके पास होता तो वह सीना तानकर उसके सामने खड़ा हो जाता, मगर...

साया चंद कदम चलकर रोशनी में आया। वह कोई पियक्कड़ था। उसके हाथ में बोतल थी और वह लड़खड़ा कर चल रहा था। सहदेव ने इत्मीनान की सांस ली। फिर भी वह भयभीत था। साया उसके नजदीक आ गया।

"साला लोग इतना पानी मिला देता है कि नशा ही नहीं होता। देखो, पीकर देखो

...।" वह बोतल आगे बढ़ाता है, "साला एकदम पानी...साला फोकट का पैसा लेता है।"

सहदेव चलने लगता है। पियक्कड़ लड़खड़ा कर चंद कदम उसके साथ चलता है।

"ऐ! नहीं पिएगा? जाओ साला मां की..."

गाली खाकर भी वह नहीं रुकता। तेज तेज चलने लगता है—रात बहुत हो गई है ...उसे जल्दी घर पहुंच जाना चाहिए। प्रतीबाला अभी तक जाग रही होगी। यह उसकी आदत है। बल्कि ज्यादातर औरतों की यहां इस कोलफील्ड में यही आदत है। शायद इसलिए कि बाहर की दुनिया एक जंगल है। खूंखार दरिंदों से भरा हुआ। इसलिए कोई अनजाना डर, कोई बेनाम खौफ हमेशा उनके दिल में बना रहता है।

अभी वह घर से कोई सौ कदम ही रह गया था कि अचानक एक कार की हैडलाइट्स नजर आईं। बिजली की तरह एक विचार उसके दिमाग में कौंधा कि हेडलाइट की तेज रोशनी में वह पहचान लिया जाएगा। पता नहीं, कौन लोग हैं? दुश्मन भी हो सकते हैं। वह तेजी से सड़क के किनारे ढलान पर पेशाब करने के बहाने बैठ गया।

गाड़ी आहिस्ता-आहिस्ता कम रफ्तार से चली आ रही थी मानो किसी को तलाश रही हो। वह चुपचाप बैठा रहा। गाड़ी उसके पास से गुजरती चली गई।

जब गाड़ी काफी दूर चली गई तो वह झपटकर उठा और तेज कदमों से चलकर अपने कंपाउंड में दाखिल हो गया।

प्रतीबाला जाग रही थी। शायद वह इंतजार करते-करते उकता गई थी, इसलिए दरवाजा खोलते हुए बोली, "आज बहुत रात कर दी?"

वह कुछ और भी बोलती, मगर सहदेव का डरा हुआ चेहरा देखकर एकदम से रुक गई।

"क्या बात है?"

"कुछ नहीं ! तुमने खाना खा लिया?"

"नहीं तो।"

"तो जाओ खा लो, मुझे भूख नहीं है।"

प्रतीबाला के फालतू सवालों के जवाब के लिए वह उसके पास रुका नहीं। चुपचाप अपने शयनकक्ष में चला गया। पलंग के सिरहाने छोटी अल्मारी से ब्रांडी की बोतल उठा ली और बोतल ही से मुंह लगाकर तरल आग अपने शरीर के अंदर उंड़ेलने लगा।

उसका सारा शरीर अंदर-बाहर एक अजीबोगरीब ठंड से अकड़ गया था।

मिसेज सुनालनी घोष ने धीरे-धीरे अपने डर पर काबू पाया और दो कदम पीछे हटकर इंस्पेक्टर को अंदर आने के लिए रास्ता छोड़ दिया। इंस्पेक्टर ने कमरे में आकर चारों तरफ

एक उड़ती हुई नजर डाली। सारी चीजें सुसज्जित ढंग से रखी थीं मानो उन्हें कोई छेड़ने वाला न हो। उसने एक बात और तीव्रता से महसूस की कि कमरे में कोई ऐसी चीज नहीं थी जो मर्दों के इस्तेमाल की हो। एक अकेली वीरान जिंदगी का सारा सूनापन कमरे में बिखरा पड़ा था।

"आप यहां अकेली रहती हैं?"

''जी...जी हां।"

"आप शायद किसी स्कूल में टीचर हैं?"

"जी हां, यहीं कोलियरी के प्राइमरी स्कूल में कोई ग्यारह साल से पढ़ाती रही हूं, जब से मेरे पति का स्वर्गवास हुआ।"

उसने रुककर इंस्पेक्टर के चिंतित लेकिन ठंडे चेहरे को देखा।

"क्या आप उसी सिलसिले में आए हैं?"

इंस्पेक्टर ने एकदम चौंककर उसे देखा।

"किस सिलसिले में?"

"मेरे पति की मौत के सिलसिले में, उनकी मौत नैचुरल नहीं थी। उनका मर्डर हुआ था।"

"अच्छा !"

इंस्पेक्टर ने दिलचस्पी से उसकी तरफ देखा।

"जी हां, कुछ अज्ञात आदमियों ने उनकी हत्या कर दी थी। दिलचस्प बात यह है कि कोलफील्ड में जब कहीं कत्ल की वारदात होती है तो कत्ल का इल्जाम उन्हीं पर जाता है। आखिर ये अज्ञात लोग कौन हैं? क्या उन्हें कोई नहीं जानता?"

इंस्पेक्टर मुस्कुराया, "सब जानते हैं। हमें भी किसी हद तक अंदाजा होता है कि कत्ल किसने किया है, मगर हम लोगों के साथ सबसे बड़ी मुश्किल यह होती है कि हमारा काम सिर्फ मुजरिमों को पकड़ना नहीं होता। हमें अदालत में भी यह साबित करना पड़ता है मुजरिम वास्तव में खूनी है और यही वह जगह होती है जहां सारे किए-धरे पर पानी पड़ जाता है। हत्यारों के डर से कोई चश्मदीद गवाह नहीं मिलता, हालांकि देखा बहुतों ने होता है।"

"जी हां, मेरे पति के हत्यारों को भी बहुतों ने देखा था। उस वक्त शाम के सिर्फ छह बजे थे। चौक में चाय की दुकान पर बीसियों आदमी मौजूद थे। खुद मेरे क्वार्टर के आसपास कितने ही आदमी घूम रहे थे, मगर बाद में जब पुलिस आई तो कोई नहीं मिला। इतनी बड़ी आबादी में एक आदमी भी ऐसा नहीं था जो कह सकता था कि मैंने कुछ देखा है।"

इंस्पेक्टर हंसा, "यही होता है। हम एक-एक केस पर सर खपाते हैं। जगह-जगह से

सबूत ढूंढते हैं। गवाहियां तलाश करते हैं, मगर होता क्या है? कुछ भी नहीं। अब इसी को देखिए न कि मैं एक केस के सिलसिले में आपसे कुछ मालूमात हासिल करना चाहता हूं। आप ठीक-ठीक कुछ बताएंगी? मुझे तो उम्मीद नहीं है।"

इंस्पेक्टर बड़ा काइयां है। उसको उसी की बातों से घेर रहा है। सुनालनी घबराई।

"वह क्या है, पूछिए"

इंस्पेक्टर ने रुक कर गला साफ किया। उसे गहरी नजरों से देखा। फिर बड़ी नरमी से बोला, "मैं आपको एक तकलीफ देना चाहता हूं। कल एरिया टू में एक कत्ल हो गया है। अनुमान है कि यह कत्ल भरत सिंह ने किया है। आप भरत सिंह को जानती हैं?"

"नाम तो जरूर सुना है। इस इलाके का तो मशहूर आदमी है। वैसे देखा नहीं है।"

"वह किसी ट्रेड यूनियन का गुंडा है जिसे यहां की भाषा में पहलवान कहा जाता है। आप तो जानती हैं कि इस तरह के केस कोलफील्ड में आम हैं। आज इस लीडर का पहलवान मारा गया है, कल उसका। कोयले की इस काली दुनिया का यह खेल है। ताकत का खेल ...पावर का खेल...।"

"मैं तो कहती हूं यह माफिया गिरोह का खेल है। आश्चर्य है, इतना बड़ा सरकारी तंत्र एक माफिया गिरोह को खत्म नहीं कर सकता।"

इंस्पेक्टर कुटिलता से हंसा, "माफ कीजिएगा, नए होने के बावजूद मैं जानता हूं कि माफिया गिरोह एक नहीं है। अनेको माफिया गिरोह हैं और अनेको पहलवान। अब इसी भरत सिंह को लीजिए। उस पर दर्जनों खून के इल्जाम हैं। पिछले पांच वर्षों से उसने कोलफील्ड में आतंक फैला रखा है। धामपुर कोलियरी में उसने एक साथ तीन आदमियों को गोली माार दी थी।"

"खैर, इस सिलसिले में मैं आपकी क्या मदद कर सकती हूं?"

"किस्सा यूं हैं," इंस्पेक्टर ने अपने स्वर को रहस्यपूर्ण बनाते हुए कहा, "भरत सिंह के कमरे में जो कागजात मिले हैं उसमें आपका भी नाम है।"

"मेरा नाम?"

वह चकित रह गई। उसकी जिंदगी में कहीं दूर-दूर तक कोई नहीं था। वैधव्य का सारा रास्ता उसने अकेले तय किया था।

"मैं आपको यकीन दिलाती हूं कि मैंने आज तक उसे देखा भी नहीं है।"

इंस्पेक्टर ने उसे गहरी नजरों से देखा।

"भरत सिंह का शायद दूर या नजदीक का कोई रिश्तेदार या कोई ऐसा आदमी जिसने कभी आपसे कर्ज लिया हो..."

"हमारी रिश्तेदारी बंगालियों के अलावा किससे हो सकती है। रह गई कर्ज की बात तो मैं किसी से लेन-देन नहीं करती।"

इंस्पेक्टर कुछ देर खामोश रहा, फिर बोला, "देखिए मिसेज घोष, कानून की मदद करना आपका फर्ज है। आप हमारी मदद करेंगी तो हत्यारे को पकड़ना आसान हो जाएगा। आप एक बार फिर सोचकर देखिए, क्योंकि जिस कागज में आपका नाम और पता लिखा हुआ मिला है उसी में सौ रुपए का एक नोट भी लिपटा हुआ था।"

"मैं आपसे सच कह रही हूं, इंस्पेक्टर! मैं उसे बिलकुल नहीं जानती। अगर मुझे कुछ भी मालूम होता तो मैं बताती।"

"खैर," इंस्पेक्टर ने कहा, "मेरा ख्याल है, उसे अगर आप देख लें तो जरूर पहचान जाएंगी।"

यह कहकर उसने अपना बैग खोला और तस्वीर निकाल कर उसके सामने डाल दी।

"गौर से देखिए, शायद आपको याद आ जाए। मैं तब तक चाय पी लूं।"

उसने तिपाई पर पड़ी चाय की प्याली को देखकर कहा जिसे जमना न जाने कब लाकर रख गई थी।

उसने तस्वीर को देखा और एकदम से सिहर उठी। यह एक गर्दन-विहीन आदमी की तस्वीर थी।

यह तो...यह तो...उसके अंदर कोई चीखा।

"नहीं," एक बार फिर सुनालनी ने अपने आप पर काबू पाने की कोशिश की, "मैं इसे नहीं जानती।"

इंस्पेक्टर का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा, "देखिए मिसेज घोष, पुलिस को ऐसे सारे हथकंडे मालूम हैं जिससे वह सच उगलवा ले, मगर मैं आपको परेशान करना नहीं चाहता। मैं आपको थोड़ा और वक्त देता हूं। ठीक से सोच लें।"

उसके हाथों में उसी लड़के संतलाल की तस्वीर पड़ी है, पर अब वह एक पूरे मर्द में बदल चुका है। उसकी बड़ी-बड़ी आंखें, गोल चेहरा और बिना गर्दन का सर। उसके अंदर के वीराने में तूफान चलने लगा है। आंधियां-सी चलने लगी हैं...सब कुछ टूट-फूट कर बिखरने लगा है। उसने हैरत से महसूस किया जैसे पैरों के नीचे जमीन धीरे-धीरे कांपने लगी है।

वह स्कूल से लौटी है। उसके क्वार्टर के बरामदे में एक लड़का बेखबर सो रहा है। नंगे फर्श पर। वह उसे जगाती है। नहीं जागता। हाथ लगाती है तो एक तरफ लुढ़क जाता है। बुखार की तीव्रता से बेहोश हो चुका है। वह नौकरानी जमना को आवाज देती है। एक राहगीर और नौकरानी की मदद से उसे अंदर ले आती है। डाक्टर बुलवाती है। दवा ...इंजेक्शन...लड़का वैसे ही बेसुध पड़ा है। डाक्टर भी चिंतित है। अगर यह बेहोशी हाई टेम्प्रेचर की वजह से है तो कोई बात नहीं, लेकिन अगर कोई न्यूरोलॉजिकल गड़बड़ हुई तो फिर मुश्किल होगी।

बाहर रात की चुप्पी फैली है। कहीं कोई आवाज नहीं। कुत्ते भी नहीं भूंकते। हवा भी शांत है। पेड़ों की शाखाओं ने भी चुप्पी साध रखी है। वह कुर्सी उसके बिस्तर के पास खींच कर बैठी है। एकदम चुप, मूर्ति की तरह...समय धीरे धीरे बीत रहा है...लड़के की अधखुली आंख को देखकर डर लगता है। होंठ सूख गए हैं और तेज बुखार से सांवला चेहरा लाल हो गया है। अचानक वह चेहरा छोटा होने लगता है, बिल्कुल नवजात शिशु की तरह छोटा और लाल—उसके अपने बच्चे की तरह जो सिर्फ दो दिन जीकर मर गया था।

सुबह लड़के का बुखार उतर जाता है। खुद को दूसरे के घर में देखकर उसे हैरत होती है। फिर उसका हाथ पकड़कर रोने लगता है। वह प्यार से उसकी पीठ पर हाथ फेरती है तो लड़का तड़प उठता है और जब वह उसकी कमीज सरकाकर देखती है तो चकित रह जाती है। सारी पीठ फटी हुई है। लाठी की मार के निशान साफ दिखाई दे रहे हैं। लंबी-लंबी धारियां, सूजन और खून के काले धब्बे। वह एकदम चौंक उठती है।

"तुमको किसने मारा है?"

लड़का जवाब नहीं देता, सिर्फ रोता है। उसके बार-बार पूछने पर भी कुछ नहीं बताता। रोकर चुप होता है तो बड़ी देर तक उसे एहसानमंद नजरों से देखता रहता है।

एक सप्ताह बाद वह बिलकुल ठीक हो जाता है लेकिन बहुत कमजोर लगता है जैसे महीनों बीमार रहकर उठा हो। वह उससे जानना चाहती है कि वह कौन है? कहां का रहने वाला है? उसके मां-बाप, भाई-बहन हैं कि नहीं? मगर वह किसी भी बात का जवाब नहीं देता। सिर्फ चुप रहता है। सोचता रहता है। ज्यादा कुरेदने पर झल्लाने लगता है।

वह और उसकी नौकरानी जमना, बस यही दो लोग उस क्वार्टर में हैं। जब से लड़का आया है, नौकरानी उसी के कमरे में सोती है और लड़का जमना के कमरे में हैं। सुनालनी सारा दिन स्कूल में रहती है। जमुना सारा दिन घर की देखभाल में लगी रहती है और लड़का दिन भर उस कमरे में टहलता रहता है। बाहर नहीं निकलता। शायद उसके दिल में कोई डर बैठ गया है।

एक दिन स्कूल से लौटती है तो देखती है कि जमना बहुत बुरी तरह घबराई हुई है। उसे अकेला पाकर फुसफुसा कर बताती है।

"दीदी मुनी, संतलाल जो है न उसके पास पिस्तौल है।"

सुनालनी को हैरत होती है। डर भी लगता है, इसलिए रात को सोने से पहले उसे बुलवाती है।

"तुम एक बात सच-सच बताओगे?"

वह चुप रहता है।

"तुम्हारे पास पिस्तौल है?"

वह चौंक कर सुनालनी को देखता है। फिर सिर झुका लेता है। सुनालनी को क्रोध आ जाता है।

"तुम कौन हो? क्या हो? यह पिस्तौल तुम्हारे पास कहां से आया है? तुम आज सब कुछ ठीक-ठाक बताओ वरना मैं पुलिस को खबर करती हूं।"

वह सर उठाकर बहुत मासूमियत से उसे देखता है। बहुत देर तक चुप रहता है। फिर रुक-रुककर उस आग को उगल देता है जो उसका सब कुछ जलाए डाल रही है।

संतलाल यहां से कोई बत्तीस मील दूर धामपुर कोलियरी में अपनी मां और बहन के साथ रहता था। बाप मर चुका था। मां कोलियरी में नौकरी करती थी। बहन जवान और भरे बदन की वजह से काफी आकर्षक लगती है। और तो कोई कुछ नहीं कर सकता था, मगर दो पहलवान थे जो अकसर रात को उसके क्वार्टर में आ धमकते। उसे और उसकी मां को बाहर बरामदे में निकालकर खुद कोठरी में घुस जाते। उन्होंने उसकी मां को धमका रखा था कि अगर जरा भी चू-चपड़ की तो वे संता को जान से मार देंगे। मां उनसे बहुत डरती थी। उनको देखकर ही उसका दम निकलने लगता था। जब वे कोठरी में होते तो मां संता को तन से चिपटाए रहती। उसका बदन थर-थर कांपता रहता। अंदर से गालियों की आवाज आती और उसकी बहन की सिसकियों की और कभी-कभी रोने की...

जब वे चले जाते तो घर में सन्नाटा छा जाता। अंदर दीदी मुर्दे की तरह पड़ी रहती। दो-तीन शराब की बोतलें फर्श पर लुढ़की रहतीं। मां चुपचाप मुर्दे की तरह अपने बिस्तर पर पड़ी रहती। उस रात कोई नहीं सोता, न वह, न उसकी मां और न ही उसकी बहन।

यह सिलसिला बहुत दिनों तक चलता रहा। सब लोग जानते थे। आसपास के क्वार्टरों के सारे लोगों को मालूम था, मगर किसी में हिम्मत नहीं थी। वे पहलवान थे, गुंडे थे। किसकी शामत आई थी जो कुछ बोलता? उनका तो रोज का यही धंधा था। किसी को जान से मार देना तो उनके बाएं हाथ का खेल था। सब देखकर भी अनदेखा कर देते। मां इस दुख में घुट-घुटकर मर गई। मां के मरने के बाद तो उनकी और बन आई। अब वे जब दिल चाहता बेधड़क चले जाते। संतलाल को खींचकर बरामदे में धकेल देते। अब संतलाल अकेले होता और अंदर ही अंदर खौलता रहता...सुलगता रहता।

आखिर एक रात वह कोठरी में घुसा और नशे में धुत एक पहलवान की पिस्तौल निकालकर छिपा दी। पहलवानों का नशा कम हुआ और पिस्तौल को गायब पाया तो बौखला गए। पहले तो उसकी बहन को बुरी तरह पीटा, फिर उसे घसीट कर कोठरी के अंदर ले गए। थप्पड़ों से मारना शुरू किया और एक छोटे डंडे से धुनकर रख दिया। उस वक्त तक मारते रहे जब तक कि वह गिर नहीं गया। फिर उसकी बहन को गाली देते और पिस्तौल ढूंढकर रखने को कहकर चले गए।

उसी सुबह वह पिस्तौल लेकर भाग निकला। दो दिन तक जहां-तहां भटकता रहा

और अंत में जब बुखार, भूख और चोट की पीड़ा से बेहाल हो गया तो उसके बरामदे में आकर लेट गया।

सुनालनी सोचती रही कि यह किस दौर की कहानी है! क्या यह इस बीसवीं सदी की घटना है जब आदमी चांद पर उतर गया है! वह सारी सभ्यता, वह सारा कानून, वह सारी इंसानियत...! क्या आज भी हम वही गुफाओं में रहने वाले वहशी हैं? या शायद उनसे भी बदतर...। बहुत देर बाद सुनालनी ने उससे कहा, "तुम यह पिस्तौल फेंक दो और घर लौट जाओ या फिर इस अत्याचार के खिलाफ पुलिस में खबर करो।"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। चुपचाप उठकर अपने कमरे में चला गया। दूसरे दिन वह स्कूल से लौटी तो मालूम हुआ कि संतलाल कहीं चला गया है। घर की सारी चीजें ज्यों की त्यों थीं लेकिन उसकी तनख्वाह में से जो उसने कल ही लाकर रखी थी, एक सौ रुपया गायब था।

"मेरे ख्याल से अब तक आपको याद आ गया होगा?" इंस्पेक्टर ने चाय खत्म करके प्याली रखते हुए पूछा।

सुनालनी चौंकी। थोड़ी देर तक सोचा। फिर बड़े विश्वास के साथ कहा, "नहीं, मैं इस आदमी को नहीं जानती।"

इंस्पेक्टर ने सीधे-सीधे पूछा, "भरत सिंह कहां है?"

"कौन भरत सिंह?"

"आप नहीं जानते?"

इंस्पेक्टर ने उसके जवाब का इंतजार नहीं किया। बैग से एक फोटो निकाल कर उसके सामने टेबुल पर डाल दी। यह एक गर्दन-विहीन आदमी की तस्वीर थी। सहदेव को पहचानते देर नहीं लगी। उसने नजर उठाकर इंस्पेक्टर को देखा।

"सब कुछ खड़े-खड़े ही पूछ लेंगे या बैठेंगे भी?"

इंस्पेक्टर कुर्सी खींचकर बैठ गया।

"आखिर बात क्या है? भरत सिंह को क्यों खोजा जा रहा है?"

"आपको मालूम नहीं कि कल एरिया टू में एक मर्डर हुआ है।"

"वह तो मुझे मालूम है। कल के अखबार में भी था।"

"इसी सिलसिले में भरत सिंह की तलाश है?"

"तो क्या यह खून उसी ने किया है?"

"उसके अलावा और किसमें हिम्मत है दिन-दहाड़े किसी पर हाथ डालने की?"

सहदेव बहुत जोर से हंसा, "तब आपको पता नहीं है कि इस लंका में हर आदमी

बावन हाथ का है। वैसे बेचारे ऊंट की गर्दन तो लंबी है ही, मगर सवाल यह है कि एफ. आई.आर. में क्या लिखेंगे? कोई सबूत या कम से कम किसी पर इल्जाम लगाने से पहले किसी न किसी की गवाही तो होनी ही चाहिए।"

"वारदात से दो घंटा पहले उसे भारतडेहिया कोलियरी में देखा गया था। सिर्फ आधे घंटे पहले उसे मृतक से बातचीत करते भी देखा गया था। क्या यह सब काफी नहीं है?"

सहदेव ने संता बावरी को आवाज दी जो आफिस से बाहर एक बड़े-से पत्थर पर बैठा था।

"चाय भेजो और एक पैकेट सिगरेट भी ले लेना।"

फिर वह इंस्पेक्टर से बोला, "कौन-सा ब्रांड?"

"देखिए, औपचारिकता की जरूरत नहीं।"

''फिर भी आप हमारे आफिस में आए हैं तो कुछ न कुछ खातिर तो करनी ही होगी।"

"देखिए, मेरी खातिर तो यही होगी कि इस केस के सिलसिले में आप मेरी मदद करें। मैंने सुना है कि वह दलित मजदूर संघ के लिए ही काम करता है।"

"भाई, यह सब तो पार्टी को बदनाम करने के लिए उड़ाया जाता है। हमारी पार्टी मजदूरों की पार्टी है। इसमें ऐसे गुंडों का क्या काम?"

"सब ऐसे ही कहते हैं, मगर इस कोलफील्ड में कौन साधू है और कौन शैतान, कुछ पता ही नहीं चलता।"

सहदेव बहुत जोर से हंसा, "आप शायद नए-नए हैं।"

"इतना नया भी नहीं हूं।"

"भाई, जो लोग बहुत पुराने हो गए हैं उनको भी आज तक पता नहीं चलता कि यहां क्या हो रहा है। आप खैर नए नहीं है तो बहुत पुराने भी नहीं हैं। मेरी मानिए तो फाइनल रिपोर्ट कर दीजिए। कुछ आपका भी भला हो जाएगा।"

इंस्पेक्टर तुनक गया, "आप मुझे रिश्वत देना चाहते हैं?"

"क्या आप नहीं लेते?" सहदेव के भाव में मसखरापन छिपा था।

"देखिए, आप मुझे दूसरे इंस्पेक्टरों जैसा मत समझिए। मैं रांची में था तो अपराध करने वालों की पतलून ढीली कर दी थी।"

"यह जो कोयले की खानों का इलाका है यह असल में नमक की एक बड़ी खान है। इसमें जो चीज डालिए, सब नमक हो जाएगी। बड़े-बड़े महारथी आए और यहां की कालिख से अपना हाथ गंदा करके चले गए। यहां लोग जिंदगी बनाने के लिए आते हैं, नाम कमाने के लिए नहीं। नाम को यहां कौन पूछता है?"

"यह तर्क-वितर्क छोड़िए, मुझे भरत सिंह का पता बताइए।"

"मुझे भरत सिंह का पता मालूम नहीं। अगर मालूम होता और मैं बता भी देता तब

भी आप उसे गिरफ्तार नहीं कर सकते थे और गिरफ्तार कर भी लेते तो उसे सजा दिलवाना इतना आसान नहीं होता।"

"क्यों?"

"क्योंकि, ऐसे लोगों की रीढ़ की हड्डी बहुत मजबूत होती है।"

"क्या मतलब?"

"मतलब भी समझ जाएंगे, कुछ दिन इंतजार कीजिए। यह कोलफील्ड बहुत अजीब जगह है।"

इंस्पेक्टर क्रोधित होकर बोला, "मैं जानता हूं, आप मुझे कुछ नहीं बताएंगे। लेकिन एक बात याद रखिए, कानून के हाथ बहुत लंबे हैं। कभी न कभी उस तक पहुंच ही जाएंगे।"

"यहां इस 'कभी न कभी' को कोई नहीं मानता। यहां इस प्रकृति के लोगों को हर दिन का निकलने वाला सूरज एक नया जन्म देता है। मौत हमेशा उनके सरों पर मंडराती रहती है, इसलिए कानून की बात वे सोचते भी नहीं। कानून से तो डरने का सवाल ही पैदा नहीं होता और सच पूछिए तो जितना कानून है वह हम सब शरीफ आदमियों के लिए है। उनके लिए तो बस उनका अपना कानून ही है।"

इंस्पेक्टर तिलमिलाया लेकिन कुछ बोला नहीं। चाय की प्याली उठाई और धीरे-धीरे चाय पीने लगा। थोड़ी देर में शांत हुआ तो नरमी दिखाते हुए बोला, "यह बात आपने ठीक कही कि कोलफील्ड बहुत अजीब जगह है। मैंने अपनी बीस साल की सर्विस में कोई ऐसी जगह नहीं देखी जहां दिन-दहाड़े कत्ल होते हैं, जिसको सौ-पचास आदमी अपनी आंखों से देखते भी हैं, मगर गवाही देने पर एक आदमी भी तैयार नहीं होता हालांकि कानून उनकी मदद करना चाहता है। उनको इस आतंक से बचाना चाहता है। उनकी रक्षा करना चाहता है।"

"बात यह है इंस्पेक्टर साहब, कि यहां सिर्फ एक कानून चलता है। सिर्फ ताकत का कानून...यह ताकत कितने हैं, इसका आप अंदाजा भी नहीं कर सकते। यहां एस.पी. और डी.एस.पी. का तबादला तीन दिन में करवा दिया जाता है। थाना यहां सिर्फ इतना मालूम करता है कि किसका आदमी है? जवाब में अगर उससे जुड़ा हुआ कोई बड़ा नाम है तो बात वहीं खत्म हो जाती है और अगर कोई बड़ा नाम उसके पीछे नहीं है तो फिर सारी कार्यवाही की जाती है और एक केस कोर्ट भेज दिया जाता है।"

"मि. सहदेव, यह स्थिति शर्मनाक नहीं?"

"निस्संदेह है, मगर आप जैसे ईमानदार अफसर कितने हैं ! यहां तो सारा सांचे का सांचा ही टेढ़ा है। अगर आप इसी तरह इंक्वायरी करते रहे तो यहां कितने दिन टिक पाएंगे? खुद थाना आपके खिलाफ हो जाएगा।"

इंस्पेक्टर ने बड़े ही विश्वास से कहा, "मैं अपना काम अपने ही ढंग से करूंगा, सहदेव

साहब! चाहे मेरा तबादला हो जाए या थाना मेरे खिलाफ हो जाए।"

सहदेव मुस्कुराया, "विश यू ए गुड लक देन !" (मेरी कामना है कि आपको सफलता मिले।)

"थैंक यू, मि. सहदेव!"

थोड़ा-सा रुककर इंस्पेक्टर ने सहदेव से कहा, "यह तो मुझे मालूम था कि आप भरत सिंह का पता मुझे नहीं बताएंगे लेकिन एक बात पूछूं, बताएंगे?"

"जो मुझे मालूम होगा जरूर बताऊंगा।"

"यहां एक स्कूल टीचर है, सुनालनी घोष। आप जानते हैं उसे?"

"जी हां, जानता हूं। अच्छी पढ़ी-लिखी औरत है।"

"उसका भरत सिंह से क्या संबंध है?"

"भरत सिंह का उससे क्या संबंध हो सकता है?"

"बात यह है कि एक छापे में भरत सिंह के घर से कागज में लिपटा हुआ एक सौ रुपए का नोट मिला है। जिस कागज में वह नोट लिपटा हुआ था उसमें सुनालनी घोष का नाम और पता लिखा हुआ है।"

"नहीं, यह असंभव है ! सुनालनी झाड़खंड के लिए काम करती है, हल्के-फुल्के काम। उसका कभी कोई संबंध भरत सिंह से नहीं हो सकता। फिर दोनों की उम्र में मां-बेटे का फर्क है।"

"मैं किसी नाजायज संबंध की बात नहीं कर रहा था बल्कि यह जानना चाहता था कि क्या उसका भी कोलफील्ड में होने वाले आपराधिक क्रियाकलापों से कोई संबंध है?"

"यह मैं नहीं बता सकता। कोई ऐसा मामला मेरी जानकारी में नहीं है कि उस पर इस तरह का शक किया जा सके पर हां, इतनी बात अधिकतर लोग जानते हैं कि वह लाल झंडे वालों के लिए भी कुछ काम करती है बल्कि काम मत कहिए, मोरल सपोर्ट....।"

सुबह बिना नाश्ता खाए निकला था और अब धूप ढल रही थी। कोलफील्ड की विशिष्ट काली धूल उसके गर्दन, चेहरे और हाथ पर जम गई थी। उस पर कुछ हाथ भी नहीं लगा। सारे सवाल-जवाब से सिर्फ एक बात स्पष्ट हो रही थी कि यहां इस तरह की पूछताछ से कोई फायदा नहीं। किसी में इतनी हिम्मत नहीं कि इन मुजरिमों के खिलाफ एक शब्द भी बोले। उसने टेबुल से बैग उठाया और उठ खड़ा हुआ।

"अच्छा मि. सहदेव, चलता हूं।"

"कभी आइए तो जरूर मिलिए। हम लोग सेवा के लिए हाजिर हैं। वैसे एरिया टू हमारा एरिया नहीं है।"

इंस्पेक्टर चौंक कर रुका, "हमारा एरिया से क्या मतलब?"

सहदेव बहुत जोर से हंसा, "सब एक रोज में ही पूछ लेंगे? चार-छह महीने होने दीजिए, आपको कुछ पूछने की जरूरत नहीं होगी।"

अपने आफिस पहुंचकर इंस्पेक्टर मिंज ने बेल्ट खोलकर हैंगर पर टांग दिया। बेल्ट से पिस्तौल निकाल कर दराज में रखा। फिर वर्दी के बटन खोले और सफेद रुमाल निकाल कर गर्दन और चेहरे का पसीना पोंछने लगा। साथ ही उसने हवालदार गोपाल राम को आवाज दी।

"यार, कुछ चाय-पानी तो लाओ ! बहुत भूख लगी है।"

वह कुर्सी की पीठ से सर टिकाकर आंखें बंद कर लेता है—कैसी दुनिया है यह—? एक खून यहां होता है, एक कतरास में—फिर खबर मिलती है, निरसा में एक आदमी मारा गया—फिर मालूम होता है कि धनसार कोलियरी में कुछ अज्ञात आदमियों ने किसी को गोली मार दी—यह कैसा खेल हो रहा है—? रामाधीन, बरकत मियां, अब्दुल अंसारी, चास बैनर्जी, लखना बावरी...नामों की लंबी सूची से सजी हैं ये फाइलें—खून के छींटों से लाल पड़ती ये फाइलें दिन पर दिन बढ़ती जाती हैं। अगर यहां रिसर्च किया जाए तो हर पांचवें आदमी के पास रिवाल्वर निकल आएगा...लॉ एंड आर्डर की बात करो तो लोग मुस्कराते हैं...किसी को पुलिस की सुरक्षा व्यवस्था का विश्वास दिलाओ तो वह आश्चर्य और अविश्वास से देखता है। गॉड फादरों की इस दुनिया में किसी की हकूमत नहीं, बस ताकत का राज है...

आहट पर आंखें खोलकर देखता है, "दूबे हो?"

दूबे कुर्सी खींच कर बैठ जाता है।

"कहिए, कुछ पता चला?"

"नहीं।"

"आप तो बेकार ही पत्थर में जोंक लगाते फिर रहे हैं। यहां जितनी इंक्वायरी होती है वह थाने में बैठे-बैठे होती है। सिर्फ कागज पर, साइट पर तो आदमी दल-बल को लेकर यह दिखाने जाता है कि हम भी यहां हैं," वह हंसा, "या यह बताने कि हमारा हिस्सा बचाकर रखना।"

इंस्पेक्टर मिंज कुछ कटु शब्द बोल जाता मगर आज दिन भर की असफल दौड़-धूप ने उसे थोड़ा हताश कर दिया था इसलिए चुप रह गया। दूबे बोलता गया, "यहां के लोग हम लोगों को थोड़ा भी सहयोग नहीं देते। फिर हमें खतरा उठाने की क्या जरूरत है? हम भी छोड़ देते है। ...जाओ सालो मरो, हमें क्या?"

दूबे दस साल से कोलफील्ड में है। बदली होती भी है तो इसी कोलफील्ड के दूसरे थानों में। लोग कहते हैं कि ऊपर उसके लोग हैं, हालांकि सच बात यह नहीं है। सच बात यह है कि वह हमेशा गॉड फादरों से बनाए रखता है जो चाहें तो उसे 'लाइन हाजिर' करवा

दें। इसके लिए उसे ज्यादा कुछ नहीं करना पड़ता। सिर्फ आंख और कान बंद रखने पड़ते हैं...कुछ मत देखो और कुछ मत सुनो...और अगर कुछ देखो-सुनो भी तो मुंह बंद रखो।

हवालदार चाय लेकर आ गया था। दोनों चाय पीने लगे। इंस्पेक्टर मिंज ने कहा, "वह स्कूल की मास्टरनी जरूर कुछ न कुछ जानती थी भरत सिंह के बारे में। मैंने उसे फोटो दिखाया जो उसके चेहरे से साफ पता चला कि वह उस आदमी को पहचानती है, मगर उसने साफ इंकार कर दिया।"

"यही तो बात है! मिंज साहब! जानते सब साले हैं मगर बताएगा कोई नहीं और यह अच्छा ही है, क्योंकि अगर यह बता भी दे, पुलिस को भरपूर सहयोग भी दे तो पुलिस उसकी सुरक्षा का क्या प्रबंध करेगी? और फिर हम पुलिस वालों की सिक्यूरिटि भी क्या है? आप एक केस पकड़ते हैं। पहले आपको रिश्वत दी जाती है। आप इंकार कर देते हैं। फिर आप पर ऊपर से दबाव डाला जाता है। तब भी आप नहीं मानते। तब होता यह है कि सैकड़ों मील दूर आपके घर में डाका पड़ जाता है। संभव है कि एक-दो जान भी चली जाए। आप जानते हैं कि यह डाका कौन डलवाएगा? भाई, ये लोग बड़ा लंबा खेल खेलते हैं। ये जो किंग बने हुए हैं, वे ऐसे ही नहीं हैं। पचास-पचास डंपर चलते हैं इनके, बड़े-बड़े ठेके दूसरे नामों से चलाते हैं। जुएखाने उनके अपने हैं। शराब की बड़ी-बड़ी दुकानें उन्हीं की हैं। कितना पैसा आता है, कोई हिसाब नहीं—और पहुंच—? बड़े-बड़े ऊंचे लीडरों के अलावा सेंटर के आकाओं का हाथ उनके सर पर है। कोई क्या बिगाड़ लेगा? डी.सी.पी और एस.पी. से कम से तो बात भी नहीं करते। हम नीचे के अफसरों को तो वे समझते हैं कि हम हैं ही नहीं। अगर मुलाकात हो जाए तो यूं पूछते हैं मानो हमारे मालिक वही हैं, "का हो, कउन थाना म पोस्टिंग बा—कौनो तकलीफ हो, चाहे कौनो झंझट में पड़ जाएं तो खबर दी हा। सब ठीक हो जाई।"

दूबे नकल उतारकर हंसता है मगर इंस्पेक्टर मिंज कोई जवाब नहीं देता। सिगरेट निकालकर दूबे को देता है। दोनों सिगरेट पीने लगते हैं।

शाम उतर आई है। हवालदार आकर बत्ती का बटन दबा गया है। पीली रोशनी कमरे में फैल गई है। इंस्पेक्टर मिंज के थके हुए चेहरे पर और कुछ नहीं, सिर्फ हैरत है।

"आखिर यह सब चलेगा कैसे?"

"चल ही रहा है।"

"मगर कब तक?"

"यह सोचना हमारा काम नहीं है। हमें तो यह देखना है कि हम यहां कब तक हैं। बस, अपनी वर्दी बचाए रखिए और जो हाथ लगता जाता है समेटते जाइए। बड़े अफसर मामलों में हाथ डालते ही नहीं, हम छोटे लोग क्या कर सकेंगे—? अब इसी भरत सिंह को लीजिए। यह इतना छोटा आदमी नहीं है कि हम इस पर हाथ डाल सकें। अगर गिरफ्तार

करके किसी तरह थाने भी ले आएं तो फौरन किसी बॉस का फोन आएगा कि उसे छोड़ दो... मेरी मानिए मिंज साहब जितने दिन यहां हैं मजे लीजिए। कानून और व्यवस्था की सारी जिम्मेदारी आप पर ही नहीं है। और भी तो हैं आप के ऊपर।"

इंस्पेक्टर मिंज ऊपर देखता है जहां पंखा लगातार घूम रहा है। तीन परों वाला पक्षी जो लगातार उड़ रहा है, रात दिन—एक लगातार उड़ान...उसके बाजू थक गए होंगे मगर वह कमरे के बाहर नहीं निकल पाता। पता नहीं, उसे मालूम है या नहीं कि उसका एक सिरा उसी कमरे की छत से बंधा है और उड़ान के लिए साफ, खुला नीला आकाश जरूरी है और यह जरूरी है कि वह खुद आजाद हो।

इरफान बोला, "उन लोगों में सबसे ज्यादा खतरनाक आदमी भरत सिंह है। मैंने उसे बहुत नजदीक से देखा है। सच कहता हूं, उसे देखकर ही रगों में एक सर्द लहर-सी दौड़ जाती है। वह आदमी की योनि में कैसे पैदा हो गया, यह बात समझ में नहीं आती। उसे तो भयंकर दरिंदा होना चाहिए था। उसके अंदर दरिंदों जैसे गुण हैं।"

मजूमदार भरत सिंह का नाम सुनकर चौंका, मगर कुछ बोला नहीं। वह एक किताब पढ़ने में मग्न था। वह इस बातचीत से डिस्टर्ब हो रहा था, फिर भी उसने उन्हें मना नहीं किया। इरफान ने अपनी बात जारी रखी।

"भारद्वाज सबसे ज्यादा भरोसा उसी पर करता है। सबसे महत्वपूर्ण काम उसी को सौंपता है।"

"कौन-सा काम? जान मारने का काम?"

रस्तोगी ने कहा तो मजूमदार ने किताब से सर उठाकर देखा।

"लगता है, तुम लोग बहुत डर गए हो भरत सिंह से।"

"डरने की बात नहीं, वह कम्बख्त एक मिनट के लिए भी रुककर नहीं सोचता कि जिसकी वह जान ले रहा है वह भी एक आदमी है, एक इंसान है..उसका घर है, उसके बच्चे हैं।"

वहीं बगल में हरबंस लाल स्टोव पर चाय बना रहा था, बल्कि चाय बना चुका था और उसे कप में लेकर देने आ रहा था। इरफान की बात सुनकर वह जोर से हंसा।

''इसका मतलब है कि आदमी जब किसी को कत्ल करने जाए तो उसके खानदान के बारे में सोच ले कि उसके कत्ल से कौन प्रभावित होगा।"

"नहीं, मेरा मतलब यह नहीं था। मेरा मतलब था कि आदमी के दिल में चाहे कितना भी अंधेरा क्यों न हो, पर रोशनी की एक किरण जरूर रहती है।"

"माफ कीज़िए, यह आम आदमी की बात हुई मगर वह तो पेशेवर खूनी है। वही

उसकी रोजी-रोटी भी है।"

मजूमदार के आगे चाय आई तो उसने किताब बंद कर दी।

"रोजी-रोटी तो इस कोलफील्ड में बहुतेरे लोगों की इसी खून-खराबे से है। अंतर बस इतना है कि कुछ लोग खून करते हैं और कुछ करवाते हैं। ये जो इतने माफिया सरदार पैदा हो गए हैं, ये अगर पेशेवर खूनियों और मुजरिमों को नहीं रखें तो इनका काम कैसे चलेगा?"

इरफान ने कहा, "यही तो हमारी परेशानी है। उनके पास ऐसे लोग सैकड़ों की संख्या में हैं, और हमारे पास एक भी नहीं।"

मजूमदार हंसा, "तुम कहां से ऐसे आदमी किराए पर लाओगे? वे लोग तो चंबल की घाटी से भी ऐसे आदमी ले आते हैं।"

"तो क्या करें हम लोग? हार मान जाएं?"

"यह मैंने कब कहा? मुकाबला तो हर हाल में करना है।"

"मगर कैसे?"

"हम ऐसे किराए के खूनी और कातिल तो नहीं रख सकते। हमें तो अपने कैडरों पर ही भरोसा करना है। अपने ही मजदूरों को एजुकेट करना है कि वे स्थिति से मुकाबला करें।"

"तब तो हो चुका मुकाबला।" हरबंस लाल हंस पड़ा।

"क्यों नहीं होगा मुकाबला?" मजूमदार ने चाय की प्याली रख दी, "यह कोई खूनी ड्रामा नहीं है। यह एक आंदोलन है। उनके पास चंद गुंडे हैं। हमारे पास जनसमूह है। आदमियों का एक समुंदर है। उस रेले के आगे कौन ठहरेगा? जहां-जहां उनकी यूनियन बनी है, किसी विचारधारा के तहत नहीं, केवल आतंक की वजह से बनी है।"

"इस आतंक को समाप्त करने का कोई रास्ता है? मेरा मतलब है, मजदूर अगर सिर्फ डर से उनकी यूनियन में शामिल हैं तो क्या हमारे पास कोई ऐसा यंत्र है कि हम इस डर को उनके दिलों से निकाल सकें, क्योंकि इसके बिना तो कहीं भी पैर जमाना मुश्किल हो जाएगा।"

"जरूर है। इसके लिए हमें मजदूरों को एजुकेट करना पड़ेगा।"

"एजुकेट करने से आपका क्या मतलब है?"

''एजुकेट करने का मतलब उन्हें पढ़ाना-लिखाना नहीं है बल्कि उन्हें अहसास दिलाना है कि वे क्या हैं? किस लिए यूनियन में शामिल हैं? यूनियन से उनका बस इतना ही संबंध नहीं है कि वे सदस्य बन जाएं और बाकी सारा काम छोटे-बड़े लीडरों पर छोड़ दें, नहीं। उन्हें तो यह विश्वास दिलाना है कि यूनियन का हर सदस्य एक लीडर है। सारा काम उन्हीं को करना है, इन खूनियों से मुकाबला भी। हम तो सिर्फ रास्ता बता सकते हैं, उन्हें गाइड

कर सकते हैं।"

"इसका मतलब है, उनको पिस्तौल चलाना और बम फेंकना भी सिखाना होगा।"

"निस्संदेह ! माफिया सरदारों की इस दुनिया में कहीं न कहीं तो उनसे पाला पड़ेगा ही, लेकिन यह बाद की बात है। पहला काम तो उन्हें एजुकेट करना है।"

"फिर एजुकेट?"

मजूमदार ने उसकी बात काट दी, "एजुकेट शब्द से तुम इतना चौंकते क्यों हो? जानते हो, आज मजदूरों की जो इतनी खराब हालत है उसकी वजह यही है। उन्हें पैसा कम तो नहीं मिलता। अगर वे पैसे का सदुपयोग कर सकते, एक अच्छी जिंदगी गुजारने का ढंग उन्हें मालूम होता तो शायद उनकी ऐसी दशा नहीं होती। नेशनलाइजेशन एक अच्छा निर्णय था बल्कि बहुत अच्छा निर्णय था। लेकिन इससे पहले जरूरी था कि उन्हें एजुकेट किया जाता कि वे इस चौगुना और कभी-कभी आठ गुना पैसे को कैसे खर्च करें? वे अपना जीवन-स्तर कैसे ऊंचा करें? वे क्या हैं, उनकी ताकत क्या है? उनका शोषण कौन कर रहा है? कौन कर सकता है....?...यह सब नहीं हुआ। परिणाम यह हुआ कि उन्होंने अपनी शराब की मात्रा में वृद्धि कर दी। जुए में लंबे दांव खेलने लगे। बीस रुपए महीने सैकड़ा के हिसाब से सूद पर पैसा लेने लगे और धीरे-धीरे फिर उन्हीं लोगों के चंगुल में जा फंसे जिनसे उनको निकाला गया था। इधर तेजी से उठ रहा महंगाई का ग्राफ उन्हें नीचे ढकेलता गया और आज अंजाम यह है कि मजदूर फिर वहीं खड़ा है। परेशानी के वातावरण में कर्जों से लदा और आतंक से आतंकित।"

खुले दरवाजे पर एक औरत प्रकट हुई। यह सुनालनी घोष थी। उसने आते ही कहा, "पुलिस एक ऐसे आदमी की तलाश में है जिसकी गर्दन बहुत छोटी है, जिसका सर लगता है उसके कंधों पर धरा है।"

इस पहचान पर सब लोग चौंक गए।

"तुमको कैसे मालूम?"

"कल पुलिस मेरे पास आई थी।"

"तुम्हारे पास? भरत सिंह की तलाश में?"

"हां।"

"मगर क्यों?"

"क्योंकि उसने एरिया टू में किसी को गोली मार दी है।"

"मगर तुम्हारे पास पुलिस क्यों आई थी? तुम्हारा इस झमेले से क्या संबंध?"

"वही तो बताने जा रही हूं। पुलिस ने उसे पकड़ने के लिए कई जगह छापे मारे। पुलिस को उसके घर से एक ऐसा कागज मिला है जिस पर मेरा नाम और पता दर्ज है।"

"क्या कहती हो?"

"ठीक कहती हूं। कल एरिया टू के थाना इंचार्ज आए थे। उनके पास भरत सिंह की तस्वीर भी थी।"

"मैं यह नहीं पूछता बल्कि यह जानता चाहता हूं कि तुम्हारा नाम बीच में कैसे आया? एरिया दो की खबर तो 'जनमत' में कल ही छप चुकी है।"

सुनालनी कुर्सी खींचकर बैठ गई और उन लोगों से जिन्होंने उसे घेर लिया था, कहा, "पहले एक कप चाय पिलाओ, फिर मैं तुम्हें एक अत्यंत रोचक और अजीबोगरीब कहानी सुनाती हूं।"

चाय पीने के बाद सुनालनी ने सारी कहानी विस्तार से सुना दी। जितनी देर वह बोलती रही, सारे लोग बड़ी दिलचस्पी से सुनते रहे। गहरी खामोशी में सुनालनी घोष की आवाज डूबती-उभरती रही। जब कहानी समाप्त हो गई तब भी खामोशी छाई रही। बहुत देर के बाद इरफान बोला, "हैरत है, इतने जमाने तक उसे आपका कर्ज याद रहा!"

"ऐसे लोग बेईमान नहीं होते और इसी ईमानदारी का फायदा ये बॉस लोग उठाते हैं। वे जानते हैं कि वह सब कुछ कर लेगा लेकिन गद्दारी नहीं करेगा।"

रस्तोगी ने हंसकर कहा, "पुलिस इंस्पेक्टर शायद नया-नया आया है वरना इतनी तकलीफ नहीं उठाता। उसे शायद मालूम नहीं कि ऐसे किसी आदमी को गिरफ्तार करना कितना मुश्किल काम है और अगर गिरफ्तार कर भी ले तो क्या होगा? उसे सजा दिलाएगा? गवाह कहां मिलेंगे? फिर उसकी पीठ पर एक मजबूत और लंबा हाथ होगा। मजबूत इस अर्थ में कि उसके पास खर्च करने के लिए बेशुमार दौलत होगी और लंबा इस अर्थ में कि अगर वह हाथ बढ़ा दे तो दिल्ली तक उसका हाथ पहुंच जाएगा।"

इरफान बोला, "मैं इस तरह नहीं सोच रहा हूं। मैं तो यह सोच रहा हूं कि हम जिन्हें ताकतवर और बहुत मजबूत समझते हैं वे भी अंदर से उतने ही कमजोर होते हैं जितने हम हैं।"

मजूमदार ने कहा, "बल्कि हमसे भी कमजोर...। ये वे लोग हैं जो अत्याचार सहते-सहते उस सीमा तक पहुंच जाते हैं जहां विद्रोह पनपना अवश्यंभावी हो जाता हैऔर इसी स्थिति का फायदा ये माफिया वाले उठाते हैं। ऐसे टूटे-हारे चोट खाए हुए लोगों की मदद करके उनके हितैषी बनते हैं, फिर उनके हाथ में हथियार थमा देते हैं कि जाओ अपना बदला ले लो। वह आदमी अपना बदला ले लेता है और कानून उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाता। और तब वह आदमी आहिस्ता-आहिस्ता आपराधिक गतिविधियां करने लगता है। चोरी, डकैती, खून...और एक दिन माफिया वालों के हाथ का घातक हथियार बन जाता है। यह माफिया गिरोह असल में मुजरिम और कातिल बनाने की फैक्टरी है। मेरे भी एक बहुत प्रिय मित्र को उन्होंने अपने चंगुल में फांस लिया है। मुझे उस आदमी से बहुत आशा थी। उस आदमी में आग बहुत थी। शोषण और अत्याचार के खिलाफ वह कहीं भी आवाज

उठा सकता था मगर वह भी धीरे-धीरे माफिया वालों के जाल में फंस गया है।"

उसने सर घुमाकर इरफान की तरफ देखा।

"मेरा मतलब सहदेव से है।"

इरफान हंस दिया, "सहदेव अंकल के तो बड़े ठाट हैं। लड़के को रामकृष्ण मिशन स्कूल में पढ़ा रहे हैं। धनबाद में जमीन खरीद रहे हैं।"

''मुझे मालूम है सब, यद्यपि मैं पिछले छह वर्षों से नहीं गया मगर अब शायद जाना पड़े। प्रतीबाला बहुत बीमार है।"

"नहीं तो।" इरफान ने आश्चर्य व्यक्त किया, "अभी एक महीने पहले तो मैं उनसे मिलकर आया हूं।"

"यहां एक दिन में क्या से क्या हो जाता है, तुम्हें पता है?"

"मां अक्सर जाती है, मगर उसने भी नहीं बताया।"

"उसे मालूम ही नहीं होगा।"

"क्या हुआ है आंटी को?"

"थोड़ा-सा खून आ गया है मुंह से।"

"नहीं," इरफान लगभग चीख पड़ा।

मजूमदार ने कमरे के अंदर एक विहंगम दृष्टि डाली और कहा, "कमरा तो बहुत अच्छा सजा है, ऐरिस्टोक्रैट...।"

इस छोटे-से वाक्य में जो व्यंग्य था या जो अर्थ इसमें अंतर्निहित था उसे भले कोई दूसरा न समझता मगर सहदेव ने फौरन महसूस कर लिया पर बोला कुछ नहीं, चुपचाप उस पीपल के शेर को देखने लगा जो चार फुट ऊंची गोदरेज की अलमारी पर रखा हुआ था। मजूमदार ने अपनी बात का कोई असर नहीं देखा तो बात आगे बढ़ाई।

"कमरे में शेर का मॉडल रखना भी अच्छा लगा, क्योंकि इससे घर के मालिक की परिष्कृत अभिरुचि का पता चलता है।"

सहदेव ने जो दूसरी तरफ देख रहा था, सर घुमा कर मजूमदार को देखा, "आजकल व्यंग्य-बाण छोड़ना खूब सीख गए हो।"

मजूमदार हंस दिया, "अरे नहीं भाई, व्यंग्य नहीं कस रहा हूं बल्कि कह रहा था कि कमरे की चीजें आदमी के मनोभावों का भी पता देती हैं। अब इस शेर को लो। अगर कोई ऐसा आदमी इस घर का मालिक होता जिसका सौंदर्य-बोध उत्कृष्ट होता तो वह किसी परिंदे का मॉडल रखता या फिर किसी हसीन औरत की प्रतिमा। शेर रखने का मतलब है कि घर का मालिक खूनी प्रवृत्ति का व्यक्ति है या फिर ताकत का पुजारी है।"

सहदेव एकदम से चिढ़ गया, "क्या तुम इस मामले पर सीधे-सीधे बात करना पसंद करोगे?"

"तुम यार, झूठमूठ अपराध-बोध से ग्रस्त हो रहे हो।"

''तुम जो कुछ भी कह रहे हो मैं अच्छी तरह समझ रहा हूं। इस प्रगतिशील युग में आदमी वह नहीं सुनता जो तुम कह रहे होते हो बल्कि उस अर्थ तक पहुंचना चाहता है जो उस कही हुई बात के नीचे छिपा होता है।''

"ऊपरवाले को लाख-लाख धन्यवाद कि तुममें समझने की क्षमता अभी बाकी है। लो चाय पिओ...।"

मजूमदार का यह वाक्य भी उसे काट गया। वह कुछ जवाब देने जा ही रहा था कि मजूमदार ने तिपाई पर पड़ी चाय उठाकर उसकी ओर बढ़ा दी। वह चुपचाप चाय पीने लगा।

बोलना उसे भी आता है लेकिन वह बोलना नहीं चाहता, क्योंकि प्रतीबाला बीमार है। वैसे डाक्टरों ने यकीन दिलाया है कि वह खतरे से लगभग बाहर है। हालांकि अभी तक खांसी उठती है तो थोड़ा-सा खून आ जाता है। मगर टी.बी. की बीमारी अब वह बीमारी नहीं रह गई है कि जिस दिन बीमारी का पता चलता कि अमुक को टी.बी. हो गई है, उसी दिन से रोना-धोना शुरू हो जाता था। अब तो इसका बकायदा इलाज है और सहदेव में इतनी ताकत है कि वह कीमती से कीमती और अच्छे से अच्छा इलाज करवा सके।

चाय की दो-चार चुसकियां लेकर सहदेव ने अपने आप को सहज किया।

"मुझे पता है, तुम मुझसे नाराज हो।"

"मैं तुमसे नाराज नहीं हूं बल्कि इस बात से दुखी हूं कि तुमने हमारा साथ देने के बजाए...।"

"क्या तुम समझते हो कि मैंने गलत किया है?"

"निस्संदेह ! तुमने गलत किया है। तुम कभी यह भी तो देखो कि तुम आज कहां खड़े हो?"

"मैं जहां कहीं भी खड़ा हूं बिलकुल ठीक जगह पर खड़ा हूं।"

"झूठ है यह," मजूमदार एकदम से भड़क गया, ''तुम जिस जगह खड़े हो वह खूनियों का गढ़ है, हत्यारों का अड्डा है। तुम्हारे चारों तरफ खून के छींटे उड़ रहे हैं और तुम कहते हो...।"

"मुझे अफसोस नहीं है इसका।"

"मुझे है—और इसीलिए मैं तुमसे ही पूछने आया हूं कि तुम उस पार्टी में शामिल हो गए, क्यों?"

"उनका अहसान था मुझ पर और मेरी वफादारी ने मुझे मजबूर किया कि मैं उनका

साथ दूं।"

"वफादारी...?" मजूमदार ने उसकी बात काट दी और तिरछी नजरों से उसे देखा।

"हां, वफादारी।"

"बिना शर्त वाली वफादारी, जो कुत्तों में होती है?"

सहदेव तिलमिला गया। मजूमदार ने उसकी तिलमिलाहट को महसूस किया और कहा, "ये मेरे शब्द नहीं हैं। ये तुम्हारे ही शब्द हैं। तुमने एक बार कहा था कि आदमी की वफादारी और कुत्तों की वफादारी में फर्क होता है। क्या नहीं कहा था या याद दिलाऊं? मुझे आज भी याद है कि यह बात तुमने मोहना कोलियरी में व्हाइट साहब से कही थी....कही थी कि नहीं?"

"उस समय मेरी सोच पक्की नहीं थी।"

मजूमदार कटुतापूर्वक हंसा, "खूब, जैसे अब तुम्हारी सोच पक्की हो गई है!"

सहदेव के होठों पर फीकी मुस्कान तैर गई।

"क्या आज तुम मुझसे झगड़ा करने आए हो?"

"हां, शायद यह झगड़ा ही करने आया हूं। मुझे इस बात का बहुत दुख है कि तुम हत्यारों की टोली में शामिल हो गए हो। तुम्हें याद है, हमने कहां से जिंदगी शुरू की थी? तुम्हें याद है वह कालाचंद बावरी? यह कालाचंद बावरी जिसके अपमान पर तुम मारने-मरने पर उतारू हो गए थे। वह कौन था तुम्हारा? फिर वह रहमत मियां—क्या हमने जान की बाजी नहीं लगा दी थी उसके लिए? उससे हमारा क्या रिश्ता था? बात बस इतनी-सी है सहदेव, कि वह आग तुममें बुझ चुकी है जिसे मैंने दहकते हुए देखा था और उम्मीद की थी कि यह आग किसी दिन ज्वालामुखी पहाड़ के लावे की तरह उबल पड़ेगी।"

"मेरे अंदर आग अभी नहीं बुझी है।"

"अगर नहीं बुझी है तो सब कुछ इतना ठंडा कैसे है?"

हां ठंडा है। उसने खुद उस ठंड को महसूस किया है, बार-बार किया है। जब कभी भारद्वाज के यहां कोई गुप्त मीटिंग होती है, जब कोई चुपके से इस रंगीन और शोभायान दुनिया से उठा लिया जाता है, जब किसी सूदखोर पहलवान की तरफदारी करनी पड़ती है, जब मालिक अैर यूनियन के बीच जानबूझकर किसी एक तरफ झुकना पड़ता है तब लगता है कि सब कुछ ठंड से जमने लगा है। तब वह ह्विस्की या रम की बोतल निकालता है और तरल आग अपने अंदर उंड़ेलने लगता है।

दोनों आदमियों के बीच थोड़ी देर खामोशी रही, फिर मजूमदार ने पूछा, "तुमने कभी अपना हाथ देखा है?"

"क्या मतलब?"

"तुम अपने हाथ गौर से देखो, क्या उनमें खून नहीं लगा है?"

"खून?"

"हां। इंसानी खून।"

"मैंने खून नहीं किए। मेरे हाथ में खून का एक छींटा भी नहीं है।"

"है ! तुम गौर से देखो ! नाखूनों के किनारों में कहीं कोई एक लकीर तुमको नजर आ जाएगी।"

सहदेव चिढ़ गया, "तुम मुझे क्या विश्वास दिलाना चाहते हो?"

"खून न करना मगर खून करने वालों में शामिल रहना, क्या एक ही बात नहीं है? जानता हूं, तुमने अपने हाथ से खून नहीं किए। यह भी मालूम है कि तुम पर जो खून का मुकदमा चल रहा है वह भी झूठा है। मगर जो कुछ होता रहा, क्या वह भी तुम्हारी जानकारी में नहीं था? था ! तुम सब कुछ जानते रहे हो और जो सब कुछ जानकर भी चुप रह जाए, उसे तुम क्या कहोगे?"

कोई चीज सहदेव के अंदर सर उभारने लगी है। शायद गुस्सा, शायद नफरत, शायद अपमान का अहसास या शायद इस नंगे सच की कड़वाहट जिसे चखना और कंठ से नीचे उतारना मुश्किल पड़ रहा है—वह तिलमिलाता है। अंदर ही अंदर खौलता है मगर कुछ बोलता नहीं, अपने आप पर अंकुश लगाए रखता है।

बहुत चुप रहकर बोलता है, "देखो ! मैं तुम्हारी बहुत इज्जत करता हूं।"

मजूमदार ने फिर उसकी बात काट दी, "जरा-सा रुको, मेरे एक सवाल का जवाब दो। तुम क्यों मेरी इज्जत करते हो?"

"शायद इसलिए कि तुम मेरे पुराने साथी हो। तुमसे मैंने बहुत कुछ सीखा है।"

"शायद इसलिए भी कि हम दोनों कंधे से कंधा मिलाकर शोषण के खिलाफ लड़ना चाहते थे।"

"हां, शायद इसलिए भी।"

"मगर आज तुम कहां हो?"

मजूमदार जानता है कि वह जवाब नहीं दे सकता। वह जवाब का इंतजार भी नहीं करता। चारों तरफ कमरे को देखता है। सोफासेट, अलमारी, दीवारों पर रंगीन तस्वीरें, एक तरफ तिपाई पर टेलीफोन, एक छोटे-से केसिंग पर बड़ा-सा रेडियोग्राम, चैन और आराम की एक दुनिया। उसकी नजरें चारों तरफ घूमती हुई सहदेव के चेहरे पर आकर रुक जाती हैं।

"तुमने अपने आपको बेच दिया है। तुमने अपनी कीमत वसूल की है। इस कमरे को देखो, कोई नहीं कहेगा कि यह एक कोलियरी मजदूर का कमरा है। ये सारी सुविधाएं जिसने तुम्हें प्रदान की है उसने बदले में तुमसे क्या लिया है? मालूम है तुम्हें?"

वह रुकता है, सहदेव के तपते और लाल पड़े चेहरे को देखता है, बहुत गौर से देखता

है, फिर धीरे से कहता है–

"तुम्हारी आग।"

सहदेव चौंककर उसे देखता है मगर बोलता कुछ नहीं। होता है, जिनके बारे में वे जानते हैं कि किसी दिन यह व्यक्ति एक ताकत बनकर मुकाबले में आ खड़ा होगा। ऐसे आदमियों को वे पुतला बनाकर खड़ा कर देते हैं।

सहदेव तिलमिलाकर उठ खड़ा होता है।

"यह गलत है कि मैंने अपने आपको बेचा है। मैंने सिर्फ इस सच को पहचान लिया है कि अगर कोलफील्ड में रहना है तो ताकत हासिल करनी होगी। एक ऐसी ताकत जिससे टकराने का, जिसके नजदीक आने का कोई साहस न कर सके।"

"तुमने ताकत हासिल नहीं की, तुम एक ताकत के साथ जुड़ गए हो। एक ऐसी ताकत के साथ जो चारों तरफ अपना दमन-चक्र चला रही है। जिसके पास कोई विचारधारा नहीं। जिसका कोई निश्चित उद्देश्य नहीं, जिसका कोई लक्ष्य नहीं, जो सिर्फ सत्तालोलुप है, ताकत चाहती है या फिर बेशुमार दौलत।"

"हूं !" सहदेव नफरत से होठ सिकोड़ता है, "उस समय तुम्हारी यह विचारधारा कहां थी जब मुझे पीटा जा रहा था, जब मुझे पैरों से पकड़कर मरे हुए कुत्ते की तरह घसीटा जा रहा था, रोड़ों और कंटीली झाड़ियों में। कौन था उस समय? तुम थे? तुम्हारे साथी? तुम्हारी विचाराधारा? देखो मेरी पीठ...।"

सहदेव की धीरे-धीरे बढ़ती हुई आवाज अंत में इतनी ऊंची हो गई कि लगा मानो वह दहाड़ रहा है। उसने मजूमदार के जवाब का इंतजार नहीं किया।

वह कुर्ता और बनियान उतार देता है और मजूमदार की ओर पीठ करके खड़ा हो जाता है। मजूमदार उसकी पीठ पर खराशों के लंबे निशान देखता है। सारी पीठ उन निशानों से सजी हुई है। कुछ बोलने की कोशिश करता है, मगर बोल नहीं पाता। वह सारी घटना उसे याद आ जाती है जो बाद में उसने एक चश्मदीद गवाह से सुनी थी। अपमान और तिरस्कार की इस दुनिया में अगर कोई आदमी इस अपमान और तिरस्कार को स्वीकार करने से इंकार कर देता है तो उसकी सजा यही है।

सहदेव की सांस फूल रही है। क्रोध से कोई चीज उसके अंदर चिंघाड़ती है। वह पलटकर मजूमदार को देखता है, "यह घाव ठीक हो गए हैं। इनके बस निशान बाकी हैं, लेकिन आज भी ये घाव कभी-कभी जलने लगते हैं। जब कोई किसी को अपमानित करता है, जब कोई किसी निर्दोष पर अकारण हाथ उठाता है तो ये घाव जलने लगते हैं। इसमें अंगारे भर जाते हैं, दहकते हुए अंगारे और मेरा सारा अस्तित्व तिलमिला उठता है। मेरा रोम-रोम एक बेनाम पीड़ा से भर जाता है मगर तुम इसे क्या जानो, तुम अपनी ही विचारधारा में जिंदा हो।"

विचारधारा क्या है, वह समझा सकता है मगर नहीं समझाता। उठ खड़ा होता है। चार कदम चलकर उसके पास जाकर खड़ा हो जाता है। फिर बड़ी नरमी से, बहुत अपनापन दिखाते हुए अपना हाथ उसके कंधों पर रख देता है।

"क्या यह सिर्फ तुम्हारे साथ हुआ है?"

कोई जवाब नहीं मिलता सहदेव की तरफ से, मजूमदार उसके जवाब का इंतजार भी नहीं करता।

"यह तुम्हारा व्यक्तिगत मामला नहीं है। जो तुम्हारे साथ हुआ, वह बहुतों के साथ हुआ है। बल्कि आज भी हो रहा है। कितनों की तो जानें भी चली गईं। कितनों के घर उजड़ गए। कितने इस कोलफील्ड से ऐसे गायब हुए कि उनका आज तक पता भी नहीं चला। हमें सिर्फ इन चार गुंडों के बारे में नहीं सोचना है जिन्होंने तुमको पीटा, बल्कि उन चार हजार गुंडों के बारे में फैसला लेना है जिन्होंने सारे कोलफील्ड को अपने लोहे के पंजों में कस रखा है। हमारी लड़ाई लंबी जरूर है लेकिन पूर्ण विजय का शंखनाद बजाती है—तुम मुझे बहुत प्रिय हो, हद से ज्यादा प्रिय हो, मेरी बात मानो, लौट आओ।"

वह दूसरा हाथ सहदेव के दूसरे कंधे पर रखता है, उसे अपनी ओर घुमाता है और यह देखकर हैरान रह जाता है कि सहदेव रो रहा है। आंसू और पसीने से भीगा हुआ उसका चेहरा उसे बहुत अजीब-सा लगता है। वह बेकाबू होने लगता है। वह उसे समेटकर अपनी छाती से लगा लेना चाहता है। लेकिन ठीक उसी क्षण प्रतीबाला को खांसी उठ जाती है, वही लगातार खून उगलने वाली खांसी। दोनों मर्द घबराकर प्रतीबाला के कमरे की ओर दौड़ जाते हैं।

कोई बहुत बड़ी बात नहीं थी।

किसी मेले-ठेले में, या किसी भीड़भाड़ वाले त्योहार में किसी लड़की का हाथ पकड़ लेना या किसी की छाती पर हाथ रख देना ऐसी कोई अहम बात नहीं थी और खास तौर से उनके लिए जो रंगदार कहलाते हैं या किसी लीडर के पहलवान हैं। उनके लिए तो यह लगभग प्रतिदिन की बात थी। इस तरह की बातें खुले आम होती थीं। लोग देखते थे और अनदेखा कर देते थे। लोग सुनते थे और अनुसना कर देते थे। कौन जाए अपनी गर्दन फंसाने? कभी-कभी तो यह भी होता था कि लड़की के रिश्तेदार इन रंगदारों से उलझने के बजाए उल्टे हाथ जोड़ लेते।

ताकत की इस दुनिया में जिसके पास ताकत नहीं थी उसका अस्तित्व ही कहां था?

लेकिन वह लड़की जरा तीखी थी और तीखी लड़कियां कोलफील्ड में कम ही थीं।

असल में गर्मी के दिन कोलफील्ड में बड़े कष्टदायक होते हैं। गर्म हवा के झक्कड़

चलते हैं जो अंजुरी भर-भरकर काली धूल उड़ाते हैं। यह मौसम का गुलाल है। काली ध ूल बदन के हर खुले हिस्से पर जम जाती है और एक करकराहट का अहसास सारा दिन बना रहता है। गर्म हवा इतनी गरम होती है कि इसको झेलना मुश्किल लगता है। इसलिए अधिकांश लोग एक कपड़े से गर्दन, सर और आधा चेहरा ढके रहते हैं। इस कपड़े को गमछा कहा जाता है। अब धीरे-धीरे यह गमछा प्रचलन में आकर एक विशेष पहनावा हो गया है। अब ज्यादातर लीडर, रंगदार और लीडरों के पहलवान हमेशा यह गमछा गर्दन में लटकाए रहते हैं। सुनहरी कोर वाला अध्धी का यह कपड़ा अब इस बात का भी संकेत देता है कि इसको गले में लटकाने वाला कोई साधारण आदमी नहीं है। इस तरह गमछा ताकत का भी मार्का बन गया है।

तो उस दिन कलिया महताइन के अगल-बगल चार आदमी भीड़ में चलते-चलते जमा हो गए थे। उन चारों की गर्दन में यह गमछा झूल रहा था। भीड़ में वे अकसर ऐसा करते थे कि किसी लड़की को पसंद कर लेते और उसके पीछे चलने लगते। जहां भीड़ ज्यादा होती वहां से चारों लड़की के इर्द-गिर्द घेरा बना लेते, फिर उनकी छेड़छाड़ और खींचातानी शुरू हो जाती इसलिए उन्होंने आज भी कलिया महताइन को घेर लिया और एक आदमी ने उसकी छाती पर हाथ धर दिया। महताइन इस तरह की छेड़छाड़ के लिए तैयार नहीं थी। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि कोई इतना आगे बढ़ जाएगा। अचानक उसका संपूर्ण अस्तित्व एक अजीब तरह के अपमान से भर गया। वह बिजली की-सी तेजी से पलटी और हाथ बढ़ाने वाले के मुंह पर एक जोरदार तमाचा जड़ दिया। तमाचा इतनी जोर से मारा गया था कि उसकी आवाज पर लोग पलट-पलटकर देखने लगे।

बहती हुई भीड़ अचानक रुक गई।

इस रुकी भीड़ में भागलपुरी सिल्क की चादर ओढ़े गमछे में आधा चेहरा छिपाए एक छोटी गर्दन वाला आदमी था।

यह भरत सिंह था।

कायदे के मुताबिक भरत सिंह को इस मेले में नहीं आना चाहिए था, क्योंकि एक तो यह कि यह भारद्वाज का इलाका नहीं था और दूसरे यह कि भीड़भाड़ वाली जगहों से उसे परहेज करना चाहिए। उसके नाम के दसों वारंट थे। पुलिस अलग तलाश में थी और दुश्मन भी ताक में थे, लेकिन वह इतना निडर हो चुका था कि उसे किसी भी बात की परवाह नहीं रहती थी और यह सच भी था कि कम से कम भरत सिंह पर हाथ उठाने वाले का कलेजा फौलाद का होना चाहिए। औरतों के मामले में दिलचस्पी भी नहीं लेता था, मगर चार पहलवानों के बीच घिरी हुई कलिया महताइन की हिम्मत ने उसके कदम रोक लिए।

गुस्से से महताइन का सांवला चेहरा अंगारे की तरह दहक रहा था। इधर वे चारों

बदमाश जिनकी आज तक कभी ऐसी बेइज्जती नहीं हुई थी बदला लेने पर उतारू थे। एक ने मजबूती से उसका हाथ थाम लिया। महताइन हाथ छुड़ाने की कोशिश करके हार गई। वह फौलाद की पकड़ थी कि जरा भी टस से मस नहीं हो रही थी। जैसे-जैसे महताइन थकती जा रही थी वैसे-वैसे उसके चेहरे की लाली बुझती जा रही थी। गंदी गालियों के फव्वारे उड़ रहे थे और इस फव्वारे में भीगते लोग केवल तमाशाई बनकर यह सारा माजरा देख रहे थे।

अचानक उन चारों में से एक ने उसकी छाती धरनी चाही। महताइन चीख कर बचाव के लिए पीछे हटी। हाथ बढ़ाने वाले के हाथ छाती तक नहीं पहुंचे लेकिन उसके ब्लाउज का एक सिरा उसके हाथ आ गया। पीठ पर लगे हुक पटापट टूट गए और कपड़े का वह चिथड़ा जो कलिया महताइन की इज्जत का रखवाला था, उसके हाथ आ गया। उसने नंगी छातियों को, नहीं बल्कि दोनों दुनिया की नग्नता को छिपाने की एक हाथ से कोशिश की, जब नहीं छिपा सकी तो धप्प से जमीन पर बैठ गई।

भीड़ रुकी रही—तमाशा रंगीन हो गया था।

अब वह औरत जमीन पकड़कर बैठी है और वे लोग उसे हाथ से पकड़कर, घसीटकर उठा रहे हैं।

"उठ हरामजादी!"

उनमें से एक ने रुकी हुई भीड़ में से न जाने किसको हुक्म दिया, "लाओ, मिर्चा लाओ साली को...।"

"उठ रंडी, तुमको नंगा करके नचाएंगे मेले में।"

वह रंडी अर्थात कलिया महताइन, पास ही के गांव की थी। इस कोलियरी में काम भी करती थी। सब लोग या अधिकांश लोग उसे जानते थे। वह किसी की बहन थी, किसी की बेटी थी, मगर सारी भीड़ चुपचाप खड़ी यह तमाशा देखती रही। किसी के मन में नफरत का बवंडर उठा होगा भी तो वह अंदर ही रह गया। बाहर कोई प्रतिक्रिया नहीं थी। कलिया महताइन ने मदद के लिए या छुड़ाए जाने के लिए या सदियों की पवित्रता की रक्षा के लिए चारों तरफ देखा। आवाज भी लगाई। गुहार भी करती रही। चीखी-चिल्लाई भी, पर किसी की रगों में जमा हुआ खून नहीं पिघला। किसी के कलेजे से धुआं नहीं उठा। किसी आंख ने इस दृश्य पर प्रतिकार नहीं किया। सारी भीड़ सहमी हुई भेड़ों की तरह चुपचाप सब कुछ देखती रही।

उनमें से एक जिसने शायद कुछ अधिक ही पी ली थी, औरत पर कूद पड़ा और उसे साथ लेकर जमीन पर लेट गया।

और यही वह भयावह दृश्य था जिसने भरत सिंह के क्रोध को उछालकर उसकी कनपटियों तक पहुंचा दिया। उसने साफ देखा कि उसकी बहन लेटी है और वह मुसटंडा

पहलवान...।

उसने अपनी बहन का चेहरा देखा। उसके चेहरे की विवशता देखी और एक ऐसा भय देखा कि निमिष मात्र में उसकी आंखों के सामने सब कुछ लुट गया, सारी भीड़, सारी दुनिया, सारा जनसमूह। बिजली की रफ्तार से उसका हाथ कमर में गया और उसका रिवाल्वर बाहर आ गया।

एक धमाका हुआ और सारी भीड़ सरपट भाग खड़ी हुई। एक गोली, दो गोली, तीन गोली, चार गोली, पांच गोली, छह गोली—पिस्तौल का सारा चैम्बर उसने उस मोटे आदमी के शरीर पर खाली कर दिया जो हर गोली के साथ एक करवट लेता, ऐंठता, चीखता अंत में ठंडा हो गया।

भरत सिंह के हाथ का पिस्तौल खाली था और यही वह मौका था जिससे फायदा उठाया उन तीन आदमियों ने जो इतनी देर से हक्का-बक्का खड़े थे। अचानक उन्हें होश आया और एक साथ तीन गोलियां भरत सिंह के जिस्म में उतर गईं। तीन गोलियां खाकर भी वह गिरा नहीं, बायां हाथ कमर में डालकर दूसरा पिस्तौल भी निकाल लिया लेकिन ठीक उसी क्षण और भी तीन गोलियों ने पिस्तौल के घोड़े पर दबी उसकी अंगुलियों की ताकत छीन ली। गोली खाए शेर की तरह उसने छलांग लगाई, लेकिन उनसे सिर्फ दो फुट के फासले पर गिर पड़ा।

देखते ही देखते सारा मैदान खाली हो गया। सारा मैदान खाली था। दुकानदार अपनी दुकानें खुली छोड़कर भाग गए। सिर्फ खून में लथपथ दो लाशें पड़ी थीं या फिर भागे हुए लोगों के चप्पल और जूते।

एक घंटे के अंदर-अंदर यह खबर सारे कोलफील्ड में कौंध गई कि भरत सिंह मारा गया।

"भरत सिंह मारा गया?"

"बाप रे! भरत सिंह मरा गया।"

कोई यह नहीं पूछ रहा है कि भरत सिंह कैसे मारा गया, कहां मारा गया, कब मारा गया ! सब यह जानना चाहते हैं कि उसे किसने मारा? वह कौन था? किसका आदमी था?

"चौहान का आदमी था?"

"अरे चौहान तो इतना बड़ा माफिया भी नहीं है।"

"मगर शिकार तो बड़ा किया है।"

"कौन आदमी था हो?"

"चुप साला! पुलिस सुन लेगी तो...में डंडा कर देगी।"

चर्चे और कानाफूसियों से सारा कोलफील्ड भर गया है। वारदात की सारी तफसील,

मरने वाले की हालत थोड़ा-थोड़ा करके कानाफूसियों में बताई जा रही है, मगर पुलिस के सामने सब चुप।

भारद्वाज अपने सर के बाल नोच रहा है।

"खत्म कर दो...सबको खत्म कर दो...साले चौहान को भून दो....उसके घर-परिवार को..."

पुलिस ने पांच आदमियों को गिरफ्तार किया है। उनमें ज्यादातर बेकसूर हैं। इन बेकसूर लोगों में एक आदमी मजूमदार का भी है। शेख शहादत मियां, उसे पुलिस ने एक दुकान से गिरफ्तार किया। गिरफ्तारी की खास वजह उसके पास से एक देसी वन-राउंडर पिस्तौल का बरामद होना था।

फिर वह सब कुछ हुआ जो ऐसे अवसरों पर हुआ करता है। बड़े-बड़े लोग घटना स्थल पर आए—एस.पी., डी.एस.पी. इत्यादि। छोटे-बड़े लीडरों का भी जमघट रहा। इस तरह की गुंडागर्दी की भर्त्सना में सभाएं भी हुईं। एक दिन 'कोलफील्ड बंद' का आह्वान भी किया गया। अखबार में दो-चार दिन जली सुर्खियों में खबरें भी छपती रहीं। फिर आहिस्ता-आहिस्ता सब शांत हो गया—रोजमर्रा की जरूरतें इतनी फुरसत भी कहां देती हैं कि ऐसी सनसनीखेज खबरों पर चर्चा होती रहे!

मगर भारद्वाज को कांटा जरा गहरा लगा था, बल्कि बहुत गहरा लगा था। भरत सिंह उसके लिए अलादीन का वह चिराग था जिससे सिर्फ इच्छा प्रकट करनी पड़ती थी। भारद्वाज के पास लोग थे—एक से एक खतरनाक लोग थे मगर ऐसा आदमी कोई भी नहीं था जो बड़ी से बड़ी मुहिम में अकेला कूद पड़ने के लिए हमेशा, हर समय तैयार रहता हो। उसने भारद्वाज के लिए बड़े-बड़े किले फतह किए थे। बड़ी-बड़ी समस्याओं से उसे उबारा था। वह भारद्वाज के खजाने का एक अनमोल रत्न था।

वे पांच आदमी जो पकड़े गए थे, उनकी जमानत न लोअर कोर्ट से हुई और न ही हाई कोर्ट से। आखिर सैंतालीस दिन बाद रांची हाई कोर्ट से उनकी जमानत मंजूर हुई—पूरे एक महीने सतरह दिन बाद।

भारद्वाज के बंगले पर बहुत ही खास मीटिंग चल रही थी। आफिस में नहीं, अंदर के कमरे में। सारे महारथी मौजूद हैं। ऐसे लोग जो पर्दे पर कम ही नजर आते हैं—लखना बावरी, दिलबर सिंह, जब्बार खान, मोती लाल यादव, सूरमा सिंह और कई दूसरे। ये वो लोग हैं जिनके कंधों पर माफिया की सारी इमारत खड़ी है। उन्हें मालूम है कि उन्हें क्यों बुलाया गया है। उन्हें मालूम है कि भरत सिंह की मौत का बदला लेना है। उन्हें पता है कि चौहान के जो आदमी गिरफ्तार हुए थे रांची हाई कोर्ट ने उनकी जमानत दे दी है और कल उन्हें रिहा कर दिया जाएगा।

भारद्वाज का हुक्म है कि वे पांचों आदमी जेल से छूटने के बाद अपने घर नहीं पहुंचने

चाहिए। उन्हें रास्ते में ही खत्म कर दो। अगर जरूरत पड़े तो पूरी गाड़ी ही उड़ा दो। आखिर कोलफील्ड को मालूम तो हो कि भारद्वाज के गिरेबान तक हाथ डालने वालों का अंजाम क्या होता है।

बहुत बड़ी मुहिम। सारे सलाह-मशवरे और मंसूबे चुपके-चुपके कान से मुंह मिलाकर तैयार हो रहे हैं। चेहरे का तनाव बताता है कि जो कुछ होने वाला है, बहुत भयानक होगा। सहदेव बंगले पर आकर लौट गया है। साहब से मुलाकत नहीं हो सकी, क्योंकि वे अंदर मीटिंग में थे और पता नहीं मीटिंग कितनी देर चलती। उसने अंदाजा लगा लिया था कि कल कुछ न कुछ होगा। पहले भी बंद कमरे की मीटिंगों में अहम फैसले लिए गए हैं। हर ऐसे फैसले के बाद एक भयानक खबर मिलती है। अखबार के पहले पन्ने सज जाते हैं। पुलिस की धड़पकड़ शुरू हो जाती है। शक के आधार पर पुलिस न जाने कितनों को पकड़कर जेल में ठूंस देती है। फिर सब कुछ ठीक-ठाक हो जाता है। सारा केस अज्ञात अपराधकर्मियों के सर डालकर फायल को बंद कर दिया जाता है और लोग भूल जाते हैं कि कभी कोई आलोक नाथ या शिवपूजन सिंह भी था जो अब नहीं हैं।

सहदेव बेचैन है। सोच-सोचकर उसके दिमाग की नसें चटकने लगी हैं। हर बार ऐसा ही होता है। हर बार उसे एक बेनाम मानसिक उत्पीड़न से गुजरना पड़ता है। क्या वह सोचना नहीं छोड़ सकता? क्या वह अपने आपको विश्वास नहीं दिला सकता कि वह उनमें से नहीं है? वह अलग है...वह दूसरा है...वह ईमानदारी से अपना काम कर रहा है? वह मजदूरों की समस्याएं हल करने में जरा भी समय नहीं लगाता, थोड़ा भी नहीं चूकता। अधिकतर काम वह अपने भरोसे पर भारद्वाज के परामर्श के बिना ही करता है। लोग जानते हैं, भारद्वाज के दुश्मन भी जानते हैं कि उससे कोई नुकसान नहीं है। उसका किसी खूनी ड्रामे में कोई रोल नहीं है। वह तो सिर्फ दर्शक है, एक बेजुबान दर्शक।

लेकिन सचमुच क्या वह सिर्फ दर्शक है? उसका इस खूनी ड्रामे में कोई रोल नहीं? पर्दे के पीछे भी नहीं?

जवाब कौन देगा? अपने बारे में बिलकुल निष्पक्ष होकर कोई जवाब ढूंढना बहुत मुश्किल होता है।

दूसरी सुबह को प्रचंड गर्मी थी। सुबह दस बजे से ही लू चलने लगी थी। लोगों ने गमछे में अपना चेहरा छिपाना शुरू कर दिया था। ऐसे ही गमछों में मुंह छिपाए भारद्वाज के बंगले से चार आदमी एक जीप पर सवार हुए और जीप बड़े वेग से धूप से सुलगती हुई सड़क पर निकल गई। जीप के बाद फिर एक कार, फिर दूसरी कार। सबमें चार-पांच आदमी सवार थे। सबने अपने चेहरे गमछों में छिपा रखे थे।

पहली गाड़ी कोर्ट के अहाते से थोड़े फासले पर खड़ी कर दी गई। दूसरी गाड़ी शहर एक पुल पर रोक दी गई और तीसरी गाड़ी 'बनिया हीर' मोड़ पर रोक दी गई। योजना

यह थी कि जेल से रिहा होने वाले अगर किसी तरह पहली गाड़ी से बच जाएं तो फिर दूसरी और अगर उससे भी निकल जाएं तो तीसरी गाड़ी उनका खात्मा कर दे।

मजूमदार को खबर मिली तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ। क्या इतना बड़ा मास्टर प्लान बनाया जा सकता है? उसने घोष बाबू की कार निकाली और चार आदमियों को साथ लेकर स्थिति का जायजा लेने के लिए निकल पड़ा। उन चार आदमियों में एक इरफान भी था। मजूमदार ने फूल बंगला से धनबाद तक यह मोर्चाबंदी देखी तो घबरा गया। उसे इस मामले से इतनी दिलचस्पी नहीं होती अगर शेख शहादत मियां उनमें नहीं होता। मजूमदार को भारद्वाज की सारी योजना समझ में आ गई। वह गाड़ी लेकर पुलिस थाना पहुंच गया।

उसने एस.पी. से मुलाकत की और उन्हें सारी स्थिति से अवगत कराया। एस.पी. ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। उसने कहा, "मि. मजूमदार, आप बहुत डर गए हैं।"

"डरने की बात नहीं है, साहब! और मेरे डरने की कोई वजह भी तो नहीं है। मैं प्रशासन को बताने आया हूं कि आज मुमकिन है, आपके इलाके में एक बड़ा कांड हो जाए।"

"ठीक है मि. मजूमदार, मैं थाना फोन किए देता हूं। वे लोग इंतजाम कर देंगे।"

"सर, थाना से कुछ नहीं होगा।"

"क्यों नहीं होगा? अगर जरूरत पड़ी तो मैं खुद जाऊंगा। आप गाड़ियों के नंबर बताएं।"

"सर, गाड़ियों की नंबर प्लेट बदली हुई हैं।"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि ऐसे मामलों में इस्तेमाल की जाने वाली गाड़ियों की नंबर प्लेट कभी सही नहीं होतीं।"

"तब फिर ऐसा कीजिए कि आप खुद थाना स्टाफ के साथ जाइए और गाड़ियों की पहचान कीजिए।"

"गाड़ियां सब छिपा दी गई हैं और फिर इस तरह मेरा पुलिस के साथ जाने का यह मतलब होगा कि मैं खुल्लम-खुल्ला उनके सामने आ जाऊं। इस तरह तो एक ऐसी दुश्मनी का बीज पड़ जाएगा जो बाद में न जाने कितने लोगों की मौत का कारण बने।"

"तब फिर आप ही कुछ उपाय बताइए।"

"मेरी राय यह है कि आप इस रिहाई को कम से कम आज तक के लिए रुकवा दें।"

"यह मामला कोर्ट का है, फिर भी मैं देखता हूं।"

टेलीफोन, चपरासियों की भाग-दौड़ और कागजों की उलट-फेर में लगभग तीन बज गए तब कहीं जाकर आज के लिए रिहाई रुकवा दी गई। उधर भारद्वाज के आदमी इंतजार करते रहे। जब घंटों बीत जाने के बावजूद उन लोगों को रिहा नहीं किया गया तो आदमी

दौड़ाए गए... पता चला कि आज रिहाई रुकवा दी गई है और इसके पीछे मजूमदार का हाथ है।

टेलीफोन की घंटियां बजीं। भारद्वाज और जब्बार खान में बातें होती रहीं। फिर सारी गाड़ियों को हटा लिया गया।

उस दिन शाम को जैसे ही मजूमदार की गाड़ी उसके घर के पास वापस आकर खड़ी हुई वैसे ही उस पर गोलियों की बौछार हो गई। इरफान आगे बैठा था। पीछे मजूमदार दो आदमियों के साथ था। जैसे ही गोलियों की पहली बाढ़ चली, इरफान ने चीते की फुर्ती से दरवाजा खोला और पास ही काफी समय से खराब पड़ी गाड़ी के नीचे लुढ़कता हुआ घुस गया। घुसते-घुसते भी एक गोली उसके दाहिने हाथ का मांस फाड़ती हुई निकल गई।

ड्राइवर ने छलांग लगाई और पास की दुकान जिसका शटर गिरने वाला ही था उसमें घुस गया। बाकी तीन आदमी जो पिछली सीट पर बैठे थे उन्हें छुपने की कोई जगह नहीं मिली। वे गोलियों से भून दिए गए।

सारा पाथरडेहिया बाजार आनन-फानन में बंद हो गया। सारी जनता अपने घरों में दुबक गई और पचीस-पचीस मील के इलाके में यह खबर मानो बिजली की कौंध की तरह पलों में पहुंच गई कि पाथरडेहिया कोलियरी में अंधाधुंध गोलियां चली हैं। पुलिस फौरन घटना-स्थल पर पहुंची मगर तब तक तो सारा खेल ही खत्म हो चुका था। टूटी हुई गाड़ी के नीचे से इरफान को निकाला गया। वह बेहोश था और कमीज खून से भर गई थी। पिछली सीट से तीनों को उतारा गया। तीनों में दो आदमी तो मर चुके थे। मगर मजूमदार की सांस अभी तक चल रही थी। उसे फौरन अस्पताल भेज दिया गया।

सब बड़े-बड़े अफसर जमा हो गए। पुलिस का एक दल तो घटना-स्थल की जांच पड़ताल और लिखा-पढ़ी करता रहा, दूसरा दल सारी रात विभिन्न स्थानों पर छापे मारता रहा। उन्हें सफेद रंग की एक एम्बेस्डर कार की तलाश थी जिस पर बदमाशों को भागते हुए देखा गया था। उन्हें भागते हुए बहुतों ने देखा था लेकिन पहचाना किसी को भी नहीं, क्योंकि उन्होंने अपने चेहरे गमछों से छिपा रखे थे।

सहदेव बेचैन है। उसके सारे अस्तित्व में आग लगी हुई है। उसे विश्वास नहीं हो रहा है या विश्वास करना नहीं चाहता। जी करता है, कोई आकर कह दे कि यह बात गलत है, केवल अफवाह है...या कम से कम इस बात का खंडन कर दे कि मजूमदार को गोली लगी है। और अगर यह भी मुमकिन नहीं हो तो यह बताया जाए कि वह खतरे से बाहर है। सहदेव जानता है कि ये सब बहलावा है। मजूमदार को गोली लगी है, कई गोलियां लगी हैं। वह बेहोश है और पांच-पांच डाक्टर उसे बचाने में संघर्षरत हैं। उसके सैकड़ों साथी अस्पताल के सदर दरवाजे पर खून देने के लिए खड़े हैं। दीए की लौ बुझने के करीब है। सिर्फ नीले रंग की एक बूंद इस बात का पता दे रही है कि दीया अभी बुझा

नहीं है।

अंदर प्रतीबाला रो रही है। जोर-जोर से रो रही है। वह अस्पताल जाना चाहती है, मगर कैसे जाए? लोग पागलों की तरह भारद्वाज के आदमियों को खोज रहे हैं। कौन ले जाएगा उसे? कोलियरी का कोई आदमी उसके साथ जाने के लिए तैयार नहीं है। सबको अपनी जान प्यारी है।

जाना तो सहदेव भी चाहता है, शोक प्रकट करने नहीं, सिर्फ उसे एक नजर देखने के लिए। वह चमकीली आंखों वाला मासूम चेहरा, वह बेबाक और निडर चेहरा, वह किताबों की रोशनी से चमकता हुआ चेहरा, वह चेहरा जिसके स्नेह की बुनियाद पर सहदेव का सारा अस्तित्व टिका है, वह चेहरा जिसने सहदेव की जिंदगी में, कोलियरी में होने वाले जुल्म और अत्याचार के खिलाफ लड़ने की पहली चिंगारी रखी थी।

मगर कैसे जाएगा वह? वह भारद्वाज का आदमी है। लोग उसे जानते हैं। आज पाथरडेहिया के तमाम लोगों की जेब में लोडेड पिस्तौल भरे होंगे। अब जब तक मजूमदार के खून को किसी दूसरे के खून से धो न लें उन्हें चैन नहीं आएगा। सहदेव को उसी के साथियों ने घेर रखा है।

"मत जाइए। बहुत गड़बड़ है, बल्कि अभी दो-चार दिन घर से बाहर भी मत जाइए।"

मजूमदार की बात याद आती है, "तुम अपने हाथ गौर से देखो, इसमें खून नहीं लगा है?"

वह आहिस्ता-आहिस्ता अपना हाथ अपने सामने करता है। गौर से देखता है, उस पर खून की एक बूंद भी नहीं है। अगर उसके हाथ में खून नहीं है तो खून की बिसाइन महक कहां से आ रही है? उसके सफेद खादी के कुर्ते पर तो छींटे नहीं हैं?

"नहीं,"—वह चीखकर अपने आपको उचित ठहराने की कोशिश करता है।

वह मजूमदार के हाथों का स्पर्श महसूस करता है। दोनों कंधों पर रखे हुए उसके दोनों हाथ...।

"लौटने की बात मत करो।" वह दिल ही दिल में जवाब देता है। कभी-कभी आदमी इतना आगे निकल जाता है जहां से लौटकर वापस आना मुमकिन नहीं होता।

रात जैसे-तैसे बीत रही है। प्रतीबाला की सिसकियां और स्पष्ट सुनाई दे रही हैं। यह औरत इतना क्यों रो रही है? क्या आदमी मरता नहीं है। उसे कोई समझाता क्यों नहीं? कोई उसे चुप क्यों नहीं कराता? आज खतुनिया कहां मर गई है? उसकी सिसकियों की आवाज जितनी तेज हो रही है वह उतना ही बैचेन हो रहा है।

नींद नहीं आती। रम की पूरी बोतल खाली करने के बाद भी नींद नहीं आती। सोचने की रफ्तार इतनी तेज है कि कोई सीमा नहीं, मानो दिमाग में कोई तेज रफ्तार गाड़ी बिना किसी स्टेशन पर रुके भागती जा रही हो...भागती ही जा रही हो...।

प्रतीबाला की सिसकियों की आवाज रुक गई है। वह रोते-रोते थककर सो गई। उसे कैसे नींद आ गई? कैसे लोग अचानक सो जाते हैं? लोग कहते हैं कि जब कोई रोते-रोते थक जाता है तो सो जाता है। शायद आंसू आहिस्ता-आहिस्ता अंदर की आग को ठंडा कर देते हैं और आदमी शांत हो जाता है। मगर वह तो नहीं सोया। वह रोया भी नहीं, तो क्या रोना सिर्फ आंसुओं से ही होता है? बहुत अंदर ही अंदर सिसक-सिककर क्या आदमी नहीं रोता? शायद आंसू उसकी आंखों में कांटा बनकर अटक गया है। शायद आग इतनी तेज है कि पानी को आंखों तक आने नहीं देती।

वह बोतल फर्श पर लुढ़काकर उठ जाता है। पैरों से टटोलकर चप्पल पहनता है और बाहर निकल जाता है।

बाहर एक अंतहीन निस्तब्धता फैली हुई है...एक सन्नाटा...शायद बहुत रात बीत गई है। शायद लोग डर से सवेरे ही अपने घरों में बंद हो गए हैं। शायद किसी के पास कोई हंसी, कोई कहकहा नहीं बचा जो इस खामोशी के चिथड़े-चिथड़े कर दे। बस एक डर...बस एक डर...बस एक डर।

डर से सहमी हुई यह दुनिया...

डर से अपने धोड़ों में दुबका हुआ यह कोलफील्ड।

वह चलता जाता है और कोयले की स्याह रेशम जैसी धूल उसकी आहट को निगलती जाती है। हवा बंद है। गर्मियों की रात की घुटन, कभी-कभी दूर किसी चांक में उतरने वाली किसी डोली की गड़गड़ाहट, कभी-कभी किसी हालिज की चिंघाड़। काम चालू है। जिंदगी अभी सांस ले रही है।

वह टीले पर, कोयले के रोड़े से बने टीले पर रुक जाता है।

यहां से बहुत-सी रोशनियां छोटे-छोटे झुंडों में दिखलाई दे रही हैं। थोड़ी-थोड़ी दूरी पर ये छोटी-बड़ी कोलियरियां हैं। वह इनके नाम जानता है। बाएं हाथ की ओर वह जो लोहे की एक भूतरूपी आकृति खड़ी है वह नार्थ भंवरा का चांक है। उससे थोड़े ही फासले पर साउथ भंवरा का चांक है। बहुत दूरी पर जहां रोशनी के जुगनू अधिक संख्या में दिखलाई दे रहे हैं वह चास नाला कोलियरी है। जहां वह खड़ा है ठीक उसके सामने पाथरडेहिया कोलियरी की मुहानी है। खान का मुंह उसे दिखाई दे रहा है। जमीन की अथाह गहराइयों में उतरती हुई एक सुरंग, उस सुरंग से जुड़ी हुई दूसरी सुरंगें, उन दूसरी सुरंगों से भी फूटती हुई और सुरंगें।

आदमी इन अंधेरी सुरंगों में खो गया है।

पाथरडेहिया वाला चौधरी कहता था, "यह मुहानी जो है न, यह जमीन का घाव है और हम सब इस गहरे घाव से अपनी रोजी-रोटी हासिल करने वाले कीड़े...गंदे और घृणित कीड़े। हर सुबह हम लाइन में लगकर इस गंदे घाव में उतर पड़ते हैं और जब शाम को

लौटते हैं तो गंदगी से लिपटे हुए इस तरह दिखलाई देते हैं मानो हम सचमुच आदमी न हों, कीड़े हों। इसलिए तो जब-तब हमें जूतों से मसल दिया जाता है। हम कीड़े-मकोड़ों की तरह जिंदगी गुजारने वालों की हैसियत ही क्या है? है कोई हैसियत?"

जोनाथन उसे डांटता, "उन्हें कीड़ा मत कहो। ये लोग बड़े आदर के पात्र हैं क्योंकि उनके शरीर से केंचुए की तरह रेंगकर जो पसीना जमीन में समा जाता है उससे अधिक पवित्र दुनिया में और कोई चीज नहीं होती। उनसे नफरत मत करो, उनसे मुहब्बत भी मत करो। उनसे बस इंसाफ करो क्योंकि बेईमानों की इस दुनिया में बस यही एक चीज उन्हें नहीं मिलती।"

हवा का एक झोंका उसे छूता है।

कहीं से कुत्ते के भूंकने की आवाज आती है।

किसी धोड़े में कोई बच्चा चीखकर रोता है।

जिंदगी अभी सांस ले रही है।

सहदेव नजर को और ऊंचा उठाता है। बहुत दूर-दूर पर भी बत्तियों के जलते हुए झुंड दिखाई देते हैं मगर स्पष्ट नहीं, सिर्फ धुधंले। कहीं-कहीं कोयले की पहाड़ियां, कहीं-कहीं अथाह अंधेरे में डूबी हुई गहराइयां, बिना हरियाली की स्याह बेरहम जमीन।

यह जमीन लाल क्यों नहीं हो जाती? कितना खून पिया है इसने!

लोग कहते हैं कि पानीपत के मैदान में आज भी खुदाई की जाती है तो सूखे हुए खून के धब्बे निकलते हैं।

यहां ऐसा  क्यों नहीं होता? यहां क्यों सब कुछ स्याह हो जाता है—कोयला हो जाता है?

वह जमीन पर बैठ जाता है दोनों हाथ बढ़ाकर अंजुरी भर मिट्टी उठाता है, मगर यह मिट्टी नहीं है यह स्याह धूल है और इस धूल में शामिल कोयले के रोड़े हैं। यह मिट्टी नहीं है। किसान बाप का बेटा—खेतों में बुआई करने वाले हाथ मिट्टी के स्पर्श से परिचित हैं। वह इस धूल को अपने दोनों हाथों से उठाए रहता है। फिर माथे से लगाता है और प्रार्थना करता है—

"ऐ जमीन !! ऐ स्याह बदसूरत जमीन ! बस एक आदमी को अपने अंदर लेने से इंकार कर दो। बस एक आदमी को...।"

गले से निकलने वाली आवाज को वह रोकना चाहता है। बहुत कोशिश करता है लेकिन आज जैसे सब कुछ वश से बाहर हो गया है। आज किसी चीज पर काबू नहीं।

वह रो रहा है। जोर-जोर से रो रहा है।

इस अंधेरे, स्याह, बेरहम सन्नाटे में उसके रोने की आवाज दूर-दूर तक फैल रही है।

और जैसे वह आवाज सारे कोलफील्ड पर छा गई हो।

डाक्टर ने बहत्तर घंटे का समय दिया था कि अगर मजूमदार बहत्तर घंटे ठहर गया तो उसके बचने की उम्मीद की जा सकती है। उसके शरीर से तीन गोलियां निकाली गई हैं। चार बोतल खून चढ़ा है। अनगिनत इंजेक्शनों ने उसकी दोनों बांहों को छलनी कर दिया है। मगर आंख के पपोटे जरा हिले भी नहीं। लगता है, वह गहरी नींद सो रहा है और पता नहीं कब तक सोता रहेगा। उसका कोई रिश्तेदार नहीं है। कोई अपना-पराया भी नहीं है। मगर अस्पताल के बाहर उसके चाहने वालों की भीड़ हजारों की संख्या में दीवारों की छांव में गमछा बिछाए या नंगे फर्श पर बैठी है। रात भी उन्होंने अस्पताल के बरामदे के नंगे फर्श पर सोते-जागते गुजारी है। इतने फोन पर फोन आ रहे हैं कि अस्पताल को जवाब देने के लिए एक अलग टेलीफोन का इंतजाम करना पड़ा है। यह टेलीफोन मजूमदार के शुभेच्छुओं को उसकी कुशलता, उसकी जिंदगी और इलाज में होने वाली प्रगति की सूचना दे रहा है। आज दिन भर सहदेव आफिस बंद करके टेलीफोन के पास ही बैठा है। हर आधे घंटे के बाद वह फोन करता रहा और हर बार एक ही जवाब मिलता—

"जी नहीं, अभी होश नहीं आया है।"

"जी हां, अभी तो बहुत सीरियस हैं।"

"अभी तो कुछ कहना मुश्किल है। वैसे अस्पताल के सारे डाक्टर लगे हुए हैं।"

सहदेव जितना बेचैन है, उतना ही दुखी है और जितना दुखी है उतना ही बेबस। वह बार-बार ऊपर देखता है। बार-बार उसे लगता है कि कोई ऐसी अलौकिक शक्ति जरूर है जो उसके दिल के अंदर सिसक रही प्रार्थना की उपेक्षा नहीं कर सकता। ऐसा कुछ होगा...ऐसा कुछ जरूर होगा कि हजारों मायूस चेहरों पर मुसकराहट की एक ज्योति जगमगा उठेगी।

वह घर नहीं गया है। उसने सुबह से कुछ खाया भी नहीं है। प्रतीबाला उसे दो बार बुलवा चुकी है। वह अस्पताल जाना चाहती है। वह कहती है कि लोगों की दुश्मनी आप से हो सकती है, मुझसे कैसे हो सकती है? मैं उसकी मुंहबोली बहन हूं। उसने जीवन भर मेरा साथ दिया है। वह मेरे वैधव्य के वीराने की कड़ी धूप में एक ऐसा छतनार का वृक्ष था जिसकी ठंडी शीतल छाया में न जाने कितने साल गुजारे हैं और जब वह मौत के दरवाजे पर अकेले खड़ा है तो कम से कम आज मैं अपने सीने का एक स्पर्श उसे दे सकती हूं। एक बार उसके लिए आंचल तो फैला सकती हूं।

सहदेव को बार-बार एक कंटीला अहसास चुभ रहा है कि वह अकेला है या शायद आज अकेला हो गया है। आज उसकी पत्नी, उसकी जीवन-संगिनी भी उससे अलग दूसरी कतार में खड़ी है। क्या यह कसूर उसका था?

'क्या मजूमदार के खून की जिम्मेदारी तुम पर लागू नहीं होती?'

'मगर मुझे पता नहीं था। कुछ भी मालूम नहीं था।' वह अपने आपको निष्पाप होने

का यकीन दिलाता है।

'अच्छा, अगर आज यह नहीं होता तो कुछ दिन के बाद तो जरूर होता।'

कैसे?

तुम दोनों जो एक-दूसरे के विरोध में खड़े थे, कभी न कभी तो तुम्हारा सामना होता ही।

मैं उसका सामना कभी नहीं करता।

कैसे नहीं करते, भारद्वाज तुम्हें किस दिन के लिए पाल रहा था?

नहीं, यह गलत है। मैंने भारद्वाज से आज तक कुछ हासिल नहीं किया है। एक पैसा भी नहीं।

बहुत अच्छा। क्या उसके नाम का फायदा भी नहीं उठाया? देखो, झूठ मत बोलो। तुम्हें यह कुर्सी, यह आफिस, यह टेलीफोन और सबसे बढ़कर यह ताकत, यह रौब, यह दबदबा किसने दिया? तुम आज इस कोलियरी में सर उठाकर, छाती फैलाकर जो चलते हो तो किसकी बदौलत, किसके बूते पर? तुमने कभी पलटकर देखा ही नहीं कि तुम्हारे पीछे हमेशा तुम्हारी पार्टी का आतंक मौजूद रहा है। तुम मजदूरों के बीच जिसे अपनी लोकप्रियता समझ रहे हो वह तुम्हारी लोकप्रियता नहीं, उनका डर है। कभी इन मजदूरों के चेहरों को पढ़ा है तुमने? पढ़ने की कोशिश की है?

मजदूर तो मैं भी हूं।

तुम मजदूर हो? अपने आपको मत छलो। तुम तो बहुत पहले मजदूरों से अपना रिश्ता तोड़ चुके हो, मजदूर होना तो दूर की बात है। काली अंधेरी सुरंगों में, प्रचंड गर्मी में हाड़तोड़ मेहनत करने वाले, हर पल मौत से जूझने वाले, सर पर बेंत की टोकरी में कोयला उठाकर गाड़ी बोझने वाले लोग दूसरे हैं। अब तो तुम्हारे हाथ से कोयले की कालिख भी छूट चुकी है। अब उन पर खून के छींटे हैं।

यह झूठ है, बिलकुल झूठ है...। वह तिलमिला जाता है।

झूठ नहीं है। मजूमदार गलत नहीं कहता है। खून के छींटे हैं तुम्हारी हाथों पर, भले ही वो दिखलाई न देते हों।

तो इसका मतलब, मजूमदार का खून...?

यह मैं नहीं कहूंगा, तुम खुद इंसाफ करो।

वह अपना हाथ देखता है। नाखून के किनारों में, अंगुलियों के पोर में, हथेली की लकीरों में...

कहीं कुछ नहीं है।

वह जब थक जाता है, जब सोच की रफ्तार पकड़ से बाहर हो जाती है तो वह आफिस से बाहर निकल आता है।

सामने की चाय की दुकान से कांच के गिलास में चाय लेकर खड़े-खड़े ही पीता है। वह हमेशा चाय आफिस में मंगवाता है। पिछले कई वर्षों से उसने चाय की दुकान पर खड़े होकर चाय नहीं पी। अब उसे इस तरह चाय पीना अच्छा नहीं लगता।

दुकान पर बातचीत करते मजदूर उसे देखकर चुप हो जाते हैं। सब उसके चेहरे को गौर से देखते हैं मानो कुछ पढ़ना चाहते हों।

क्या लिखा है उसके चेहरे पर?

वह बहुत गरम चाय जल्दी पीकर वापस आफिस लौट आता है। घड़ी देखता है। उसे फोन किए हुए एक घ़ंटा हो चुका है। फोन उठाकर नंबर डायल करता है। दूसरी ओर से कोई बैठी हुई आवाज में जवाब देता है—

"मजूमदार इज नो मोर सर।"

वह विश्वास नहीं करना चाहता, इसलिए चीखकर पूछता है, "ठीक से बोलो, क्या हुआ?"

"साहब, मजूमदार के बॉडी को पोस्टमार्टम के लिए ले गए हैं।"

एक सर्द-सी लहर उसके संपूर्ण शरीर में दौड़ जाती है। पांव के अंगूठे से कनपटी तक। वह एकदम से बुत बना खड़ा रह जाता है। टेलीफोन के चोंगे को कान के पास लगाए हुए मानो वह इंतजार कर रह हो कि अब भी कोई इस बात का खंडन कर दे, कोई कहे कि वह अभी तक बेहोश है, वह खतरे में है मगर अभी उम्मीद बाकी है। टेलीफोन का चोंगा खामोश है, कोई आवाज नहीं।

धम धमा धम धम...

धम धमा धम धम...

ढोल की आवाज साफ सुनाई देने लगी है। लोगों के कदमों से उड़ती हुई धूल का बवंडर भी दिखलाई दे रहा है।

बहुत बड़ा जलूस है।

तीन मील लंबा जलूस आज तक कोलफील्ड में नहीं निकला।

सिंहा साहब मरे थे तब भी नहीं।

सन् 1981 में इंदिरा गांधी गॉल्फ ग्राउंड में आई थी तब भी नहीं।

सहदेव सर उठाकर ऊपर देखता है। नीला आसमान धूप में तप कर मटमैले रंग का हो गया है। सूरज आग उगल रहा है और जमीन अनगिनत कदमों की धमक से कांप रही है। सहदेव जरा झुककर उधर देखता है जिधर से जलूस आ रहा है। आदमियों का एक हुजूम...अनगिनत आदमियों का एक सैलाब...

पानी की वे तीन बूंदें जिसे गरम तवे पर छन से जल जाने का डर था, आज उफान मारता हुआ समुंदर बन चुका है।

ग्यारह आदमियों की कानाफूसी आज हजारों गले से चिंघाड़ बनकर एक गूंजने वाले नारे में बदल चुकी है।

मजूमदार याद आता है। उसकी ठंडी, मीठी और आडंबरहीन मुस्कराहट याद आती है। उसकी खामोश लगन याद आती है। उसका विश्वास याद आता है और उसकी छेड़ी हुई वह लंबी लड़ाई याद आती है। वह स्याह काले दिन याद आते हैं जब घनघोर अंधेरे में भी वह जुगनुओं की तरह जल रहा था—नहीं, रोशनी नहीं दे रहा था लेकिन इस बात का अहसास दिला रहा था कि अभी रोशनी है, थोड़ी सी ही सही, बूंद भर सही, सुई की नोक के बराब ही सही, मगर है और टूटते हुए विश्वास और निश्चय को बहाल कर दिया था।

धम धमा धम धम...

धम धमा धम धम...

नारों की आवाज साफ सुनाई दे रही है।

हत्यारों को—फांसी दो, फांसी दो!

हत्यारों को—फांसी दो, फांसी दो!

वह महसूस करता है कि गले में पड़ी हुई रस्सी कसती जा रही है।

तुम कौन हो—? वह अपने आप से पूछता है।

क्या तुम हत्यारे हो—? वह दूसरा सवाल करता है।

हर मुजरिम की तरह उसके अंदर चीख सुनाई देती है—नहीं, नहीं, मैं निर्दोष हूं।

झूठ मत बोलो। बहुत थोड़ा-सा ही सही, तुमने उसकी हत्या में हिस्सा तो लिया होगा?

नहीं, मुझे तो पता ही नहीं था...मैं भगवान की सौगंध...।

हिश ! भगवान को क्यों बीच में लाते हो? उसे ऊपर ही रहने दो।

नारों की दहाड़ उसके मानसिक उथल-पुथल में अवरोध उत्पन्न करती है।

खून का बदला—खून से लेंगे!

खून का बदला—खून से लेंगे!

जलूस अब एकदम नजदीक आ गया है। लोगों के तमतमाए हुए चेहरों पर खून का समुंदर जोश मार रहा है। ये चेहरे अब साफ दिखाई देने लगे हैं।

हवा में एक हाथ बुलंद होता है जिस पर पट्टी बंधी है।

खून का बदला—!

खून से लेंगे— !! हजारों आवाज की दहाड़ नारे को पूरा करती है।

वह हाथ इरफान का है। वह चेहरा इरफान का है।

वह खूबसूरत, मुकुलित और मुहब्बत से जगमगाता चेहरा आज एकदम से कठोर हो गया है। पत्थर का चेहरा...।

तुम उस आदमी को पहचानते हो?

रसूलपुर का वह बच्चा दिखलाई देता है।

अलिफ, बे पे—अम्मा मुर्गी ले दे।

धूप बहुत तेज हो गई है। जलूस उसके सामने से गुजर रहा है। लोगों के खून का उफान और धूप की तेजी से तमतमाए चेहरे साफ दिखाई दे रहे हैं। चेहरे जिन्हें वह पहचानता है। सबसे आगे धोती और कुर्ते में घोष बाबू हैं। उनके दोनों तरफ इरफान, बासुदेव और वजीर अंसारी हैं।

जलूस गुजरता जाता है और लगता है मानो यह सिलसिला कभी खत्म नहीं होगा। नारों की दहाड़ से आसमान और जमीन दोनों कांप रहे हैं। पैरों से उड़ने वाली स्याह धूल फैलती जाती है और लगता है जैसे सारे कोलफील्ड को ढक लेगी। इस भीड़ में भी बहुत-से चेहरे जाने-पहचाने हैं। उसके दोस्त, उसके साथी—वह वहां मोहना कोलियरी वाला जोनाथन है। इधर सत्तार, मधुकर, हमीद। जिधर वह खड़ा है उधर, श्रीवास्तव, प्रधान, विमल चौधरी...।

ये कौन लोग हैं? वे कल तक तो उसी के साथी थे—मगर आज?

एक घंटा बीत गया है और अभी तक जलूस गुजर ही रहा है। लोग अंदाजा लगा रहे हैं कि जलूस का दूसरा सिरा झरिया पहुंच गया होगा। आदमियों का एक अंतहीन सिलसिला है जो खत्म ही नहीं होता। पैरों से उड़ने वाली धूल श्वसन क्रिया को अवरुद्ध कर रही है। दम घुटता-सा महसूस हो रहा है। वह फिर झुककर देखता है। अब जलूस का आखिरी सिरा आ रहा है। इस आखिरी सिरे में औरतें हैं। मैली-कुचैली कामिनें। कुछ ने पी भी रखी है। कुछ झूम-झूमकर चल रही हैं।

सहदेव उनमें एक औरत को देखकर चौंक जाता है।

"अरे...!"

उसे विश्वास नहीं होता अपनी आंखों पर। वह अपने सर को झटकता है, फिर देखता है, फिर देखता है...

सचमुच वह खतुनिया है।

अपना हाथ उठा-उठाकर वह बराबर नारे लगाती जा रही थी—

"फांसी दो—फांसी दो।"

वह स्तब्ध खड़ा है। एकटक खतुनिया को देखे जा रहा है। वह नजदीक आती जा रही है...और नजदीक।

और जब खतुनिया उसके बिलकुल पास आ जाती है तो वह अचानक उसे देख लेती

है। देख लेती है तो देखती ही रहती है और तब अचानक सहदेव देखता है कि उसकी आंखों में एक शोला लहक रहा है।

आग—?

उसे आश्चर्य हुआ कि जिस आग को वह सारी जिंदगी तलाश करता रहा, वह आग और कहीं नहीं खतुनिया की आंखों में है।

तो क्या आग आंखों में होती है?

हां, शायद आग आंखों ही में होती है।

जलूस गुजर गया है। वह कदम बढ़ाता है। एक कदम, दो कदम, चार कदम, और जलूस के पीछे-पीछे चलने लगता है।